ब्रजभाषा सूर-कोश

(आठवाँ खंड)

निर्देशक

डा० दीनदयाल गुप्त, एम० ए०, एल-एल० बी, डी लिट्०,
प्रोफेसर तथा अध्यक्ष हिन्दी-विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय

संपादक

डा० प्रेमनारायण टंडन, पी-एच० डी
सहायक प्रोफेसर, हिंदी-विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय
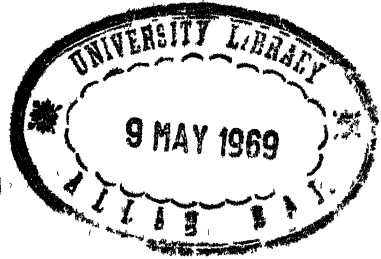
प्रकाशक
लखनऊ विश्वविद्यालय

आठवें खंड की शब्द-संख्या—६५०२
आठों खंडों की शब्द संख्या—४६३८५

मूल्य—चार रुपया

मुरदा—संज्ञा पुं. [फा.] मरा हुआ प्राणी, मृतक।
वि. – (१) मरा हुआ, निर्जीव। (२) जिसमें दम न हो, बहुत ही दुबला-पतला, मृतकप्राय। (३) सूखा या कुम्हलाया हुआ।

मुरधर—संज्ञा पु. [स.मरु+धरा] मारवाड(प्राचीन नाम)।

मुरना, मुरनो—क्रि. अ. [हि. मुडना] (१) लचना, झुकना। (२) टेढ़ा हो जाना। (३) घूम जाना। (४) लौटना, पलटना।

मुरपरैना—संज्ञा पु. [हि. मूँड=सिर+पारना=रखना] फेरी लगाने वालो का, सिर पर रखकर सौदा बेचने का बकुचा या बोझ। उ.—तही दीजै मुरपरैना नफो तुम कछु खाहु—३००३।

मुरब्बा—संज्ञा पु. [अ. मुरब्ब] शकर की चाशनी में पकाकर रखा गया फल या मेवे का पाक।

मुरमर्दक, मुरमर्दन—संज्ञा पु. [स.] विष्णु, श्रीकृष्ण।

मुरमुरा—संज्ञा पु. [अनु.] भुना हुआ पोला चावल, लावा।

मुरमुराना, मुरमुरानो—क्रि. अ. [अनु. मुरमुर] (१) चूर-चूर हो जाना। (२) कड़ी चीज के टूटने का शब्द होना।

मुररिपु—संज्ञा पु [स.] मुरारि, विष्णु, श्रीकृष्ण। उ.—सूर मुररिपु (मुरारिपु) रँग रँगे सखि सहित गोपाल– २२९०।

मुररिया—संज्ञा स्त्री. [हि. मुर्री] ऐंठन, मरोड़।

मुरल—संज्ञा पु. [स.] एक प्राचीन बाजा।

मुरलिका, मुरलिया—संज्ञा स्त्री. [स. मुरलिका] मुरली, बाँसुरी। उ.—(क) स्याम, तुम्हारी मदन-मुरलिका नैसुक सी जग मोह्यौ—६५६। (ख) हाथ मुरलिका राजै। (ग) अधर मुरलिका बाजै। (घ) मुरलिया मोकौ लागत प्यारी—२३३७।

मुरली—संज्ञा स्त्री. [स.] बाँसुरी, वशी। उ.—(क) हरषि मुरली-नाद स्याम कीन्हौ—ना. १०६३। (ख) मुरली स्याम अधर नहि टारत—१२३०।

मुरलीधर—संज्ञा पु [स.] मुरलीधारी श्रीकृष्ण। उ.—गिरिधर, ब्रजधर, मुरलीधर, धरनीधर माधौ पीताबर-धर—५७२।

मुरली-मनोहर—संज्ञा पु. [स.] श्रीकृष्ण।

मुरवा—संज्ञा पु. [देश.] एँड़ी या पैर का गट्टा।
संज्ञा पुं. [हि. मोर] मोर, मयूर। उ.—हमारे माई, मुरवा (मोरवा) बैर परे—ना. ३९४७।

मुरवी - संज्ञा स्त्री. [स. मौर्वी] धनुष की डोरी।
संज्ञा स्त्री. [हि. मोर] मोरनी।

मुरवैरी—संज्ञा पु. [स. मुरवैरिन्] श्रीकृष्ण।

मुरसुत—संज्ञा पु. [स.] मुर दैत्य का पुत्र वत्सासुर।

मुरहा - संज्ञा पु. [स.] मुरारि, श्रीकृष्ण।
वि. [स. मूल (नक्षत्र)+हा] नटखट, उपद्रवी।

मुरहारी—संज्ञा पु. [स.] मुरारि, श्रीकृष्ण।

मुराड़ा—संज्ञा पु. [देश.] जलती हुई लकड़ी, लुआठा।

मुराद - संज्ञा पु [अ.] (१) इच्छा। (२) आशय।

मुराना, मुरानो—क्रि. स. [अनु. मुरमुर] चबा कर मुलायम या नरम करना, चुभलाना।
क्रि. स. [हि. मोडना] लौटाना, फेरना।

मुरार—संज्ञा पु [स. मृणाल] कमल की जड़ या नाल।
संज्ञा पु. [स. मुरारि] श्रीकृष्ण। उ. तुमही आदि - अखड-अनूपम असरन - सरन - मुरार—सारा १२९।

मुरारिपु—संज्ञा पु. [स.] मुरारि, श्रीकृष्ण। उ.—सूर मुरारिपु रग रँगे सखी सहित गोपाल—२२९०।

मुरारि, मुरारी—संज्ञा पु [स. मुरारि] श्रीकृष्ण। उ.—(क) सूरदास प्रभु सब गुन-सागर दीनानाथ मुकुद मुरारी—१-२२। (ख) स्याम सुदर चतुरभुज मुरारी—४-६। (ग) ह्वैहै जज्ञ अब देव मुरारी—७-२।

मुरारे—संज्ञा पु. [स.] हे मुरारि या श्रीकृष्ण (संबोधन)। उ.—(क) मम गृह तजे मुरारे—१-२४२। (ख) केस पकरि ल्यायौ दुस्सासन राखी लाज मुरारे—१-२५७।

मुरासा—संज्ञा पु. [अ० मुरस्सअ] कर्णफूल, तरकी।
संज्ञा पु [हि. मुँडासा] स.फा, पगड।

मुरि—क्रि. अ. [हि. मुडना] मुँड़कर, मुँह फेरकर, एक ओर को कुछ हटकर। उ—(क) स्याम सखा कौ गेद चलाई। श्रीदामा मुरि अग बचायौ, गेद परी कालीदह जाई—५३५। (ख) सूर स्याम मुरि मुसकानि छबी री अँखियन मै रही—८३८।

मुरीद—संज्ञा पु [अ.] शिष्य, चेला, अनुयायी।

मुरुंज—संज्ञा पु. [स. मुरज] एक बाजा। उ.—बजता

ताल मृदंग झांझ डफ रुज मुरुंज बांसुरी ध्वनि थोरी —२४४५।

मुरु—सज्ञा पु. [स. मुर] 'मुर' नामक दैत्य जिसे श्रीकृष्ण ने मारा था।

मुरुआ—सज्ञा पु. [देश.] पं या एँड़ी का गट्टा।

मुरुख—वि. [स. मूर्ख] मूर्ख।

मुरुछना, मुरछनो—क्रि अ. [हि.मूरछा] बेसुध होना।

मुरुझना, मुरझनो—क्रि. अ. [हि. मुरझाना] (१) कुम्हलाना, सूखना। (२) उदास होना। (३) अचेत होना।

मुरेठा—सज्ञा पु. [हि. मूड+ऐंठ] साफा, पग्गड।

मुरेर—सज्ञा स्त्री. [हि. मुँडेर] मुँडेर।

मुरेरना, मुरेरनो—क्रि. स. [हि. मरोडना] मरोड़ना।

मुरैठा—सज्ञा पु. [हि. मुरेठा] साफा, पग्गड।

मुरौअत, मुरौवत—सज्ञा स्त्री [अ. मुरव्वत] (१) शील, संकोच। (२) भलमनसाहत।

मुर्छन—सज्ञा पु [स.] (१) अचेत करने की क्रिया या भाव। (२) मूर्छित करने का मत्र या प्रयोग। उ.—मोहन मुर्छन बसीकरन पढि अगमति देह बढाऊँ—१०-४९।

मुर्दनी—सज्ञा स्त्री. [फा. मुर्दन=मरना] (१) मुख पर मृत्यु के चिह्न प्रकट या प्रत्यक्ष होना।

मुहा०—चेहरे पर मुर्दनी छाना (फिरना)—(१) मुख पर मृत्यु के चिह्न प्रत्यक्ष होना। (२) बहुत निराश या उदास होना।

(२) शव की अंतेष्टि के लिए साथ जाना।

मुमुर—सज्ञा पु. [स.] कामदेव, मदन।

मुर्रा—सज्ञा स्त्री. [हिं. मुडना] एक तरह की भैंस।

मुर्री सज्ञा स्त्री. [हि. मरोड] डोरी की ऐंठन।

मुर्वा—सज्ञा पु. [हिं. मुरवा] मोर, मयूर।

मुर्वी—सज्ञ स्त्री. [स.] धनुष की डोरी।

मुल—अव्य. [देश.] (१) लेकिन। (२) तात्पर्य यह कि।

मुलक—सज्ञा पु [अ. मुल्क] (१) देश। (२) प्रदेश।

मुलकना, मुलकनो—क्रि. अ [हिं. पुलकना] (१) मुसकराना। (२) प्रसन्न होना।

मुलकित—वि. [स पुलकित] (१) मुस्कराता हुआ। (२) प्रसन्न, हर्षित।

मुलकी—वि. [अ. मुल्क] देश-सम्बन्धी, देश का।

मुलजिम—वि. [अ. मुलजिम] अभियुक्त।

मुलतवी—वि. [अ. मुल्तवी] स्थगित।

मुलतानी—सज्ञा स्त्री. [हि मुलतान (नगर)] (१) एक रागिनी। (२) एक तरह की चिकनी मिट्टी।

मुलना—सज्ञा पु. [अ मौलाना] मुल्ला, मौलवी।

मुलमची—सज्ञा पु. [हिं. मुलम्मा] मुलम्मा करनेवाला।

मुलम्मा—सज्ञा पु. [अ.] (१) किसी चीज पर चढ़ायी गयी सोने या चाँदी की बहुत पतली परत। (२) ऊपरी तड़क-भड़क।

मुलहा—वि. [स मूल (नक्षत्र) + हा] (१) जो मूल नक्षत्र में जन्मा हो। (१) उपद्रवी, नटखट।

मुलाँ—सज्ञा पु [अ. मुल्ला] मुल्ला, मौलवी।

मुलाकात—सज्ञा स्त्री. [अ. मुलाकात] (१) भेंट, मिलन। (२) हेल-मेल, मेल-मिलाप, परिचय।

मुलाजिम—सज्ञा पु. [अ. मुलाजिम] सेवक, नौकर।

मुलायम—वि. [अ] (१) जो सख्त न हो। (२) धीमा, मंद। (३) सुकुमार। (४) शांत।

यौ०—मुलायम चारा (१) जो सहज ही अपनी बातों में लाया या फुसलाया जा सके। (२) जो सहज ही पाया जा सके।

मुलायमियत—सज्ञा स्त्री. [हि. मुलायम] नरमी।

मुलाहजा—सज्ञा पु. [अ. मुलाहजा] (१, निरीक्षण, देखभाल। (२) सकोच। (३) रियायत।

मुलुक—सज्ञा पु. [हि मुलक] (१) देश। (२) प्रदेश।

मुलेठी—सज्ञा स्त्री [स मूलयष्टि, प्रा० मूलयट्ठी] 'घुँघुची' या 'गुजा' नामक लता की जड़।

मुल्क—सज्ञा पु. [अ] (१) देश। (२) प्रान्त।

मुल्ला—सज्ञा पु. [अ] मुसलमानो का पुरोहित, मौलवी।

मुवना, मुवनो—क्रि अ. [स मृत, प्रा. मुअ+ना] मरना।

मुवाइ—क्रि. स. [हिं मुवाना] मार कर, हत्या करके।

मुवाना, मुवानो—क्रि. स. [हिं. मुवना] मार डालना।

मुवौ—क्रि. अ. [हि मुवना] मरा, मृत्यु को प्राप्त हुआ। उ.—कहा जानै कैवाँ मुवौ (रे) ऐसै कुमति, कुमीच —१-३२५।

मुशल—सज्ञा पु. [स.] धान कूटने का मूसल।

वि.—मूर्ख, लंठ।

मुशली—संज्ञा पु. [सं.] मूसलधारी बलराम।

मुश्क—संज्ञा पु [फा.] (१) कस्तूरी। (२) गंध।

संज्ञा स्त्री. [देश.] भुजा, बाँह।

मुश्कनाभ, मुश्कनाभि—संज्ञा पु. [फा. मुश्क+सं. नाभि] मृग जिसकी नाभि में कस्तूरी होती है।

मुश्किल—वि [अ] कठिन, दुस्साध्य।

संज्ञा स्त्री —(१) कठिनता। (२) संकट, विपत्ति।

मुश्की—वि. [फा.] (१) कस्तूरी के रंग का, काला। (२) जिसमें कस्तूरी मिली हो।

मुश्त—संज्ञा पु [फा.] मुट्ठी।

यौ०—एक मुश्त एक ही बार में।

मुषर—वि. [सं मुखर] बहुत बोलनेवाला।

मुषल—संज्ञा पु [सं.] धान कूटने का मूसल।

मुषाना, मुषानो—क्रि. स [हि. मुसाना] लूटने या चोरी करने को प्रवृत्त करना।

मुषायो, मुषायौ—क्रि. स. [हि मुसाना] लुटवा दिया। उ.—मदन चोर सो जानि मुषायो—१९६३।

मुषुर—संज्ञा स्त्री. [सं. मुखर] गुंजार।

मुष्टि—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) मुट्ठी। (२) मुक्का।

मुष्टि, मुष्टिक—संज्ञा पु. [सं.] (१) कंस का दरबारी एक मल्ल जिसे श्रीकृष्ण ने मारा था। उ.—(क) कह्यौ चाणूर मुष्टि सब मिलिकै जानत हौ सब जी के। (ख) सखचूड मुष्टिक प्रलब अरु तृनाबर्त सहारे —१-२७। (२) मुक्का, घूँसा। उ.—हिरनकसिप क्रोधहि मन धारचौ।जाइ खंभ को मुष्टिक मारचौ—७-२। (३) मुट्ठी।

मुष्टिका—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) मुट्ठी। (२) मुक्का, घूँसा। उ.—(क) बृक्ष पाषाण को जब उहाँ नाश भयौ मुष्टिका युद्ध दोऊ प्रचारी—१०उ०-४५। (ख) एक ही मुष्टिका प्रान ताके लए—२४८४।

मुष्टियुद्ध—संज्ञा पु. [सं.] युद्ध जो घूँसो से हो।

मुसक—संज्ञा पु. [फा. मुश्क] कस्तूरी।

मुसकनि, मुसकनियाँ—संज्ञा स्त्री [हि. मुसकान] मुसकराहट, मुसकान। उ.—(क) मुनि-मन हरनि सु हँसि मुसकनियाँ। (ख) दाड़िम दशन मदगति मुसकनि मोहत सुर-नर-नाग—१३१४। (ग) कोटि मुक्त वारौ मुसकनि पर योग बापुरो सरो—३१५४।

मुसकराना, मुसकरानो—क्रि. अ. [सं. स्मय+कृ] मंद-मंद हँसी हँसना, होठो में हँसना।

मुसकराहट, मुसकराहटि—संज्ञा स्त्री. [हिं. मुसकराना + आहट] मुसकराने की क्रिया या भाव, मंद-मंद हँसी।

मुसकात—क्रि. अ. [हि. मुसकाना] हँसता है, हँसते हैं। उ.—चुटकी दै दै ग्वाल नचावत, हँसत सबै मुसकात (मुसुकात)—१०-२१५।

मुसकान—संज्ञा स्त्री. [हि. मुसकाना] मंद-मंद हँसी।

मुसकाना—क्रि. अ. [हिं. मुसकराना] मंद-मंद हँसना।

मुसकानि, मुसकानी—संज्ञा स्त्री. [हि. मुसकाना] मंद मंद हँसी, मंद हास्य। उ.—(क) बिकानी हरि-मुख की मुसकानी—११९७। (ख) स्याम आपनी चितवनि बरजो अरु मुख की मुसकानी—१५७२।

क्रि. अ.—मंद-मंद रूप से या होठो में हँसने लगी। उ.—आवति सूर उरहने के मिस, देखि कुँवर मुसकानी—१०-३११।

मुसकाने—क्रि. अ. [हि. मुसकाना] मंद-मंद हँसे (थे) उ.—सूर स्याम जब तुमहि पठायो तब नेकहुँ मुसकाने—३००६।

मुसकानो—क्रि. अ. [हि. मुसकाना] मंद-मंद हँसना।

मुसकिराना, मुसकिरानो—क्रि. अ. [हिं. मुसकराना] मंद-मंद हँसना।

मुसकिराहट, मुसकिराहटि—संज्ञा स्त्री. [हिं. मुसकराहट] मंद-मंद हँसने की क्रिया या भाव, मंद हास।

मुसकुराना, मुसकुरानो—क्रि. अ [हि. मुसकराना] मंद-मंद हँसना, होठो में हँसना।

मुसकुराहट, मुसकुराहटि—संज्ञा स्त्री. [हि. मुसकराहट] मंद-मंद हँसने की क्रिया या भाव, मंद हास।

मुसक्याइ—क्रि. अ. [हि. मुसकराना] मंद-मंद हँसकर। उ.—(क) नैकु चितै, मुसक्याइ कै सब कौ मन हरि लीन्हौ—१-४४। (ख) असुर दिसि चितै मुसक्याइ मोहे सकल—८-८।

मुसक्यात—क्रि. अ. [हि. मुसकराना] मंद-मंद हँसता है

या हँसते हैं । उ.—बारबार बिलोकि सोचि चित नद महर मुसक्यात (मुसुक्यात)—१०-१७२ ।

मुसक्यान—सज्ञा स्त्री. [हि. मुसकान] मद-मद हँसी । उ.—चारु चिबुक मुसक्यान—सारा. १७८ ।

मुसक्याना, मुसक्यानो —क्रि. अ. [हि. मुसकराना] मद-मद हँसना, होठो में हँसना ।

मुसजर—सज्ञा पु. [अ. मुशज्जर] एक छपा कपड़ा ।

मुसना, मुसनो — क्रि. अ. [स. मूषण] चुराया जाना ।

मुसमुंद, मुसमुंध—वि. [देश.] नष्ट, ध्वस्त ।

मुसरिया —सज्ञा स्त्री. [हि. मूस] चूहे का बच्चा ।

मुसल—सज्ञा पु. [हि. मूसल] धान कूटने का मूसल ।

मुसलधार—क्रि. वि. [हि. मूसलधार] मूसल जैसी मोटी धार से, बहुत तेज । उ.—बरसत मुसलधार सैनापति महा मेघ मघवा के पायक—९५४ ।

मुसलमान—सज्ञा पु. [फा.] मुहम्मद साहब का अनुयायी ।

मुसली—सज्ञा पु. [स. मुशली] मूसलधारी बलराम ।

मुसल्लम—वि. [फा.] पूरा, सारा, अखड ।

मुसल्ला—सज्ञा पु. [हिं. मुसलमान] मुसलमान ।

मुसवाना, मुसवानो—क्रि. स. [हि. मूसना] लूटने या चोरी करने को प्रवृत्त करना ।

क्रि स. [हिं. मोसना] मोसने-मसलने देना ।

मुसव्वर, मुसव्वरि, मुसव्विर—सज्ञा पु. [अ. मुसव्विर] (१) चित्र खींचनेवाला । (२) बेल बूटे बनानेवाला ।

मुसव्विरी—सज्ञा स्त्री. [अ.] (१) चित्रकारी । (२) बेल-बूटे बनाने की क्रिया ।

मुसाफिर—सज्ञा पु. [अ.] बटोही, यात्री ।

मुसाहब—सज्ञा पु. [अ.] वह जो किसी धनी या सम्पन्न के साथ रहकर उसका बिनोद और चाटुकारी करे ।

मुसाहबी, मुसाहिबी—सज्ञा स्त्री. [अ. मुसाहब] मुसाहब का पद या कार्य ।

मुसीबत—सज्ञा स्त्री [अ.] (१) कष्ट । (२) सकट ।

मुसुकाहट, मुसुकाहटि—संज्ञा स्त्री. [हि. मुसकराहट] मद-मद हँसना, मद हास ।

मुसुकि—क्रि. अ. [हिं. मुसकराना] मद-मद हँसकर ।

मुसुक्यात—क्रि. अ. [हिं. मुसकाना] मद-मद हँसते हैं । उ.—नद महर मुसुक्यात —१०-१७२ ।

मुसुक्यान, मुसुक्यानि, मुसुक्यानी —सज्ञा स्त्री. [हि. मुसकाना] मद-मद हँसना, मद हास । उ.—(क) अधर मधुर मुसुक्यानि मनोहर करति मदन मन हीन —४७८ । (ख) तामै मृदु मुसुक्यानि मनोहर न्याइ करत कवि मोहन नाउँ—६५३ । (ग) वह चितवन वह चाल मनोहर वह मुसुक्यानि जो मद ध्वनि गावन —३३०७ ।

क्रि. अ.—मद-मद हँसी हँसने लगी ।

मसुक्याने—क्रि. अ. [हि. मुसकाना] मद-मद हँसी हँसे या हँसने लगे । उ.—(क) सूर स्याम यह सुनि मुसुक्याने—१०-२२२ । (ख) मनमोहन मन मै मुसुक्याने —६०४ ।

मुस्कराना—क्रि. अ. [स. स्मय+कृ] धीरे से हँसना ।

मुस्कराहट—सज्ञा स्त्री. [हि. मुस्कराना] मद हास ।

मुस्काना—क्रि. अ. [हि. मुस्कराना] धीरे से हँसना ।

मुस्किल—वि. [अ. मुश्किल] कठिन, दुष्कर ।

मुस्की—सज्ञा स्त्री. [हि. मुसकान] मुसकराहट ।

वि. [फा. मुश्की] (१) कस्तूरी जैसे काले रग का । (२) जिसमें कस्तूरी मिली या पड़ी हो ।

मुस्क्यान—सज्ञा स्त्री. [हि. मुसकाना] मुसकाहट ।

मुस्क्याना—क्रि. अ. [हि. मुसकाना] मद-मद हँसना ।

मुस्क्यानि, मुस्क्यानी—सज्ञा स्त्री. [हि. मुसकान] मद हास, मुसकराहट ।

क्रि. अ.—मद-मद हँसी हँसने लगी ।

मुस्क्यानो—क्रि. अ. [हि. मुसकाना] मद-मद हँसना ।

मुस्टंड, मुस्टडा—वि [स पृष्ठ](१)मोटा ताजा ।(२)गुडा ।

मुस्तकिल—वि. [अ. मुस्तकिल] (१) पक्का । (२) स्थायी ।

मुस्तैद—वि. [अ. मुस्तअद] (१) फुरतीला । (२) तत्पर ।

मुस्तैदी—सज्ञा स्त्री. [हि. मुस्तैद] (१) फुरती, तेजी । (२) तत्परता ।

मुस्तौफी—सज्ञा पु. [अ. मुस्तौफी] आय-व्यय की परीक्षा करनेवाला पदाधिकारी । उ.—चित्रगुप्त मु होत मुस्तौफी, सरन गहूँ मैं काकी—१-१४३ ।

मुहकम—वि. [अ.] मजबूत, दृढ़ । उ.—सूर पाप कौ गढ दृढ कीन्हौ, मुहकम लाइ किवार—१-१४४ ।

मुहचंग, मुहचंगा—सज्ञा पु. [हि. मुरचग] मुँह से

बजाया जानेवाला एक बाजा। उ.—(क) आउझवर मुहचद नैन सलोन री रँग राची ग्वालिनि—२४०५। (ख) फूले ही बजावै डफ ताल मृदग बजै मुहवरि मुहचग सरस रस ही फूलडोल—२४१२।

मुहताज—वि. [अ.] (१) दरिद्र। (२) आश्रित।

मुहब्बत—सज्ञा स्त्री. [अ.] (१) प्रीति। (२) चाह। (३) मित्रता। (४) लगन, लौ।

मुहब्बती—वि [हि. मुहब्बत] प्रेम या मित्रता का व्यवहार करने या बनाये रखनेवाला।

मुहम्मद—सज्ञा पु [अ.] इसलाम धर्म के प्रवर्तक।

मुहम्मदी—वि. [हि. मुहम्मद] मुहम्मद साहब का अनुयायी।

मुहरा—सज्ञा पु. [हिं. मुँह] (१) सामने का भाग। (२) मुँह की आकृति। (३) शतरज की गोट। (४) घोड़े का एक साज जो उसके मुँह पर पहनाया जाता है। (५) द्वार।

मुहर्रम—सज्ञा पु. [अ.] अरबी वर्ष का पहला महीना जिसमें इमाम हुसेन के शहीद होने के कारण मुसलमान शोक मनाते है।

मुहा०—मुहर्रम का पैदा (की पैदाइश वाला)—जो सदा रोनी सूरत बनाये और दुखी रहे।

मुहर्रमी—वि. [हिं. मुहर्रम] (१) मुहर्रम का। (२) शोक या दुख-सूचक। (३) मनहूस।

मुहा०—मुहर्रमी सूरत—रोनी सूरत।

मुहर्रिर—सज्ञा पु. [अ.] लेखक, मुशी। उ.—मुहर्रिर (मोहरिल) पाँच साथ करि दीने, तिनकी बडी बिपरीत—१-१४३।

मुहवर, मुहवरि—सज्ञा पु. [हि. महुअर] तूँबी या तूँबड़ी नामक बाजा। उ.—फूले ही बजावै डफ ताल मृदग बजै मुहवरि मुहचग सरस रस ही फूलडोल—२४१२।

मुहसिल—सज्ञा पु. [अ. मुहासिल] (१) प्यादा, फेरीदार। (२) कर वसूलनेवाला।

मुहाँचही, मुहाचही, मुहाँचुही—सज्ञा स्त्री. [हिं. मुँह + चाहना] परस्पर देखा-देखी। उ.—(क) मुहाँचुही सैनापति कीन्ही—१०-६१। (ख) मुहाचही जुवतिन तब कीन्ही—१२६७।

मुहाल—वि. [अ.] (१) असभव। (२) कठिन।

मुहावरा—सज्ञा पु [अ.] (१) वह वाक्य या शब्द जिसका विशेषार्थ लक्षणा-व्यजना से निकलता हो। (२) आदत, अभ्यास।

मुहासिब—सज्ञा पु. [अ.] (१) हिसाब-किताब जानने वाला। (२) हिसाब लेने या जाँच-पडताल करनेवाला। उ.—सूर आपु गुजरान मुहासिब लै जवाब पहुँचावै—१-१४२।

मुहासिबा—सज्ञा पु. [अ.] (१) हिसाब, लेखा। उ.—सूरदास को यह मुहासिबा (पाठा०—की यहै बीनती) दस्तक कीजै माफ—१-१४३। (२) पूँछताँछ।

मुहि—सर्व [हिं. मोहि] मुझे, मुझको। उ.—सत्य बचन गिरिदेव कहत है, कान्ह लेइ मुहि कर उचकाई—९६१।

मुहिम, मुहीम—सज्ञा स्त्री. [अ मुहिम] (१) कठिन काम। (२) लड़ाई, युद्ध। (३) चढ़ाई, आक्रमण।

मुहु—अव्य. [स.] बार-बार।

मुहूरत, मुहूरति, मुहूर्त, मुहूर्त्त—सज्ञा पु. [स. मुहूर्त्त] (१) दिन-रात का तीसवाँ भाग। उ.—दोइ मुहूरति आयु बताई। । एक मुहूरत मै भुव आयौ। एक मुहूरत हरि-गुन गायौ—१-३४३। (२) निर्दिष्ट काल या समय। (३) ज्योतिष की गणना से शुभ कार्य के लिए निकाला हुआ समय। उ—(क) सुद्ध मुहूरत चौरी बिधि रची—१० उ-२४। (ख) सुद्ध मुहूरत लग्न धरायौ - १० उ०-१३२।

मुह्य—वि. [स.] (१) मोह-ममता में पडा या फँसा हुआ। (२) बेहोश, मूर्छित।

मूएँ—क्रि. अ. [हि मरना] मरने (पर), मृत्यु को प्राप्त होने (पर)। उ.—जैसै काग काग के मूएँ काँ काँ करि उडि जाही—१-३१९।

मूँग—सज्ञा स्त्री. [स. मुद्ग] एक अन्न। उ.—(क) मूँग मसूर उरद चनदारी—३९६। (ख) मूँग ढरहरी हीग लगाई—२३२१।

मूँगफली—सज्ञा स्त्री [हिं. मूँग + फली] चिनिया बादाम।

मूँगा—सज्ञा पु. [हि. मूँग] एक समुद्री कृमि के समूह-पिड की लाल ठठरी जिसकी गिनती रत्नो में है।

मूँगिया—वि. [हि. मूँग] मूँग-जैसे हरे रग का।

मूँछ—संज्ञा स्त्री. [सं. श्मश्रु, प्रा० मस्सु या मच्छु] पुरुष के होंठ के ऊपरी बाल जो पुरुषत्व के विशेष चिह्न माने जाते है।

मूँछ उखाडना—घमड चूर करना। मूँछ (मूछो) पर ताव देना—मूँछ मरोड़कर अकड़ या गर्व दिखाना। मूँछ नीची होना—(१) घमड टूटना। (२) अपमान होना। मूँछ पर हाथ फेरना—अकड़ या घमड दिखाना।

मूँछनि—संज्ञा स्त्री. सवि. [हिं. मूँछ] मूँछ पर।

मुहा०—मूँछनि ताव दिखायौ—गर्व या घमड किया। उ.—कबहुँक फूलि सभा मै बैठ्यो मूँछनि ताव दिखायौ—१-३०१।

मूँछी—संज्ञा स्त्री. [देश.] सेव की कढ़ी।

मूँज—संज्ञा स्त्री. [सं. मुञ्ज] एक तृण जो पवित्र माना जाता है और उपनयन सस्कार पर जिसकी करधनी पहनायी जाती है।

मूँड़—संज्ञा पु. [सं. मुड] सिर, कपाल, मुड।

मुहा०—मूँड उघारना—निर्लज्ज की तरह गुरुजन के सामने सिर खोलना। मूड उघारचौ—गुरुजन के सामने सिर खोले फिरने की निर्लज्जता दिखायी। उ.—तजी लाज कुलकानि लोक की पति गुरुजन प्यौसारौ री। जिनकी सकुच देहरी दुर्लभ तिनमै मूँड उघारचौ री—१-३३१। मूँड चढ़ना—ढिठाई करना। मूँड चढत है—ढिठाई करता है। उ.—जोइ मन करै सोइ करि डारै मूँड चढत है भारि—१०९९। मूँड चढना—ढीठ या उद्दड कर देना। मूँड चढायौ—ढीठ या धृष्ट कर दिया (हैं)। उ.—(क) भलौ कार्य तै सुतहिं पढायौ। बारे ही तै मूँड चढायौ—१०-३३१। (ख) तै ही उनको मूँड चढायौ—१६५८। (ग) अब लौ कानि करी मै सजनी बहुतै मूड चढायौ—पृ० ३२२ (१३)। मूँड चढावै - ढीठपन देखकर हैरान हो, धृष्टता सहन करे। उ.—ऐसी को ठाली बैसी है तोसौ मूँड चढावै—२२८७। मूड चढी—सर पर चढ़कर। उ.—ताकै मूँड चढी नाचति है मीचऽति नीच नटी—१-९८। मूड दुराना—सिर बचाकर अपनी रक्षा करना। मूँड़ दुरैहौ—सिर पर की गयी चोट बचाकर अपनी रक्षा करोगे। उ.—लादत जोतत लकुट बाजिहै तब कहँ मूँड दुरैहौ—१-३३१। मूँड पिराना (१) सर दर्द होना। (२) बकझक करके सर खाना या सर में दर्द कर देना। मूँड पिरायौ—बकझक करके सर खा लिया या सर में दर्द कर दिया। उ.—तुमही मिलि रसबाद बढायौ उरहन दै दै मूँड पिरायौ—३९१। मूड मुडाना—सिर के बाल मुड़ाकर सन्यासी का वेश बनाना। मूँडचौ.मूड—सिर मुड़वाकर सन्यासी का वेश बनाया। उ.—मूँडचौ मूड,कठ बनमाला मुद्रा-चक्र दिये—१-१७१।

मूँड़न—संज्ञा पु. [मुडन] (१) मुडन या चुडाकरण सस्कार जिसमे बालक के बाल पहले-पहल मुड़वाये जाते है (२) बाल मूँडने की क्रिया या भाव।

मूँड़ना मूँड़नो– क्रि. स. [सं. मुडन] (१) सर के बाल बनाना। (२) किसी को ठगकर माल ले लेना। (३) चेला बनाना।

मूँड़ि—क्रि. स. [हिं. मूँडना] सर के बाल मुड़वाकर। उ.—अस्वत्थामा कौ गहि ल्याए। द्रौपदि सीस मूँडि मुकराए—१-२८९।

मूँड़ी—संज्ञा स्त्री. [सं. मुड] (१) सिर, कपाल।

मुहा०—मूँडी मरोडना—(१) गला दबाकर मार डालना। (२) किसी को धोखा देकर ठग लेना।

(२) किसी वस्तु का ऊपरी सिरा।

मूँड़्यौ—क्रि. स. [हिं. मूँडना] (सिर के) बाल मुड़वा दिये। उ.—मूँडचौ मूँड—१-१७१।

मूँठि, मूँठी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मुट्ठी] मुट्ठी। उ.—मर्कट मूँठि छाँडि नहि दीनी—२-२६।

मूँदना, मूँदनो—क्रि. स [सं. मुद्रण] (१) ढक देना, बद कर देना। (२) छेद खुला न रहने देना।

मूँदि—क्रि. स. [हिं. मूँदना] बद करके।

प्र०—मूँदि लेत है—बद कर लेते है। उ.—कबहुँ पलक हरि मूँदि लेत है—१०-४३।

मूँदे—क्रि. स. [हिं. मूँदना] बद किये। उ.—(क) सबनि मूँदे नैन—५९७। (ख) नैन मूँदे खग—६५८।

मूँदै—क्रि. स. [हिं. मूँदना] बद करता है, बद करे। उ.—हलधर कह्यौ आँखि को मूँदै, हरि कह्यौ मातु जसोदा—१०-२३९।

मूँदो—क्रि. स. [हिं. मूँदना] **बंद करो या किया।** उ.—आवत देखि सबनि मुख मूँदो—१२८५।

मूँदौं—क्रि. स. [हिं मूँदना] **बंद करूँ।** उ.—मैं मूँदौं हरि आँखि तुम्हारी—१०-२३१।

मूँदौ—क्रि. स. [हिं. मूँदना] **बंद करती ढकती हो।** उ.—कर सौं कहा अंग उर मूँदौ, मेरे कहै उघारौ—७९३।

मूँद्यौ—क्रि. अ. [हिं. मूँदना] **बंद किया।** उ.—नैन उघारि, बदन हरि मूँद्यौ—१०-२५३।

मूक—वि. [सं.] (१) **गूँगा।** (२) **दीन।** उ.—ज्यौं बिनु मनि अहि मूक फिरत है—२८०२।

मूकता—संज्ञा स्त्री [सं.] गूँगापन।

मूकना, मूकनो—क्रि. स. [सं. मुक्त] (१) **छोड़ना, त्यागना।** (२) **बंधन खोलना, बंधन से छुड़ाना।**

मूका—संज्ञा पु. [हिं मोखा] **दीवार के आर-पार बना छेद, मोखा, झरोखा।**

संज्ञा पु. [हिं. मुक्का] **मुक्का, घूँसा।**

मूकिमा—संज्ञा स्त्री. [सं.] **गूँगापन, मूकता।**

मूकू, मूके—वि. [सं. मूक] (१) **मट्ठस।** उ.—मूकू निंद निगोडा भोडा कायर काम बनावै—१-१८६। (२) **गूँगा।** उ.—मूके भये जज्ञ के पसु लौं—२८८२।

मूखना, मूखनो—क्रि. स [हिं. मूसना] **चुरा लेना।**

मूचना, मूचनो—क्रि स. [हिं. मोचना] (१) **त्यागना।** (२) **बहा देना।** (३) **छुड़ाना, मुक्त कराना।**

मूछहिं—संज्ञा स्त्री. सवि. [हिं. मूँछ] **मूँछ को।**

प्र०—मूँछहिं पकरि अकरतौ—**मूँछ पर हाथ फेरकर गर्व या घमंड करता।** उ.—मिथ्याबाद आप-जसु सुनि सुनि मूछहि पकरि अकरतौ—१-२०३।

मूजी—वि. [अ मूजी] **कष्ट देनेवाला, दुष्ट।**

मूठ - संज्ञा स्त्री. [हिं. मुट्ठी] (१) **मुट्ठी।** (२) **मुठिया, दस्ता।** (३) **उतनी चीज जितनी मुट्ठी में आ सके।** (४) **जादू-टोना।**

मुहा०—मूठ चलाना (मारना)—**जादू-टोना करना।** मूठ लगना **जादू-टोने का प्रभाव पड़ना।**

मूठना, मूठनो—क्रि. अ. [सं. मुष्ट, प्रा. मुट्ठ] **नष्ट होना।**

मूठा—संज्ञा पु. [हिं. मूठ] **मुट्ठा, पूला।**

मूठालि, मूठाली—संज्ञा स्त्री. [हिं. मूठ] **तलवार।**

मूठि—संज्ञा स्त्री. [हिं. मूठ] **मूठ, दस्ता।**

संज्ञा स्त्री. [हिं. मुट्ठी] **मुट्ठी** उ.—इतर नृपति जिहि उचत निकट करि देह न मूठि रिती—११-३।

मूठिक - वि. [हिं. मुट्ठी + इक=एक] **एक मुट्ठी भर, जितना एक मुट्ठी में आ सके।** उ—मूठिक तंदुल बाँधि कृष्ण को बनिता बिनय पठायो—१० उ०-६५।

मूठी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मुट्ठी] **मुट्ठी।** उ.—ज्यों मर्कट मूठी नहि छाँडत—पृ. ३२९ (८१)।

मूठे—क्रि. अ. [हिं. मूठना] **मर मिटे, न रहे।** उ.—दुइ तुरग दुइ नाव पाव धरि ते कवन न मूठे—३२००।

मूड़—संज्ञा पु [हिं. मूँड] **सिर, मूँड़।**

मूढ़—वि. [सं.] (१) **मूर्ख।** उ.—तब तै मूढ मरम नहिं जान्यौ जब मैं कहि समुझायौ—९-११९। (२) **स्तब्ध।** (३) **हतबुद्धि।**

मूढ़ता—संज्ञा स्त्री. [सं.] **मूर्खता, अज्ञानता।** उ.—बरबस ही इन गही मूढता प्रीति जाय चंचल सो जोरी—पृ. ३२८ (७३)।

मूढ़ात्मा—वि. [सं. मूढात्मन्] **मूर्ख, अज्ञान।**

मूढ़मति—वि. [सं.] **मतिभ्रष्ट, अज्ञान।** उ.—मूरख, मुग्ध, अजान, मूढमति नाहीं कोऊ तेरौ—१-३१९।

मूत - संज्ञा पु. [सं. मूत्र] **मूत्र।**

मूतना, मूतनो—क्रि. अ. [हिं. मूत] **मूत्र करना।**

मूत्र - संज्ञा स्त्री. [सं.] **मूत, पेशाब।** उ.—(क) रुधिर मेद मल-मूत्र कठिन कुच उदर गंध-गंधात—२-२४। (ख) आँखि नाक मुख मूल दुवार। मूत्र स्रोन नव पुर कौ द्वार—४-१२। (ग) मूत्र-पुरीष अंग लपटावै—५-२।

मूना, मूनो—क्रि. अ. [हिं. मुवना] **मरना।**

मूर—संज्ञा पु. [सं. मूल] (१) **जड।** (२) **जड़ी।** (३) **असल या मूल धन।** उ.—सूर मूर अक्रूर गयो लै ब्याज निबेरत ऊधो—३२७८।

मूरख—वि. [हिं. मूर्ख] **नासमझ, अज्ञान।** उ.—(क) इतनी जड़ जानत मन मूरख मानत याही धाम—१-७६। (ख) मूरख मुग्ध अजान मूढमति—१-३१९।

मूरखता, मूरखताइ, मूरखताई—सज्ञा स्त्री.[स. मूर्खता] **नासमझी, नादानी, अज्ञता, मूर्खता।**

मूरछन, मूरछना, मूरछनि—सज्ञा स्त्री. [स. मूर्च्छना] **सगीत मे स्वरों का आरोह-अवरोह।**

सज्ञा स्त्री. [स. मूर्च्छा] **बेहोशी, अचेतना।**

मूरछना, मूरछनो—क्रि. अ. [स. मूर्च्छा] **मूर्छित होना।**

मूरछा—सज्ञा स्त्री. [स. मूर्च्छा] **बेहोशी, अचेतना।** उ.—(क) माया-मत्र पढत मन निसि दिन मोह-मूरछा आनत—१-४९। (ख) सूर मिटै अज्ञान-मूरछा ज्ञान-सुभेषज खाऐ—२-३२।

मूरत, मूरति—सज्ञा स्त्री. [स. मूर्ति] **प्रतिमा, मूर्ति।** उ.—मूरति त्रिया जु भई धरम की, तिनके हरि अवतार- सारा. ६७।

मूरतिवंत - वि. [स. मूर्ति+वत्] **सशरीर, मूर्तिमान।**

मूरध—सज्ञा पु [स. मूर्द्धा] **सिर, मस्तक।**

मूरनि—सज्ञा स्त्री. सवि [हिं. मूर=मूल] **जड़ी-बूटियों के लिए।** उ.—अनजानत मूरनि कौ जित-तित उठि दौरी जिनि जहाँ बताई—७४८।

मूरि, मूरी—सज्ञा स्त्री. [स. मूल] (१) **मूल, जड़।** (२) **जड़ी-बूटी।** उ.—(क) सूरदास प्रभु बिनु क्यौ जीवौ जात सँजीवन मूरि। (ख) कृष्ण सुमत्र जियावन मूरी जिन जन मरत जिवायौ—२-३२।

यौ०—ठगमूरी—**कोई नशीली चीज जिसे पथिक को खिलाकर उसे ठग लिया जाय।** उ.—सूर कहूँ ठगमूरी खाई ब्याकुल डोलत ऐसे—पृ. ३३३ (२३)।

सज्ञा स्त्री. [हिं मूली] **मूली।** उ.—मूरी के पातन के बदले को मुक्ताहल दैहै - ३१०५।

मूरुख, मूर्ख—वि. [स. मूर्ख] **नादान, नासमझ।**

मूर्खता—सज्ञा स्त्री. [स.] **मूढता, नासमझी।**

मूर्खा, मूर्खिनि, मूर्खिनी—वि. [स. मूर्ख] **मूढा (स्त्री)।**

मूर्खिमा—सज्ञा स्त्री. [स.] **मूर्खता, अज्ञता।**

मूर्च्छन, मूर्छन—सज्ञा पु. [स. मूर्च्छन] (१) **अचेत या बेहोश होने की क्रिया या भाव।** (२) **अचेत या बेहोश करने का मत्र या प्रयोग।** उ.—मोहन-मूर्छन (मुर्छन) बसीकरन पढि अगमति देह बढाऊँ—१०-४९। (३) **कामदेव का एक बाण।**

मूर्च्छना, मूर्छना—सज्ञा स्त्री. [स. मूर्च्छना] **संगीत में स्वरो का आरोह-अवरोह।**

मूर्च्छा, मूर्छा - सज्ञा स्त्री. [स. मूर्च्छा] **अचेतावस्था।**

मूर्च्छित, मूर्छित—वि. [स. मूर्च्छित] **बेसुध, अचेत।** उ.—गौतम रूप धारि तहँ आयौ। मूर्च्छित भयौ अहिल्या पायौ—६-८।

मूर्त, मूर्त्त—वि. [स. मूर्त्त] **जिसका रूप या आकार हो।**

मूर्तता, मूर्त्तता—सज्ञा स्त्री [स. मूर्त्तता] **मूर्त या साकार होने का भाव, साकारता।**

मूर्ति, मूर्त्ति—सज्ञा स्त्री. [स. मूर्त्ति] (१) **शरीर।** (२) **आकृति स्वरूप।** (३) **प्रतिमा, विग्रह।**

मुहा०—मूर्ति के समान (वत्)—**स्तब्ध, निश्चल।**

(४) **चित्र, तसवीर।**

मूर्तिकला, मूर्त्तिकला—सज्ञा स्त्री. [स. मूर्त्तिकला] **मूर्ति या प्रतिमा बनाने की विद्या या कला।**

मूर्तिकार, मूर्त्तिकार—सज्ञा पु [स. मूर्त्तिकार] (१) **प्रतिमा बनानेवाला।** (२) **चित्र बनानेवाला।**

मूर्तिपूजक—सज्ञा पु [स. मूर्ति+पूजक] **देव-भाव से प्रतिमा या विग्रह की पूजा करनेवाला।**

मूर्तिभंजक, मूर्त्तिभंजक - वि [स. मूर्त्ति+भञ्जक] **जो देव-मूर्तियो या प्रतिमाओं की पूजा व्यर्थ या आडंबर मानकर उनको तोड़ डालता हो।**

मूर्तिपूजा—सज्ञा स्त्री [स. मूर्त्ति+पूजा] **देव मानकर प्रतिमा का पूजन करने की क्रिया या भाव।**

मूर्तिमान, मूर्तिमान्-वि. [स. मूर्त्ति+मान्] (१) **जिमका रूप या आकार हो, सशरीर।** (२) **साक्षात्।**

मूर्द्ध, मूर्ध—सज्ञा पुं. [स. मूर्द्धन्] **सिर, मस्तक।**

मूर्द्धन्य—वि. [स.] (१) **मूर्द्धा से सबध रखनेवाला।** (२) **सिर या मूर्द्धा मे स्थित।** (३) **जिन (वर्णो) का उच्चारण मूर्द्धा से हो; जैसे—ऋ, ट, ठ, ड, ढ, ण, र और ष।**

मूर्द्धा—सज्ञा पु. [स. मूर्द्धन्] **सिर, मस्तक।**

मूल—सज्ञा पु. [स.] (१) **पेड़ की जड़।** उ.—(क) महा मूढ़ सो मूल तजि साखा जल नावै—२-९। (ख) सीचत नीर के सजनी मूल पतार गई—२७७३। (२) **मीठी जड़ या कंद।** (३) **आदि, प्रारभ।** (४) **आदि**

कारण, उत्पत्ति का हेतु, आधार। उ.—भई आकास-बानी तिहिं बार। द्वै वे चार स्लोक बिचार।' ''। मूल भागवत के वेई चारि। सूर भलीबिधि इन्है बिचारि—२-३७। (५) असल धन या पूँजी जिससे कोई व्यापार आरभ किया जाय। उ.—(क) होतो नफा साधु की सगति, मूल गाँठि नहि टरतौ—१-२९७। (ख) और बनिज मै नाही लाहा, होति मूल मै हानि—१-३१०। (६) किसी वस्तु का प्रारभिक भाग। (७) सत्ताइस नक्षत्रो मे उन्नीसवाँ। (८) किसी देवता का आदि या बीज मत्र।

वि.—मुख्य, प्रधान।

सज्ञा पु [स. मूल्य] महत्व, सम्मान। उ.—देखिकै नारि मोहित जो होवै। आपनो मूल या बिधि सो खोवै—८-११।

मूलक—सज्ञा पु. [स.] (१) मूली। (२) मूल रूप।

वि. उत्पन्न करनेवाला, जनक।

मूल दुवार, मूल द्वार—सज्ञा पु. [स. मूल+द्वार] प्रधान या सिंह द्वार। उ.– आँखि, कान, मुख मूल दुवार—४-१२।

मूलधन—सज्ञा पु. [स.] पूँजी।

मूलस्थल, मूलस्थली—सज्ञा पु. [स.] थाला, आलबाल।

मूलहु—सज्ञा पु. सवि. [स. मूल+हिं. हु] पूँजी या मूलधन को भी। उ.—सूरदास तेहि बनिज कवन गुन मूलहु माँझ गवाँए—३२०१।

मूलाधार - सज्ञा पु. [स.] शरीर के भीतरी छह चक्रो में एक।

मूलिका—सज्ञा पु [स.] औषधि की जड, जड़ी।

मूली—सज्ञा स्त्री. [स. मूलक] एक पौधे की लम्बी जड़ जो खायी जाती है। उ.—मूली (मूरी) के पातन के बदले को मुक्ताहल दैहे– ३१०५।

मुहा०—(किसी को) मूली-गाजर समझना—बहुत तुच्छ समझना।

मूल्य—सज्ञा पु. [स.] दाम, कीमत।

मूल्यन –सज्ञा पु. [स. मूल्य+हि. न] मूल्याकन।

मूल्यवान, मूल्यवान्—वि. [स. मूल्यवान्] कीमती।

मूल्यांकन—सज्ञा पु. [स.] (१) किसी वस्तु का मूल्य निश्चित करना। (२) किसी वस्तु का महत्व आँकना।

मूष, मूषक—सज्ञा पुं. [सं.] चूहा।

मूषकवाहन—सज्ञा पु. [स.] गणेश जी।

मूषत—क्रि.स.[हिं.मूसना] चुरा ले जाता है। उ.—निशा-निमेष कपाट लगे बिनशशि मूषत सतसार—२८८८।

मूषना, मूषनो—क्रि. स. [हि. मूसना] चुरा ले जाता है।

मूषिक—सज्ञा पु. [स.] चूहा।

मूषी—क्रि. स. [हि. मूसना] चुरा ले गया। उ.—तेरे हती प्रेम-सपति सखि सो सपति केहि मूषी—२२७५।

मूषे—क्रि. स. [हि. मूसना] चुरा ले गये। उ.—मेरेहु जान सूर प्रभु साँचे मदन चोर मिलि मूषे हो –१९६२।

मूस—सज्ञा पु.[स. मूष]चूहा। उ.—बालक मूस ज्यौ पूँछ धरि खेलिए तैसे हरि हाथ हाथी गिरायौ—२५९६।

मूसना, मूसनो—क्रि. स. [स मूषण] चुरा ले जाना।

मूसर, मूसल—सज्ञा पु. [स. मुशल, हिं. मूसल] (१) धान कूटने का मूसल। (२) एक अस्त्र जिसे बलराम धारण करते थे। उ.—हलधर हल-मूसल कर लीन्हे, सबही मलेच्छ सँहारे—सारा. ६०४। (३) राम और कृष्ण के पद का एक चिह्न।

वि.—अपढ, गँवार या असभ्य।

मूसरचंद, मूसलचंद—वि. [हि. मूसल+चद्र] (१) अपढ़, गँवार। (२) हट्टा-कट्टा परन्तु निकम्मा।

मूसरधार, मूसलधार, मूसलाधार—क्रि. वि. [हि. मूसल +धार] बहुत मोटी धार से, बहुत तेजी से।

सज्ञा पु.—बहुत मोटी धार। उ.—मूसलधार टूटी चहुँ दिसि ते ह्वै गयौ दिवस अँधेरो—९५९।

मूसा—सज्ञा पु. [स. मूषक] चूहा। उ.—जैसै घर बिलाव के मूसा रहत बिषय-बस वैसौ—२-१४।

सज्ञा पु. [इबरानी] यहूदियो के एक पैगबर।

मूसि—क्रि. स. [हि. मूसना] चुरा-चुराकर। उ.—(क) मूसि मूसि लै गए मन माखन जो मेरे धन हो री—१५१३। (ख) सरबस मूसि देत माधव को—पृ. ३३४ (४०)।

मूसी—क्रि. स. [हि. मूसना] चुरा ले गया, चुरा ली। उ.—(क) मृग मूसी नैननि की सोभा जाति न गुप्त करी—९-६३। (ख) तेरे हती प्रेम-सपति सखि सो सपति सब मूसी (मूषी)—२२७५।

मृग—संज्ञा पुं. [सं.] (१) वन्य पशु । (२) हिरन । उ.—(क) मृग मूसी नैननि की सोभा—९-६३ । (ख) द्वै अपराध मोहिं वै लागे मृग-हित दियौ हथियार—९-८३ । (३) मृगशिरा नक्षत्र । (४) वैष्णवो के तिलक का एक भेद ।

मृगअरि—संज्ञा पु. [स. मृग+अरि] सिंह । उ.—राजति मृगअरि की सी लंक—२१९३ ।

मृगचरम, मृगचर्म—संज्ञा पु. [स. मृगचर्म] हिरन की खाल जो साधु-सन्यासी ओढ़ते,पहनते औरबिछाते हैं ।

मृगछाल, मृगछाला—संज्ञा स्त्री. [स. मृग+हि. छाल, छाला] हिरन की खाल । उ.—दंड कमंडल हाथ बिराजत और ओढ़े मृगछाला—सारा. ३३३ ।

मृगछौना—संज्ञा पु. [स. मृग+हि छौना] हिरन का बच्चा । उ.—मै मृगछौना मै चित दयौ, तातैं मैं मृग-छौना भयौ—५-३ ।

मृगज—संज्ञा पु. [स.] मृग का बच्चा, मृग । उ.—(क) खंजन, मीन मृगज चपलाई नहिं पटतर एक सैन—१३४९ । (ख) कमल खंजन मृगज मीन लोचन जीते—२१५६ ।

मृगजल—संज्ञा पु. [स.] मृगतृष्णा की लहरें ।

मृगजा—संज्ञा स्त्री. [सं.] कस्तूरी ।

मृगतृषा, मृगतृष्णा, मृगतृष्णिका, मृगतृष्ना—संज्ञा स्त्री. [स. मृग+तृषा, तृष्णा] जल की लहरों का वह भ्रम जो रेतीले या ऊसर मैदान में कड़ी धूप पड़ने पर हो जाता है और जिसे जल समझकर प्यासा मृग दूर तक व्यर्थ दौड़ता है, मृग-मरीचिका । उ.—(क) रजनी गत बासर मृगतृष्ना रस हरि कौन चयौ—१-७८ । (ख) मृग-तृष्ना आचार-जगत जल ता सँग मन ललचावै—२-१३ ।

मृगदाव—संज्ञा पु. [स. मृग+दाव=वन] (१) वन जहाँ मृग बहुत हों । (२) 'सारनाथ' का प्राचीन नाम ।

मृगधर—संज्ञा पु. [सं.] चंद्रमा ।

मृगनाथ—संज्ञा पु. [स.] सिंह ।

मृगनाभि—संज्ञा पु. [स.] कस्तूरी ।

मृगनारी—संज्ञा पु. [स. मृग+नारी] हिरनी, मृगी । उ.—मृगनारी सौ बूझहीं बूझैं सुकुमारी—१८२३ ।

मृगनैनी—वि. [स. मृग+हि. नयन+ई] हिरन-जैसे सुन्दर नेत्र वाली (नारी) ।

मृगपति—संज्ञा पु. [सं.] सिंह । उ.—कर-पल्लव उडु-पति रथ खैंच्यौ मृगपति बैर करयौ—२८९५ ।

मृगबारि—संज्ञा पु. [स. मृगवारि] मृगतृष्णा का जल ।

मृगभद्र—संज्ञा पु. [स.] हाथियो की एक जाति ।

मृगमद—संज्ञा पु. [स.] कस्तूरी । उ.—(क) ज्यौ माखी मृगमद मंडित तन परिहरि पूय परै—१-१९८ । (ख) मथि मृगमद-मलय-कपूर माथै तिलक किये—१०-२४ ।

मृगमरीचिका—संज्ञा स्त्री. [सं.] मृगतृष्णा ।

मृगमित्र—संज्ञा पु. [स.] चंद्रमा ।

मृगमेद—संज्ञा पु. [स] कस्तूरी ।

मृगया—संज्ञा स्त्री. [स] शिकार, आखेट, अहेर । उ.—एक दिवस मृगया कौ निकस्यौ कठ महामनि लाइ—सारा. ६४४ ।

मृगराज—संज्ञा पु. [स.] सिंह ।

मृगरोचन—संज्ञा पु. [स.] कस्तूरी ।

मृगलांछन—संज्ञा पु. [स.] चंद्रमा ।

मृगलेखा—संज्ञा स्त्री. [स] चंद्रमा का धब्बा ।

मृगलोचना, मृगलोचनी—वि. [सं. मृग+ लोचन] (स्त्री) जिसके नेत्र मृग के समान हो ।

मृगवारि—संज्ञा पु [स.] मृगतृष्णा का जल ।

मृगशिरा, मृगसिरा—संज्ञा पु. [स. मृगशिरस्, हि. मृग-शिरा] सत्ताइस नक्षत्रो मे पाँचवाँ ।

मृगांक—संज्ञा पु. [स] (१) चंद्रमा । (२) (वैद्यक में) एक रस जो सुवर्ण, रत्नादि से बनता है ।

मृगा—संज्ञा पु. [स. मृग] हिरन, मृग । उ—(क) ज्यौ मृगा कस्तूरि भूलै, सुतौ ताके पास—१-७० । (ख) धावत कनक मृगा के पाछैं—१०-१९८ ।

मृगाक्षि, मृगाक्षी, मृगाछि, मृगाछी—वि स्त्री. [स मृगाक्षी] (स्त्री) जिसके नेत्र मृग जैसे सुंदर हो ।

मृगाश, मृगाशन—संज्ञा पु. [स.] सिंह ।

मृगिअन—संज्ञा पु. सवि. [स मृग] मृगो को । उ—जैसे मृगिअन ताकि बधिक दृग कर कोदंड गहि तानै—३१३६ ।

मृगिनी, मृगी—संज्ञा स्त्री. [सं. मृग] हिरनी, हरिणी। उ —(क) मृग-मृगिनी द्रुम बन सारस खग काहू नहीं बतायौ री। (ख) जद्यपि ब्याध बधै मृग प्रगटहिं मृगिनी रहै खरी री—पृ. ३३३ (२५)।

मृगेंद्र, मृगेश—संज्ञा पु. [सं.] सिंह।

मृड़ा, मृड़ानी—संज्ञा स्त्री. [सं.] दुर्गा, पार्वती।

मृणाल—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) कमल की नाल जिसमें फूल लगता है। (२) कमल की जड़। (३)खस।

मृणालिका—संज्ञा स्त्री. [सं.] कमलनाल।

मृणालिनी—संज्ञा स्त्री. [सं.] कमलिनी।

मृणाली- संज्ञा स्त्री. [सं.] कमलनाल।

मृत—वि. [सं.] मरा हुआ, मुर्दा।

मृतकंबल—संज्ञा पु. [सं.] वस्त्र जिससे मुर्दा ढका जाय, कफन।

मृतक—संज्ञा पु. [सं.] (१) मरा हुआ प्राणी। उ.—(क) दासी बालक मृतक निहारि। परी धरनि पर खाइ पछारि—६-५। (२) मरे हुए के समान। उ.—जबतें कह्यौ कंस सों मन मोहन जीवत मृतक करि लेखौ—२५४८।

मुहा०—मृतकहु तें पुनि मारे—जो स्वयं ही मर रहा था उसी को मार दिया, जिस पर स्वयं अपार संकट था, उस पर और भी अत्याचार किया। उ.—सूर स्याम करी पिय ऐसी मृतकहु तें पुनि मारे—१० उ०-८३।

मृतक कर्म—संज्ञा पु. [सं.] मरे हुए प्राणी का क्रिया-कर्म या प्रेत-कर्म।

मृतक धूम—संज्ञा पु. [सं.] राख, भस्म।

मृतजीवनी—संज्ञा स्त्री. [सं.]। वह विद्या जिससे मृतक को भी जिला लिया जाय।

मृतप्राय—वि. [सं.] जो मरने के निकट हो।

मृतभाषा—संज्ञा स्त्री. [सं.] भाषा जो पहले कभी प्रचलित रही हो, परन्तु अब वैसी प्रचलित न हो और उसको बोलनेवाले बहुत कम हों।

मृतवत्सा—वि स्त्री. [सं.] (स्त्री) जिसकी संतान मर गयी हो या बार-बार मर जाती हो।

मृतसंजीवनी—संज्ञा स्त्री. [सं.] एक बूटी जिससे मृतक को भी जिला लिया जाय।

मृत्तिका—संज्ञा स्त्री. [सं.] मिट्टी। उ.—कियौ स्नान मृतिका लाइ—१-३४१।

मृत्युंजय—संज्ञा पु. [सं.] (१) वह जिसने मृत्यु पर विजय पा ली हो। (२) शिव। (३) शिव का एक जाप जिससे मृत्यु टल जाती है।

मृत्यु—संज्ञा स्त्री. [सं.] मौत, मरण।

मृत्युबंधु—संज्ञा पु. [सं.] यमराज।

मृत्युलोक—संज्ञा पु. [सं.] (१) यमलोक। (२) संसार।

मृत्युहिं—संज्ञा स्त्री. सवि. [सं. मृत्यु.] मृत्यु को भी। उ.—मृत्युहिं बाँधि कूप मैं राखै भावी-बस सो मरै—१-२६४।

मृदंग, मृदंगा—संज्ञा पु. [सं. मृदंग] एक बाजा जो ढोलक से कुछ लम्बा होता है। उ.—ताल मृदंग झाँझ इद्रिनि मिलि बीना बेनु बजायौ—१-२०५।

मृदु—वि. [सं.] (१) छूने में नरम, कोमल। उ.—अति सुदेस मृदु हरत चिकुर मन मोहन-मुख बगराई—१०-१०८। (२) जो सुनने में कर्कश न हो। (३) सुकुमार। (४) मंद, धीमा। उ.—बिधु मुख मृदु मुसुक्यानि अमृत सम सकल लोक लोचन प्यारी—१-६९।

मृदुता—संज्ञा स्त्री.[सं.] (१) कोमलता। (२) धीमापन।

मृदुल—वि. [सं.] (१) जो छूने में नरम हो, कोमल। (२) सुकुमार। उ.—मंजु मेचक मृदुल तनु—१०-१०९। (३) दयामय, कृपालु। उ.—सूर स्याम सरवज्ञ कृपानिधि करुना मृदुल हियौ—१-१२१।

मृदुलता—संज्ञा स्त्री. [सं.] कोमलता।

मृनाल—संज्ञा स्त्री. [सं. मृणाल] कमल की नाल या जड़।

मृन्मय—वि. पु. [सं.] मिट्टी का बना हुआ।

मृषा—अव्य. [सं.] झूठमूठ, व्यर्थ।

वि.—झूठ, असत्य।

मे—अव्य. [हिं. महँ] अधिकरण कारकीय चिह्न।

मेंगनी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मींगी] पशु की विष्टा, लेंडी।

मेकल—संज्ञा पु. [सं.] विंध्य पर्वत का एक भाग।

मेकलकन्यका, मेकलकन्या, मेकलसुता—संज्ञा स्त्री. [सं.] नर्मदा नदी जो मेकल पर्वत से निकली है।

मेख—संज्ञा पु. [स. मेष] (१) भेड़ । (२) एक राशि । (३) एक लग्न ।
संज्ञा स्त्री. [फा.] (१) कील । (२) खूँटा ।
मुहा०—मेख ठोकना—(१) (हाथ-पैर मे कील ठोकने-जैसा) कठोर दंड देना । (२) दबाना, हराना । मेख मारना—(१) कील ठोंककर हिलना-डोलना बंद करना । (२) ऐसी भाँजी मारना कि होता हुआ काम भी न हो । (३) चलते हुए काम मे बाधा डालना ।
मेखल, मेखला, मेखली—संज्ञा स्त्री. [स. मेखला] (१) करधनी, किंकिणी । उ.—कटि पट पीत मेखला मुखरित पाइनि नूपुर सोहै—८५१ । (२) वह वस्तु जो दूसरी के मध्य भाग में उसे चारो ओर से घेरे हो । (३) कमर मे पहनी गयी डोरी । (४) गोल घेरा, मंडल । (५) कमरबंद जिसमे तलवार बाँधी जाती है । (६) साधुओं के गले मे पड़ा रहनेवाला कपड़े का टुकड़ा, कफनी । उ.—कानन मुद्रा पहिरि मेखला धरै जटा जोग अधारी—३२२३ ।
मेघ—संज्ञा पु. [स.] (१) बादल । उ.—को करि लेइ सहाइ हमारी प्रलय काल के मेघ अरे—८३२ । (२) संगीत के छह रागो में एक ।
मेघकाल—संज्ञा पु. [स.] वर्षा ऋतु ।
मेघधनु—संज्ञा पु. [स.] इंद्रधनुष ।
मेघध्वज—संज्ञा पु [स.] एक राजा जो विष्णु का बड़ा भक्त था और जिसने विदर्भ राज की कन्या से विवाह किया था । उ.—मेघध्वज सौं भयौ बिबाह । बिष्नु भक्ति कौ तिहिं उतसाह—४-१२ ।
मेघनाथ—संज्ञा पु. [स.] इन्द्र ।
मेघनाद—संज्ञा पु. [स.] (१) मेघ का गर्जन । (२) रावण का पुत्र इन्द्रजित जिसे लक्ष्मण ने मारा था ।
मेघपटल—संज्ञा पु. [स.] बादल की घटा ।
मेघपति—संज्ञा पु. [स.] इन्द्र ।
मेघपुष्प—संज्ञा पु. [स.] (१) इन्द्र का घोड़ा । (२) श्रीकृष्ण के रथ के चार घोड़ो में एक ।
मेघमलार, मेघमल्लार—संज्ञा पु. [स.] एक राग ।
मेघमाल, मेघमाला—संज्ञा स्त्री. [स.] बादल की घटा ।
मेघराज—संज्ञा पु. [स.] इन्द्र ।
मेघबर्त, मेघबर्तक, मेघवर्त, मेघवर्तक, मेघवर्त्त—संज्ञा पु. [स मेघवर्त्त] प्रलयकालीन मेघो मे एक । उ.—मुनि मेघबर्त सजि सैन आए । बलबर्त, बारिबर्त, पौनबर्त, बज्र, अग्निबर्तक, जलद संग ल्याए—८५३ ।
मेघवाइ, मेघवाई—संज्ञा स्त्री. [हि. मेघ + वाई] बादल की घटा ।
मेघवाहन—संज्ञा पु. [स.] इन्द्र ।
मेघा—संज्ञा पु. [स. मेघ] बादल ।
संज्ञा पु.—मेढक, मंडूक ।
मेघाच्छन्न—वि. [स.] बादलो से ढका हुआ ।
मेघाच्छादित—वि. [स.] बादलो से ढका हुआ ।
मेघावर, मेघावरि, मेघावलि, मेघावारि—संज्ञा स्त्री. [स. मेघावलि] बादलो की घटा ।
मेघास्थि—संज्ञा पु [स.] ओला ।
मेचक—संज्ञा पु. [स.] (१) अंधकार । (२) धुआँ ।
वि.—काला, श्याम । उ.—मंजु मेचक मृदुल तनु—१०-१०९ ।
मेचकता, मेचकताइ, मेचकताई—संज्ञा स्त्री. [स. मेचकता] कालापन, श्यामता ।
मेजा—संज्ञा पु. [हि. मेंढक, पू० हि. मेझुका] मेढक ।
मेटक—वि. [हि. मेटना] मिटानेवाला, नाशक ।
मेटत—क्रि. स. [हि. मेटना] नष्ट करता है । उ.—सूरदास जो संतनि कौ हित कृपावत मेटत दुख-जालहिं—१९४ ।
मेटति—क्रि. स. [हि. मेटना] नष्ट करती है । उ.—मेटति है अपने बल सबहिनि की रीति—६५० ।
मेटन—संज्ञा स्त्री. [हि. मेटना] मेटने के लिए । उ.—सूरदास प्रभु गोकुल प्रगटे मेटन कौ भू-भार—१०-१५ ।
मेटनहार, मेटनहारा, मेटनहारो—संज्ञा पु. [हि. मेटना + हार] मिटानेवाला । उ.—सो अब सत्य होत इहि औसर को है मेटनहार—९-१२१ ।
मेटना, मेटनो—क्रि. स. [स. मृष्ट, प्रा. मिट्ट + ना] (१) मिटा देना । (२) दूर करना । (३) नष्ट करना ।
मेटि—क्रि. स. [हि. मेटना] (१) मिटाकर, नष्ट करके ।

उ.—बिधि की बिधि मेटि करति अपनी नई रीति —६१३।

प्र०—मेटि सकै—मिटा सकता है। उ.—जो कछु लिखि राखी नँदनदन मेटि सकै नहि कोइ—१-२६२। (२) दूर करके, रहने न देकर। उ.—मुनि-मद मेटि दास-ब्रत राख्यौ अबरीप हितकारी—१-१७। (३) हटाकर, प्रचलित न रहने देकर। उ.—सुरपति पूजा मेटि गोबर्धन कीनो यह सजोग—९२१।

मुहा०—मेटि धरे—आदर सम्मान मिटाकर अप्रसन्न कर दिया। उ.—कुलदेवता हमारे सुरपति तिनकौ सब मिलि मेटि धरे—९५३।

मेटिबो, मेटिबौ—सज्ञा पु [हि. मेटना] मेटने की क्रिया या भाव।

क्रि. स.—दूर करना। उ.—सुख सदेस सुनाइ सबन कौ दिन दिन को दुख मेटिबो—२९४२।

मेटिया—सज्ञा स्त्री. [हि. मटका] मटकी।

वि. [हि. मेटना] मेटनेवाला।

मेटी—क्रि. स. [हि. मेटना] मिटायी, नष्ट की।

प्र०—मेटी नहि जाहि—मिटायी नही जा सकती। उ.—सूर सीय पछिताति यहै कहि करम-रेख मेटी नहि जाहि—९-५९।

(२) दूर की, मिटा दी। उ.—मेटी पीर परम पुरुषोत्तम—१-११३।

मेटुकी—सज्ञा स्त्री. [हि. मटकी] मटकी।

मेटुआ, मेटुवा—वि. [हि. मेटना] दूसरे का किया हुआ उपकार न माननेवाला, कृतघ्न।

मेटे—क्रि. स. [हि. मेटना] (१) मिटा दिये, साफ कर दिये। उ.—हमै नँदनदन मोल लिये। मेटे अक बिये—१-१७१। (२) नष्ट कर दिये। उ.—अग परसि मेटे जजाला—७९९।

मेटै—क्रि. स. [हि. मेटना] दूर करे, रहने न दे। उ.—सूर स्याम मेटै सताप—१-२६१।

मेटोगी—क्रि. स. [हि. मेटना] दूर करूँगी, रहने न दूँगी। उ.—मै हारी त्योही तुम हारो चरन चापि स्रम मेटोगी—१७७९।

मेटौं—क्रि. स. [हि मेटना] दूर करूँ, रहने न दूँ। उ.—तुव दरस तन-ताप मेटौं काम-दुद गँवाइ—६८३।

मेटौ—क्रि. स. [हि. मेटना] (१) मिटाओ, (लांछन आदि) दूर करो। उ—सूर स्याम इहि बरजि कै मेटौ अब कुल-गारी हो—१-४४। (२) (विपत्ति आदि) दूर करो। उ.—मेटो बिपति हमारी—१-१०३।

मेटयो, मेटयौ—क्रि. स [हि. मेटना] (१) मिटाया, दूर किया। उ.—(क) मेटयौ सबै दुराजै—१-३६। (ख) दुख मेटयो दुहूँ घाँ कौ—१-११?। (ग) दुरजोधन कौ मेटयो गारौ—१-१७२। (घ) जामवत मद मेटयौ—१०-१२७। (२) (बचन-आदि) तोड़ा।

मुहा०—न मेटयौ जाइ—(बचन आदि) तोड़ा नही जाता। उ.—तुम्हरो बचन न मेट्यो जाइ—११-१।

मेड़—सज्ञा पु. [स. भित्ति ?] (१) खेत का ऊँचा घेरा। (२) खेत के बीच में या सीमा पर बना कुछ ऊँचा मार्ग।

मेड़रा—सज्ञा पु. [हि. मडरा] (१) किसी गोल चीज का उभरा हुआ किनारा। (२) मडलाकार ढाँचा।

मेडराना, मेडरानो—क्रि. अ. [हि. मँडराना] (१) मडल बाँधकर उड़ना। (२) चारो ओर घूमना। (३) आस-पास फिरना।

मेडरी—सज्ञा स्त्री [हि मेडरा] (१) गोल चीज का उभरा हुआ किनारा। (२) गोल ढाँचा।

मेड़िया—सज्ञा स्त्री. [हि मढो] मडप, घर।

मेढक, मेढ़क—सज्ञा पु. [स. मडूक, हि. मेढक] मंडूक।

मेढ़ा—सज्ञा पु. [स. मेढ्र] नर भेड़, दुंबा।

मेढ़ी—सज्ञा स्त्री. [स. वेणी] तीन लड़ियो की चोटी।

मेथी—सज्ञा स्त्री. [स.] एक पौधा जिसका साग खाया जाता है और जिसकी फलियो के दाने 'मसाले' के काम आते है। उ.—सरसो मेथी, सोवा, पालक, बथुआ राँध लियौ जु उतालक—३९६।

मेथौरी—सज्ञा स्त्री [हि. मेथी+बरी] मेथी के साग और उर्द की पीठी की बरी या बड़ियाँ।

मेद्—सज्ञा पु. [स मेदस्, मेद] (१) चरबी।

उ.—रुधिर-मेद, मल-मूत्र, कठिन कुच, उदर गध

गंधात—२-२४। (२) चरबी बढ़ने या मोटा होने का रोग। (३) कस्तूरी।

मेदा—सज्ञा स्त्री. [अ.] पाकाशय, पेट।

मेदनी, मेदिनी—सज्ञा स्त्री. [स. मेदिनी] पृथ्वी जिसको मधु कंटभ के 'मेद' से उत्पन्न माने जाने के कारण 'मेदिनी' कहते हैं। उ.—बरषत मेह मेदनी के हित—२१९४।

मेध, मेधा—सज्ञा पु. [स. मेध] यज्ञ।

मेधा—सज्ञा स्त्री. [स.] स्मरण रखने की शक्ति।

मेधविन, मेधावी—वि. [स. मेधाविन्] (१) तीव्र स्मरण शक्तिवाला। (२) बुद्धिमान। (३) विद्वान।

मेनका—सज्ञा स्त्री. [स.] एक प्रसिद्ध अप्सरा जिसने विश्वामित्र का तप भग करके उनके संयोग से शकुतला को जन्म दिया था।

मेमना—सज्ञा पु. [अनु. मे मे] (१) भेंड का बच्चा। (२) घोड़ो की एक जाति।

मेमार—सज्ञा पु. [अ.] थवई, राजगीर।

मेर—सज्ञा पु. [स. मेल] मेल।

सज्ञा स्त्री. [हि. मेड] मेड-जैसा ऊँचा। उ.—मानहुँ कुमुदिनि कनक मेर चढि ससि सनमुख मृदु सहित सिधाई—२११६।

सर्व. [हि. मेरा] मेरा। उ.—मेर ही या हृदय की हरि कठिन सकल उपाइ —११-१।

मेरनि—सज्ञा पु. सवि. [हि मेल] मेल में। उ.—अपने अपने मेरनि म नो उनि होरी हरषि लगाई।

मेरवन—सज्ञा स्त्री. [हि. मेरवना] (१) मिलाने की क्रिया या भाव। (२) मिलाई हुई चीज।

मेरना, मेरनो, मेरवना, मेरवनो—क्रि. स. [स. मेलना] (१) कई वस्तुओं को मिश्रित करना। (२) मेल-मिलाप कराना।

मेरा—सर्व. [हि. मै+रा] 'मैं' का सबंधकारकीय रूप।

सज्ञा पु. [हि. मेला] (१) मेला। (२) भीड़।

मेराउ, मेराव—सज्ञा पु. [हि. मेल] मेल-मिलाप।

मेरियै—सर्व. [हि. मेरी] मेरी ही। उ —यह सब मेरियै आइ कुमति—१-३००।

मेरी—सर्व. स्त्री. [हि. मेरा] 'मेरा' का स्त्रीलिंग रूप। उ.—कौन गति करिहौ मेरी नाथ—१-१२४।

सज्ञा स्त्री.—(१) अहंकार। (२) मोह माया।

यौ०—मैं-मेरी—मोह-माया। मेरी-मेरी—मोह-ममता, माया।

मुहा०—मेरी मेरी करना—मोह-ममता लगाना, मोह-माया में फँसना। मेरी मेरी करि—मोह माया लगाकर या उसमें फँसकर। उ.—अब मेरी-मेरी करि बौरे बहुरौ बीज बयौ—१-७८।

क्रि. स. [हि. मेलना] मिलायी, मिश्रित की।

मेरु—सज्ञा पु. [स.] (१) 'सुमेरु' पर्वत जो सोने का कहा गया है। (२) पर्वत। उ.—(क) तिनका सौ अपने जन कौ गुन मानत मेरु समान—१-८। (ख) अघ कौ मेरु बढाइ—१६५। (३) जाप की माला का बडा दाना जो 'सुमेरु' कहलाता है।

मेरुदंड—सज्ञा पु. [स.] पीठ की निचली हड्डी, रीढ़।

मेरे—सर्व. [हि. मेरा] 'मेरा' का बहुवचन। उ.—जौ प्रभु मेरे दोष बिचारै—१-१८३।

मेरै—सर्व. सवि. [हि. मेरा] (१) मेरे (पास)। उ.—खेवनहार न खेवट मेरै—१-१८४। (२) 'मेरे' का वह रूप जो सम्बधी शब्द की विभक्ति लुप्त होने पर उसे दिया जाता है। उ.—तौ बिस्वास होइ मन मेरै—१-१४६।

क्रि. स. [हि. मिलाना] मिश्रित करते हैं।

मेरो, मेरौ—सर्व. [हि. मेरा] मेरा। उ.—मेरौ मन मतिहीन गुसाई —१-१०३।

क्रि स. [हि. मेलना] मिश्रित करो।

मेल—सज्ञा पु. [स.] (१) कई वस्तुओ या व्यक्तियों का संयोग या मिलाप। (२) एका, एकता।

यौ०—मेल-जोल, मेल-मिलाप या हेल-मेल—एका, एकता।

मुहा०—मेल करना—संधि या एका करना। मेल होना—संधि या एका होना।

(३) मित्रता, प्रीति।

मुहा०—मेल बढना—मित्रता गाढ़ी होना। मेल बढ़ाना—मित्रता घनिष्ठ करना।

(४) संग, संगति, साथ, अनुरूप। उ.—ते अपनै-अपनै मेल निकसी भाँति भली—१०-२४।

मुहा०—मेल खाना, बैठना या मिलना—(१) साथ निभना। (२) दो चीजों का जोड़ ठीक-ठीक होना।

(५) जोड़, टक्कर, बराबरी। (६) प्रकार, रीति। (७) दो वस्तुओं का मिश्रण।

मेलत—क्रि. स. [हि. मेलना] डालता है। उ.—(क) कर पग गहि अँगुठा मुख मेलत—१०-६३। (ख) बरा कौर मेलत मुख भीतर—१२-२२४।

मेलना, मेलनो—क्रि. स. [हि. मेल] (१) मिश्रित करना। (२) डालना, रखना। (३) पहनाना।

क्रि. अ.—इकट्ठा या एकत्र होना।

मेल मल्लार—सज्ञा पु. [स.] एक रागिनी।

मेला—सज्ञा पु. [स. मेलक] (१) भीड़-भाड़। (२) दर्शन, उत्सव जैसे सामाजिक आयोजन के अवसर पर बहुत से लोगों का जमाव।

यौ०—मेला-ठेला—भीड़-भाड़।

मेलाना, मेलानो—क्रि. स. [हि. मेल] मेल करने या मिलने को प्रवृत्त करना।

मेलि—क्रि. स. [हि. मेलना] डालकर, रखकर। उ.—(क) सालिग्राम मेलि मुख भीतर बैठि रहे अरगाई—१०-२६३। (ख) ग्वालिन कर तैं कौर छुड़ावत, मुख लै मेलि सराहत जात—४६६।

प्र०—मेलि मोहिनी—मोहिनी डालकर। उ.—ना जानौ कछु मेलि मोहिनी राखे अँग-अँग भोरि—६५७।

मेली—सज्ञा पु. [हि. मेल] सगी-साथी।

वि.—हेल-मेल रखनेवाला।

क्रि. स. [हि. मेलना] उपस्थित या प्रस्तुत की, विक्रयार्थ रखी। उ.—मुक्ति आनि मदे मो मेली—३१४४।

मेले—क्रि. स. बहु. [हि. मेलना] मिलाये, डाले, मिश्रित किये। उ.—हीग हरद मिरच छौके तेले। अदरख और आँवरे मेले—३९६।

मेलो, मेलौ—क्रि. स. [हि. मेलना] डालो, रखो।

प्र०—बदि लै मेलो—बदीगृह में डाल दो। उ.—बरु ए गो धन हरौ कस सब मोहि बदि लै मेलो—२५११।

मेल्यो, मेल्यौ—क्रि. स. [हि मेलना] डाला, रखा। उ.—चुपकहि आनि कान्ह मुख मेल्यौ, देखौ देव बड़ाई—१०-२६१।

मेल्हना, मेल्हनो—क्रि अ. [देश.] (१) छटपटाना, बेचैन होना। (२) टाल-टूल कर समय बिताना।

मेव—सज्ञा पु. [देश.] राजपूताने की एक लुटेरी जाति, मेवाती।

मेवा—सज्ञा पु. स्त्री. [फा.] किशमिश आदि सूखे फल। उ—दूध दही घृत माखन मेवा जो माँगौ सो दै री—१०-१७६।

मेवाटी—सज्ञा स्त्री. [फा. मेवा + बाटी] एक पकवान जिसमें मेवा भरी जाती है।

मेवाड़—सज्ञा पु. [देश.] राजपूताने का एक प्रांत।

मेवात—सज्ञा पु. [स.] राजपूताने और सिंध का मध्यवर्ती प्रदेश।

मेवासा—सज्ञा पु. [हि. मवासा] (१) किला, गढ़। (२) रक्षा का आश्रय या स्थान। (३) घर, मकान।

मेवासी—सज्ञा. पु. [हि. मेवासा] (१) घर का स्वामी। (२) किले में सुरक्षित व्यक्ति आदि।

मेष—सज्ञा पु. [स.] (१) भेड़। (२) एक राशि। (३) एक लग्न। (४) सोच-विचार।

मुहा०—मेष या मीन-मेष करना—आगा-पीछा या सोच-विचार करना।

मेषै—सज्ञा पु सवि. [स. मेष] सोच-विचार।

मुहा०—करत मेषै—आगा-पीछा या सोच-विचार करता है। उ.—मनो आए सँग देखि ऐसे रँग मनहि मन परस्पर करत मेषै—२४९३।

मेषी—सज्ञा स्त्री. [स] मादा भेड़।

मेहँदी—सज्ञा स्त्री [स. मेन्धी] एक झाड़ी जिसकी पत्तियाँ पीसकर लगाने से हाथ-पैर आदि अंगों पर लाली चढ़ जाती है।

मुहा०—क्या पैर मे मेहँदी लगी है—जो किसी जगह से उठकर काम करने न जा रहा हो, उसको उठाने के लिए ताना। मेहँदी रचना—मेंहदी लगाने

मे खूब अच्छा लाल रंग चढ़ना। मेहँदी रचाना या लगाना—हाथ-पैर पर लाली चढ़ाने के लिए मेहदी की पत्तियाँ पीसकर लगाना।

मेह—संज्ञा पु. [स. मेघ, प्रा. मेह] (१) बादल। (२) वर्षा, झड़ी। उ.—ठाढे रहो आँगन ही हो पिय जौ लौ मेह न नख सिख भीजौ—२०२।

मेहतर—संज्ञा पु. [फा.] भंगी।

मेहनत—संज्ञा स्त्री. [अ.] श्रम, प्रयास।

मेहनताना—संज्ञा पु. [अ.+फा.] पारिश्रमिक।

मेहनती—वि. [हि. मेहनत] मेहनत करनेवाला।

मेहमान—संज्ञा पु. [फा.] पाहुना, अतिथि।

मेहमानदारी—संज्ञा स्त्री. [फा.] अतिथि-सत्कार।

मेहमानी—संज्ञा स्त्री.[हि. मेहमान] (१) अतिथि-सत्कार।

मुहा०—मेहमानी करना—गत बनाना, दुर्दशा करना। (२) मारना-पीटना। करति मेहमानी-दुर्दशा करती, अच्छी तरह गत बनाती। उ.—नद महरि की कानि करति हौ नातरु करति मेहमानी—१०४६। मेहमानी खाना—दुर्दशा या गत बनायी जाना। मेहमानी खाते—दुर्दशा या गत बनायी जाती। उ.—मेहमानी कछु खाते।

(२) अतिथि के रूप में रहने का भाव।

मेहर—संज्ञा स्त्री. [फा.] दया, कृपा।

मेहरबान—वि. [फा.] दयालु, कृपालु।

मेहरबानगी, मेहरबानी—संज्ञा स्त्री. [फा. मेहरबानी] दया, कृपा, अनुग्रह।

मेहरा—संज्ञा पु. [हि. मेहरी] स्त्रियों के बीच में बहुत अधिक रहने-बसने वाला।

संज्ञा पु. [हि मेहर] क्षत्रियों की एक उपजाति।

संज्ञा पु. [हि. मेह] मेह, वर्षा। उ.—बेगि साँवरे पाइँ धारिए सूर के स्वामी नतर भीजैंगो पियरो पट आवत है पिय मेहरा—२००१।

मेहराना, मेहरानो—क्रि. स. [हि. मेह+राना] वर्षा के कारण कुरकुरे पदार्थों का सील जाना।

मेहराब—संज्ञा स्त्री. [अ.] द्वार का ऊपरी अर्द्धमंडलाकार भाग।

मेहरारू, मेहरिया, मेहरी—संज्ञा स्त्री. [स. मेहना] (१) स्त्री, नारी। (२) पत्नी।

मेहु—संज्ञा पु. [हि. मेह] वर्षा, झड़ी। उ.—सूरदास विह्वल भई गोपी नैनन बरसत मेहु—१०-उ.-१९०।

मैं—सर्व. [सं. अह] उत्तमपुरुष कर्त्ता-रूप सर्वनाम, स्वयं।

यौ०—मैं-मेरी—गर्व, स्वार्थ या लोभ का भाव। उ.—(क) मैं-मेरी कबहूँ नहि कीजै कीजै पंच सुहातौ—१-२०३। (ख) मैं-मेरी करि जनम गँवावत—१-३०३। (२) मोह-ममता की भावना। उ.—मैं-मेरी अब रही न मेरैं, छुट्यो देह अभिमान—२-३३।

अव्य०—[हि. मय] युक्त, सहित।

मैंढ़नि—संज्ञा पु. सवि. [हि. मेढ़ा] मेढो (को)। उ.—अरु मम मैंढनि कौ मनि खोवहु ।गध्रव मैंढनि निमि लै धाए ।मम मैंढनि कौ लै गयौ कोइ—९-२।

मैं—अव्य. [हि. मय] युक्त, सहित।

मैका—संज्ञा पु.[हि. मायका] स्त्री के माता-पिता का घर।

मैगर, मैंगल—संज्ञा पु. [स मदकल] (मस्त) हाथी। उ.—(क) माधव जू मन सबही बिधि पोच। अति उनमत्त निरकुस मैंगल चिता रहित असोच—१-१०२। (ख) मेरे जानि गह्यौ चाहत हौ केरिकि मैंगल मातो—३१३२।

वि.—मस्त, मत्त। उ.—गर्जत अति गभीर गिरा मन मैंगल मत्त अपार—२८२६।

मैंजल—संज्ञा स्त्री.[अ. मंजिल](१) मंजिल। (२) यात्रा।

मैत्रि, मैत्री—संज्ञा स्त्री. [स. मैत्री] मित्रता। उ.—ताकौ कहा निहोरो हमको मैत्रि-भग करि दीनो—२९३८।

मैत्रेय—संज्ञा पु. [स.] एक ऋषि जो पराशर के शिष्य थे और जिनसे विष्णुपुराण कहा गया था। उ.—विदुर सो मैत्रेय सौ लह्यौ—१-२२७।

मैत्रेयी—संज्ञा स्त्री. [स.] याज्ञवल्क्य की विदुषी पत्नी।

मैथिल—वि. [स.] मिथिला का, मिथिला-सम्बन्धी।

(१) मिथिला निवासी। (२) राजा जनक।

मैथिली—संज्ञा स्त्री. [स.] (१) जानकी, सीता। (१) 'मैथिल' नाम की भाषा।

मैथुन—संज्ञा पु. [स.] संभोग, रति-क्रिया।

मैदा—संज्ञा पु. [फा.] बहुत महीन आटा। उ.—

(क) बेसन मिलै सरस मैदा सौ अति कोमल पूरी है भारी—१०-२४१। (ख) मैदा उज्ज्वल करिकै छान्यौ —१००९।

मैदान—सज्ञा पु. [फा.] (१) समतल या सपाट भूमि। (२) खेलने की समतल भूमि। उ.—श्री मोहन खेलत चौगान। द्वारावती कोट कचन मैं रच्यौ रुचिर मैदान —१० उ.-६।

मुहा०—मैदान मारना—खेल जीतना।

(३) युद्धभूमि, रणक्षेत्र।

मुहा०—मैदान करना—युद्ध करना। मैदान छोडना—लड़ाई से हटना या भागना। मैदान मारना—युद्ध मे जीतना। मैदान हाथ रहना—युद्ध में जीतना। मैदान होना—युद्ध होना।

मैन—सज्ञा पु. [स. मदन] (१) कामदेव। उ.—(क) कचन कोट कँगूरन की छबि मानहुँ बैठे मैन—२५५८। (ख) निधरक भयौ चल्यौ ब्रज आवत आइ फौजपति मैन—२८१९ (२) मोम। उ.—स्याम रँग रँगे रँगीली नैन। धोएँ छुटत नही यह कैसेहु मिले पघिलि ह्वै मैन —ना. २८६९।

मैनफर, मैनफल—सज्ञा पु. [स. मदनफल, हि. मैनफल] एक वृक्ष या उसका अखरोट जैसा फल।

मैनमय—वि. [हि. मैन+मय] कामासक्त।

मैना सज्ञा स्त्री. [स. मदना] एक प्रसिद्ध पक्षिणी जो सिखाने से मनुष्य की बोली बोलती है, सारिका।

सज्ञा स्त्री. [स. मेनका] (१) पार्वती की माता। (२) राधा की एक सखी। उ—कहि राधा, किन हार चुरायौ।' । दर्वा, रभा कृष्णा ध्याना मैना नैना रूप—१५८०।

सज्ञा पु [देश.] राजपूताने की 'मीना' जाति।

मैनाक—सज्ञा पु [स] एक पर्वत जो लंका के निकट समुद्र मे सपक्ष रूप में स्थित माना जाता है।

मैमंत, मैमत, मैमत्त—वि [स मदमत्त] (१) मतवाला, मदोन्मत्त। उ—मैमत भए जीव जल-थल के तन की सुधि न सँभार—१७५२। (२) अभिमानी। उ.—अरी ग्वारि मैमत बचन बोलत जो अनेरो—१११४।

मैया—सज्ञा स्त्री [स मातृका, प्रा. मातृआ, माइआ] मा, माता। उ.—मैया, मैं तो चद-खिलौना लैहौं—१०-१९३।

मैर—संज्ञा स्त्री. [स मृदर, प्रा मियर] साँप के काटने पर उसके विष से उठनेवाली लहर। उ—(क) माया बिपम भुजगिनि कौ बिष उतरयौ नाहिंन तोहिं।' ।जाकौ मोह-मैर अति छूटै सुजस गीत के गाएँ—२-३२। (ख) डसी री स्याम भुअगम कारे। मोहन मुख मुसुक्यानि मनहुँ बिष, जात मैर सौ मारे—७४७।

मैलंद—सज्ञा पु. [स. मिलिंद, प्रा. मैलद] भौंरा।

मैल—सज्ञा पु. [स मलिन, प्रा मइल] धूल, गर्द आदि जिसके पडने या जमने से वस्तु, शरीर आदि गदा हो जाता है। उ—केसरि कौ उबटनौ बनाऊँ, रचि-रचि मैल छुडाऊँ—१०-१८५।

मुहा०—हाथ-पैर का मैल—बहुत तुच्छ वस्तु।

(२) दोष, विकार।

मुहा०—मन का मैल—मन का दोष या विकार। मन मे मैल रखना—दुर्भाव या बैर-भाव रखना।

मैलखोरा—वि [हि मैल+फा. खोरा] (रग) जिस पर मैल जल्दी न दिखायी दे।

मैला—वि [हिं. मैल] (१) अस्वच्छ। (२) दूषित।

सज्ञा पु.—(१) कूड़ा-कर्कट। (२) बिष्टा।

मैलो, मैलौ—वि. [हिं. मैला] मलिन, अस्वच्छ, गदा। उ.—इक नदिया इक नार कहावत मैलौ नीर भरौ —१-२२०।

मैहर—सज्ञा पु. [हि. नैहर] स्त्री के माता-पिता का घर, मायका।

मो—अव्य. [मे] में, भीतर।

सर्व—ब्रज और अवधी मे 'मैं' का वह रूप जो कर्त्ता के अतिरिक्त अन्य कारको में कारकीय चिह्न लगाने के पहले प्रयुक्त होता है।

मोछ—सज्ञा स्त्री. [हि. मूँछ] मूँछ।

मोढ़ा—सज्ञा पु [स. मूढा, प्रा. मूड्ढा] (१) बाँस का बना ऊँचा आसन। (२) कधा।

यौ०—सीना-मोढा—छाती और कधा।

मो—सर्व. [स. मम] (१) मेरा। उ.—(क) मो अनाथ

कै नाथ हरी—१-१४९ । (ख) हरि बिनु को पुरवै मो स्वारथ—१-२८७ । (२) मुझे मुझको । उ.—मो तजि भए निनारे—१४३ । (३) ब्रजभाषा और अवधी में 'मैं' का वह रूप जो कर्त्ता के अतिरिक्त अन्य कारकों में कारकीय चिह्न लगाने के पूर्व प्राप्त होता है । उ.—(क) मोकौं जनि छाँडौ—४१५ । (ख) कछु न भक्ति मो मौं—१-१५१ ।

मोकति—क्रि. स. [हिं. मोकना] छोड़ती या त्यागतीहै । उ.—कपित स्वाँस त्रास अति मोकति—२१९७ ।

मोकना, मोकनो—क्रि. स. [हिं. मुकना] (१) छोड़ना, त्यागना । (२) फेंकना ।

मोकल, मोकला—वि. [हिं. मुकना] जो बँधा न हो, मुक्त ।

मोच्, मोख—सज्ञा पु. [स. मोक्ष] (१) बधन से छुटकारा । (२) जन्म-मरण से मुक्ति । उ.—अर्थ धर्म अरु काम मोक्ष फल चारि पदारथ देत गनी—१-३९ ।

मोखा—सज्ञा पु. [स. मुख] झरोखा ।

मोगरा, मोगरो—सज्ञा पु. [स. मुद्गर] एक तरह का बेला (फूल) । उ.—फूले मरुवो मोगरो—२४०५ ।

मोघ—वि. [स.] व्यर्थ चूक जानेवाला ।

मोच—सज्ञा स्त्री [स. मुच] शरीर के किसी अंग की नस का झटके आदि से हट जाना जिससे बड़ी पीड़ा होती है ।

सज्ञा स्त्री. [हिं. मोचना] छोड़ने या त्यागने की क्रिया या भाव ।

प्र०—डारौ मोच—त्याग दूँगी, छोड़ दूँगी । उ.—सूर प्रभु हिलि-मिलि रहौंगी लाज डारौ मोच—८९० ।

मोचक—सज्ञा पु. [स.] (१) मुक्त करने या छुड़ानेवाला । (२) सन्यासी जो विषय-मुक्त हो ।

मोचत—क्रि. स. [हिं. मोचना] (१) गिराता या बहाता है । उ.—अब काहे जल मोचत सोचत समौ गए ते सूल नई—२५३७ । (२) छोड़ता या त्यागता हैं । उ.—जा सँग रैनि बिहात न जानी भोर भए तेहि मोचत हौ—२१४० ।

मोचन—सज्ञा पु. [सं.] (१) छुड़ाने या मुक्त करने की क्रिया या भाव । उ.—एहि बस बवी क्रीड़ा गज मोचन—१-६ । (२) छुड़ाने या मुक्त करने के लिए । उ.—मित्र मोचन मनहुँ आए तरल गति द्वै तरनि—३५१ । (३) दूर करने या हटाने की क्रिया या भाव ।

मोचना, मोचनो—क्रि. स. [स. मोचन] (१) छोड़ना, त्यागना । (२) गिराना, बहाना । (३) छुडाना, मुक्त करना । (४) दूर करना, हटाना ।

मोचहिंगे—क्रि. स. [हि. मोचना] छुडायँगे, मुक्त करेगे । उ.—अब तिनके बधन मोचहिंगे—११६१ ।

मोचि—क्रि. स. [हिं. मोचना] छुड़ाकर, मुक्त करके । उ.—मोचि बधन राज दीनो—२६५२ ।

मोची—सज्ञा पु. [स. मोचन] चमड़े का काम या जूते आदि बनानेवाला ।

वि. [स. मोचित] (१) छुड़ानेवाला । (२) हटानेवाला ।

मोचै—क्रि. स. [हिं. मोचना] बहाती या गिराती हैं । उ.—सुन बिधुमुखी बारि नयनन ते अब तू काहे मोचै—१० उ०-११० ।

मोच्छ, मोछ—सज्ञा स्त्री. [स. मोक्ष] (१) बधन से छुटकारा । (२) जन्म-मरण से मुक्ति ।

वि.—बधन से मुक्त, स्वतत्र । उ.—जमलार्जुन कौ मोच्छ कराए—३९१ ।

मोजा—सज्ञा पु. [फा. मोजा] पायताबा, जुर्राब ।

मोट—सज्ञा स्त्री. [हिं. मोटरी] गठरी । उ.—(क) मोट अघ सिर भार—१-९९ । (ख) अति प्रपच की मोट बाँधि कै अपनै सीस धरी—१-१८४ । (ग) जोग मोट सिर बोझ—३३१६ ।

सज्ञा पु.—कुएँ से पानी निकालने का चरसा, पुर ।

वि. [हिं. मोटा] (१) जो महीन न हो । (२) जो दुबला न हो । (३) कम मूल्य का ।

मोटरी—सज्ञा स्त्री. [तैलग मूटा = गठरी] गठरी, मोट ।

मोटा—वि. [स. मुण्ट] (१) जो दुबला न हो, स्थूल ।

यौ०—मोटा-ताजा—स्थूल शरीरवाला ।

(२) अच्छे दल का, दलदार । (३) बडे घेरे का ।

मुहा.—मोटा असामी—धनी या मालदार व्यक्ति । मोटा भाग्य—सौभाग्य ।

(४) जो खूब महीन न हो, दरदरा। (५) घटिया, कम मूल्य का, निम्न कोटि का।

यौ०—मोटा-झोटा—जो (अन्न, वस्त्र आदि) ज्यादा महीन या बढ़िया न हो।

(६) जो सुघर या सुंदर न हो, भद्दा, बेडौल।

मुहा०—मोटा काम—ऐसा काम जिसमें अधिक बुद्धि या कौशल न लगाना पड़े।

(७) भारी, कठिन, असाधारण।

मुहा०—मोटा दिखायी देना—दृष्टि कमजोर होना।

(८) गर्व या घमड करनेवाला, अहंकारी।

सज्ञा स्त्री. पु. [हिं. मोट] गठरी, गट्ठर, बोझ।

मोटाई—सज्ञा स्त्री. [हिं. मोटा] (१) मोटापन। (२) पाजीपन, मट्ठरपन।

मुहा०—मोटाई उतरना—पाजीपन या शरारत ट जाना। मोटाई चढना—पाजी या शरारती हो जाना। मोटाई झडना—(१) पाजीपन या शरारत छूट जाना। (२) गर्व चूर हो जाना।

मोटाना, मोटानो—क्रि. अ. [हिं. मोटा] (१) मोटा या स्थूल होना। (२) घमडी होना। (३) मालदार होना।

क्रि स.—किसी के मोटा होने में सहायता करना।

मोटापन—सज्ञा पु [हिं. मोटा+पन] (१) स्थूल होने का भाव। (२) घमडी या धृष्ट होने का भाव। (३) धनी होने का भाव।

मोटापा—सज्ञा पु [हिं. मोटा](१) मोटाई, मोटापन। (२) धृष्टता, गर्व, घमड।

मोटायो, मोटायौ—क्रि. अ [हिं. मोटाना] मोटा या स्थूल हो गया। उ.—तू कह्यौ, तैं है बहुत मोटायौ —५-४।

मोटिया—सज्ञा पु. [हिं मोटा] मोटा कपड़ा।

सज्ञा पु. [हिं. मोट] बोझा ढोनेवाला।

मोटी—वि. स्त्री. [हिं. मोटा] (१) जो दुबली न हो, स्थूल। उ.—देखौ धन्य भाग गाइनि के प्रीति करत बनवारी। मोटी भई चरत बृंदाबन नदकुँवर की पाली—६१३। (२) अधिक घेरे या मानवाली।

मुहा०—कर्मन की मोटी—बहुत भाग्यशालिनी। उ.—सूरदास मन मुदित जसोदा भाग बडे कर्मनि की मोटी—१०-१६५।

(३) साधारण, निम्न कोटि की।

मुहा०—बुधि की मोटी—जो अधिक बुद्धिमती न हो। उ.—तुम जानति राधा है छोटी। चतुराई अँग अग भरी है, पूरन ज्ञान न बुधि की मोटी—१४७९।

(४) जो सुदर या सुघर न हो। उ.—मेली सजि मुख अबुज भीतर उपजी उपमा मोटी—१०-१६४।

मोटे—वि. [हिं. मोटा] (१) स्थूल। (२) अधिक घेरे या मान वाला।

मुहा०—भाग्य के मोटे—सौभाग्यशाली। उ—बडे भाग्य के मोटे हौ—२०६१।

मोटो, मोटौ—वि. [हिं. मोटा] स्थूलकाय। उ.—नृपति कह्यौ, मोटौ तू आहि—५-४।

मोठ—सज्ञा स्त्री. [स. मकुष्ठ, प्रा. मउट्ठ] एक मोटा अन्न।

मोठस—वि. [हिं. मट्ठूस] किसी बात का उत्तर न देने वाला।

मोड़—सज्ञा पु. [हिं. मोडना] (१) मार्ग के घूमने का स्थान। (२) मुड़ने या घूमने की क्रिया या भाव।

(३) किसी वस्तु का बीच या किनारे से घुमाव डालकर दूसरी ओर फेरा जाना।

मोड़ना, मोड़नो—क्रि. स. [हिं. मुडना] (१) फेरना, लौटाना।

मुहा०—मुँह मोडना—(१) किसी काम को करने से आनाकानी करना। (२) विमुख होना।

(२) विमुख करना। (३) फैली हुई चीज को तहाना। (४) सीधी लंबी चीज को किसी स्थान से दूसरी ओर घुमाना। (५) तेज धार को भुथरी या कुठित करना।

मोंड़ा—सज्ञा पु [स. मुड्] लड़का, बालक।

मोतिअन—सज्ञा पु. सवि. [हिं. मोती] मोतियों से, मोतियो की। उ.—हौ बैठी पोवति मोतिअन लर—१४४७।

मोतिनि—सज्ञा पु. सवि. [हिं. मोती] मोतियों का, मोतियो से। उ.—दीन्हौ हार गरै कर ककन मोतिनि थार भरै—१०-१७।

मोतियन—संज्ञा पु. सवि. [हिं. मोती] मोतियों (के या से)। उ.—एक समय मोतियन के धोखे हंस चुनत है ज्वारि - २०४२।

मोतिया—संज्ञा पु. [हिं. मोती] एक तरह का बेला (फूल)।
वि.—(१) हलके गुलाबी या पीले और गुलाबी रंग का। (२) मोती-संबंधी।

मोती—संज्ञा पु. [सं. मौक्तिक, प्रा. मोत्तिय] एक गोल रत्न जो सीपी से निकलता है। उ.—नख-ज्योती मोती मानो कमल दलनि पर—१०-१५१।
मुहा०—मोती ढरकना—आँसू बहना। मोती ढरकाना—आँसू बहाना। मोती पिरोना—(१) बहुत सुंदर भाषण देना। (२) बहुत सुंदर अक्षर लिखना। (३) कोई महीन काम करना। (४) आँसू बहाना। मोती बींधना—मोती को पिरोने के लिए उसमें छेद करना। मोती रोलना—बहुत कम श्रम से अधिक धन पाना। मोती से मुँह भरना—प्रसन्न होकर बहुत अधिक धन देना।
संज्ञा स्त्री.—बाली जिसमें मोती पड़े हों।

मोतीचूर—संज्ञा पु. [हिं मोती+चूर] बूँदी का लड्डू।

मोतीबेल—संज्ञा स्त्री. [हिं. मोतिया+बेला] मोतिया बेला (फूल)।

मोतीभात—संज्ञा पु. [हिं. मोती+भात] एक तरह का धान।

मोतीलाड़ू—संज्ञा पु. [हि. मोती+लड्डू] बूँदी का लड्डू। उ.—सुठि मोतीलाड़ू मीठे—१०-१८३।

मोतीसरि, मोतीसरी, मोतीसिरि, मोतीसिरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मोती+सं. श्री] मोतियों की कंठी या माला। उ.—तोरि मोतीसरी तब गुप्त करि धरयौ—१५४२।

मोथरा, मोथरो—वि. [हिं. भुथरा] कुंठित धारवाला।

मोथा—संज्ञा पु. [सं. मुस्तक, प्रा. मुत्थ] एक घास।

मोद—संज्ञा पु. [सं.] (१) हर्ष, आनंद। उ.—(क) पौढाए पट पालनै (हँसि) निरखि जननि मन-मोद। (ख) मोह्यौ बाल-बिनोद मोद अति नैननि नृत्य दिखाइ—१०-१७७। (२) सुगंध।

मोदक—संज्ञा पु. [सं.] (१) लड्डू। (२) किसी नशीली चीज, विष या औषध का बना हुआ लड्डू। उ.—(क) पीन उरोज मुख नैन चखावति इह विष मोदक जातन झारि—११६४। (ख) ते ही ठग मोदक भए मन धीर न हरि तन छूछो छिटकाए—३४००।
वि.—मोद या आनंद देनेवाला।

मोदकी—संज्ञा स्त्री. [सं.] एक तरह की गदा।

मोदन—संज्ञा पु. [सं.] (१) प्रसन्न करना। (२) महकाना।

मोदना, मोदनो—क्रि. अ. [सं. मोदन] (१) प्रसन्न या आनंदित होना। (२) सुगंधि फैलना, महकना।
क्रि. स. (१) प्रसन्न करना। (२) सुगंध फैलाना।

मोदप्रद—वि. स्त्री. पु [सं.] आनंददायिनी, सुखदायी। उ.—कनक बलय मुद्रिका मोदप्रद सदा सुभग संतनि काजै—१-६९।

मोदा—संज्ञा पु. [सं. मोद] हर्ष, आनंद। उ.—(क) सूर स्याम लए जननि खिलावति हरष सहित मन-मोदा—१०-२३९। (ख) कछु रिस कछु मन मैं करि मोदा—७९९। (ग) बाल-केलि हरि के रस मोदा—१०६९।

मोदित—वि. [सं.] प्रसन्न, आनंदित। उ.—मन मुदित-मोदित मानिनी मुख माधुरी मुसुकानि—२२८९।

मोदी—संज्ञा पु. [सं. मोदक] (१) आटा, दाल आदि बेचनेवाला। (२) भंडारी। उ.—मोदी लोभ—१-१४१। (३) कर्मचारी जो नौकरों की भरती करता हो।

मोधुक—संज्ञा पु. [सं. मोदक=एक वर्णसंकर जाति] मछली पकड़नेवाला। उ.—सोई मत्स्य पकरि मोधुक ने जाय असुर को दीन्हीं—सारा. ६९३।

मोधू—वि. [सं. मुग्ध] मूर्ख, भोंदू।

मोन—संज्ञा पु. [सं. मोण] झाबा, पिटारा।

मोना, मोनो—क्रि. स. [हिं. मोयन]भिगोना, तर करना।
संज्ञा पु. [सं. मोण] झाबा, पिटारा।

मोम—संज्ञा पु. [फा.] वह चिकना पदार्थ जिससे शहद की मक्खियाँ छत्ता बनाती हैं।
यौ०—मोम की नाक—(१) अस्थिर मति या बुद्धि-वाला। (२) जरा सी बात में मिजाज बदलनेवाला। मोम की मरियम—कोमल और सुकुमार (नारी)।

मुहा०—मोम करना (बनाना)—द्रवीभूत या दयार्द्र कर लेना। मोम होना—कठोरता छोड़कर द्रवीभूत या दयार्द्र हो जाना।

मोमी—वि. [हिं. मोम] मोम का बना हुआ।

मोय—सर्व. [हिं. मुझे] मुझे।

मोयन—संज्ञा पु. [हिं मैन=मोम] गूँधे हुए आटे, मैदा, बेसन आदि में घी-तेल डालना जिससे उससे बनी चीज खस्ता हो।

मोयौ—क्रि अ. [हिं. मोना] भिगोया, लीन या मग्न किया। उ.—काम क्रोध-लोभ-मोह तृष्ना मन मोयौ —१-३३०।

मोरंग—संज्ञा पु. [देश.] नैपाल का पूर्वी भाग जिसे 'किरात देश' भी कहा गया है।

मोर—संज्ञा पु [सं. मयूर, प्रा. मोर] मयूर पक्षी, शिखंडी, केकी। उ.—(क) मानो हंस मोर-भष लीन्हे—१०-१६४। (ख) सुनि सखि वे बडभागी मोर—४७७।

सर्व. [हिं. मेरा] मेरा। उ.—(क) रावरै हित मोर—१-२५३। (ख) यह जीवन-धन मोर—१०-३१०।

मोरचंग—संज्ञा पु. [हिं. मुरचंग] 'मुरचंग' बाजा।

मोरचंदा—संज्ञा पु. [हिं. मोर+सं. चंद्र] मोर पक्षी के पंख की बूटी जो चंद्राकार होती है।

मोर-चंद्रिका—संज्ञा स्त्री. [हिं. मोर+सं. चंद्रिका] मोर पक्षी के पंख की चंद्राकार बूटी।

मोरचा—संज्ञा पु. [फा.] (१) लोहे पर लग जानेवाली जंग। (२) दर्पण पर जम जानेवाला मैल।

संज्ञा पु. [फा. मोरचाल] (१) गड्ढा जो किले के चारो ओर रक्षार्थ खोदा जाता है। (२) गढ़ की भीतरी सेना। (३) स्थान जहाँ से शत्रु से युद्ध किया जाता है।

मुहा०—मोरचाबंदी करना या बाँधना—गढे खोदकर या टीले बनाकर शत्रु से रक्षा करने के लिए सेना नियुक्त करना। मोरचा जीतना या मारना—शत्रु के मोरचे पर अधिकार कर लेना। मोरचा लेना—युद्ध जीतना।

मोरछड़, मोरछल—संज्ञा पुं. [हिं. मोर+छड़] मोर की पूँछ के परों से बनाया गया चँवर जो राजाओं या देवी देवताओं पर डुलाया जाता है।

मोरछली—संज्ञा पु. [हिं. मौलसिरी] बकुल (वृक्ष)।

संज्ञा पु. [हिं. मोरछल] मोरछल डुलानेवाला।

मोरछाँह—संज्ञा पु. [हिं. मोरछल] मोरछल।

मोरजुटना—संज्ञा पु. [हिं. मोर+जुटना] माथे का एक गहना जो बेंदे के स्थान पर पहना जाता है।

मोरत क्रि. स. [हिं. मोड़ना] (१) विमुख करता है।

मुहा०—न मोरत अंग—अंग भिडाये रहता है, अंग विमुख नहीं करता। उ.—सोभित सुभट प्रचारि पैज करि भिरत न मोरत अंग—९५७।

(२) फेरता, घुमाता या टेढा करता है। उ.—(क) बदन सकोरि भौंह मोरत है—८५६। (ख) सुभग भृकुटी बिबि मोरत—१३५०।

मुहा०—अंग मोरत—अँगड़ाई लेता है। उ.—कबहुँ जम्हात कबहुँ अँग मोरत—२०८२।

मोरध्वज—संज्ञा पु. [सं. मयूरध्वज] एक राजा जो, श्रीकृष्ण के परीक्षा लेने पर, अपने पुत्र का जीवित शरीर स्वयं आरे से चीरने को तैयार हो गया था।

मोरन संज्ञा स्त्री. [हिं. मोड़ना]मोड़ने की क्रियाया भाव।

संज्ञा स्त्री. [सं. मोरट] शिखरन जो मथे हुए दही में शकर तथा कुछ सुगंधित वस्तुएँ डालकर बनायी जाती है।

मोरना—क्रि. स. [हिं. मोड़ना] (१) फेरना, लौटाना। (२) घुमाना, टेढ़ा करना। (३) तेज धारको कुंठित करना।

क्रि. स. [हिं मोरन] दही मथकर मक्खन निकालना।

मोरनि—संज्ञा स्त्री. [हिं. मोड़ना] मोड़ने की क्रिया या भाव। उ.—(क) सूर स्याम प्रभु भौंह की मोरनि फाँसी गस—११७९। (ख) भौंह मोरनि नैन फेरनि तहाँ ते नहिं टरै—१७७७।

संज्ञा पु. सवि. [हिं. मोर] अनेक मोर। उ.—हौं इन मोरनि की बलिहारी—ना० ४६७२।

मोरनी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मोर] (१) मोर (पक्षी) की मादा। (२) नथ का लटकन।

मोरनो—क्रि स. [हिं. मोड़ना] (१) लौटाना, फेरना।

(२) घुमाना, टेढा करना। (३) तेज धार को कुठित करना।

क्रि. स. [हि. मोरना] दही मथकर माखन निकालना।

मोरपंख—सज्ञा पु. [हि. मोर+पख] मोर का पर।

मोरपंखी—सज्ञा पु. [हि. मोरपख] (१) गहरा नीला रग। (२) मोरपख की कलगी।

सज्ञा स्त्री.—मोर के पखो की बनी पखी।

वि.—मोर जैसा पख गहरा चमकीला नीला।

मोरपंखा—सज्ञा पु. [हिं. मोरपख] (१) मोर का पर। (२) मोर के पखो की कलगी जो श्रीकृष्ण जी मुकुट आदि में खोंसा करते थे।

मोरपखिआँ, मोरपखियाँ—सज्ञा स्त्री [हिं. मोरपखी] मोरपंख की कलगी। उ.—काहू को ढोटा री एक सीस मोरपखिआँ—२३६६।

मोरभख, मोरभष—सज्ञा पु. [हि मोर+स. भक्ष्य] मोर का आहार, सर्प। उ.—कान्ह कुँवर गही दृढ करि चोटी। मानौ हस मोर-भष लीन्हे—१०-१६५।

मोरमुकुट—सज्ञा पु. [हिं. मोर+स मुकुट] मोर के पंखों का बना मुकुट जो श्रीकृष्ण पहना करते थे।

मोरवा—सज्ञा पु. [हि मोर] मोर, मयूर। उ—हमारे माई, मोरवा बैर परे—२८४१।

मोरा—सर्व [हि. मेरा] मेरा।

मोराना, मोरानो—क्रि. स [हि मोडना] घुमाना, फिराना।

मोरि—क्रि. स [हि मोरना] (१) मोड या मरोड़कर। उ.—मटुकी लई उतारि मोरि भुज कचुकि फारी—११२६। (२) घुमाकर, फिराकर। उ.—सूर स्याम सुनि सुनि यह बानी भौह मोरि मुसुकात—११४९।

मुहा०—मुख मोरि—(१) मुँह फेरकर, सर्वथा उदासीन होकर। उ.—(क) चलत न कोऊ सँग चलै मोरि रहै मुख नारि—२-२९। (ख) चलत सदा चित चोरि मोरि मुख, एक न पग पहुँचायौ—२-३०। (२) विमुख या पराजित करके। उ.—तोरि धनुष मुख मोरि नृपति कौ सीय स्वयबर कीनौ—९-११५।

मोरिबो, मोरिबौ—सज्ञा पु [हि मोरना] मोड़ने की क्रिया या भाव। उ—मुँह मोरिबौ बाउ अधिकारी सो लेबौ—१०५१।

मोरी—सज्ञा स्त्री [हि मोहरी] नाली, पनाली।

सज्ञा स्त्री. [हि. मोर] मोर की मादा, मयूरी।

क्रि. स [हि मोरना] घुमायी, फेरी। उ.—सुमिरन सदा बसत ही रसना दृष्टि न इत-उत मोरी—१० उ.-१०६।

मुहा०—मुँह मोरी—(१) विमुख करके, भर्त्सना करके। उ.—अब आवै जो उरहन लै कै तौ पठऊँ मुँह मोरी—८६८। (२) मुँह घुमा या फेरकर। उ—घोष की नारी रहसि चली मुँह मोरी—१०-२९३। (क) बार बार बिहँसति मुख मोरी—६६९।

सर्व [हि मेरो] मेरी। उ—मूसी मन-सपति सब मोरी।

मोरे—क्रि. स [हिं. मोरना] घुमाये, फिराये। उ—(क) कुँवरि मुदित मुख मोरे—७३२। (ख) ठठकति चलै मटकि मुँह मोरे—८७६।

मुहा०—मुख मोरे—उदासीन होने से। उ.—सूरदास प्रभु पछिले खेवा अब न बनै मुख मोरे—४८८।

सर्व. [हि. मेरा] मेरे।

मोरै—क्रि स [हि. मोरना] मोड़ती है, घुमाती-फिराती है, बचने का यत्न करती है। उ.—सीत-उष्न कहुँ अग न मोरै—७९९।

मोल—सज्ञा पु. [स. मूल्य, प्रा. मुल्ल] (१) मूल्य।

मुहा०—मोल लई बिन मोल—बिना दाम के खरीद लिया। उ.—भौहै काट-कटीलियाँ मोहि मोल लई बिन मोल—८९३।

(२) मूल्य जो अधिक बढ़ाकर कहा जाय। उ.—दीरघ मोल कह्यौ ब्योपारी रहे ठगे सब कौतुक हार—१०-१७३।

यौ०—मोल-चाल या मोल-तोल—घटा-बढाकर मूल्य तय करने का कार्य या भाव।

मुहा०—मोल करना—(१) उचित से अधिक मूल्य माँगना। (२) घटा-बढ़ाकर मूल्य तय करना।

मोलना—संज्ञा पु. [अ. मौलाना] मुल्ला, मौलवी।

मोलाना, मोलानो—क्रि. स. [हिं. मोल] मोल तय करना।
मोलै—संज्ञा पुं. [हिं. मोल] दाम, कीमत, मूल्य।
मुहा०—बिकानी बिन मोलै— बिना दाम के ही बिक गयी। उ.—गोरस सुधि बिसरि गई आपु बिकानी बिनु मोलै—११८४।
मोवना, मोवनो—क्रि. स. [हिं. मोना] भिगोना।
मोष—संज्ञा पु. [स. मोक्ष] (१) छुटकारा। (२) मुक्ति।
मोह—संज्ञा पु. [स.] (१) भ्रम, अज्ञान। उ.— क) महा मोह मैं परचौ सूर प्रभु काहै सुधि बिसरी—१-१६। (२) सांसारिक पदार्थों या संबंधियों को अपना समझने का भ्रम या अज्ञान। उ.—सुत-कलत्र दुर्वचन जो भाषैं, तिन्हैं मोह बस मन नहिं राखै—५-४। (३) प्रीति। उ.—मोहचौ जाइ कनक-कामिनि-रस ममता-मोह बढाइ—१-१४७।
यौ०—मया (माया) मोह—मोह-ममता का भाव। उ.—(क) मया-मोह न छाँडै तृष्ना—१-११८। (ख) माया-मोह ताहि नहिं गह्यौ—१-२२६। (ग) बिनु अपराध पुरुष हम मारै, माया-मोह न मन मैं धारै—९-२।
(४) दुख। (५) मूर्च्छा। (६) एक संचारी भाव।
मोहक—वि. [स.] मन को लुभानेवाला।
मोहताज—वि. [अ.] (१) निर्धन। (२) आश्रित।
मोहन—संज्ञा पु. [स.] (१) जिसे देखकर मन लुभा जाय। (२) श्रीकृष्ण। उ.—कहन लागे मोहन मैया मैया—१०-१५५। (३) वह तांत्रिक प्रयोग जिससे किसी को मूर्छित किया जाय। उ.—मोहन मुर्छन बसीकरन पढि अगमति देह बढाऊँ—१०-४९। (४) एक प्राचीन अस्त्र जिससे शत्रु को मूर्छित कर दिया जाता था। (५) कामदेव का एक बाण।
वि.—लुभाने या मोहनेवाला।
मोहनभोग—संज्ञा पु [हि. मोहन + भोग] हलुआ-विशेष।
मोहनमाला—संज्ञा स्त्री. [स.] सोने के दानो की माला।
मोहना—क्रि. अ. [स. मोहन] (१) रीझना, मुग्ध होना। (२) बेहोश या मूर्छित होना।
क्रि. स.—(१) मुग्ध या मोहित करना, लुभाना। (२) भ्रम या धोखे में डालना। (३) बेहोश या मूर्छित करना।

मोहनास्त्र—संज्ञा पुं. [सं.] एक प्राचीन अस्त्र जो शत्रु को मूर्छित करने के लिए चलाया जाता था।
मोहनिशा—संज्ञा स्त्री. [स.] (१) प्रलय। (२) जन्माष्टमी की रात्रि जो भादो मास के कृष्णपक्ष की अष्टमी को होती है।
मोहनी—संज्ञा स्त्री. [स.] (१) भगवान का स्त्री-रूप जो उन्होंने समुद्र-मथन के पश्चात् देव-दानवों को अमृत बाँटते समय धारण किया था। (२) लुभाने या मुग्ध करने का प्रभाव।
मुहा०—मोहनी डालना (लाना)—किसी को तुरन्त मोहित कर लेना। मोहनी सी लाइ—तुरन्त माया के वश में करके। उ.—स्याम सुदर मदन मोहन मोहनी (मोहिनी) सी लाई—६७८। मोहनी लगना—मुग्ध या मोहित होना। मोहनी सी लागत—जादू जैसा प्रभाव पडने से मुग्ध हो गयी। उ.—मुख देखत मोहनी (मोहिनी)सी लागी स्वय न बरन्यौ जाई री—१०-१३९।
(३) माया।
वि. स्त्री.—मोहित करनेवाली सुन्दरी।
मोहनै—संज्ञा पु. सवि. [हि. मोहन] मोहन या श्रीकृष्ण को (से)। उ.—ऐसो कोऊ नाहिनै सजनी जो मोहनै मिलावै—२७४५।
मोहर—संज्ञा स्त्री. [फा.](१) ठप्पा जिससे अक्षर-चिह्न आदि अंकित किया जा सके। (२) वह छाप जो ठप्पे से अंकित की जाय। (३) स्वर्ण मुद्रा, अशरफी।
मोहरा—संज्ञा पु. [हिं. मुँह + रा] (१) किसी बरतन या पदार्थ का ऊपरी खुला हुआ मुँह। (२) सेना की अगली पंक्ति। (३) सेना की गति या उसका रुख।
मुहा०-मोहरा लेना-सामना करना, भिड़ जाना।
(४) छेद जिससे कोई वस्तु बाहर निकले। (५) चोली की तनी या बंद।
संज्ञा पु. [फा. मोहर] शतरंज की गोटी।
मोहराति—संज्ञा स्त्री. [स.] (१) प्रलय। (२) जन्माष्टमी की रात्रि जो भादो मास के कृष्णपक्ष की अष्टमी को होती है।
मोहराना, मोहरानो—संज्ञा पु [फा. मुहर + आना]

धन जो किसी व्यक्ति को मोहर करने के लिए दिया जाय।

मोहरिल—संज्ञा पु [अ. मुहर्रिर] मुंशी। उ.—मोहरिल पाँच साथ करि दीने तिनकी बडी बिपरीत—१-१४३।

मोहरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मोहरा] (१) पाजामे का वह भाग जिसमे टाँगें रहती है। (२) नाली, मोरी।

मोहर्रिर—संज्ञा पु. [अ.] मुंशी।

मोहलत—संज्ञा स्त्री. [अ.] (१) छुट्टी। (२) कार्य की अवधि।

मोहला—संज्ञा पु. [स. मोह] स्नेह, प्रेम।

मोहार—संज्ञा पु [हिं.मोहरा] (१) द्वार। (२) अगला भाग।

मोहाल—संज्ञा पु [अ. महाल] मोहल्ला।

मोहिं—सर्व. [स. मह्य, पा. मय्ह] ब्रजभाषा और अवधी मे उत्तम पुरुष 'मै' का वह रूप जो किसी समय सभी कारकों में प्रयुक्त होता था, परन्तु कालातर में केवल कर्म और सम्प्रदान में प्रयुक्त होने लगा, मुझे, मुझको। उ.—(क) अब मोहिं सरन राखियै नाथ—१-२०८। (ख) माधौ जू, मोहिं काहे की लाज—१-१५०।

मोहि—क्रि. स. [हि मोहना] मुग्ध या मोहित करके, लुभाकर। उ. – महामाहिना मोहि आतमा अपमारगहि लगावै—१-४२।

मोहित—वि. [स.] मुग्ध, आसक्त। उ.—(क) उमाहूँ देखि पुनि ताहि मोहित भई—८-१०। (ख) नृपति देखि तिहि मोहित भयौ—९-२। (ग) प्रीति कुरग नाद स्वर मोहित बधिक निकट ह्वै मारै—२८१०।

मोहिनी—वि. स्त्री [स] मोहन या आसक्त करनेवाली। उ —(क) महामोहिनी मोहि आतमा अपमारगहि लगावै—१-४२। (ख) मन-मोहिनी तोतरी बोलनि—१०-१०६।

संज्ञा स्त्री.—(१) विष्णु का वह स्त्री-रूप जो उन्होने सागर-मथन के पश्चात् देव दानवो को अमृत बाँटने के लिए धारण किया था। उ.—मोहिनी रूप धरि स्याम आए तहाँ, देखि सुर-असुर सब रहे लुभाई। आइ असुरनि कह्यौ, लेहु यह अमृत तुम, सबनि कौ बाँटि मेटौ लराई—८-८। (२) विष्णु का वह स्त्री-रूप जो उक्त मोहिनी रूप का दर्शन शिव को कराने के लिए उन्होने धारण किया था और जिसे देखकर शिव और उमा, दोनों अत्यन्त आसक्त हो गये थे। उ.—बैठि एकात जोहन लगे पथ सिव मोहिनी रूप कब दै दिखाई। ... । ह्वै अँतरधान हरि मोहिनी रूप धरि, जाइ बन माहिं दीन्हे दिखाई। ... । रुद्र कौ देखि कै मोहिनी लाज करि लियौ अचल, रुद्र तब अधिक मोह्यौ। ... । रुद्र कौ बीर्य खसि कै परयौ धरनि पर, मोहिनी रूप हरि लियौ दुराई—८-१०। (३) माया, जादू, टोना। उ.—(क) मुख देखत मोहिनी सी लागी रूप न बरन्यौ जाई री—१०-१३८। (ख) ना जानौ कछु मेलि मोहिनी राखे अँग-अँग भोरि—६५७।

मोही—वि. [स. मोहिन्] मुग्ध करनेवाला।

वि. [हिं. मोह+ई] (१) प्रीति या ममता रखने वाला। (२) भ्रम या अज्ञान मे पड़ा हुआ, माया में लिप्त। (३) लोभी, लालची।

क्रि. स. [हिं. मोहना] मुग्ध या आसक्त हुई। उ.—मै मोही तेरै लाल री—१०-१४०।

मोहे—क्रि. स. [हि. मोहना] मुग्ध या आसक्त कर लिये। उ.–(क) असुर दिसि चितै मुसकाइ मोहे सकल—८-८। (ख) महा मनोहर नाद सूर थिर चर मोहे—६४८।

मोहै—क्रि. स. [हिं. मोहना] मुग्ध या आसक्त होते हैं। उ.—सुक सनकादि सकल मुनि मोहै—६२०।

मोहै—क्रि. अ. [हिं. मोहना] मुग्ध या आसक्त होता है। उ.—(क) कटि लहँगा नीलौ बन्यौ को जो देखि न मोहै (हो)—१-४४। (ख) नारि के रूप कौ देखि मोहै न जो सो नही लोक तिहुँ माहिं जायौ—८-१०।

मोह्यौ—क्रि. अ. [हि. मोहना] मुग्ध या आसक्त हुआ। उ.—(क) मोह्यौ जाइ कनक-कामिनि रस ममता-मोह बढाइ—१-१४७। (ख) रुद्र कौ देखि कै मोहिनी लाज करि लियौ अचल, रुद्र तब अधिक मोह्यो—८-१०।

क्रि. स.—(१) अज्ञान या माया मे फँसा लिया। उ.— काम, क्रोध रु लोभ मोह्यौ, ठग्यौ नागरि

नारि—१-३०९। (२) मुग्ध या आसक्त किया। उ. —स्याम, तुम्हारी मदन-मुरलिका नैंसुक सी जग मोह्यौ—६५३।

मौं—अव्य. [हिं. मे] में। उ.—कछु न भक्ति मो मौ—१-१५१।

मौंगा—वि. [स. मौन] मौन, चुप।

मौंगी—सज्ञा स्त्री. [हि. मौगा] मौन, चुप्पी।

मौंड़ा—सज्ञा पु. [स. माणवक] लड़का, बालक। उ.—कहन लगे बन बडो तमासो सब मौडा (मौडा) मिलि आऊ—४८१।

मौका—सज्ञा पु. [अ. मौका] (१) घटनास्थल। (२) स्थान, जगह। (३) समय, अवसर।

मुहा०—मौका तकना (ताकना, देखना)—उपयुक्त अवसर की खोज या ताक मे रहना। मौका देना—(१) समय या अवकाश देना। (२) अवसर देना। मौका पाना—(१) फुरसत या अवकाश पाना। (२) उपयुक्त समय या अवसर पाना। मौका मिलना या हाथ आना—(१) फुरसत या अवकाश मिलना। (२) उपयुक्त अवसर या घात पाना।

मौक्तिक—सज्ञा पु. [स.] मोती।

मौक्तिकमाल, मौक्तिकमाला—सज्ञा स्त्री. [स.] मोती की माला।

मौक्तिकावलि, मौक्तिकावली—सज्ञा स्त्री. [स मौक्तिका वलि] मोती की माला।

मौख—सज्ञा पु. [स.] मुख से किया जाने वाला पाप जैसे गाली देना।

सज्ञा पु. [देश.] एक तरह का मसाला।

मौखर—सज्ञा पु. [स.] बढ़-बढकर बात करना।

मौखरी—सज्ञा पु. [स.] एक प्राचीन भारतीय राजवश।

मौखिक—वि. [स.] (१) मुख-सबधी। (२) मुख से केवल कहा जानेवाला, जबानी।

मौगा—वि. [स. मुग्ध] मूर्ख।

मौगी—सज्ञा स्त्री. [हि. मौगा] स्त्री, नारी।

वि.—मूर्ख (स्त्री)।

मौज—सज्ञा स्त्री. [अ] (१) लहर, तरग, हिलोर।

मुहा०—मौज मारना—लहरा-लहरा कर बहना।

(२) मन की उमंग या उछंग। उ.—मन-सानाथ मनोरथ-पूरन सुखनिधान जाकी मौज घनी—१-३९।

मुहा०—मौज आना मे आना)—उमग में भरना, धुन होना। मौज उठना—उमग में भरना। (किसी की) मौज पाना—इच्छा या मरजी जानना।

(३) धुन। (४) सुख, आनंद। उ.—(क) कछु हरषै कछु दुख करै मन मौज बढावै—१६१४। (ख) सूर सुनत अक्रूर, कहत नृप मन-मन मौज बढावै—२४७७। (५) विभूति, वैभव।

मौजा—सज्ञा पु. [अ. मौजा] गाँव, ग्राम।

मौजी—वि. [हि. मौज] (१) मनमाना काम करनेवाला। (२) सदा प्रसन्न या प्रफुल्ल रहनेवाला। (३) कभी कुछ और कभी कुछ सोचने-विचारनेवाला।

मौजूद—वि. [अ.] (१) विद्यमान। (२) प्रस्तुत।

मौड़ा—सज्ञा पु. [हि. मौंडा] लड़का, बालक।

मौत—सज्ञा स्त्री. [अ.] (१) मरने का भाव मृत्यु। (२) मृत्यु का देवता।

मुहा०—मौत का सिर पर खेलना—(१) मरने को होना। (२) प्राण जाने का भय होना। (३) भयानक विपत्ति आना। अपनी मौत मरना—(१) सहज, स्वाभाविक या प्राकृतिक रूप मे मरना। (२) स्वय अपनी करनी से मरना। मौत बुलाना—ऐसी करनी करना जिससे मृत्यु निश्चित हो।

(३) मरने का समय या काल।

मुहा०—मौत के दिन पूरे करना- बड़े कष्ट से जीने के दिन पूरे करना या बिताना।

(४) बहुत कष्ट, भयानक विपत्ति।

मौन—सज्ञा पु. [स.] चुप रहने की क्रिया या भाव, चुप्पी। उ.—सुनत ये बचन हरि करयौ तब मौन।

मुहा०—मौन गहना (ग्रहण करना)—चुप रहना। मौह गही—चुप हो गया। उ.—सुनत बचन तब उनके मधुकर मौन गही। मौन खोलना (तजना)—कुछ समय तक चुप रहने के उपरान्त बोलना। मौन धरना (धारण करना)—चुप रहना। धरि मौन—चुप्पी साधे हुए। उ.—जहँ बैठी वृषभानु-नदिनी तहँ

आये धरि मौन । मौन बाँधना (सँभारना)—चुप्पी साधना ।

(२) चुप रहने का व्रत ।

वि. [स. मौनी] जो चुप हो । उ.—सूरदास प्रभु रहे मौन ह्वै घोष बा[illegible] [illegible]नि चालहि ।

सज्ञा पु [स मौण] (१) बरतन, पात्र । उ.—काढौ कोरे कापरा हो अरु काढौ घी के मौन—१०-२८ । (२) डिब्बा, मंजूषा, पिटारा ।

मौनता—सज्ञा स्त्री. [स.] मौन होने या रहने का भाव।

मौनव्रत, मौनव्रत—सज्ञा पु [स. मौनव्रत] व्रत जिसमे मौन रहा जाय।

मौना—सज्ञा पु. [स. मौण] घी-तेल का पात्र-विशेष ।

मौनी—वि. [स. मौनिन्] चुप रहनेवाला ।

मौर—सज्ञा पु. [स. मुकुट, पा. मउड] (१) विवाह के अवसर पर पहना जानेवाला विशेष शिरोभूषण जो ताड़पत्र, खुखड़ी आदि का बनता है । (२) प्रधान, शिरोमणि । उ.—लूटि-लूटि दधि खात सबन को सब चोरन के मौर ।

सज्ञा पु. [स. मुकुल, प्रा. मउल] मजरी, बौर । उ.—नद महर घर के पिछवारे राधा आइ बतानी हो । मनौ अब-दल मौर देखिकै कुहुकि कोकिला बानी हो ।

मुहा०—मौर बँधना–बौर आना, मजरी लगना ।

सज्ञा पु. [स. मौलि = सिर] (१) गरदन, ग्रीवा । (२) सिर ।

मौरना, मौरनो—क्रि. स. [हि. मौर] वृक्ष में बौर या मजरी लगना ।

मौरसिरी—सज्ञा स्त्री. [हि. मौलसिरी] बकुल, मौलसिरी।

मौरी—सज्ञा स्त्री. [हि मौर] विवाह के अवसर पर बधू के बांधा जानेवाला छोटा मौर ।

मौरूसी—वि. [अ.] पैतृक ।

मौर्ख्य—सज्ञा पु [स] मूर्खता ।

मौर्य—सज्ञा पु. [स. मौर्य्य] क्षत्रियो का वह वश जो चंद्रगुप्त और अशोक के समय से बहुत प्रसिद्ध है।

मौलवी—सज्ञा पु. [अ.] मुसलमान धर्म-शास्त्रज्ञ ।

मौलसिरी—सज्ञा स्त्री. [स. मौलि + श्री] बकुल वृक्ष ।

मौला—सज्ञा पु. [अ.] (१) स्वामी । (२) ईश्वर ।

मौलाना—सज्ञा पु [अ. मौलवी] मौलवी ।

मौलि—सज्ञा पु. [स.] (१) सिर, चोटी । (२) मस्तक । (३) मुकुट, किरीट । (४) जटाजूट । (५) मुखिया ।

मौलिक—वि. [स.] (१) मूल या जड से सम्बन्धित । (२) मूल सिद्धात या तत्व-संबंधी । (३) जो (रचना) अपनी प्रतिभा या योग्यता से लिखी जाय, अनुवादित या आधारित न हो ।

मौली—वि. [स. मौलिन्] किरीट या जटाजूट धारण करनेवाला ।

सज्ञा स्त्री.—रँगा हुआ सूत जो पवित्र समझा जाता है और पूजा-जैसे अवसरो पर काम आता है ।

मौसम—सज्ञा पु [अ मौसिम] (१) ऋतु । (२) स्थान-विशेष की वह अवस्था जो ऋतु आदि के विचार से जानी जाती है ।

मौसा—सज्ञा पु. [हि. मौसी] मौसी का पति ।

मौसाल—सज्ञा पु. [हि. मौसी + आलय] मौसी-मौसा का कुल, परिवार या घर ।

मौसिया—वि. [हि. मौसी, मौसा] मौसी के सम्बन्ध का ।

सज्ञा पु.—मौसी का पति ।

मौसी—सज्ञा स्त्री. [स. मातृष्वसा] माता की बहन ।

मौसेरा—वि. [हि. मौसी] मौसी के सम्बन्ध का ।

म्यॉउँ, म्यॉवँ—सज्ञा स्त्री. [अनु.] (१) बिल्ली । (२) बिल्ली की बोली ।

मुहा०—म्यॉउँ म्यॉउँ या म्यॉवँ-म्यॉवँ करना—दीनता दिखाकर या बहुत दबकर बोलना ।

म्यान—सज्ञा पु. [फा. मियान] (१) वह खाना या कोश जिसमे तलवार, कटार आदि के फल रहते हैं । (२) अन्नमय कोश, शरीर ।

म्याना—क्रि. स [हि. म्यान] म्यान में रखना ।

सज्ञा पु. [फा. मियाना] एक तरह की पालकी।

म्यौ—सज्ञा स्त्री. [हि. म्याँवँ] बिल्ली की बोली ।

मुहा०—करत म्यौ-म्यौ—दीनता दिखाता या दबकर बोलता है । उ.—लै लै ते हथियार आपने सान धराए त्यौ । जिनके दारुन दरस देखि कै पतित करत म्यौ-म्यौ—१-१५१ ।

म्लान—वि. [स.] (१) कुम्हलाया हुआ। (२) मैला।
म्लानता, म्लानि—सज्ञा स्त्री. [स. म्लानता] (१) मलिनता। (२) ग्लानि। (३) दुर्बलता।
म्लेच्छ—सज्ञा पु [स.] वे जातियाँ जिनमें आर्यो की भाँति वर्णाश्रम धर्म न हो।
वि.—(१) नीच। (२) पापी।
म्हा—सर्व [हि. मुझ] मुझ।
म्हारा—सर्व. [हि. हमारा] हमारा।

य

य—देवनागरी वर्णमाला का छब्बीसवाँ वर्ण जिसका उच्चारण-स्थान तालू है। स्पर्श और ऊष्म वर्णों के बीच का होने से यह 'अंतस्थ' वर्ण कहा जाता है।
यंत्र—सज्ञा पु [स.] (१) तन्त्र-शास्त्र के अनुसार वे कोष्ठक आदि जिनमें कुछ अंक या अक्षरो के लिख दिये जाने पर देवताओ का अधिष्ठान मान लिया जाता है और जिनको कार्य-विशेष की सिद्धि के लिए हाथ या गले में पहना जाता है, जतर। (२) कल, औजार, उपकरण। (३) वीणा, बीन, बाजा। उ.—सूरदास स्वामी के चलिबे ज्यौ यत्री बिनु यत्र सकात। (४) ताला।
यत्रणा—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) यातना, कष्ट। (२) पीडा, वेदना।
यंत्र मंत्र—सज्ञा पु [स.] जादू-टोना, टोटका।
यंत्रित—वि. [स.] (१) यंत्र द्वारा रोका या बंद किया हुआ। (२) ताले मे बन्द।
यंत्री—सज्ञा पु. [स यन्त्रिन्] (१) यंत्र-मंत्र जानने या करनेवाला। (२) बाजा बजानेवाला। उ.—(क) सूरदास स्वामी के चलिबे ज्यौ यत्री बिनु यत्र सकात। (ख) सूरदास प्रभु मौन सबै ब्रज बिन यत्री बिन बीन—२८६६। (ग) अब तौ हाथ परी यत्री के बाजत राग दुलारी—२९३५।
यक—वि. [हि. एक] एक।
यकअंगी—वि. [हिं. एक+अगी] (१) एक अग या पक्षवाला। (२) जो एक पति या पत्नी के ही साथ रहे। (३) एक ही पर निर्भर रहनेवाला।
यकायक—क्रि वि. [फा.] अचानक, सहसा।
यकीन—सज्ञा पु. [अ. यकीन] विश्वास।
यकृत—सज्ञा पु [स] (शरीर में) जिगर।
यक्ष—सज्ञा पु. [स] (१) एक प्रकार के देवता जो कुबेर के सेवक माने जाते है। उ—यक्ष प्रबल बाढे भुव-मडल तिन मारचो निज भ्रात। (२) कुबेर।
यक्षकर्दम—सज्ञा पु. [स] अगलेप जो कपूर, अगरु, कस्तूरी और ककोल से बनता है।
यक्षपति—सज्ञा पु. [स] कुबेर। उ.—मृत्यु कुबेर यक्ष-पति कहियत जहँ सकर कौ धाम - सारा. २१।
यक्षपुर—सज्ञा पु [स.] अलकापुरी।
यक्षरात्रि—सज्ञा स्त्री. [स] कार्तिकी पूर्णिमा।
यक्षिणी—सज्ञा स्त्री. [स.] यक्ष या कुबेर की पत्नी।
यक्षी—सज्ञा पु. [स.] यक्ष का उपासक।
यक्ष्मा—सज्ञा पु [स यक्ष्मन्] 'क्षय' रोग।
यगण—सज्ञा पु [स] एक 'गण' जिसमे पहला वर्ण 'लघु' और शेष दो 'गुरु' होते हैं।
यग्य—सज्ञा पु [स यज्ञ] यज्ञ, याग।
यच्छ—सज्ञा पु. [स. यक्ष] यक्ष।
यच्छिनी—सज्ञा स्त्री [स. यक्षिणी] (१) कुबेर की पत्नी। (२) यक्ष जाति की स्त्री।
यजन—सज्ञा पु. [स.] (१) यज्ञ आदि करना। (२) वह स्थान जहाँ यज्ञ आदि किया जाय।
यजना, यजनो - क्रि. स. [स यजन] (१) यज्ञ करना। (२) पूजा करना।
यजमान—सज्ञा पु [स] वह जो यज्ञ, पूजन आदि कराने के पश्चात् ब्राह्मणों को दक्षिणा दे, व्रती।
यजमानी सज्ञा स्त्री. [स. यजमान] (१) यजमान से पुरोहित को मिलनेवाली वृत्ति। (२) यजमानों के रहने का स्थान।
यजुर्वेद—सज्ञा पु. [स.] चार वेदो में एक जिसमे यज्ञ-कर्म का वर्णन बहुत विस्तार से है।
यज्ञ—सज्ञा पु. [स.] एक वैदिक कृत्य जिसमें हवन, पूजन आदि किया जाता था, योग, हवन। उ.—

योग यज्ञ जप तप तीरथ व्रत कीजत है जेहि लोभा—१८६६ ।

यज्ञपत्नी—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) यज्ञ की पत्नी दक्षिणा । (२) मथुरा के यज्ञ-कर्ता ब्राह्मणो की वे स्त्रियाँ जो पतियो का विरोध करने पर भी श्रीकृष्ण के लिए भोजन ले गयी थी ।

यज्ञपुरुष सज्ञा पु. [स.] विष्णु । उ—यज्ञपुरुष (जज्ञपुरुष) प्रसन्न जब भए, निकसि कुड तै दरसन दए—४-५ ।

यज्ञोपवीत -सज्ञा पु. [स.] (१) एक सस्कार जो विद्यारभ के पूर्व किया जाता था । यह ब्राह्मण बालक के आठवें, क्षत्रिय के ग्यारहवे और वैश्य के बारहवें वर्ष किया जाना चाहिए । आज इसमें कुछ धार्मिक कृत्य करके बालक को जनेऊ पहनाया जाता है; परंतु अवस्था का विशेष ध्यान नहीं रक्खा जाता । उ.—यज्ञोपवीत बिधोरु क्यिौ बिधि सब सुर भिक्षा दीन्ही सारा० ३३२ । (२) जनेऊ, यज्ञसूत्र । उ.—बच्छ-उद्धरन ब्रह्मा उद्धरन येइ प्रभु यज्ञ के पति यज्ञोपवीत-धारी—१३०३ ।

यतना, यतने, यतनो— वि. [हिं. इतना] इस मात्रा का, इस कदर । उ.—नारद मन की भर्म तोहि यतनो भरमायो—१० उ०-४७ ।

महा०—यतने माँझ—इसी समय, इसी बीच में । उ.—यतने मांझ आगु हरि आए सुनी नृपति सब बात—सारा० ६२९ ।

यति—सज्ञा पु. [स.] (१) इद्रियनिग्रही । (२) विरक्त, सन्यासी ।

सज्ञा स्त्री. [स. यती] विराम (छंदशास्त्र) ।

यतिभंग—सज्ञा पु. [स.] वह काव्य-दोष जिसमे 'यति' उचित स्थान पर न हो ।

यती—सज्ञा पु. [स. यतिन्] (१) इद्रियनिग्रही । (२) विरक्त, सन्यासी ।

यतीम—संज्ञा पु. [अ.] अनाथ, दीन ।

यत्न—सज्ञा पु. [स.] (१) प्रयत्न । (२) उपाय । (३) रक्षा का प्रबंध या आयोजन ।

यत्र—क्रि. वि. [स.] जहाँ, जिस जगह ।

यत्रतत्र—क्रि. वि. [स] इधर-उधर । (२) जगह-जगह ।

यथा—अव्य. [स.] जैसे, जिस प्रकार ।

यथाक्रम – क्रि. वि. [स.] क्रम के अनुसार ।

यथातथ्य अव्य. [स.] जैसा हो, वैसा हो ।

यथायोग्य—अव्य. [स.] जैसा उचित हो, वैसा ।

यथारथ—अव्य. [स. यथार्थ] (१) उचित, ठीक । (२) जैसा उचित हो, वैसा ।

यथारुचि—अव्य. [स.] रुचि के अनुकूल ।

यथार्थ—अव्य [स.] (१) उचित, ठीक । (२) जैसा उचित हो, वैसा ।

यथार्थता—सज्ञा स्त्री. [स.] वास्तविकता ।

यथालाभ—वि [स.] प्राप्ति के अनुसार ।

यथार्थवाद – सज्ञा पु. [स.] किसी बात या प्रसग को उसके यथार्थ रूप में मानना और उसी रूप में उसका वर्णन करना ।

यथार्थवाद—वि. [स.] जो 'यथार्थवाद' का माननेवाला हो ।

यथाशक्य—अव्य. [स.] भरसक, शक्ति भर ।

यथाशक्ति—अव्य. [स.] शक्ति के अनुसार ।

यथासंभव—अव्य. [स.] जहाँ तक सभव हो ।

यथासमय - अव्य. [स.] (१) नियत समय पर । (२) समय की माँग या आवश्यकता के अनुसार ।

यथास्थान—अव्य. [स.] उचित स्थान पर ।

यथेच्छ अव्य. [स.] मनमाना, इच्छानुसार ।

यथेष्ट—वि. [स.] जितना चाहिए, उतना ।

यथोचित—वि. [स.] जैसा चाहिए, वैसा ।

यद्पि—अव्य. [स. यद्यपि] यद्यपि ।

यदा—अव्य. [स.] (१) जब । (२) जहाँ ।

यदाकदा—अव्य. [स.] जब-तब, कभी-कभी ।

यदि—अव्य. [स.] जो, अगर ।

यदु—सज्ञा पु. [स.] राजा ययाति का बड़ा पुत्र जिसके वशज श्रीकृष्ण थे ।

यदुनंदन—सज्ञा पु. [स.] श्रीकृष्ण ।

यदुनाथ—सज्ञा पु. [स.] श्रीकृष्ण ।

यदुपति—सज्ञा पु. [स.] श्रीकृष्ण ।

यदुराइ, यदुराई—सज्ञा पु. [स. यदु + हिं. राजा] (यदुवशी) श्रीकृष्ण ।

यदुराज—सज्ञा पु. [स.] श्रीकृष्ण ।

यदुवंश—सज्ञा पु. [स.] राजा यदु का वश ।

यदुवंशमणि—सज्ञा पु [स.] श्रीकृष्ण ।

यदुवंशी—सज्ञा पु. [स. यदुवशिन्] यदु के वशज ।

यदुवर—सज्ञा पु. [स.] श्रीकृष्ण ।

यदुवीर—सज्ञा पु. [स.] श्रीकृष्ण ।

यद्यपि—अव्य. [स.] यदि ऐसा है ही, गो कि ।

यम—सज्ञा पु. [स.] (१) यमराज । (२) इन्द्रिय-निग्रह । (३) धर्म-कर्म मे चित्त लगाने का साधन जो 'योग' के आठ अंगो में पहला है । उ.—(क) अनुसूया के गर्भ प्रगट ह्वै कियौ योग आराधि । यम अरु नियम प्रान प्रत्याहार धारन ध्यान समाधि—सारा० ६० । (ख) सो अष्टाग जोग कौ करै । यम नियमासन, प्रानायाम, करि अभ्यास होइ निष्काम—२-२१ ।

यमक—सज्ञा पु. [स.] एक शब्दालकार ।

यमकात, यमकातर—सज्ञा पु. [स. यम+हि. कातर] (१) यम का छुरा । (२) एक तरह की तलवार ।

यमज—सज्ञा पु. [स.] जुडवा बच्चे ।

यमदग्नि—सज्ञा पु. [स.] एक ऋषि जो परशुराम के पिता थे ।

यमद्वितीया—सज्ञा स्त्री. [स.] कार्तिक शुक्ला द्वितीया जब बहन के यहाँ भोजन करके उसे कुछ नेग दिया जाता है, भाई दूज ।

यमधार—सज्ञा पु. [स.] वह तलवार या कटार जिसमे दोनों ओर धार हो ।

यमनाह—सज्ञा पु. [सं. यमनाथ] धर्मराज ।

यमपुर—सज्ञा पु. [स.] यमलोक । उ – यमपुर जाय सख-धुनि कीन्ही—सारा. ५४१ ।

यमपुरी—सज्ञा स्त्री. [स.] यमलोक ।

यमयातना—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) यमराज के दूतो द्वारा दी गयी पीडा, नरक की यातना । (२) मृत्यु की पीडा ।

यमराज, यमराजा—सज्ञा पु. [स. यमराज] धर्मराज । उ.—यमपुर जाय सख-धुनि कीन्ही यमराजा चलि आयौ—सारा. ५४१ ।

यमल—सज्ञा पु [स.] युग्म, जोडा ।

यमलार्जुन—सज्ञा पु. [स.] नंद जी के घर में लगे वे दो अर्जुन वृक्ष जिनका उद्धार श्रीकृष्ण ने उस समय किया था, जब वे उलूखल से बाँधे गये थे । पुराणानुसार वे वृक्ष कुबेर के दो पुत्र, नलकूबर और मणिग्रीव थे । एक बार वे मद्यावस्था में वस्त्रहीन हो स्त्रियों के साथ जलविहार कर रहे थे, तभी नारद ने उन्हे 'जड़ वृक्ष' हो जाने का शाप दिया था ।

यमलोक—सज्ञा पु. [स] (१) वह लोक जहाँ प्राणी मृत्यु के पश्चात् जाना माना गया है । (२) नरक ।

यमवाहन—सज्ञा पु. [स.] भैसा ।

यमालय—सज्ञा पु [स.] यमलोक ।

यमी—सज्ञा पु. [स.] यम की बहन, यमुना ।
वि. [स. यमिन्] सयमी, निग्रही ।

यमुना—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) यम की बहन यमुना जो सूर्य की, सज्ञा के गर्भ से उत्पन्न, पुत्री मानी गयी है । (२) उत्तरी भारत की एक प्रसिद्ध नदी जो हिमालय में यमनोत्तरी से निकलकर प्रयाग में गगा से मिल जाती है । श्रीकृष्ण की क्रीड़ाभूमि, वृन्दावन, यमुना के किनारे ही थी । मथुरा, दिल्ली, आगरा आदि प्रसिद्ध नगर यमुना के किनारे ही बसे हैं । (३) राधा की एक सखी का नाम । उ.—कहि राधा, किन हार चुरायो । । सुखमा, सीला, अवधा, नदा, बृदा, यमुना सारि—१५८० ।

यमुनाभिद्—सज्ञा पु. [स.] श्रीकृष्ण के भाई बलराम जिन्होंने अपने हल से यमुना के दो भाग कर दिये थे ।

ययाति—सज्ञा पु. [स.] राजा नहुष का पुत्र जिसने शुक्राचार्य की कन्या देवयानी से विवाह किया था और उसकी दहेज-रूप में प्राप्त दानवराज की पुत्री शर्मिष्ठा से भी सबध बना रखा था । उनके देवयानी से दो और शर्मिष्ठा से तीन पुत्र थे । देवयानी का बड़ा पुत्र यदु था जिसके कुल में श्रीकृष्ण ने जन्म लिया था ।

यव—सज्ञा पु. [स.] (१) जौ (अन्न) । (२) एक तौल जो

बारह सरसो या एक जौ की मानी जाती है। (३) एक नाप जो एक इंच की तिहाई होती है।

यवन—संज्ञा पु [स.] (१) यूनान देशवासी। (२) कालयवन नामक म्लेच्छ राजा जो श्रीकृष्ण से कई बार लड़ा था। (३) मुसलमान।

यवनिका—संज्ञा पु [स.] नाटक का परदा।

यवनी—संज्ञा स्त्री. [स.] यवन जाति की स्त्री।

यश—संज्ञा पु. [स. यशस्] (१) कीर्ति। (२) प्रशंसा।

यशस्विनी—वि. स्त्री. [स.] कीर्तिमती।

यशस्वी—वि. पु. [स. यशस्विन्] कीर्तिमान्।

यशी—वि. [स. यश] कीर्तिमान्, यशस्वी।

यशुमति, यशोदा—संज्ञा स्त्री. [स, यशोदा] नंद जी की पत्नी यशोदा, जिसने श्रीकृष्ण को पाला था। उ.—अतिही सुंदर कुमार यशुमति रंहिंणि बार बिलखाति यह कहत सबै लोचन जल ढोरै २६०४।

यशोधर—संज्ञा पु [स.] रुक्मिणी के गर्भ से उत्पन्न श्रीकृष्ण का एक पुत्र।

यशोधरा—संज्ञा स्त्री. [स.] गौतम बुद्ध की पत्नी।

यशोमति, यशोमती—संज्ञा स्त्री. [स. यशोदा] यशोदा।

यष्टि, यष्टिका—संज्ञा स्त्री. [स.] लाठी, लकड़ी।

यह—सर्व., वि. [स. इद] (१) निकट की वस्तु आदि का निर्देशक सर्वनाम जिसका संकेत श्रोता-वक्ता के अतिरिक्त जीवों, पदार्थों आदि की ओर होता है। उ.—(क) कह्यौ मयत्रेय सौ समुझाइ, यह तुम बिदुरहि कहियौ जाइ—३-४। (ख) यह कहिकै मारी गदा हरि जू ताहि सम्हारि—३-११। (२) निकट की वस्तु का निर्देशक विशेषण। उ.—(क) यह आसा पापिनी दहै—१-५२। (ख) जसुमति, किहि यह सीख दई—३८१।

यहाँ—क्रि. वि. [स इह] इस स्थान में या पर।

यहि—सर्व., वि.[हिं. यह] (१) 'यह' का विभक्ति लगने के पूर्व रूप, इस। (२) 'ए' का विभक्तियुक्त रूप, इसको।

यहीं—क्रि वि. [हिं. यहाँ+ही] इसी जगह।

यही, यहै—अव्य. [हिं. यह] यह ही। उ.—(क) यही गोप, यह ग्वाल, इहै सुख, यह लीला कहुँ तजत न साथ। (ख) जुग जुग बिरद यहै चलि आयौ, टेरि कहत हौ यातै—१-१३७। (ग) यहै बचन सुनि द्रुपद-सुता-मुख दीन्हौ बसन बढाइ—५५६।

यहौ—अव्य. [हिं. यह] यह भी, इतना तक। उ.—अंतर्यामी यहौ न जानत जो मो उरहि बिती—१० उ०-१०३।

यों—क्रि. वि. [हिं यहाँ] यहाँ।

या—सर्व, वि. [हिं. यह] (१) 'यह' का विभक्ति लगने के पूर्व रूप, इस। (२) निकटता-सूचक विशेषण-प्रयोग, इस। उ.—(क) ऐसी जौ आवै या मन मै तौ सुख कहँ लौ कहियै—२-१८। (ख) तमोगुनी चाहै या भाइ, मम बैरी क्यौहूँ मरि जाइ—३-१३। (ग) लालन बारी या मुख ऊपर—१०-९२।

अव्य. [फा.] अथवा, वा।

याक—वि. [हिं एक] एक।

संज्ञा पु. [स. गावक, तिब्बती ग्याक] हिमालय का वह बैल जिसकी पूँछ का चँवर बनता है।

याकी—सर्व., वि. सवि. [व्रज या+की] इसकी। उ.—अकथ कथा याकी कछू कहत नही कहि आवै—१-४४।

याके—सर्व., वि. सवि. [व्रज. या+के] इसके, इसको। उ.—(क) याके मारै हत्य होइ—१-२८९। (ख) टहल करत मैं याके घर की—१०-३२२।

याकै सर्व सवि. [व्रज. या+कै] इसके (मे, से आदि)। उ.— याकै गर्भ अवतरै जे सुत—१०-४।

याकौ—सर्व. सवि. [व्रज. या+कौ] इसको। उ.—याकौ ह्याँ तै देहु निकारि—१-२८४।

याग—संज्ञा पु. [स.] यज्ञ।

याचक—वि. [स.] (१) माँगनेवाला। उ.—जिनि याजे व्रजपति उदार अति याचक फिरि न कहाये। (२) भिखारी।

याचत—क्रि. स. [हिं. याचना] माँगता या प्रार्थना करता है। उ.— याचत दास आस चरनन की अपनी सरन बसाव—पृ. ३५० (६४)।

याचना, याचनो—क्रि स [स. याचन] (१) प्रार्थना करना, माँगना। (२) भिक्षा माँगना।

याज्ञ—वि [स.] यज्ञ-संबंधी।

याज्ञवल्क्य—संज्ञा पु. [स.] (१) वैशंपायन के शिष्य एक

ऋषि। (२) राजा जनक के दरबारी एक ऋषि जिनके दो पत्नियाँ थी— मैत्रेयी और गार्गी। (३) एक स्मृतिकार।

याज्ञिक—सज्ञा पु. [स.] (१) यज्ञ करने-करानेवाला। (२) ब्राह्मणो की एक जाति।

यातना—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) पीडा, वेदना। (२) नरक के कष्ट।

याता—सज्ञा स्त्री. [स. यातृ] देवर या जेठ की पत्नी।

यातायात—सज्ञा पु. [स.] आना-जाना।

यातुधान—सज्ञा पु. [स] राक्षस।

याते, यातैं—अव्य. [व्रज. या+तै] इससे, इसलिए। उ.- (क) जुग जुग बिरद यहै चलि आयौ, टेरि कहत हौ यातै—१-१३७। (ख) कछु करि गए तनक चित-वनि मैं याते रहत प्रेम-मद छाक्यौ—२५४६।

यात्रा—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) एक स्थान से दूसरे को जाने की क्रिया, सफर। (२) प्रयाण। (३) तीर्थाटन। (४) एक प्रकार का अभिनय जिसमे नाचना-गाना भी रहता है।

यात्री—सज्ञा पु. [स. यात्रा] (१) यात्रा करनेवाला। (२) तीर्थाटन को जानेवाला।

याद—सज्ञा स्त्री. [फा.] (१) स्मृति। (२) स्मरण करने की क्रिया।

यादगार—सज्ञा स्त्री. [फा.] स्मारक, स्मृति-चिह्न।

याददाश्त—सज्ञा स्त्री. [फा] (१) स्मृति। (२) स्मरण रखने को लिखी गयी बात।

यादव—वि. [स.] राजा यदु-सबधी।
सज्ञा पु.—(१) यदु के वशज। (२) श्रीकृष्ण।

यादवी—सज्ञा स्त्री [स.] यादव जाति की स्त्री।

यान—सज्ञा पु [स.] (१) वाहन, सवारी। उ.—प्रभु हाँकै रथ यान—१-२७५। (२) विमान।

याना—वि [स. सज्ञान] ज्ञानवान।

यानी, याने—अव्य. [अ.] तात्पर्य यह कि।

यापन—सज्ञा पु [स.] बिताना, व्यतीत करना।

याम—सज्ञा पु. [स.] (१) तीन घटे का समय, पहर। (२) काल, समय।
सज्ञा स्त्री. [स. यामि] रात। उ.—(क) इनकी को दासी सरि ह्वैहै धन्य सरद की याम। (ख) मन लौं हौ पहुनाई करिहौ राखौ अटकि द्यौस अरु याम—१५०९।

यामल—सज्ञा पु [स] जुड़वाँ बच्चे।

यामा—सज्ञा पु. [स याम] तीन घटे का समय, पहर। उ —(क) व्रज ते चले भए षट यामा—२६४३। (ख) चपल समीर भयो तेहि रजनी भीजे चारो यामा—१० उ०-६६।

यामिन, यामिनि, यामिनी—सज्ञा स्त्री. [स. यामिनी] रात, रात्रि, रजनी।

यामै—सर्व. सवि. [व्रज. या+मै] इसमें। उ.—हरि-गुरु एक रूप नृप जानि। यामैं कछु सदेह न आनि—६-५।

यार—सज्ञा पु [फा] (१) मित्र। (२) किसी स्त्री से अनुचित प्रेम-सबंध रखनेवाला, जार।

याराना—सज्ञा पु. [फा.] (१) मित्रता। (२) किसी स्त्री-पुरुष का अनुचित प्रेम-संबंध।

यारी—सज्ञा स्त्री. [फा.] (१) मित्रता। (२) किसी स्त्री-पुरुष का अनुचित प्रेम-सबंध।

यावक—सज्ञा पु. [स.] महावर।

यावत—वि [स. यावत्] सब, कुल।
अव्य.—(१) जब तक। (२) जहाँ तक।

याहि—सवि सर्व. [व्रज. या+हि] इसे, इसको। उ.—(क) कहचौ, याहि लै जाउ उठाइ। सुमिरत मो रिपु कौ चित लाइ—७-२। (ख) आयौ देखन याहि—८५९।

याही—अव्य. [व्रज. या+ही] यहाँ ही, इसे ही। उ.—इतनी जउ जानत मन मूरख मानत याही धाम—१-७६।

याही—सर्व. सवि [व्रज. या+ही] इसका ही। उ.—सुनै भवन कहुँ कोउ नाही, मनु याही कौ राज—१०-२७७।

याहू—सर्व. [व्रज. या+हूँ] इसे भी, इसको भी। उ.—याहू सौज सचि नहि राखी अपनी धरनि धरी—१०-१८०।

युक्त—वि. [स.] (१) जुडा या मिला हुआ। (२) सम्मिलित। (३) उचित, ठीक।

युक्ति—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) उपाय। (२) चातुरी।

(३) रीति । (४) नीति । (५) कारण । (६) उचित बात ।

युक्तियुक्त—वि. [स] न्याय या तर्कसंगत ।

युग—सज्ञा पु. [स.] (१) दो वस्तुओ का जोड़ा । (२) पीढ़ी, पुश्त । (३) समय, काल । (४) काल का एक दीर्घ परिमाण ।

मुहा०—युग-युग—बहुत समय तक । उ.—सूरदास चिरजीवहु युग-युग दुष्ट दले दोउ नददुलारे —२५६९ ।

वि —जो गिनती मे दो हो ।

युगति—सज्ञा स्त्री. [स. युक्ति] (१) उपाय । (२) कौशल ।

युगम—सज्ञा पु. [स. युग्म] जोड़ा, युग्म ।

युगल—सज्ञा पु. [स.] जोड़ा, साथ-साथ दो ।

युगांत—सज्ञा पु. [स.] (१) किसी काल या युग का अतिम समय । (२) प्रलय ।

युगांतर—सज्ञा पु. [स] नया युग या समय ।

मुहा०—युगातर करना—(१) समय बदल देना । (२) पूर्व रीति-नीति बदलकर नयी चलाना ।

युगुति—सज्ञा स्त्री. [स. युक्ति] (१) उपाय । (२) कौशल ।

युग्म—सज्ञा पु. [स.] जोड़ा, साथ-साथ दो वस्तुएँ ।

युत—वि. [स.] (१) सहित । (२) मिला हुआ ।

युद्ध—सज्ञा पु. [स.] लड़ाई, सग्राम ।

मुहा०—युद्ध माँड़ना—लड़ाई ठानना । युद्ध माँड्यौ—लड़ाई ठानी । उ.—निरखि यदुवश को रहस मन मे भयौ देखि अनिरुद्ध युद्ध माँड्यौ ।

युधाजित—सज्ञा पु. [स. युधाजित्] (१) कैकेयी का भाई जो भरत का मामा था । (२) श्रीकृष्ण का एक पुत्र ।

युधिष्ठिर—सज्ञा पु. [स.] कुती का धर्मराज से उत्पन्न पुत्र जो पाँचो पाडवो में सबसे बड़ा था ।

युयुत्सा—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) बैर, शत्रुता । (२) युद्ध की इच्छा ।

युयुत्सु—वि. [स.] युद्ध की इच्छा रखनेवाला ।

युवक—सज्ञा पु. [स.] युवा, जवान ।

युवति, युवती—सज्ञा स्त्री. [स.] युवा नारी । उ.—ज्यौ युवती पति आवत सुनिकै पुलकित अंग भई —२५६२ ।

युवराइ, युवराई—सज्ञा स्त्री. [हिं. युवराज] युवराज का पद या अधिकार ।

युवराज, युवराजा—सज्ञा पु. [स. युवराज] राजकुमार जो राज्य का उत्तराधिकारी हो ।

युवराजी—सज्ञा स्त्री. [स. युवराज] युवराज का पद ।

युवराज्ञी, युवरानी - सज्ञा स्त्री. [स. युवराज्ञी] युवराज की पत्नी ।

युवा—वि [स. युवक] युवक, जवान ।

यूँ—अव्य. [हिं. यो] इस प्रकार, ऐसे ।

यूथ—सज्ञा पु. [स.] (१) झुड, समूह । उ.—(क) अर्ध रैनि चली धरनि ते यूथ यूथनि नारि—पृ. ३३८ (८१) । (ख) ज्यौ गजयूथ नेक नहिं बिछुरत शरद मदन मद मातौ—३३१९ । (२) सेना, दल ।

यूथनाथ—सज्ञा पु. [स.] सरदार, सेनापति ।

यूथप—सज्ञा पु. [स.] (१) नायक । (२) सेनापति ।

यूथपति—सज्ञा पु [स.] (१) नायक । (२) सेनापति ।

यूथिका, यूथी—सज्ञा स्त्री. [स.] जूही का फूल या पौधा । उ.—सित अरु पीत यूथिका बेनी गूँथी बिबिध बनाय ।

यूप—सज्ञा पु. [स.] (१) खभा जिसमें बलि-पशु बाँधा जाता है । (२) विजय-स्मारक, कीर्ति-स्तभ ।

यूप, यूपा—सज्ञा पु. [स द्यूत] जूआ, द्यूतकर्म ।

यूह—सज्ञा पु. [स. यूथ] समूह, झुंड ।

ये—सर्व., वि. [हिं. यह] 'यह' का बहुवचन । उ.—ये दससीस चरन पर राखौ मेटौ सब अपराध—९-११५ ।

येइ, येई—सर्व. [हिं. यह+ई] ये ही, यही । उ.—(क) मूल भागवत के येइ चारि—२-३७ । (ख) येई है सब व्रज के जीवन—३६७ । (ग) ये महिमा येई पै जानै —३८० । (घ) कस बधन येई करिहै—१०-८५ ।

येउ, येऊ—सर्व. [हिं. ये+ऊ] ये भी ।

येत, येतो—वि. [हिं. इतना] इतना ।

येह—सर्व [हिं. यह] यह, ये ।

येहु, येहू—सर्व. [हिं ये+ऊ] यह भी, ये भी ।

यों—अव्य. [स. एवमेव, प्रा० एमेअ, अप० एमि] ऐसे, इस भाँति, इस प्रकार से ।

योंही—अव्य. [हिं. यो+ही] (१) इसी तरह से । (२) व्यर्थ ही । (३) बिना निश्चित उद्देश्य के ।

यो—सर्व. [हिं. यह] यह ।

योग—सज्ञा पु. [स.] (१) दो या अधिक पदार्थों का सयोग । (२) उपाय, युक्ति । (३) प्रेम । (४) शुभ अवसर । (५) कौशल । (६) मेल-मिलाप । (७) उपयुक्तता । (८) वैराग्य । (९) ठिकाना, सुभीता, जुगाड़ । (१०) ज्योतिष में विशिष्ट काल । (११) चित्त-वृत्ति का निरोध । उ.—योग यज्ञ जप तप तीरथ ब्रत कीजत है जेहि लोभा—२५३६ । (१२) छह दर्शनो में एक जिसमें चित्त-निरोध आदि का विधान है ।

वि. [स. योग्य] उपयुक्त योग्य । उ.—(क) सूल होत नवनीत देखि मेरे मोहन के मुख योग—२६९९ । (ख) ऊधौ, योग योग हम नाही—३३१२ । (ग) बारबार असीस देत सब यह बर बन्यौ रुक्मिणी योग—१० उ०-१७ ।

योगकन्या—सज्ञा स्त्री. [स] यशोदा के गर्भ से उत्पन्न वह कन्या जिसे लाकर वसुदेव ने, श्रीकृष्ण के स्थान पर, कस को सौंप दिया था ।

योगक्षेम—सज्ञा पु. [स.] कुशल-मगल ।

योगदान—सज्ञा पु. [स.] काम मे सहयोग देना ।

योगफल—सज्ञा पु. [स.] एक से अधिक सख्याओं का जोड़ ।

योगबल—सज्ञा पु. [सं.] योग-साधना से प्राप्त शक्ति ।

योगभ्रष्ट—वि. [स.] जिसकी योग-साधना पूरी न हो सकी हो ।

योगमाया—सज्ञा स्त्री [स.] (१) विष्णु की माया । (२) वह कन्या जो यशोदा के गर्भ से जन्मी थी और जिसे लाकर वसुदेव ने, श्रीकृष्ण के स्थान पर, कस को सौंप दिया था । उ.—देखी परी योगमाया (जोगमाया) बसुदेव गोद करि लीनी—१०-४ ।

योगरूढ़ि—सज्ञा स्त्री. [स.] दो शब्दो के योग से बना शब्द जिसका विशेष अर्थ हो ।

योगांग—संज्ञा पु. [सं.] योग के आठ अंग—यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार धारणा, ध्यान और समाधि ।

योगाभ्यास—सज्ञा पु. [स.] योग की साधना । उ.—बदरिकाश्रम रहे पुनि जाई । योगाभ्यास (योग-अभ्यास) समाधि लगाई ।

योगाभ्यासी—सज्ञा पु. [स योग+अभ्यासी] योग-साधक ।

योगासन—सज्ञा पु. [स.] योग की साधना के लिए बैठने की रीति ।

योगिनि, योगिनी—सज्ञा स्त्री. [स योगिनी] (१) रण-पिशाचिनी । (२) तपस्विनी । उ.—सूरदास प्रभु यह उपजति है धरिए योगिनि-बेष—२७५३ । (३) देवी, योगमाया ।

योगिनी-चक्र—सज्ञा पु. [स.] योगिनियों के साधन का चक्र (तत्रशास्त्र) ।

योगिराज—सज्ञा पु. [स.] बहुत बड़ा योगी ।

योगींद्र—सज्ञा पु [स] बहुत बड़ा योगी ।

योगी—सज्ञा पु. [स. योगिन्] (१) राग-विराग से मुक्त, आत्मज्ञानी । (२) वह जिसने योग-साधना में सिद्धि प्राप्त कर ली हो ।

योगीश—सज्ञा पु. [स.] (१) योगियों का स्वामी । (२) बहुत बड़ा योगी । (३) शिव । (४) श्रीकृष्ण ।

योगीश्वर—सज्ञा पु [स.] (१) योगियों का स्वामी । उ.—योगीश्वर बपु धरि हरि प्रगटे योग-समाधि प्रमान्यो—सारा. ३५१ । (२) बहुत बडा योगी । (३) शिव । (४) श्रीकृष्ण ।

योगेश—सज्ञा पु. [स.] (१) योगियो का स्वामी । (२) बहुत बडा योगी । (३) शिव । (४) श्रीकृष्ण ।

योगेश्वर—सज्ञा पु. [स.] (१) योगियो का स्वामी । (२) बहुत बडा योगी । (३) शिव । (४) श्रीकृष्ण ।

योग्य—वि. [स.] (१) उपयुक्त या अधिकारी (पात्र) । (२) श्रेष्ठ, उत्तम । (३) उचित, ठीक । (४) आदरणीय ।

योग्यता—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) उपयुक्तता, पात्रता । (२) श्रेष्ठता, उत्तमता । (३) अनुकूलता, औचित्य । (४) आदर, सम्मान ।

योजक—वि. [सं.] मिलाने या जोड़नेवाला।

योजन—संज्ञा पु. [स.] (१) सयोग, मिलान। (२) दूरी की एक नाप जो दो, चार या आठ कोस की मानी जाती है।

योजनगंधा—वि. [स.] जिसकी सुगंध एक योजन तक फैलती हो।

संज्ञा स्त्री.—(१) कस्तूरी। (२) सत्यवती जो शांतनु की पत्नी और व्यास की माता थी।

योजना—संज्ञा स्त्री. [स.] (१) नियुक्त करने की क्रिया। (२) रचना, बनावट। (३) व्यवस्था, आयोजन।

योद्धा, योधा—संज्ञा पु. [स. योद्धा] सैनिक, भट। उ.—तोरि कोदंड मारि सब योधा तब बल भुजा निहार्‌यौ—२५८६।

योधेय—संज्ञा पु. [स.] सैनिक, योद्धा।

योनि—संज्ञा स्त्री. [स.] (१) आकर, खानि। (२) उत्पत्ति-स्थान। (३) स्त्री की जननेंद्रिय। (४) प्राणियों के विभाग या वर्ग। (५) देह, शरीर।

योषिता—संज्ञा स्त्री. [स.] स्त्री, नारी।

यौं—अव्य. [हिं. यों] इस प्रकार से, ऐसे। उ.—(क) हँसि बोलौ जगदीस जगतपति बात तुम्हारी यौं—१-१५१। (ख) रहु रहु राजा, यौं न कहिए, दूषन लागै भारी—८-१४।

यौ—सर्व. [हि. यह] यह।

यौगिक—संज्ञा पु. [सं.] (१) प्रकृति-प्रत्यय के मेल से बना शब्द। (२) दो शब्दों के मेल से बना शब्द।

यौतक, यौतुक—संज्ञा पु. [स.] विवाह का दहेज।

यौधेय—संज्ञा पु [स.] (१) योद्धा। (२) एक प्राचीन देश या उसका निवासी।

यौन—वि. [स.] योनि का, योनि-संबंधी।

यौवन—संज्ञा पु. [स.] (१) युवा होने का भाव, तारुण्य, जवानी। उ.—सूर-स्याम बिनु क्यो मन राखौ तन यौवन के आगर—२९८०। (२) यौवन-काल। (३) युवती का सौंदर्य। (४) युवती के स्तन।

यौवराज्य—संज्ञा पु. [स.] (१) युवराजत्व। (२) युवराज का पद।

र

र—देवनागरी वर्णमाला का सत्ताईसवाँ व्यंजन, जो स्पर्श और ऊष्म वर्णों के मध्य का है और जिसका उच्चारण जिह्वाग्र को मूर्द्धा से स्पर्श कराने से होता है।

रंक—वि. [स.] (१) दरिद्र, कंगाल। उ.—(क) जाति गोत कुल नाम गनत नहि रंक होइ कै रानौ—१-११। (ख) रंक सुदामा कियौ इंद्र-सम—१-९५। (ग) राव-रंक हरि गनत न दोई—२-५। (२) कंजूस।

रंग, रँग—संज्ञा पु. [स] (१) नाच-गाना, नृत्य-गीत। (२) नृत्य, अभिनय आदि का स्थान। (३) युद्धस्थल। (४) वर्ण। (५) वह पदार्थ जिससे चीजें रँगी जाती हैं। उ.—(क) सेत, हरी रातौ अरु पियरौ रंग लेत है धोई—१-६३। (ख) सूरदास कारी कामरि पै चढ़त न दूजौ रंग—१-३३२। (ग) रंग कापै होत न्यारो हरद-चूनो सानि—८९५। (घ) पहिलै ही चढि रह्यौ स्याम रँग छूटत नहिं देख्यौ धोई— ३१४८।

यौ०—रंग-बिरंगा—जिसमें अनेक रंग हों।

मुहा०—रंग आना (चढना)—रंग का अच्छे रूप में चमकने लगना। रंग उड़ना (उतरना)—रंग का फीका पड़ जाना। रंग खेलना (डालना या फेकना)—होली के दिनो में रंग पानी में घोलकर एक दूसरे पर छिड़कना। रंग खेलत—होली के दिनो में रंग घोलकर परस्पर छिड़कते है। उ—खेलत ग्वालनि संग रंग आनंद मुरारी—४९२। रंग निखरना—रंग का चटकीला हो जाना। रंग फीका होना— रंग में चमक या चटकीलापन न रह जाना। रँग ह्वैहै फीको—रँग की चमक या उसका चटकीलापन कम हो जायगा। उ.—बूँद परत रँग ह्वैहै फीकौ, सुरँग चूनरी भीजै—७३१।

(५) मुख और शरीर की रंगत।

मुहा०—रंग उड़ना (उतरना)—भय, लज्जा आदि से मुख का कांतिहीन हो जाना। रंग निकलना (निखरना)—मुख पर रौनक आ जाना, शरीर का कांतियुक्त

हो जाना। रग फक होना—चेहरा पीला पड़ जाना। रग बदलना—क्रोध से लाल-पीला होना।

(६) जवानी, युवावस्था, यौवन।

मुहा०—रग चूना (टपकना)—यौवन का पूर्ण उभार या विकास पर होना, यौवन छा जाना।

(७) शोभा, सौंदर्य, छवि। उ—कहँ वह नीर, कहाँ वह सोभा, कहँ रँग-रूप दिखैहै—१-८६।

मुहा०—रग पकडना (पर आना)—छवि या शोभा का बहुत बढ जाना। रग फीका पडना (होना)—छवि या शोभा घट जाना। रग बरसना—खूब रौनक होना। रग है—वाह वा! बहुत बढिया।

(८) प्रभाव, असर।

मुहा०—रग चढना (जमना)—प्रभाव या असर होना।

(९) किसी के गुण, रूप आदि का दूसरे के हृदय पर पड़नेवाला प्रभाव या असर।

मुहा०—रग जमना—अभीष्ट प्रभाव पड़ना। रग उखडना—अभीष्ट प्रभाव न रह जाना। रग जमाना—अभीष्ट रूप से प्रभावित कर लेना। रग फीका रहना—अभीष्ट प्रभाव न पड़ सकना। रग बँधना—अभीष्ट प्रभाव पड़ने लगना। रग बाँधना—(१) अभीष्ट प्रभाव डालने का यत्न करना। (२) ढोग या आडम्बर रचना। रग बिगडना—प्रभाव नष्ट या कम हो जाना। रग बिगाड़ना—(१) प्रभाव या महत्व घटाना। (२) ढोग या आडम्बर प्रकट कर देना। (३) शेखी किरकिरी करना। रग लाना—प्रभाव या महत्व दिखाना।

(१०) खेल, विनोद, क्रीड़ा-कौतुक। उ.—एक गावत एक नाचत एक करत बहु रग—२४१५।

यौ०—रग-रलियाँ—आमोद-प्रमोद।

मुहा०—रग-रलना—आमोद-प्रमोद, क्रीड़ा-विनोद या विलास विहार करना। रग रलिहै—आमोद-प्रमोद या विलास-विहार करेंगे। उ.—भाव ही कह्यौ मन भाव दृढ राखिबो दै सुख तुमहि सग रग रलिहैं। रग मे भग पडना (होना)—आमोद-प्रमोद या हास्य-विनोद में अकस्मात कोई दुःख या विघ्न आ पड़ना।

(११) मन की उमग, तरंग या मौज। उ.—(क) रत्नजटित किंकिनि पग नूपुर अपने रग बजावहु। (ख) तहँ सुख मानि, बिसारि नाथ-पद अपनै रग बिहरतौ—१-२०३। (ग) खेलत स्याम अपनै रग—१०-२३४। (घ) बाजत बेनु बिषान, सबै अपनै रँग गावत—४३७। (ङ) चरहि धेनु अपनै अपनै रँग अतिहि सघन बन चारौ—६११।

मुहा०—(किसी के) रग मे ढलना (ढ़रना)—किसी के प्रभाव में आकर उसकी इच्छानुसार कार्य करना। रँग ढरी—किसी के प्रभाव में आकर उसकी इच्छानुसार कार्य करने लगी। उ.—तुरत मन सुख मानि लीन्हौ नारि तेहि रँग ढरी।

(१२) आनन्द, मजा। उ.—मोकौ व्याकुल छाँडि कै आपुन करै जु रग।

मुहा०—रग आना—आनद मिलना। रग उखडना—आनंद के अवसर पर कुछ विपरीत बात से मजा किरकिरा हो जाना। रग जमना—खूब आनन्द आना। रग मचाना—धूम मचाना। रग मे भग करना—आनन्द के अवसर पर अचानक कोई विघ्न खड़ा कर देना। रग मे भग होना—आनन्द के अवसर पर सहसा विघ्न या बाधा आ जाना। रग रचाना—उत्सव करना।

(१३) दशा, स्थिति, व्यवहार। उ.—कबहुँ नहिं इहि भाँति देख्यौ, आजु कैसौ रग—४२७।

मुहा०—रग लाना—स्थिति या अवस्था-विशेष उपस्थित कर देना।

(१४) अद्भुत दृश्य या कांड। (१५) कृपा, दया, प्रसन्नता। (१६) प्रेम, अनुराग। उ.—(क) हरि-पद पकज पियौ प्रेम-रस, ताही कै रँग रातौ—१-४०। (ख) देखि जरनि जड नारि की (रे) जरति प्रेत के सग। चिता न चित फीकौ भयौ (रे) रची जु पिय कै रँग—१-३२५। (ग) भरतादिक सब हरि-रँग रए—५-२। (घ) कुबिजा भई स्याम-रँग-राती—१-६३।

मुहा०—रग देना—दिखावटी प्रेम करना।

(१७) ढग, ढब।

यौ०—रग-ढग—(१) दशा, स्थिति, अवस्था। (२) चाल-ढाल। (३) व्यवहार-बर्ताव। (४) लक्षण।

मुहा०—रग काछना—ढग अपनाना, चाल चलना। रँग काछत—ढंग अपनाते है। उ.—सूर स्याम जितने रँग काछत जुवती जन-मन के गोऊ है। (किसी को अपने) रग मे रँगना—किसी को प्रभावित करके अपना-सा या अपने मत और पक्ष का कर लेना।

(१८) भांति, प्रकार। (१९) चौपर की १६ गोटियों का दो बराबर भागों में विभाजन जिनमें ८ 'रग' और शेष 'बदरग' कहलाती है।

मुहा०—रग जमना—चौपड़ की 'रग' गोटी का ऐसे घर में पहुँचना जिससे खिलाडी की जीत निश्चित हो जाय। रग मारना—बाजी जीतना।

(२०) युद्ध, समर, लड़ाई।

यौ०—रण-रग—युद्धोत्साह। उ.—भिडचौ चानूर सौ नद-सुत बाँधि कटि पीतपट फेट रण-रग राजै —२६०७।

मुहा०—रग मचाना—खूब उत्साह से युद्ध करना, घमासान मचा देना।

रंगत—सज्ञा स्त्री. [हिं. रग] (१) रंग का भाव या उसकी चमक-दमक। (२) आनद, मजा। (३) दशा, स्थिति, अवस्था।

रंग-थल—सज्ञा पु. [स. रंगस्थल] रंगस्थल।

रंगद्वार—सज्ञा पु. [हि. रग+स. द्वार] रंगभूमि का द्वार उ.—नवल नदनन्दन रगद्वार आए—२५९५।

रँगना, रँगनो—क्रि स. [हिं. रग] (१) रंग चढ़ाना, रंगीन करना। (२) प्रेम करने लगना। (३) प्रभाव डालकर अपने अनुकूल करना।

क्रि. अ.—आसक्त या प्रेम में लीन होना।

सज्ञा स्त्री. [हिं. रेंगना] धीरे-धीरे कौतुक करते घिसटना या चलना। उ.—मनिमय आँगन नदराइ कौ बाल गोपाल करै तहँ रँगना—१०-११३।

रंग-बिरंग, रंग-बिरंगा—वि. [हि रग+बिरग] (१) कई रंगोवाला। (२) कई तरह का।

रंगभवन—सज्ञा पु. [स] भवन जहाँ आमोद-प्रमोद के सभी साधन उपलब्ध हो।

रंगभूमि—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) उत्सव, आयोजन आदि का स्थान। उ कछु क्रोध कछु त्रास, कछु सोच, कछु सोक करै सहास रगभूमि आयौ २६०२। (२) क्रीड़ा, विनोद आदि का स्थान। उ.—रगभूमि रमनीक मधुपुरी बारि चढाइ कहो दह कीजो—१० उ०-९५। (३) कुश्ती होने का स्थान, अखाड़ा। उ०—रगभूमि मै कस पछारौ, घीसि बहाऊँ बैरी—१०-१७६। (४) रण-भूमि, युद्धक्षेत्र। (५) नाटक खेलने का स्थान।

रंगभौन—सज्ञा पु. [स. रगभवन] रगमहल।

रँगमँगा, रँगमँगे—वि. [हि. रग+मग्न] आनद मे लीन, रसलीन। उ.—मानहुँ रति-रस भए रँगमँगे करत केलि पिय पलक न पारे—२१३२।

रंगमंच—सज्ञा पु. [स.] (१) नाट्यशाला। (२) रगभूमि।

रंगमहल—सज्ञा पु [स. रग+अ. महल] आमोद-प्रमोद या विलास का भवन। उ.—बैठी रगमहल मै राजति, प्यारी फेरि अभूषन साजति।

रँगमाता—वि. [स रग+हि. मत्त] आनंद में लीन।

रंग-रन—सज्ञा पु. [स रग+रण] युद्धोत्साह। उ.—धन्य सु भूमि जहाँ पग धारे जीतहिंगे रिपु आजु रग-रन—२५७३।

रंगरली—सज्ञा स्त्री. [स. रग+हि रलना] आमोद-प्रमोद।

मुहा०—रगरली करना (मचाना)—आमोद-प्रमोद या विलास-विहार करना।

रंगरस—सज्ञा पु. [स. रग+रस] आमोद-प्रमोद।

रंगरसिया—वि. [स. रग+हिं रसिया] विलासी।

रँगराता, रँगराते, रँगरातो—वि [स. रग+हिं. राता] अनुरक्त। उ.-भामिमि कुबिजा सौ रँगराते—२६८४।

रँगरेज—सज्ञा पु. [फा. रँगरेज] कपड़ा रँगने का काम करनेवाला।

रगरेजिन, रँगरेजिनि—सज्ञा स्त्री. [हि. रँगरेज] रँगरेज की स्त्री, कपड़े रँगनेवाली। उ.—जावक सो कहाँ पाग रँगाई रँगरेजिन मिलिहै को बाल—१९३६।

रंगरेलि, रंगरेली—सज्ञा स्त्री. [स. रग+रेलना] मौज, विलास, आमोद-प्रमोद।

रँगवाई—सज्ञा स्त्री [हिं रँगाई] रँगने की क्रिया, भाव या मजदूरी।

रँगवाना, रँगवानो—क्रि. स [हि. रँगना का प्रे०] रँगने का काम दूसरे से कराना।

रंगशाला—सज्ञा स्त्री. [सं.] नाट्यशाला।

रंगसाज—वि. [हि. रग+फा. साज] रग बनाने या चढ़ानेवाला।

रंगस्थल—सज्ञा पु. [स.] रगभूमि।

रंगा—सज्ञा स्त्री. [स. रग] राधा की एक सखी का नाम। उ —कहि राधा, किनि हार चुरायो। ' । प्रेमा दामा रूपा हसा रगा हरषा जाउ—१५८०।

रँगाई—सज्ञा स्त्री. [स. रग+हि. आई] रँगने की क्रिया, भाव या मजदूरी।

क्रि. स. [हि. रँगाना] रग चढ़वाया, रँगने को प्रवृत किया, रँगवा ली। उ.—जावक सो कहाँ पाग रँगाई—१९३६।

रगाना, रँगानो—क्रि. स. [हि. रँगना का प्रे०] रँगने का काम दूसरे से कराना।

रगावट—सज्ञा स्त्री. [हि. रग+आवट] रँगने की क्रिया या भाव।

रगिया—सज्ञा पु. [स. रग+हिं. इया] रँगनेवाला।

रंगी—वि. [हि. रग] (१) रँगीला। (२) रगीन।

रंगीन—सज्ञा स्त्री. [फा.] (१) रँगा हुआ। (२) विलासी। (३) अनोखा, मजेदार।

रंगीनी—सज्ञा स्त्री [हि· रगीन] (१) रंगीन होने का भाव (२) बनाव-सिंगार। (३) रँगीलापन।

रगीला—वि· [स. रग+हिं. ईला] (१) रसिक, रसिया। (२) सुंदर। (३) प्रेमी, अनुरागी।

रँगीली—वि स्त्री. [हि रँगीला] आनद मे लीन, रसिकिनी, अपने राग-रग में चूर। उ.—दधि लै मथति ग्वालि गरबीली। '''। भरी गुमान बिलोकति ठाढ़ी, अपनै रग रँगीली—१०-२९९। (२) सुदर। (३) अनुरागभरी, मुग्ध।

रँगीले—वि. [हि. रँगीला] रसिक, रसिया। उ— स्याम रँग रँगे रँगीले नैन।

रँगैया—वि. [हिं. रँगना+ऐया] रँगनेवाला।

रँग्यौ—क्रि अ. [हि. रँगना] रँग लिया, रग में मग्न या लीन हो गया। उ —(क) तू तौ बिषया-रग रँग्यौ है, बिन धोए क्यौ छूटै—१-६३। (ख) तेहि रँग सूर रँग्यौ मिलिकै मन होइ न स्वेत अरुन फिर पेरो—११९९।

रंच, रंचक—वि [स न्यच, प्रा० णच] थोड़ा, तनिक, जरा सा। उ.—(क) रच काँच-सुख लागि मूढ मति कचन-रासि गँवाई—१-३२८। (ख) रचक सुख-कारन तैं अत क्यौ बिगोयौ—१-३३०। (ग) रचक दधि के काज जसोदा बाँधे कान्ह उलूखल लाइ—२६९५।

रँचिबौ—सज्ञा पु. [हि. रचना] लीन या मग्न होना। उ.—रे मन, छाँडि बिषय को रँचिवौ—१-५९।

रंज—सज्ञा पु [फा.] (१) दुख। (२) शोक।

रंजक—वि. [स.] (१) रँगनेवाला। (२) आनंदकारी।

सज्ञा स्त्री. [हि. रच=अल्प] (१) बदूक की प्याली मे आग लगाने को रखी जानेवाली बारूद। (२) भड़काने या उत्तेजित करनेवाली बात।

रंजन—सज्ञा पु. [स.] (१) रँगने की क्रिया। (२) प्रसन्न करने की क्रिया।

वि.—प्रसन्न या आनंदित करनेवाला। उ.—सब वे दिवस चारि मन-रजन अत काल बिगरैगो—१-७५।

रंजना, रंजनो—क्रि. स. [स. रजन] (१) प्रसन्न करना। (२) स्मरण या भजन करना। (३) रँगना।

रंजित—वि. [स.] (१) रँगा हुआ, सना हुआ। उ.—(क) अति बिराजत बदन-बिधु पर सुरभि-रजित रेनु—१-३०७। (ख) सोभित मन अबुज पराग-रुचि रजित मधुप सुदेश—८७८। (२) प्रसन्न, हर्षित। (३) अनुरक्त, मुग्ध।

रंजिश—सज्ञा स्त्री. [फा.] (१) दुखी होने का भाव। (२) मन-मुटाव। (३) शत्रुता।

रंजीदा—वि. [फा.] (१) दुखी। (२) अप्रसन्न।

रंजै—क्रि स [हि. रचना] स्मरण या भजन करता है। उ.—आदि निरजन नाम ताहि रजै सब कोऊ—३४४३।

रँडा—वि. [स.] राँड़, विधवा।

रँडापा—सज्ञा पु. [स. रडा] विधवा की स्थिति।

रंडी—सज्ञा स्त्री. [स. रडा] वेश्या ।
रँड़ुआ, रँड़ुआ, रड़ुवा—वि. [हि. राड] जिसकी पत्नी मर गयी हो ।
रंता—वि. [स. रत] लीन, लगा हुआ ।
रंति—सज्ञा स्त्री. [स.] केलि, क्रीड़ा ।
रंद—सज्ञा पु [स. रध्र] किले की दीवार का मोखा जिससे तोप आदि चलायी जा सके ।
रदना, रँदनो—क्रि. स. [हि. रदा] रदा फेरकर लकड़ी की सतह चिकनी करना ।
रंदा—सज्ञा पु [स. रदन] लकडी की सतह चिकनी करने का औजार ।
रंधन—सज्ञा पु. [स.] रसोई बनाना ।
रंध्र—सज्ञा पु. [स.] (१) छेद, सूराख । उ—(क) जैसे फिरत रध्र मगु उँगरी तैसे मैंहुँ फिराऊँ—पृ० ३११ (११) । (ख) ग्रीवा रध्र नैन चातक जल पिक मुख बाजै बाजन—२८१७ । (२) दोष, छिद्र ।
रंभ—सज्ञा स्त्री. [स] शब्द, कोलाहल ।
रंभण, रंभन—सज्ञा पु. [स. रभण] (१) गले लगाना, आलिंगन । (२) (गाय का) रँभाना ।
रंभना, रंभनो—क्रि. अ. [स. रभण] (१) जोर का शब्द करना । (२) (गाय का) बोलना ।
रंभा—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) केला । (२) एक अप्सरा । (३) राधा की एक सखी का नाम । उ.—कहि राधा, किनि हार चुरायो । . . । दर्वा रभा कृष्णा ध्याना, मैना नैना रूप—१५८० ।
रँभाना, रँभानो—क्रि अ [स. रभण] गाय का बोलना ।
रंभि—क्रि. अ [हि रँभाना] रँभाकर । उ.—मुरली धुनि गौ रभि चलत पग धूरि उडावति ।
रइचटा—सज्ञा पु. [हि. रहस+चाट] लालच, चस्का ।
रइकौ—क्रि वि. [हिं. रच+कौ] जरा भी ।
रइनि—सज्ञा स्त्री. [स. रजनी, प्रा० रयणी] रात ।
रईं—क्रि. अ. [हिं. रयना] लीन, आसक्त या अनुरक्त हुई । उ.—प्रेम-बिबस सब ग्वालि भई । उरहन देन चली जसुमति कौ, मनमोहन के रूप रईं—७७१ ।
रई—सज्ञा स्त्री. [स. रय] मथानी । उ.—(क) बासुकि नेति अरु मदराचल रई, कमठ मैं आपनी पीठि धारौ—८-८ । (ख) त्यौं त्यौं मोहन नाचै ज्यौं-ज्यौं रई-घमरको होइ—१०-१४८ ।
सज्ञा स्त्री [हि. रवा] (१) मोटा आटा । (२) चूर्ण ।
वि. स्त्री. [हि. रयना] (१) मग्न, लीन, पगी हुई । (२) अनुरक्त ।
क्रि. अ—अनुरक्त हुई । उ.—कहत परस्पर आपुस मै सब कहाँ रही हम काहि रई । (ख) ज्यौ ब्यभिचारि भवन नहि भावत औरहि पुरुष रई—पृ० ३३४ (३९) । (ग) माधव राधा के रँग राचे, राधा माधव रग रई—१० उ०-१२१ ।
रईस—वि [अ.] धनी, अमीर ।
रईसी—सज्ञा स्त्री [अ रईस] धनी होने का भाव, अमीरी ।
रउताइ, रउताई—सज्ञा पु. [हि.रावत+आई] स्वामित्व, प्रभुता ।
रउरे—सर्व. [हि. राव, रावल] मध्यम पुरुष के लिए आदरसूचक शब्द, आप ।
रए—क्रि. अ. [हिं. रयना] लीन या अनुरक्त हुए । उ.—(क) वह तौ जाइ समात उदधि मे ए प्रति अग रए—पृ० ३२१ (९७) । (ख) जोबन-बन ते निकसि चले ए मुरली-नाद रए—पृ० ३२५ (४८) ।
रकछ—सज्ञा पु. [हि. रिकवँच] पत्ते की पकौड़ी ।
रकत—सज्ञा पु [सं. रक्त] खून, लहू, रुधिर । उ.—चापि ग्रीव हरि प्रान हरे, दृग रकत-प्रवाह चल्यौ अधिकानी—१०-७५ ।
वि.—लाल ।
रकबा—सज्ञा पु. [अ. रकबा] क्षेत्रफल ।
रकबाहा—सज्ञा पु. [देश.] एक तरह का घोड़ा ।
रकम—सज्ञा स्त्री. [अ० रकम] धन दौलत ।
रकसाई—सज्ञा स्त्री. [हि. राकस] राक्षसपन ।
रकाब—सज्ञा स्त्री. [फा.] घोड़े की जीन का पावदान ।
मुहा०—रकाब पर पैर रखे होना—(१) जाने को तैयार होना । (२) जाने की जल्दी मचाना ।
रकार—सज्ञा पु. [स.] 'र' का बोधक वर्ण ।
रक्त—सज्ञा पु. [स.] खून, लहू, रुधिर ।

वि.—(१) अनुरक्त, आसक्त। (२) रँगा हुआ। (३) लाल। (४) विलास में लीन।
रक्तकंठ—वि [स.] जिसका कंठ लाल हो।
सज्ञा पु. (१) कोयल। (२) बैगन, भाँटा।
रक्तता—सज्ञा स्त्री [स.] लाली, लालिमा।
रक्तदृग—वि. [स.] जिसकी आँखे लाल हों।
सज्ञा पु.—(१)कोकिल। (२) कबूतर।(३)चकोर।
रक्तपात—सज्ञा पु. [स.] (१) खून गिरना या बहना। (२) ऐसी लड़ाई कि लड़नेवाले घायल हो जायँ।
रक्तबीज—सज्ञा पु. [स.] (१) अनार, दाड़िम। (२) एक राक्षस जो शुंभ और निशुंभ का सेनापति था और जिसके शरीर से रक्त की जितनी बूँदे गिरती थीं, उतने ही राक्षस उत्पन्न हो जाते थे। चंद्रिका ने उसका सब रक्त पान करके उसे मार डाला था।
रक्ताक्त—वि. [स.] (१) लाल। (२) रक्त-रंजित।
रक्ताभ—वि. [स.] लाली लिए हुए।
रक्तिम—वि. [स.] जो लाली लिये हुये हो।
रक्तोपल—सज्ञा पु. [स.] लाल (रत्न)।
रक्ष—सज्ञा पु [स.] (१) रक्षक। (२) रक्षा।
सज्ञा पु. [स. रक्षस्] राक्षस।
रक्षक—सज्ञा पु. [सं.] रक्षा करनेवाला।
रक्षण, रक्षन—सज्ञा पु. [स. रक्षण] रखवाली।
रक्षना, रक्षनो—क्रि. स [स. रक्षण] रक्षा करना।
रक्षस—सज्ञा पु. [स. रक्षस्] असुर, निशाचर।
रक्षा—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) बचाव, रखवाली। (२) वह यंत्र या सूत्र जो नजर आदि से बचाने के लिए बालकों के बाँधा जाता है। (३) राखी जो रक्षाबंधन के दिन बाँधी जाती है।
रक्षाइद—सज्ञा स्त्री [हि. रक्षा+आइद] राक्षसपन।
रक्षाबंधन—सज्ञा पु. [स] हिंदुओं का एक त्योहार जो श्रावण शुक्ला पूर्णिमा को होता है और जिस दिन ब्राह्मण अन्य वर्गों के या बहनें, भाइयों के अथवा घर का बड़ा छोटो के 'राखी' बाँधता है।
रक्षित—वि. [स.] जिसकी रक्षा की गयी हो।
रक्षी—सज्ञा पु. [स. रक्षिन्] रक्षा करनेवाला।
सज्ञा पु. [स. रक्षस्] राक्षसो को पूजनेवाला।

रखना—क्रि. स. [स. रक्षण, प्रा० रक्खण] (१) धरना, टिकाना, (२) बचाना, रक्षा करना। (३) बिगड़ने या नष्ट न होने देना। (४) एकत्र या संग्रह करना। (५) सौंपना। (६) रेहन करना। (७) अपने अधिकार में करना। (८) पालना। (९) नियुक्त करना। (१०) पकड़ या रोक लेना। (११) चोट पहुँचाना। (१२) टालना, स्थगित करना। (१३) सामने न लाना। (१४) व्यवहार या उपयोग में लाना। (१५) मढ़ना, आरोप करना। (१६) ऋणी होना। (१७) मन मे अनुभव करना। (१८) डेरा डलवाना, ठहरा देना। (१९) उपपत्नी या उपपति बनाना। (२०) बचा लेना।
रखनी—सज्ञा स्त्री. [हि. रखना] रखैल, उपपत्नी।
रखनो—क्रि. स. [स. रक्षण, प्रा. रक्खण] रखना।
रखवाई—सज्ञा स्त्री. [हि. रखाना] रखवाली करने की क्रिया, भाव या मजदूरी।
रखवाना—क्रि. स. [हि. रखना का प्रे०] रखने की क्रिया दूसरे से कराना।
रखवानी—सज्ञा स्त्री. [हि. रखना] रक्षा, सुरक्षा। उ.—जन्म भयौ जब तें ब्रज हरि को कहा कियौ करि-करि रखवानी—२३७९।
रखवानो – क्रि. स. [हि. रखना का प्रे०] रखने की क्रिया, दूसरे से कराना।
रखवार, रखवारा—सज्ञा पु. [हि. रखवाला] (१) रक्षक। (२) चौकीदार।
रखवारी—सज्ञा स्त्री. [हि. रखवाली] रक्षा, रक्षा करने की क्रिया या भाव। उ.—(क) मन-ममता-रुचि सौ रखवारी पहिलै लेहु निबेरि—१-५१। (ख) रखवारी को बहुत महाभट दीन्हे रुक्म पठाई—१० उ०-१९।
सज्ञा पु.—रक्षक, रखवाला। उ.—धेनुक असुर तहाँ रखवारी—४९९।
रखवारे—सज्ञा पु. [हि. रखवाला] रक्षा करने वाले। उ.—(क) येई है कुलदेव हमारे। काहूँ नही और मैं जानति ब्रज-गोधन रखवारे —८१२। (ख) सिर ऊपर बैठे रखवारे—१०-१०।
रखवारो—सज्ञा पु. [हि. रखवाला] रक्षक। उ.—अब

को सात दिवस राखैगो दूरि गयो ब्रज को रखवारी —२८३२।

रखवाला—सज्ञा पु [हिं. रखना+वाला] (१) रक्षा करनेवाला। (२) चौकीदार, पहरेदार।

रखवैया—सज्ञा पु. [हिं. रखना+ऐया] रक्षा करनेवाला, रक्षक। उ —दोउ सीग बिच ह्वै हौ आयौ, जहाँ न कोऊ हो रखवैया—१०-३३५।

रखाई—सज्ञा स्त्री. [हिं. रखना+आई] रक्षा करने की क्रिया, भाव या मजदूरी।

रखाऊ—वि. [हि रखना] बहुत दिनों का रखा हुआ।

रखाना, रखानो—क्रि. स. [हि. 'रखना' का प्रे०] रक्षा या चौकीदारी करने का काम दूसरे से कराना।

क्रि. अ. रक्षा या रखवाली करना।

रखायौ—क्रि स. [हि रखाना] रक्षा की।

मुहा०—बोल रखायौ—बात रख ली। उ.—तिहि कारन मै आइ कै तुव बोल रखायौ—७१६।

रखिया—सज्ञा पु. [हिं. रखना+इया] रखनेवाला।

रखियाना, रखियानो—क्रि. स. [हि. राख] राख से माँजना।

रखेल, रखेली, रखैल, रखैली—सज्ञा स्त्री. [हिं. रखना +एल, एली]स्त्री जो बिना विवाह के ही पत्नी की तरह रहे।

रखैया—सज्ञा पु. [हिं. रखना+ऐया] (१) रखनेवाला। (२) रक्षक।

रग—सज्ञा स्त्री. [फा.] नस या नाड़ी।

मुहा०—रग दबना—दबाव मानना। रग-रग फडकना—बहुत उत्साह होना। रग-रग मे—सारे शरीर में।

रगड़—सज्ञा स्त्री. [हि. रगड़ना] (१) रगड़ने की क्रिया या भाव। (२) रगड़ने से बन जानेवाला चिह्न। (३) कड़ी मेहनत।

मुहा०—रगड पडना—बहुत श्रम उठाना।

रगड़ना, रगड़नो—क्रि. स. [स. घर्षण] (१) घिसना, घर्षण करना। (२) पीसना। (३) कोई काम बार-बार करना। (४) तंग या परेशान करना।

क्रि. अ.—कड़ी मेहनत करना।

रगड़वाना, रगड़वानो—क्रि. स. [हिं. 'रगडना' का प्रे०] रगड़ने का काम दूसरे से कराना।

रगड़ा—सज्ञा पु. [हि रगडना] (१) रगड़ने की क्रिया या भाव। (२) कड़ी मेहनत। (३) बहुत दिन चलनेवाला झगड़ा।

रगण—सज्ञा पु. [स.] एक 'गण' जिसमें पहला वर्ण गुरु, दूसरा लघु और तीसरा गुरु होता है (छदशास्त्र)।

रगत—सज्ञा पु. [स. रक्त] खून, रुधिर।

रगमगा, रगमगो—वि. [स. रग+मग्न] प्रेमासक्त।

रगर—सज्ञा स्त्री. [हि. रगड] रगड।

रगरा सज्ञा पु [हि. रगडा] रगड़ा।

रग-रेशा—सज्ञा पु. [फा रग+रेशा] (१) नस। (२) सूक्ष्म से सूक्ष्म बात।

रगवाना, रगवानो—क्रि स [हि. 'रगाना' का प्रे०] चुप कराना।

रगा—सज्ञा पु [देश.] मोर।

रगाना, रगानो—क्रि. अ. [देश.] चुप या शांत होना।

क्रि स.—चुप या शांत करना।

रगी, रगीला—वि. [हि. रग] (१) जिद्दी। (२) दुष्ट।

रगेद—सज्ञा स्त्री. [हि. रगेदना] दौड़ने की क्रिया।

रगेदना, रगेदनो—क्रि.स.[हि खेदना] भगाना, खदेड़ना।

रघु—सज्ञा पु. [स.] सूर्यवशी राजा दिलीप के, सुदक्षिणा से उत्पन्न पुत्र जो राजा दशरथ के दादा और राम के परदादा थे।

रघुकुल—सज्ञा पु. [स.] राजा रघु का वश। उ.—है केतिक ये तिमिर निसाचर उदित एक रघुकुल के भानुहि—९-९५।

रघुनंद, रघुनंदन—संज्ञा पु [स.] श्रीरामचद्र।

रघुनाथ—सज्ञा पु. [स.] श्रीरामचद्र।

रघुनायक—सज्ञा पु. [स.] श्रीरामचद्र।

रघुपति—सज्ञा पु. [स.] श्रीरामचंद्र। उ.—रघुपति रिस पावक प्रचड अति सीता-स्वाँस समीर—९-१५८।

रघुबंश—सज्ञा पु. [स. रघुवश] महाराज रघु का वश जिसमें श्रीरामचद्र जन्मे थे।

रघुबंसी—सज्ञा पु. [स. रघुवशी] महाराज रघु के वशज। उ.—दसरथ नृपति हुतौ रघुबसी—१-१८९।

रघुबर—सज्ञा पु. [स. रघुवर] श्रीरामचद्र । उ.—जनक-सुता-पति है रघुबर-से—९-१४० ।

रघुबीर—सज्ञा पु. [स. रघुवीर] श्रीरामचद्र । उ.—प्रगट्यौ आइ लक दल कपि कौ फिरी रघुबीर-दुहाई —९-८२ ।

रघुराइ, रघुराई—सज्ञा पु. [स. रघुराज] श्रीरामचद्र ।

रघुराज, रघुराजा—सज्ञा पु. [स. रघुराज] श्रीरामचद्र।

रघुराय, रघुराया, रघुरैया—सज्ञा पु. [स. रघुराज] श्रीरामचद्र ।

रघुवंश—सज्ञा पु [स.] (१) महाराज रघु का प्रसिद्ध कुल जिसमे श्रीरामचद्र जन्मे थे । (२) कालिदास का प्रसिद्ध महाकाव्य ।

रघुवंशकुमार—सज्ञा पु. [स.] श्रीरामचद्र ।

रघुवंशी—सज्ञा पु. [स.] महाराज रघु का वशज ।

रघुवर—सज्ञा पु. [स.] श्रीरामचद्र ।

रघुवीर—सज्ञा पु. [स.] श्रीरामचद्र ।

रचक—सज्ञा पु. [स.] रचना करनेवाला ।

वि. [हि. रचक] थोड़ा, जरा सा, तनिक ।

रचन—सज्ञा स्त्री. [हिं. रचना] निर्माण की क्रिया, चातुरी या विधान । उ.—(क) बात बनावन कौ है नीकौ बचन-रचन समुझावै—१-१८६ । (ख) हाव-भाव नैनन सैनन दै बचन-रचन मुख भाषै—१८५६ । (ग) बचन-रचन माधुरी सधर पर कवन कोकिला कूर—२११९ ।

रचना—सज्ञा स्त्री [स.] (१) बनाने की क्रिया या भाव, बनावट । उ.—(क) प्रभु जी की आरती बनी । अति विचित्र रचना रचि राखी परति न गिरा गनी –२-२८ । (ख) इद्रलोक-रचना रिषि ठई—९-३ । (ग) बुधि न सकति सेतु रचना रचि राम-प्रताप बिचारत—९-१२३ । (२) निर्माण-कौशल । (३) निर्मित वस्तु । (४) केश-विन्यास । (५) लिखा गया गद्य या पद्य-विशेष ।

क्रि. स. [सं. रचन] (१) बनाना, निर्माण करना । (२) निश्चित करना । (३) ग्रथ आदि लिखना । (४) उत्पन्न करना । (५) ठानना, अनुष्ठान करना । (६) युक्ति या आयोजन करना । (७) कल्पना करना । (८) सजाना, सँवारना । (९) क्रमानुसार रखना ।

क्रि. स. [स. रजन] रँगना ।

क्रि. अ. (१) रँग चढ़ना, रँगा जाना । (२) आसक्त या अनुरक्त होना ।

रचनी—वि. [हि. रचना] रची हुई, निर्मित । उ.—काल-कर्म-गुन-ओर-अत नहि प्रभु इच्छा रचनी—२-२८ ।

रचनो—क्रि. स. [स. रचन] रचना ।

क्रि. स. [स. रजन] रँगना ।

क्रि. अ. (१) रँगा जाना । (२) आसक्त होना ।

रचयिता—सज्ञा स्त्री. [स. रचयितृ] निर्माण करने, रचने या बनानेवाला ।

रचयो, रचयौ—क्रि. स [हिं. रचना] बनाया, तैयार किया । उ.—(क) ग्वाल-सखा सबही पय अँचयौ । नीकै औटि जसोदा रचयौ - ३९६ । (ख) सीतल जल कपूर-रस रचयौ—५१४ ।

रचवाना, रचवानो—क्रि. स. [हिं. 'रचना' का प्रे०](१) 'रचने'का काम दूसरे से कराना । (२) मेंहँदी, महावर आदि लगवाना ।

रचाऊँ—क्रि स. [हिं. रचाना] बनाऊँ, निर्मित करूँ । उ.—नव निकुज बन-धाम निकट इक आनँद-कुटी रचाऊँ—१८५७ ।

रचाना, रचानो—क्रि. स. [स. रचन] (१) आयोजन या अनुष्ठान करना या कराना । (२) बनवाना ।

क्रि. स. [स. रजन] मेंहदी, महावर आदि लगाना ।

रचायो, रचायौ—क्रि. स. [हिं. रचाना] आयोजन या अनुष्ठान किया । उ.—(क) दच्छ प्रजापति जज्ञ रचायौ—४-५ । (ख) ब्रज नर-नारि-ग्वाल-बालक, कहि, कौनै ठाठ रचायौ—४३६ ।

रचि—क्रि. स. [हि. रचना] (१) सजा-सँवार कर । उ.—रचि बिरचि मुख-भौह छबि लै चलति चित्त चुराइ—१-५६ ।

मुहा०—रचि-रचि— (१) बड़ी लगन, प्रेम या ममता से सजा-सँवारकर । उ.—(क)भूषन-बसन आदि सब रचि-रचि माता लाड लडावै । (ख) केसरि कौ उबटनौ बनाऊँ रचि-रचि मैल छुडाऊँ—१०-१८५ । (२) बड़ी कुशलता और चातुरी से बनाकर । रचि-पचि

—(१) बड़ा श्रम करके। (२) गढ़ गढ़कर। उ.—बतियाँ रचि-पचि कहत सयानी—३४४२।

(२) बनाकर, निर्माण करके। उ.—पुनि सबको रचि अड आपु मैं आपु समाए—२-३६। (२) आडंबर रचकर, छद्म वेश बनाक उ.—बकासुर रचि रूप माया रह्यौ छल करि आ ४२७। (३) फूल माला या गुच्छ आदि बनाकर। उ.—रचि स्रक कुसुम सुगध सेज सजि बसन कुमकुमा बोरि—२८१२।

रचित—वि. [स.] (१) बनाया हुआ, निर्मित। (२) लिखा हुआ, लिखित।

रचियो, रचियौ—क्रि. स. [हि. रचाना] बनवाया, निर्मित कराया। उ.—लाखा-मदिर कौरव रचियौ तहँ राखे बनवारी—१-२८२।

रची—वि. [हि. रच] थोड़ा, जरा सा।

क्रि. स. [हिं. रचना] (१) सोची, कल्पित की। उ.—तब इक बुद्धि रची अपनै मन, गए नाँघि पिछ-वारै—१० २७७। (२) अनुरक्त या आसक्त हुई। उ.—देखि जरनि जड, नारि की, जरति जु पिय कै सग। चिता न चित फीकौ भयी रची जु पिय कै रग —१-३२५। (३) ठानी, निश्चित की। उ.—सूर-दास प्रभु रची सु ह्वैहै, को करि सोच मरै—१-२६४।

रचे—क्रि. स. [हिं. रचना] (१) बनाये, निर्मित किये। उ.—रोम-रोम प्रति अड कोटि रचे—४९७। (२) पैदा या उत्पन्न किये। उ.—बालक बच्छ बनाइ रचे वे ही उनहारी—४९२।

रचै—क्रि. स. [हिं. रचना] बनाता या निर्मित करता है। उ.—लोक रचै राखै अरु मारै, सो ग्वालनि सँग लीला धारै—१०-३।

रचैगी—क्रि. स. [हिं. रचना] गढ़ लेगी, (नयी बात, उक्ति या बहाना) बना देगी। उ.—बूझत ही कछु बुद्धि रचैगी बडी चतुर यह नारि—१५२५।

रचौं—क्रि. स. [हिं. रचना] बनाऊँ, निर्मित करूँ। उ.—(क) रचौ सृष्टि-बिस्तार, भई इच्छा इक औसर —२-३६। (ख) तीन पैग बसुधा दै मोकौ, तहाँ रचौ भ्रमसारी—८-१४।

रचौंहौं—वि. [हि रचना] (१) रचा हुआ। (२) रँगा हुआ। (३) मुग्ध, अनुरक्त।

रचौ—क्रि. स. [हि. रचना] बनाओ, निर्मित करो, प्रबंध या आयोजन करो। उ.—लछिमन, रचौ हुता-सन भाई—९-१६१।

रच्छ—सज्ञा पु. [स. रक्ष] (१) रक्षक। (२) रक्षा।

रच्छक—सज्ञा पु [स. रक्षक] रक्षा करने या बचाने-वाला। उ.—(क) कृषि-रच्छक भाइनि तब कीन्हौ—५-३। (ख) नदघरनि कुल-देव मनावति, तुमही रच्छक घरी-पहर के—६०५।

रच्छन—सज्ञा पु [स. रक्षण] (१) रक्षा या रखवाली करना। (२) रक्षक।

रच्छनहार, रच्छनहारा—वि. [स. रक्षा+हि. हार, हारा] रक्षा करनेवाला, रक्षक।

रच्छना, रच्छनो—क्रि. स. [स. रक्षा] रक्षा करना।

रच्छस—सज्ञा पु. [स राक्षस] दैत्य, दानव, असुर।

रच्छा—सज्ञा स्त्री. [स. रक्षा] बचाव, रक्षण। उ.—(क) जन अर्जुन की रच्छा कारन सारथि भए मुरारी १-२८८। (ख) जिहिं बल बिप्र तिलक दै थाप्यौ, रच्छा करी आप बिदमान—१०-१२७।

रच्यो, रच्यौ—क्रि. स. [हि. रचना] (१) बनाया, निर्मित किया, गढ़ा। उ.—(क) ससि-तन गारि रच्यौ बिधि आनन बाँके नैननि जोहै—१०-१५८। (ख) द्वारावती कोट कचन मे रच्यो रुचिर मैदान—१० उ०-६। (२) आयोजित किया। उ.—द्वै बालक बैठारि सयाने खेल रच्यौ ब्रज-खोरी—६०४।

रज—सज्ञा पु [स. राजस्] (१) स्त्रियों तथा मादा प्राणियो के योनि-मार्ग से प्रति मास निकलनेवाला रक्त। (२) तीन गुणों मे से दूसरा गुण जो काम, क्रोध, लोभ आदि का उत्तेजक माना गया है। (३) भक्ति का एक रूप। उ.—माता, भक्ति चारि परकार। सत रज तम गुन सुद्धा-सार—३-१३। (४) पानी, जल। (५) पुष्प का पराग।

सज्ञा स्त्री. [स.] (१) धूल, गर्द। उ.—(क) सूरज प्रभु जसुमति रज झारति, कहाँ भरी यह खेह १०-१११। (ख) सध्या समय साँवरे मुख पर गो-

पर्द-रज लपटाए—४१७। (ग) कुज-कुज प्रति लोटि-लोटि ब्रज-रज लागै रँग-रीतनि—४९०।

मुहा०—रज छानना—(१) इधर-उधर भटकना, मारे-मारे फिरना। (२) व्यर्थ का श्रम करना। उ.—अतिसय सुकृत-रहित अघ व्याकुल बृथा स्रमित रज छानत १-२०१।

(२) रात। (३) ज्योति।

सज्ञा पु. [स. रजत] चाँदी।

सज्ञा पु. [स. रजक] धोबी। उ.—मारग मै इक रज सहारयौ सबहि बसन हरि लीन्हे।

रजक—सज्ञा पु [स.] (१) धोबी। उ.—नृपति रजक अबर नृप धोवत—२५७४। (२) कस का धोबी जिसकी धृष्टता से खीझकर श्रीकृष्ण ने उसको मार डाला था। उ.—रजक मल्ल चानूर-दवानल-दुख-भजन सुखदाई—१-१५८।

रज-गज—सज्ञा स्त्री. [हि. रज+गज (अनु.)] राजसी ठाटबाट।

रजगुन—सज्ञा पु. [स. रजोगुण] प्रकृति का वह गुण जिससे काम, क्रोध आदि की उत्पत्ति होती है।

रजतंत—सज्ञा स्त्री. [स. राजतत्व] शूरता, वीरता।

रजत—सज्ञा स्त्री. [स.] चाँदी, रूपा।

वि.—सफेद, श्वेत, उज्ज्वल।

रजताइ, रजताई—सज्ञा स्त्री. [स. रजत+हिं. आई] सफेदी, श्वेतता, उज्ज्वलता।

रजधानी—सज्ञा स्त्री. [स. राजधानी] (१) वह नगर जहाँ राजा या शासक रहता हो अथवा जो शासन-प्रबध का केन्द्र हो। उ.—(क) रामचन्द्र दसरथ-सुत कहै तात के पचवटी बन, छाँडि चले रजधानी—१०-१९९। (ख) रत्न जटित पलिका पर पौढे बरनि न जाइ कृष्न रजधानी—२३७९। (२) प्रसिद्ध या प्रमुख स्थान। उ.—नदहि कहति जसोदा रानी। माटी कै मिस मुख दिखरायौ, तिहूँ लोक रजधानी—१०-२५६। (३) प्रभु या आराध्य का निवास-स्थान। उ.—अब तौ यहै बात मनमानी। छाँडौ नही स्याम-स्यामा की बृन्दाबन रजधानी—१-८७।

रजना, रजनो—क्रि. अ [स रजन] रँगा जाना।

क्रि. स. रंग में डुबोना, रँगना।

रजनी—संज्ञा स्त्री. [स.] (१) रात्रि। (२) हल्दी।

रजनीकर—सज्ञा पु. [स] चद्रमा।

रजनीगंधा—सज्ञा स्त्री. [स.] एक सुगधित फूल जो रात मे फूलता है।

रजनीचर—वि. [स.] जो रात में घूमता हो।

सज्ञा पु. (१) राक्षस। (२) चद्रमा।

रजनीपति—सज्ञा पु. [स] चंद्रमा।

रजनीमुख—सज्ञा पु. [स.] संध्या, सायकाल। उ.—(क रजनीमुख आवत गुन गावत नारद तुबुर नाऊँ—९-१७२। (ख) रजनी-मुख बन ते बने आवत भावति मद गयद की लटकनि—६१८।

रजनीश, रजनीस—सज्ञा पु. [स. रजनीश] चद्रमा। उ.—कुटिल हरि-नख हिऐ हरि के हरषि निरखति नारि। ईस जनु रजनीस राख्यौ भाल तै जु उतारि—१०-१६९।

रजपूत—सज्ञा पु. [स. राजपूत] (१) राजपूत। (२) राज-स्थान के क्षत्रियों के कुल-विशेष। (३) वीर पुरुष।

रजपूती—सज्ञा स्त्री. [हि. राजपूत] (१) क्षत्रियपन। (२) वीरता।

रजवंती, रजवती—वि. [स रजोवती] रजस्वला।

रजवाड़ा—सज्ञा पु. [हि. राज्य+बाडा] (१) राज्य, रियासत। (२) राजा।

रजवार, रजवारा—सज्ञा पु. [स. राजद्वार] राज-दरबार, राजसभा।

रजस्वला—वि. स्त्री. [स.] (स्त्री) जिसका मासिक धर्म चालू हो, ऋतुमती।

रजा—सज्ञा स्त्री. [अ.] (१) मरजी, इच्छा। (२) आज्ञा। (३) स्वीकृति।

रजाइ, रजाई—सज्ञा स्त्री. [हिं. राजा+आई] (१) राजाज्ञा। (२) आज्ञा, आदेश।

सज्ञा स्त्री. [देश.] हलका लिहाफ।

रजाना, रजानो—क्रि. स. [स राज्य] (१) राज्य-सुख का भोग कराना। (२) बहुत सुख से रखना।

रजामंद—वि. [फा. रजामद] राजी, सहमत।

रजामंदी—वि. [हि. रजामद] सहमति, स्वीकृति ।

रजाय—सज्ञा स्त्री. [हि.राजा] (१) आज्ञा । (२) इच्छा ।

रजायस, रजायसु—सज्ञा पु. [स. राजादेश, प्रा. रजाएस] (१) राजा की आज्ञा । (२) आज्ञा । उ.—(क) अब तौ सूर सरन तकि आयौ सोइ रजायसु दीजै—१-२६९ । (ख) मोको राम रजायसु नाही—९-३२ ।

रजी—क्रि. अ. [हि. रजना] रँग गयी । उ.—सूर स्याम को मिली चूँन हरदी ज्यो रग रजी—११७३ ।

रजु—सज्ञा स्त्री. [स. रज्जु] रस्सी, जेंवरी । उ.—(क) परबस भयौ पसू ज्यौ रजु-बस भज्यौ न श्रीपति रानौ —१-४७ । (ख) जसुमति रिस करि-करि रजु करषै —१०-३४२ ।

रजोकुल—संज्ञा पु [स राजकुल] राजघराना ।

रजोगुण, रजोगुन—सज्ञा पु. [स. रजोगुण] प्रकृति के तीन गुणो में से एक जिससे काम, क्रोध, लोभ आदि की उत्पत्ति होती है ।

रजोगुणी, रजोगुनी—वि. [स. रजोगुण+हि. ई] जिसके स्वभाव मे रजोगुण की प्रधानता हो । उ.—भक्त सात्विकी चाहत मुक्ति । रजोगुनी धन-कुटुँब ऽनुरक्ति—३-१३ ।

रजोदर्शन—सज्ञा पु [स.] (स्त्री का) रजस्वला या मासिक धर्म से होना ।

रजोधर्म—सज्ञा स्त्री. [स.] (स्त्री का) मासिक धर्म या रज-प्रवाह ।

रज्जु—संज्ञा स्त्री. [स.] रस्सी, जेंवरी ।

रज्वा—सज्ञा स्त्री. [स. रज्जु] रस्सी । उ.—अति बल करि-करि काली हारचौ । । अति बलहीन छीन भयौ तिहि छन देखियत है रज्वा सम डारचौ —५७४ ।

रटंत, रटंती—सज्ञा स्त्री. [हि. रटना+अत] रटने की क्रिया या भाव, रटाई ।

रट—सज्ञा स्त्री. [हि रटना] किसी शब्द या बात को बार-बार दोहराना । उ.—रहति रैनि दिन हरि-हरि हरि रट—३४६२ ।

रटत—क्रि. स [हि. रटना] (१) किसी शब्द या बात को बार-बार दोहराता है । उ—रटत कृष्न गोबिद हरि हरि मुरारी—१० उ०-३१ ।

रटति—क्रि. स. स्त्री. [हि. रटना] (१) किसी शब्द को बार-बार दोहराती है । उ—निसि दिन रटति सूर के स्वामिहि, ब्रज-बनिता देहै बिसराई—६३९ । (२) बार-बार बजती या शब्द करती है । उ.—पाइ पैजनि रटति रुनझुन—१०-११८ ।

रटन—सज्ञा स्त्री. [हि. रटना] रटने की क्रिया या भाव ।

रटना, रटनो—क्रि. स [अनु.] (१) किसी शब्द या बात को बार-बार कहना । (२) किसी शब्द या वाक्य को कठाग्र करने के लिए दोहराना । (३) शब्द करना, बजना ।

रटि—क्रि. स. [हि. रटना] बार बार कहकर । उ.—सूर सुमिरि सो रटि निसि-बासर, राम-नाम निज सार—१-२३१ ।

रटिबौ—सज्ञा पु. [हि. रटना] रटने की क्रिया या भाव । उ.—राम-नाम नित रटिबौ करै—७-२ ।

रटै—क्रि. स. [हि. रटना] कहता है, बतलाता है । उ. —होत सो जो रघुनाथ ठटै । ·· । चारौ वेद रटै—१-२६३ ।

रठ—वि. [देश.] रूखा, शुष्क ।

रढ़ना, रढ़नो—क्रि. स. [हि. रटना] (१) बार-बार कहना, रटना । (२) ईर्ष्या या क्षोभ से हूँसना ।

रढ़ै क्रि. स. [हि. रढना] (१) रटता है । उ.—मन मै राम-नाम नित रढै—५-३ । (२) बहकाती है, कहती है । उ.—कजरी कौ पय पियहु लाल, जासौ तेरी बेनि बढै । । पुनि पीवत ही कच टकटोरत झूठहि जननि रढै—१०-१७४ ।

रण—सज्ञा पु. [स.] लड़ाई, युद्ध ।
सज्ञा पु. [स. अरण्य] वन, जगल ।

रणक्षेत्र—सज्ञा पु. [स.] युद्धभूमि ।

रण-चडी—सज्ञा स्त्री. [स.]रणक्षेत्र में मार-काट करानेवाली देवी ।

रणछोड़—सज्ञा पु. [स. रण+हि. छोडना] श्रीकृष्ण का एक नाम जो मथुरा पर जरासध के आक्रमण करने पर भागकर उनके द्वारका चले जाने से पड़ा था ।

रणखेत—सज्ञा पु. [स रणक्षेत्र] युद्धभूमि ।
रणधीर—वि. [स.] युद्ध में धैर्य न छोड़नेवाला । उ. —सुनि भयभीत वज्र के पिजर सूर सुरति रणधीर—१९०३ ।
रणन—सज्ञा पु. [स.] (१) शब्द करना । (२) बजना ।
रण-नाद—सज्ञा पु. [स.] युद्ध मे योद्धाओं की ललकार या गरज ।
रणभूमि—सज्ञा स्त्री. [स.] युद्धभूमि ।
रण-रोज, रण-रोझ—सज्ञा पु. [स. अरण्यरोदन] बन या एकान्त में बैठकर रोना जो व्यर्थ होता है ।
रणरंग—सज्ञा पु. [स.] (१) युद्ध । (२) युद्धभूमि । (३) युद्ध का उत्साह ।
रणवीर—वि. [स.] बहुत बड़ा योद्धा ।
रणसिंघा, रणसिहा—सज्ञा पु. [स. रण+हि. सिह] तुरही बाजा ।
रण-स्तंभ—सज्ञा पु. [स.] विजय-स्मारक ।
रणांगण—सज्ञा पु [स.] युद्धक्षेत्र ।
रत—वि. [स.] (१) (कार्य में) लीन या तत्पर । उ.—परमारथ सौ बिरत बिषय-रत भाव-भगति नाहिनै कहुँ जानी—१-१४९ । (२) आसक्त, अनुरक्त ।
रतजगा—सज्ञा पु. [हि. रात+जागना] (१) रात भर जागना । (२) किसी उत्सव आदि के अवसर पर रात भर जागना । (३) रात भर चलनेवाला आनदोत्सव ।
रतन—सज्ञा पु. [स. रत्न] रत्न, मणि । उ.—(क) हय गय-रतन-हेम पाटबर आनन्द-मगलचारा—१०-४ । (ख) दोउ भैया मिलि खात एक सँग रतन-जटित कचन की थारी—१०-२८८ ।
रतनकर, रतनगर—सज्ञा पु. [स. रत्नाकर] समुद्र ।
रतनाइ, रतनाई—सज्ञा स्त्री [सं. रक्त, हि. राता] लाली ।
रतनाकर, रतनागर—सज्ञा पु. [स. रत्नाकर] समुद्र ।
रतनार, रतनारा—वि [स. रत्न] कुछ-कुछ लाल ।
रतनारी—सज्ञा पु [हिं. रतनार] एक तरह का धान ।
वि. स्त्री.—कुछ-कुछ लाल ।
सज्ञा स्त्री.—लाली, लालिमा ।
रतनारे—वि. पु बहु [हि. रतनारा] कुछ-कुछ लाल । उ. —(क) काजर हाथ भरौ जनि मोहन ह्वैहै नैना अति रतनारे—१०-१६० । (ख) सूर-स्याम सुखदायक लोचन दुखमोचन लोचन रतनारे —२१३२ ।
रतनालिया—वि. [हि. रतनारा] कुछ-कुछ लाल ।
रतनावली—सज्ञा स्त्री [स रत्नावली] रत्न-समूह ।
रतमुँहा—वि [स रक्त+हि मुँह] लाल मुँहवाला ।
रताना, रतानो—क्रि. अ. [म. रत+आना] रत होना ।
क्रि. स.—किसी का ध्यान अपनी ओर लगाना ।
रतालू—सज्ञा पु. [स रक्तालु] पिडालू नामक तरकारी । उ —सुदर रूप रतालू रातो—२३२१ ।
रति—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) दक्ष प्रजापति की पुत्री जो कामदेव की पत्नी थी । उ —वह रति, तुम रतिनाथ हो—२०१२ । (२) काम-क्रीड़ा, सभोग । उ.—(क) पर-तिय-रति अभिलाष निसा दिन मन-पिटरी लै भरतौ—१-२०३ । (ख) स्वान सग सिहिनि-रति अजुगुत बेद बिरुद्ध असुर करै आइ—१० उ० -१० । (३) प्रेम, प्रीति । उ —(क) मीन बियोग न सहि सकै, नीर न पूछै बात । देखि जु तू ताकी गतिहि, रति न घटै तन जात—१-३२५ । (ख) रति बाढी गोपाल सौ - ८०४ । (ग) मधुपुरी की जुवति सब कहति अति रति भरी, देरी री देखौ अग अग की लोनाई—२५९६ । (४) स्नेह, वात्सल्य । उ.—(क) बेद कमल-मुख परसति जननी अक लिए सुत रति करि स्याम—१०-१५७ । (ख) माखन माँगि लियौ जसुमति सौ । माता सुनत तुरत लै आई लगी रखावन रति सौ—१०-३१२ । (५) मोह-ममता । उ.—सुत-सतान-स्वजन-बनिता-रति घन समान उनई—१-५० । (६) छवि, शोभा । (७) शृगार रस का स्थायी भाव ।
सज्ञा स्त्री. [हिं. रात] रात्रि, निशा ।
रतिक—क्रि. वि. [हि रत्ती+क] थोड़ा, जरा सा ।
रतिकर—वि [स.] प्रेम या आनद बढ़ानेवाला ।
रतिज—वि. [स रति+ज] रति या सभोग से उत्पन्न (रोग आदि) ।
रतिदान—सज्ञा पु [स.] संभोग, मैथुन । उ.—कहचौ

शर्मिष्ठा अवसर पाइ, रति कौ दान देहु मोहि राइ —९-१७४।

रतिनाथ—संज्ञा पु [स] कामदेव। उ.—वह रति, तुम रतिनाथ हौ, हम कैसे भावै—२०१२।

रतिनायक—संज्ञा पु. [स.] कामदेव।

रतिनाह—संज्ञा पु. [स. रतिनाथ] कामदेव।

रतिपति—संज्ञा पु. [स.] कामदेव। उ.—मुनि-मन हँरन जुवति-जन केतिक, रतिपति-मान जात सब खोइ—१०-२१०।

रतिप्रिय—वि. [स] अत्यन्त कामी, कामुक।

रति-प्रीता—संज्ञा स्त्री [स] नायिका जिसे प्रिय का चिंतन और ध्यान ही रुचिकर हो।

रतिभवन, रति-भौन—संज्ञा पु [स रति+भवन] केलि-गृह जहाँ रति-क्रीडा की जाय।

रति-मंदिर—संज्ञा पु. [स.] केलिगृह।

रतियाना, रतियानो—क्रि. अ. [स. रति] अनुरक्त या आसक्त होना।

रतिरमण—संज्ञा पु. [स.] (१) कामदेव। (२) मैथुन।

रतिराइ, रतिराई—संज्ञा पु. [स रतिराज] कामदेव।

रतिराज, रतिराजा—संज्ञा पु. [स. रतिराज] कामदेव।

रतिवंत—वि. [स. रति+हि. वत] सुन्दर (पुरुष)।

रतिवर—संज्ञा पु. [स.] कामदेव।

रती—संज्ञा स्त्री [स. रति] (१) कामदेव की पत्नी, रति। (२) छवि, शोभा। (३) संभोग, मैथुन। (४) प्रेम, प्रीति।

सज्ञा स्त्री. [हि रत्ती] घुँघुची, गुजा।

वि.—थोड़ा, कम।

क्रि. वि.—जरा सा, रत्ती भर।

रतोपल—संज्ञा पु. [स. रक्तोत्पल] लाल कमल।

रतौंधी—संज्ञा स्त्री. [हि. रात+अधा] रात में दिखायी न देने का रोग।

रतौहाँ—वि [हि. रत] किसी की ओर अनुरक्त होने की प्रवृत्तिवाला।

रत्त—संज्ञा पु [सं रक्त] खून, रुधिर।

रत्ती—संज्ञा स्त्री. [स. रक्तिका, प्रा० रत्तीय] (१) घुँघुची का दाना, गुजा। (२) तौल का एक बहुत छोटा मान जो घुँघुची के दाने से तौला जाता है।

मुहा०—रत्ती भर—बहुत थोड़ा सा।

सज्ञा स्त्री. [स रति] छवि, शोभा।

रत्थी—संज्ञा स्त्री. [स. रथ] शव की अरथी।

रत्न—संज्ञा पु. [स.] (१) मणि, नग, नगीना। (२) लाल, मानिक, माणिक्य। (३) सर्वश्रेष्ठ वस्तु या व्यक्ति।

रत्नगर्भ—संज्ञा पु. [स.] समुद्र।

रत्नगर्भा—संज्ञा स्त्री. [स.] पृथ्वी, वसुंधरा।

रत्नसू—संज्ञा स्त्री [स] पृथ्वी।

रत्ना—संज्ञा स्त्री [स] राधा की एक सखी का नाम। उ.—कहि राधा, किन हार चुरायो। । रत्ना कुमुदा मोहा करुना ललना लोभा नूप—१५८०।

रत्नाकर—संज्ञा पु. [स] (१) समुद्र। (२) रत्न-समूह।

रत्नावली—संज्ञा स्त्री [स.] मणिमाला।

रथ—संज्ञा पु. [स] (१) एक प्राचीन सवारी, स्यंदन। उ.—देख री आजु नैन भरि हरि जू के रथ की सोभा—२५६६। (२) शरीर जो आत्मा का रथ है।

रथयात्रा—संज्ञा स्त्री. [स.] हिंदुओं का एक पर्व जो आषाढ शुक्ला द्वितीया को होता है। इसमें जगन्नाथ, बलराम और सुभद्रा जी की मूर्तियाँ रथ पर चढाकर निकाली जाती हैं। 'पुरी' में यह उत्सव बहुत धूमधाम से होता है।

रथवान—संज्ञा पु. [स रथवान्] सारथी।

रथवारे—वि [स. रथ+हि वाला] रथ पर चढ़ने योग्य, रथी। उ—पीवौ छाँछ अघाइ कै, कब के रथवारे—१-२३८।

रथवाह—संज्ञा पु.[सं.रथवाह](१) सारथी। (२) घोड़ा।

रथवाहक—संज्ञा पु. [स] सारथी।

रथसूत—संज्ञा पु. [स.] सारथी।

रथांग—संज्ञा पु. [स.] (१) रथ का पहिया। (२) चक्र।

रथिक, रथी—संज्ञा पु. [स. रथिन्] (१) रथ पर चढ़कर चलने वाला। (२) रथ पर चढकर लड़नेवाला जो एक हजार योद्धाओं से अकेला लड सके।

वि.—रथ पर सवार।

सज्ञा स्त्री. [स. रथ] शव की टिकठी, अरथी।

रथ्या—संज्ञा स्त्री. [सं.] नाली, नाबदान ।

रद—संज्ञा पु [सं.] दाँत, दशन ।

वि. [अ०] (१) खराब । (२) फीका, हीन ।

रदच्छद, रदछद—संज्ञा पु. [सं. रदच्छद] ओठ । उ. नासा कौ मुकता रदछद पर—१०-९३ ।

संज्ञा पु [सं. रदक्षत] रति-प्रसंग मे कपोल, स्तन आदि पर दाँत के काटने से बन जानेवाला चिह्न ।

रदन—संज्ञा पु. [सं.] दाँत, दशन ।

रदनच्छद, रदनछद—संज्ञा पु. [सं. रदनच्छद] ओठ ।

रदनी—वि [सं रदनिन्] दाँतवाला । उ.—चिबुक मध्य मेचक रुचि राजति बिंदु कुंद रदनी—पृ० ३१६ (५४) ।

संज्ञा पु —हाथी ।

रदपट—संज्ञा पु [सं.] ओठ, अधर ।

रद्द—वि. [अ.] (१) जो काट-छाँट करके निकाल या बदल दिया गया हो । (२) खराब निकम्मा ।

रद्दा संज्ञा पु. [देश.] (१) तह । (२) गिराकर रगडते हुए आघात करना ।

रद्दी—वि. [फा रद] निकम्मा, बेकार ।

संज्ञा स्त्री.—बेकार की चीजे ।

रन—संज्ञा पु. [सं. रण] लडाई, युद्ध । उ.—(क) गहि सारँग रन रावन जीत्यौ, लंक बिभीषन फिरी दुहाई —१-२४ (ख) आजु अति कोपे हैं रन राम—९-५८ ।

संज्ञा पु [सं. अरण्य, प्रा० रन्न] बन, जंगल ।

रनकना, रनकनो—क्रि. अ. [सं. रणन] घुँघरू बजना ।

रनखेत—संज्ञा पु. [सं. रणक्षेत्र] युद्धभूमि । उ. – अमृत की बृष्टि रन-खेत ऊपर करौ—९-१६३ ।

रनछोर—संज्ञा पु. [सं. रणछोड] श्रीकृष्ण का वह नाम जो जरासंध के आक्रमण करने पर उनके द्वारका भाग जाने पर पडा था ।

रनधीर—वि. [सं. रणधीर] भयंकर युद्ध मे भी धैर्यपूर्वक डटा रहनेवाले । उ —रावन-कुल अरु कुंभकरन बन सकल सुभट रनधीर—९-५८ ।

रनना, रननो—क्रि. अ. [सं. रणन] बजना, झनकारना ।

रनबंका, रनबाँकुरा—वि. [सं रण+हि. बाँका] वीर ।

रनरोर—वि. [सं. रण] शूर, वीर ।

संज्ञा पु.— युद्ध का कोलाहल ।

रनवादी—वि. [सं. रण+हि. वादी] शूर, वीर ।

रनवास—संज्ञा पु. [हिं. रानी + बास] अंतःपुर ।

रनसाजी—संज्ञा स्त्री.[सं रण+फा साजी]लड़ाई छेडना ।

रनित—वि [हि. रनना] बजता या झनकार करता हुआ । उ —चरन रनित नूपुर धुनि, मानौ बिहरत बाल मराल—१०-११४ ।

रनियाँ—संज्ञा स्त्री. [हिं. रानी] रानी । उ —चकित भई नँद-रनियाँ—१०-८३ ।

रनिवास—संज्ञा पु. [हि. रानी+ वास] रानियों के रहने का स्थान, अंतःपुर ।

रनी—संज्ञा पु [सं. रण+हि. ई] वीर, योद्धा ।

रपट—संज्ञा स्त्री. [हि रपटना] (१) रपटने की क्रिया या भाव । (२) दौड । (३) उतार, ढाल ।

रपटत—क्रि. अ. [हि. रपटना] फिसलता है । उ.—आली, रपटत पग नहि ठहरात—पृ. ३१४ (४६) ।

रपटना, रपटनो—क्रि अ. [सं. रफन] (१) फिसलना । (२) झपट कर चलना ।

क्रि. स.—कोई काम चटपट कर डालना ।

रपटाना, रपटानो—क्रि. स. [हि. रपटना] (१) फिसलाना । (२) फिसलवाना । (३) किसी से चटपट काम कराना । (४) दौड़ाना ।

रपटीला—वि. [हि. रपटना+ईला] जहाँ पैर रपट जाय ।

रपट्टा—संज्ञा पु. [हि. रपटना] (१) फिसलाहट । (२) दौड़-धूप । (३) झपट्टा, चपेट ।

रफा—वि. [अ. रफा] (१) समाप्त या पूरा किया हुआ । (२) दबाया हुआ, शांत ।

रब—संज्ञा पु [अ.] परमेश्वर ।

रबकत—क्रि. अ. [हिं. रबकना] लपकता है । उ.— नैन मीन सरवर आनन मैं चंचल करत बिहार । मानौ कर्नफूल चारा कौ रबकत बारबार ।

रबकना, रबकनो - क्रि अ. [हि. रबकना] (१) लपकना, तेजी से बढना । (२) उमगना, उछलना ।

रबकि—क्रि. अ [हि. रबकना] (१) लपक-लपककर । उ.—(क) परम सनेह बढावत मातनि रबकि रबकि हरि बैठत गोद—१०-११८ । (ख) लीने बसन देखि

ऊँचे द्रुम रबकि चढनि बलबीर की—३३०३ ।
(२) उमगकर । उ.—यह अति प्रबल स्याम अति कोमल रबकि-रबकि उर परते ।

रबड़ना, रबड़नो—क्रि. स. [स वर्त्तन, प्रा. वट्टन] (१) चलाना । (२) (कलछी से) फेंटना ।

रबड़ी—सज्ञा स्त्री. [हि. रबडना] एक मिठाई जो दूध को खूब गाढा करके लच्छेदार बनाकर तैयार की जाती है, बसौंधी ।

रबदा—सज्ञा पु [हि. रबडना] कीचड़ ।
मुहा०—रबदा पडना—खूब पानी बरसना ।

रबाना—सज्ञा पु. [देश.] छोटा डफ (बाजा) ।

रबाब—सज्ञा पु. [अ.] एक बाजा जिसमे सारगी की तरह तार लगे होते हैं । उ.—ताल मुरज रबाब बीना किन्नरी रस-सार—पृ. ३४६ (४५) ।

रबाबी—वि. [हि रबाब] रबाब बजानेवाला ।

रबी—सज्ञा स्त्री. [अ रबीअ] (१) वसंत ऋतु । (२) फसल जो वसंत मे काटी जाती है ।

रब्त—सज्ञा पु [अ.] (१) अभ्यास । (२) मेल ।
यौ०—रब्त-जब्त—मेल जोल ।

रब्ब—सज्ञा पु. [अ. रब] परमेश्वर ।

रभस—सज्ञा पु. [स.] (१) वेग । (२) प्रसन्नता । (३) उमग । (४) खेद । (५) पछतावा ।

रमक—सज्ञा पु [स] प्रेमी, प्रेमपात्र ।
सज्ञा स्त्री [हि रमकना] झोका, हिलोरा ।
सज्ञा स्त्री. [अ. रमक] (१) अंतिम श्वाँस । (२) हलका प्रभाव । (३) नशे का थोड़ा असर ।

रमकत—क्रि. अ. [हि रमकना] झूलता या पेंग मारता है । उ.—कबहुंक निकट देखि बर्षा रितु झूलत सुरग हिंडोरे । रमकत झमकत जनक-सुता-सँग हरष-भाव चित चोरे—सारा. ३१० ।

रमकना, रमकनो—क्रि. अ. [हि. रमना] (१) झूलना, पेंग मारना । (२) इतराते या झूमते हुए चलना ।

रमण—सज्ञा पु [स] (१) विलास, क्रीडा । (२) मैथुन, संभोग । (३) घूमना, विचरना । (४) पति ।
वि.—(१) सुन्दर (२) प्रिय । (३) रमनेवाला ।

रमणी—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) नारी । (२) सुन्दरी ।

रमणीक—वि. [स रमणीय] सुन्दर, मनोहर ।

रमणीय—वि [स] सुदर, मनोहर ।

रमणीयता—सज्ञा स्त्री [स.] सुन्दरता ।

रमत—क्रि. अ. [हि. रमना] घूमता या विचरता है ।
उ.—बिबुधनि मन तर मान रमत ब्रज—१०-१२० ।

रमता—वि. [हि. रमना] घूमने-फिरनेवाला ।

रमन—सज्ञा पु. [स. रमण] (१) विलास, केलि । (२) सभोग, मैथुन । (३) घूमना । (४) पति ।

रमना—सज्ञा पु. [स. आराम] (१) चरागाह । (२) घेरा, हाता । (३) बाग, वाटिका । (४) रमणीक स्थान ।

रमना, रमनो—क्रि. अ. [स रमण] (१) सुख-विलास के लिए ठहरना या रहना । (२) संभोग या रति-क्रीड़ा करना । (३) आनद करना, मजा उड़ाना । (४) चारो ओर व्याप्त होना । (५) अनुरक्त होना । (६) आस-पास घूमना, लगे लगे फिरना । (७) गायब या लुप्त हो जाना । (८) आनंद-पूर्वक विचरना ।

रमनी—सज्ञा स्त्री. [स. रमणी] सुदरी नारी ।

रमनीक—वि. [स. रमणीक] सुदर, मनोहर । उ.—अति रमनीक कदब छाँह-रुचि परम सुहाई—४९२ ।

रमनीय—वि. [स. रमणीय] सुदर, मनोहर ।

रमल—सज्ञा पु. [अ.] एक प्रकार का ज्योतिष ।

रमा—सज्ञा स्त्री. [स] लक्ष्मी । उ.—(क) यह सीता जो जनक की कन्या, रमा आपु रघुनदन-रानी—९-११६ । (ख) कामधेनु सुरतरु सुख जितने रमा सहित बैकुंठ भुलावत—४४९ ।

रमाइ, रमाई—क्रि. स. [हि. रमाना] रचाकर, आयोजित करके ।
मुहा०—रास रमाइ—रास रचाकर । उ.—(क) षट-दस सहस गोपिका बिलसत बृंदाबन रस रास रमाइ—४९७ । (ख) करौ पूरन काम तुम्हरौ सरद रास रमाई—७९६ । (ग) सूर स्याम बन बेनु बजावत चित हित रास रमाई—पृ. ३३९ (८३) ।

रमाकांत—सज्ञा पु. [स.] विष्णु । उ.—रमाकांत जासु को ध्यायो—१८६० ।

रमानरेश, रमानरेस—सज्ञा पु. [स. रमा+नरेश] विष्णु ।
उ.—जाय पताल बाट गहि लीन्ही धरनी रमानरेस ।

रमाना, रमानो—क्रि. स. [हिं. 'रमना' का सक०] (१) मुग्ध या अनुरक्त करना, लुभाना। (२) अपने अनुकूल करना। (३) रोकना या ठहरा लेना। (४) रचना, आयोजित करना।

मुहा०—रास रमाना—रास रचाना। भभूत या विभूति रमाना—(१) शरीर में भस्म पोतना। (२) सन्यास लेना। मन रमाना—मन बहलाना।

रमानिवास—सज्ञा पु [स. रमा+निवास] विष्णु।

रमापति—सज्ञा पु. [स.] विष्णु। उ.—छुद्र पतित तुम तारि रमापति अब न करौ जिय गारौ—१-१३१।

रमारमण—सज्ञा पु. [स.] विष्णु।

रमावति—क्रि. स. [हि. रमाना] मुग्ध या अनुरक्त करती है, लुभाती है। उ—गोरस मथत नाद इक उपजत किंकिनि-धुनि सुनि स्रवन रमावति—१०-१४९।

रमावै—क्रि. स. [हिं. रमाना] रचता या आयोजित करता है। उ.—जाकी महिमा कहत न आवै, सो गोपिन सँग रास रमावै—१०-३।

रमित—वि. [हि. रमना] मुग्ध, लुभाया हुआ।

रमूज—सज्ञा स्त्री. [अ. रमूज] (१) सकेत। (२) भेद।

रमेश—सज्ञा पु. [स.] विष्णु।

रमेसरी - सज्ञा स्त्री. [स. रामेश्वरी] लक्ष्मी।

रमनी—सज्ञा स्त्री. [स. रामायण] कबीर के बीजक का वह भाग जो दोहे-चौपाइयो में है।

रमैया—सज्ञा पु. [हिं. राम] (१) राम। (२) ईश्वर।

रम्माल -वि. [अ.] रमल जाननेवाला।

रम्य—वि. [स.] सुदर, मनोहर।

रम्हाना, रम्हानो—क्रि. अ [स. रँभण] गाय का रँभाना।

रय—सज्ञा पु [स. रज] धूल, गर्द, खेह।

सज्ञा पु. [स.] (१) वेग। (२) प्रवाह।

रयन—सज्ञा स्त्री. [स. रजनी, प्रा. रयणी] रात।

रयना—क्रि. स [स. रजन] रग से भिगोना।

क्रि. स.—(१) अनुरक्त होना। (२) मिलना।

क्रि. स. [स. रवण] (१) शब्द उत्पन्न करन। (२) कहना, बोलना।

रयनि, रयनी—सज्ञा स्त्री. [स. रजनी, प्रा. रयणी]रात।

रयनो—क्रि. स. [स. रजन] रग से भिगोना।

क्रि. अ (१) अनुरक्त होना। (२) मिलना।

क्रि. स [स. रवण] (१) शब्द उत्पन्न करना। (२) बोलना, कहना।

रय्यत—सज्ञा स्त्री. [अ रअय्यत] प्रजा।

ररंकार—सज्ञा पु. [स. रकार] 'रकार' की ध्वनि।

रर—सज्ञा स्त्री. [हि ररना] रट, रटन।

ररक—सज्ञा स्त्री. [अनु.] कसक, टीस।

ररकना, ररकनो—क्रि. अ [अनु.] कसकना, साल्ना।

ररना, ररनो—क्रि. अ. [स. रटना, प्रा. रडना] रटना।

ररिहा—सज्ञा पु. [हि. ररना+हा] (१) रट लगानेवाला। (२) रट या धुन लगाकर माँगनेवाला।

ररे—क्रि. अ. [हिं. ररना] बार-बार बोले। उ.—मनु बरषत मास असाढ दादुर मोर ररे—१०-२४।

ररै—क्रि. अ [हिं. ररना] बार-बार कहे। उ.—कब नदहि बाबा कहि बोलै, कब जननी कहि मोहिं ररै - १०-७६।

ररा—वि. [हि रार] झगड़ालू।

सज्ञा पु. [हिं ररना] (१) गिड़गिड़ाकर माँगनेवाला। (२) अधम, नीच।

रलना, रलनो—क्रि. अ. [स. ललन] मिल जाना।

यौ०—रलना-मिलना, रलनो-मिलनो—मिल-जुल कर एक हो जाना।

रलाना, रलानो—क्रि. स. [हिं. 'रलना' का सक.] मिलाना-जुलाना, सम्मिलित करना।

रलिका—सज्ञा स्त्री. [हिं. रली] (१) क्रीड़ा। (२) आनद।

रलिहै—क्रि. अ. [हि. रलना] विलास-विहार या आमोद-प्रमोद करेंगे। उ—भाव ही कह्यो मन भाव दृढ राखिबो दै सुख तुमहि सँग रग रलिहै—२०५६।

रली—क्रि. अ. [हिं. रलना] मिल गई, सम्मिलित हो गई। उ—चली पीठि दै दृष्टि फिरावति अँग-अँग आनद रली—७३९।

सज्ञा स्त्री. [स. ललन] आनद, प्रसन्नता। उ.—विविध कियौ ब्याह बिधि बसुदेव मन उपजी रली—१० उ०-२४।

रल्ल—सज्ञा पु. [हिं. रेला] हल्ला, कोलाहल।

रव - सज्ञा पुं. [स.] (१) ध्वनि, गुंजार। (२) आवाज, शब्द। (२) शोर, कोलाहल, हल्ला।

सज्ञा पु. [स. रवि] सूर्य, रवि।

रवकत—क्रि. अ. [हि. रवकना] लपकता है। उ.—नैन मीन सरवर आनन मै चचल करत बिहार। मानौ कर्नफूल चारा के रवकत द रबार।

रवकना, रवकनो—क्रि. अ. [हि. रमना] (१) लपककर चलना, दौड़कर बढना। (२) उमगना, उछलना।

रवकि—क्रि, अ. [हि. रवकना] (१) लपककर। उ.—(क) परम सनेह बढावत मातनि रवकि-रवकि हरि बैठत गोद—१०-११९। (ख) लीने बसन देखि ऊँचे द्रुम रवकि चढनि बलबीर की - ३३०३। (२) उमगकर। उ.—यह अति प्रबल स्याम अति कोमल रवकि-रवकि उर परते।

रवणरेती—सज्ञा स्त्री. [स. रमण+हि. रेती] गोकुल के निकट यमुना-तट की वह रेतीली भूमि जहाँ श्रीकृष्ण ग्वाल-बालों के साथ खेलते थे।

रवताइ, रवताई—सज्ञा स्त्री. [हि रावत+आई] (१) राजा होने का भाव। (२) प्रभुत्व, स्वामित्व।

रवन—सज्ञा पु. [स. रमण] पति। उ.—(क) भवन रवन सबही बिसरायौ — ७६५। (ख) भवन-रवन की सुधि न रही तनु सुनत सब्द वह कान—पृ० ३३७ (७२)।

वि.—रमण करनेवाला। उ.—कर जोरि बिनती करै, सुनहु न हो रुकमिनी-रवन — १-१८०।

रवनवै—क्रि अ. [हि. रवना] रमण करता है, रमण कर सकता है। उ—नँदनदन बहु रवनि रवनवै, यहै जानि बिसरायौ—१६५८।

रवना - क्रि अ. [हि रमना] भोग-विलास करना।

क्रि. अ. [हिं. रव] शब्द करना, बोलना।

रवनि, रवनी—सज्ञा स्त्री. [स. रमणी] (१) पत्नी, भार्या। उ.—भूप अनेक बदि तै छोरे राज-रवनि जस अति बिस्तारौ—१-१७२। (२) रमणी, सुन्दरी नारी। उ.—नदनदन बहु रवनि रवनवै—१६५८।

रवनो—क्रि. अ. [हिं रमना] रमण करना।

क्रि, अ [हि. रव] बोलना, कहना।

रवन्ना—संज्ञा पुं. [फा. रवाना] कागज, जिस पर भेजे गये माल का ब्योरा लिखा हो।

रवाँ—वि. [फा.] अभ्यस्त।

रवा—सज्ञा पु. [स. रज, प्रा. रअ] (१) कण, दाना। (२) सूजी (आटा)।

रवाज—सज्ञा स्त्री [फा.] प्रथा, परिपाटी।

रवादार—वि. [फा. रवा+दार] सबध रखनेवाला।

रवानगी—सज्ञा स्त्री. [फा.] चलना, प्रस्थान।

रवाना—वि [फा.] भेजा हुआ।

क्रि. स. [हि. रमाना] रमाना।

रवि—सज्ञा पु. [स.] (१) सूर्य। उ.—(क) घट उपजै बहुरौ नसि जाइ, रवि-ससि रहै एकही भाइ—३-१३। (ख) रवि बहु चढयौ, रैनि सब निघटी—४०७। (२) मदार का पेड़। (३) अग्नि।

रवि-कर—सज्ञा पु [स.] सूर्य की किरण।

रविकुल—सज्ञा पु. [स.] सूर्यवश।

रविचंचल—सज्ञा पु. [स.] काशी का 'लोलार्क' तीर्थ।

रवि-तनय—सज्ञा पु [स.] (१) यम। (२) शनि। (३) सुग्रीव। (४) कर्ण। (५) अश्विनीकुमार।

रवि-तनया—सज्ञा स्त्री. [स.] सूर्य की पुत्री, यमुना नदी। उ.—गए स्याम रवि-तनया कै तट ६७२।

रवितनुजा—सज्ञा स्त्री. [स.] यमुना।

रविनंद, रविनंदन—सज्ञा पु. [स.] (१) कर्ण। (२) सुग्रीव। उ.—रविनदन जब मिले राम को अरु भेंटे हनुमान। अपनी बात कही उन हरि सौ बालि बडौ बलवान—सारा. २७४। (३) शनि। (४) यमराज। (५) अश्विनीकुमार।

रविनंदिनि, रविनंदिनी—सज्ञा स्त्री. [स. रविनदिनी] यमुना।

रविपुत्र, रविपूत—सज्ञा पु. [स. रविपुत्र] (१) कर्ण। (२) सुग्रीव। (३) शनि। (४) यम। (५) अश्विनीकुमार।

रविबंसी—वि. [स. रवि+वश] सूर्यवंश का, सूर्यवंशी। उ.—रविबसी भयौ रैवत राजा—९-४।

रविबिंब—सज्ञा पु. [स.] सूर्यमडल।

रविमंडल—संज्ञा पु. [स.] वह लाल गोला जो सूर्य के चारो ओर दिखायी देता है।

रविवंश—सज्ञा पु [स.] सूर्यकुल।

रविवंशी—वि. [स] सूर्यकुल से सबधित।

रविवाण—सज्ञा पु [स] ऐसा तीर जिससे सूर्य-जैसा प्रकाश निकलता हो।

रविवार—सज्ञा पु. [स.] शनिवार और सोमवार के बीच का दिन, इतवार। उ — फागुन बदि चौदस सुभ दिन औ' रविवार सुहायौ।

रविवासर—सज्ञा पु. [स.] रविवार।

रविसुअन, रविसुवन—सज्ञा पु. [स. रवि+सूनु] (१) कर्ण। (२) सुग्रीव। (३) शनि। (४) यम। (५) अश्विनीकुमार।

रविसुत—सज्ञा पु [सं.] (१) कर्ण। (२) सुग्रीव। (३) शनि। (४) अश्विनीकुमार। (५) यमराज। उ.—कीजै लाज सरन आए की रवि-सुत-त्रास निवारौ—१-१११।

रविसूनु—सज्ञा पु. [स.] (१) कर्ण। (२) सुग्रीव। (३) शनि। (४) यमराज। (५) अश्विनीकुमार।

रवी—सज्ञा पु. [स. रवि] सूर्य। उ.—कुडल बिराजत गड मडल नही सोभा रवी-ससी—पृ. ३४५ (२)।

रवैया—सज्ञा पु. [फा. रवाँ] चाल चलन, तौर-तरीका।

रशना—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) करधनी। (२) कमर-पेटी। सज्ञा स्त्री. [स. रसना] जीभ, जिह्वा।

रश्क—सज्ञा पु [फा.] डाह, ईर्ष्या।

रश्मि—सज्ञा पु. [स.] किरण।

रस—सज्ञा पु. [स.] (१) छह प्रकार के स्वाद—मधुर, अम्ल, लवण, कटु, तिक्त और कषाय, स्वाद। उ.—(क) ज्यौ गूँगै मीठे फल कौ रस अतरगत ही भावै—१-२। (ख) छहौ रस जौ धरौ आगै, तउ न गध सुहाइ—१-५६। (२) छह की सख्या। (३) पदार्थ का सार, तत्व। (४) साहित्य के पठन-पाठन से होने वाली चित्त की वह लोकोत्तर स्थिति जो जाग्रत स्थायी भाव के विभाव, अनुभाव और सचारी भावों से पुष्ट होने पर होती है, ये रस नौ माने गये है—शृगार, हास्य, करुण, रौद्र, वीर, भयानक, बीभत्स, अद्भुत और शांत। कुछ आचार्य 'शांत' को रस नहीं मानते तो कुछ 'वात्सल्य' को दसवाँ और 'भक्ति' को ग्यारहवाँ रस मानते हैं। (५) नौ की सख्या। (६) मजा, सुख, आनद। उ.—(क) भ्रम-मद-मत्त, काम तृष्ना-रस-बेग न क्रमै गह्यौ—१-४९। (ख) पर-निदा रसना के रस करि केतिक जनम बिगोए—१-५२। (ग) मगन भयौ माया-रस-लपट—१-९८। (घ) सुत-तनया-बनिता-बिनोद-रस इहि जुर-जरनि जरायौ—१-१५४।

मुहा०—रस बीधना—मजा आने की स्थिति होना, मजे की झोक मे होना। रस बीधि—मजे की झोक में। उ —ज्यौं कुजुवारि रस बीधि हारि गथ सोचतु पटकि चिती—१० उ०-२०३। रस भीजना या भीनना—(१) मजा या आनद आने लगना। (२) युवावस्था का आरम्भ होना। रस भीन्यौ—सुख या आनद मानने-समझने लगा। उ.—सूरदास स्वामी-पन तजिकै सेवकपन रस भीन्यौ—८-१५।

(७) प्रेम, प्रीति, अनुराग।

यौ०—रस-रग—(१) प्रेम का सुख। (२) विलास-विहार का सुख। रस-रीति—(१) प्रीति की स्थिति में प्रेमी-प्रेमिका का पारस्परिक व्यवहार। (२) मित्रता का व्यवहार। उ —और को जानै रस की रीति। कहाँ हौ दीन कहाँ त्रिभुवनपति मिले पुरातन प्रीति।

(८) काम-क्रीड़ा, भोग-विलास। उ —(क) सुत कुबेर के मत्त मगन भए बिषै रस नैननि छाए हो—१-७। (ख) बालापन खेलत ही खोयौ, जुवा बिषय-रस मातै—१-११८। (९) उमग, जोश। (१०) गुण, विशेषता। (११) किसी प्रकार या विषय का आनद। उ.—(क) जो रस ब्रह्मादिक नहि पावै, सो रस गोकुल गलिनि बहावै—१०-३। (ख) जो रस नद-जसोदा बिलसत सो नहि तिहूँ भुवनिया—१०-२३८। (१२) कोई तरल या द्रव पदार्थ। (१३) पानी, जल। (१४) फल या वनस्पति का जलीय अश। (१५) शरबत। (१६) धातुओ की भस्म। (१७) आनदस्वरूप ब्रह्म। (१८) भाँति, प्रकार, रूप। उ.—(क) जहँ बिधु-भानु समान एक रस सो बारिज सुख रास—१-३३८। (ख) ज्ञानी सदा एक रस जानै। तन कै भेद भेद नहिं

मानै—५-४। (१९) मन की तरग, मौज। उ.—सर्वस रीझि देत अपने रस सूर स्याम गुन गाये—१० उ०-३८। (२०) भाव। उ.—भ्रुव सुदर करुना रस पूरन—१०-१०४।

रसकोर, रसकौर, रसकौरा—सज्ञा पु [हिं. रस+कौर] रसगुल्ला।

रसगुनी—वि. [स.रस+गुणी] काव्य या सगीत का ज्ञाता।

रसगुल्ला—सज्ञा पु. [स. रस+हि गोला] एक मिठाई।

रसज्ञ—वि. पु. [स.] (१) रस का ज्ञाता। (२) काव्य या सगीत का ज्ञाता। (३) कुशल।

रसज्ञता—सज्ञा स्त्री. [स.] मर्मज्ञता।

रसज्ञा—वि. स्त्री. [स.] (१) रस का ज्ञान रखनेवाली। (२) काव्य या सगीत की मर्मज्ञा। (३) निपुण, कुशल। उ.—सुनि सुनि स्रवन रीझि मन ही मन राधा रास रसज्ञा—पृ० ३४६ (४४)।

रसति—क्रि. अ. [हिं. रसना] हर्षित या प्रफुल्लित होती है। उ.—सूर प्रभु नागरी हँसति मन मन रसति, बसत मन स्याम बडे भागे।

रसद—वि. [स] (१) सुखद। (२) मजेदार।
 सज्ञा स्त्री. [फा.] अनाज, गल्ला।

रसदार—वि. [स. रस+हि. दार] जिसमे रस हो।

रसन—सज्ञा पु. [स.] (१) चखना। (२) जीभ। उ. रसन दसन धरि भरि लिए लोचन – २८७१।

रसना—सज्ञा स्त्री. [स.] जीभ, जबान। उ.—(क) रसना द्विज दलि दुखित होति बहु तउ रिस कहा करै। छमि सब छोभ जु छाँडि, छवौ रस लै समीप सँचरै—१-११७। (ख) रसना-स्वाद-सिथिल लपट ह्वै अघटित भोजन करतौ—१-२०३। (ग) तब रसना हरि नाम भाषिकै—२५३३।

मुहा०—रसना खोलना—बोलने लगना। रसना तालू से लगाना—बोलना बंद करना। रसना तारू सौं नहिं लावत—क्षण भर को भी चुप नहीं होता। उ.—रसना तारू सो नहि लावत पीवै-पीव पुकारत। रसना हारना—बात खाली जाना, इच्छा या याचना पूरी न होना। रसना हारी—बात खाली चली जाय, इच्छा पूरी न हो। उ.—जाँचक पै जाँचक कह जाँचै, जौ जाँचै तौ रसना हारी—१-३४।

रसना, रसनो—क्रि. अ. [स. रस+हि. ना, नो] (१) धीरे-धीरे बहना, टपकना। (२) पसीजना। (३) हर्षित या प्रफुल्लित होना। (४) तन्मय या परिपूर्ण होना। (५) रस या स्वाद लेना। (६) अनुरक्त होना।

रसनायक—वि. [स.] कुशल, निपुण। उ.—सूर स्याम लीला रस नायक—१०३०।

रसनेंद्रिय—सज्ञा स्त्री [स.] जीभ, जिह्वा।

रसपति—सज्ञा पु. [स.] (१) चद्रमा। (२) शृगार रस।

रसबाद—सज्ञा पु [स. रसवाद] मनोरजन के लिए की गयी छेड़छाड़। उ—तुमही मिलि रसबाद बढायौ, उरहन दै दै मूड पिरायौ—३९१।

रसभरी—सज्ञा स्त्री. [स रस+हि. भरी] (१) एक खट-मिट्ठा फल। (२) एक मिठाई।

रसभीना, रसभीनो – वि. [स रस+भीनना] (१) आनद में मग्न या लीन। (२) तर, गीला, आर्द्र।

रसम —सज्ञा स्त्री. [अ. रस्म] (१) परिपाटी, प्रथा। (२) मेल-जोल का सबंध।

रसमय—वि. [स. रस+हि मय] रस से पूर्ण या युक्त। उ.—रसमय जानि सुवा सेमर कौ चौच घालि पछितायौ—१-५८।

रसमसा—वि [स रस+हि. मस (अनु.)] (१) आनदमग्न। (२) तर, गीला, आर्द्र।

रसमि—सज्ञा स्त्री [स रश्मि] (१) किरण। उ.—तो जू मान तजहुगी भामिनि रवि की रसमि काम फल फीको—२१८८। (२) चमक, आभा।

रसरा सज्ञा पु [हि. रस्सा] रस्सा, मोटी रस्सी।

रसराइ, रसराई, रसराउ, रसराऊ, रसराय, रसराया, रसराव, रसराज, रसराजा—सज्ञा स्त्री. [स. रसराज] (१) पारा, पारद। (२) शृगार रस।

रसरी – सज्ञा स्त्री. [हि. रस्सी] रस्सी, मोटी डोरी।

रसरीति—सज्ञा स्त्री. [स.] प्रीति का व्यवहार, भाव या आचरण। उ.—माया काल, कछू नहिं ब्यापै, यह रस-रीति जो जानै—१-४०।

रसलीन—वि. [स. रस+हिं. लीन] आनंद में मग्न।

उ.—यहि बिधि करि उपदेस सबन को किये भजन रसलीन—सारा. ११२ ।

रसवंत—वि [स रसवत्] (१) रसिक, प्रेमी । (२) रस से पूर्ण, रसीला ।

रसवंती, रसवती—सज्ञा स्त्री. [स. रसवती] रसोत ।
वि. स्त्री.—(१) रसीली । (२) रसिकिनी ।

रसवाद—सज्ञा पु. [स.] (१) प्रीति या रसिकता भरी बात । उ.—करति हौ परिहास हमसौ तजौ यह रसवाद—पृ. ३४० (९८) । (२) विनोद या मनोरजन के लिए की गयी छेडछाड । उ—तुमही मिलि रसवाद (रसबाद) बढायौ । उरहन द्वै दै मूँड पिरायौ —३९१ । (३) बकवाद । उ—तुम रसवाद करन अब लागे—२२६७ ।

रससागर—सज्ञा पु. [स.] (१) सात समुद्रों में एक जो प्लक्ष द्वीप में ऊख रस से भरा कहा गया है । (२) आनद-सागर । उ.—गुनसागर अरु रस-सागर मिलि मानत सुख ब्यवहार—६८७ ।

रसा—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) पृथ्वी । (२) जीभ ।
सज्ञा पु. [स. रस] तरकारी आदि का झोल ।

रसाइन—सज्ञा पु. [स. रसायन] रसायन ।

रसाइनी—सज्ञा पु. [स. रसायन+ई] (१) 'रसायन' विद्या का जानकार । (२) कीमियागर ।

रसाई—सज्ञा स्त्री. [फा] पहुँच ।

रसातल—सज्ञा पु. [स.] पृथ्वी के नीचे के सात लोको मे छठा जहाँ दैत्य, दानव आदि रहते बताये गये है । उ.—(क) सुनि सुनि स्वर्ग रसातल भूतल तहाँ तहाँ उठि धाये—१-१५४ । (ख) सप्त रसातल मेषासन रहे १०-२२१ ।
मुहा०—रसातल मे पहुँचाना—नष्ट या मटियामेट कर देना ।

रसाना, रसानो—क्रि स [स. रस+हि आना] (१) रस से पूर्ण या युक्त करना । (२) प्रसन्न करना । (३) पदार्थ-विशेष को रसने में प्रवृत्त करना ।
क्रि. स.—(१) रस युक्त होना । (२) पदार्थ-विशेष का रसना । (३) प्रसन्न होना ।

रसाभास—सज्ञा पु. [स] रस-विशेष का अनुचित प्रसग या स्थान में वर्णन ।

रसायन—सज्ञा पु. [स.] (१) पदार्थों के तत्वो का ज्ञान । (२) एक कल्पित योग जिससे ताँबे से सोना बनना माना जाता है । (३) धातु को भस्म मे परिवर्तित करने की विद्या ।

रसायनी—वि [स रसायन] रसायन जाननेवाला ।

रसाल—सज्ञा पु. [स] (१) ऊख । (२) आम ।
वि.—(१) मधुर, मीठा । उ—(क) सिव बोले तब बचन रसाल-१-२२६ । (ख) सुदरी बोलत बचन रसाल—४७३ । (२) रसीला । (३) सुदर, मनोहर । उ—(क) जो राजत तिहि काल लाल ललना रसाल रसरग—२४५० । (ख) सूरदास प्रभु फिरि कै चितयौ अबुज नैन रसाल—२५३६ ।
सज्ञा पु. [अ इरसाल] कर, खिराज, राजस्व ।

रसालस—सज्ञा पु. [स. रसाल] कौतुक ।

रसाला—वि. [स. रसाल] (१) सुदर, मनोहर । उ.—(क) कालिदी कै कूल बसत इक मधुपुरि नगर रसाला—१०-४ । (ख) स्याम जलद तनु अग रसाला—२४८२ । (२) मधुर । (३) रसीला ।
सज्ञा पु. [फा. रिसाला] घुड़सवार सेना ।

रसालिका—वि. स्त्री [स. रसालक] सरस, सुदर ।

रसाली—वि. [स रस] रसिक ।

रसाव—सज्ञा पु [हि रसना] रसने की क्रिया या भाव ।

रसावर, रसावल—सज्ञा पु [हि रसौर] ऊख के रस मे पकाये गये चावल ।

रसिआउर, रसिआवर, रसिआवल—सज्ञा पु. [हि. रस+चाउर] (१) ऊख के रस मे पकाये गये चावल । (२) एक गीत जो उस समय गाया जाता है जब नववधू पहली बार ऊख के रस या गुण के शर्बत मे चावल पकाकर पति तथा अन्य सबधियो को खिलाती है ।

रसिक—वि. [स] (१) रस या स्वाद लेनेवाला । (२) प्रेमी-हृदय, सहृदय, भावुक, मर्मज्ञ । (३) आनंदी, रसिया । उ.—(क) सूरदास रास रसिक बिनु रास रसिकिनी बिरह बिकल करि भई है मगन । (ख) सूरदास प्रभु रसिक सिरोमनि—१०-२९८ । (४) मुग्ध,

आसक्त या लीन होनेवाले। उ.—रूप रसिक लालची कहावत सो करनी कछुवै न भई —२५३७।

रसिकइ, रसिकई—सज्ञा स्त्री. [स. रसिक+ई] (१) रसिक होने का भाव या धर्म। उ.—रसिक रसिकई जानि नाम लेहु रहे जाके - २०८२। (२) हँसी-ठट्ठा, परिहास।

रसिकता - सज्ञा स्त्री. [स.] (१) रसिक होने का भाव या धर्म। (२) हँसी-ठट्ठा, परिहास।

रसिक बिहारी - सज्ञा पु. [स] श्रीकृष्ण का एक नाम।

रसिकाइ, रसिकाई—सज्ञा स्त्री. [स. रसिक+हि. आइ, आई] रसिकता।

रसित—सज्ञा पु. [स] ध्वनि, शब्द।

रसिया—सज्ञा पु [स. रसिक] (१) रस लेनेवाला, रसिक। उ.—जित देखौ तित दीखै री रसिया नद कुमार जी—८८०। (२) फागुन का एक गीत।

रसी—वि. [स. रसिक] रस लेनेवाला।

रसीद—सज्ञा स्त्री. [फा.] प्राप्ति का प्रमाण-पत्र।

रसील, रसीला—वि. [स. रस+हि. ईला] (१) रस से भरा। (२) मजेदार। (३) रस या आनद लेने वाला। (४) विलासी, प्रेमी। (५) छबीला, सुन्दर।

रसीले—वि. [हि. रसीला] रस या आनद लेनेवाले। उ.—(क) सूर स्याम रस रसे रसीले—पृ ३२२ (१७)। (ख) सूरदास प्रभु नवल रसीले—१९६६।

रसीलापन—सज्ञा पु [हि रसीला+पन] रसिक होने का भाव।

रसूख—सज्ञा पु [अ. रुसूख] (१) विश्वास। (२) पहुँच।

रसूम—सज्ञा पु. [अ.] (१) नियम। (२) प्रथानुसार दिया जानेवाला धन।

रसूल—सज्ञा पु. [अ.] पैगबर।

रसेस—सज्ञा पु. [स. रसेश] श्रीकृष्ण।

रसोइया—सज्ञा पु. [हि. रसोई] भोजन बनानेवाला।

रसोई, रसोई—सज्ञा स्त्री. [स. रस+हि. ओई] (१) बना हुआ भोजन। उ.—भीतर चली रसोई कारन छीक परी तब आँगन आइ—५४२।

यौ०—कच्ची रसोई—दाल, भात, रोटी आदि जिनमें सामान को घी से तला नही जाता। पक्की रसोई—पूरी, पकवान आदि जो घी में तल लिया जाता है।

मुहा०—रसोई चढना या तपना—भोजन तैयार होना। रसोई चढाना या तपाना—भोजन तैयार करना।

(२) स्थान जहाँ भोजन बने, चौका, पाकशाला। उ.—जसुमति चली रसोई भीतर तबहि ग्वालि इक छीकी—५४०।

रसोईघर—सज्ञा पु. [हि रसोई+घर] चौका, पाकशाला।

रसोय—सज्ञा स्त्री [हि रसोई] भोजन।

रसौत—सज्ञा स्त्री [स. रसोद्भूत] एक औषध।

रसौर—सज्ञा पु [स रस+आउर] ऊख के रस या गुड़ के शरबत में पके हुए चावल।

रस्ता—सज्ञा पु. [हि रास्ता] राह, मार्ग।

रस्म—सज्ञा स्त्री. [अ] मेलजोल।

यौ०—राह-रस्म—मेलजोल, घनिष्ठता।

(२) रिवाज, चाल, रीति, प्रथा।

रश्मि—सज्ञा स्त्री. [स रश्मि] किरण।

रस्सा—सज्ञा पु. [हि रसरा] मोटी रस्सी।

रस्सी—सज्ञा स्त्री. [हि. रस्सा] मोटी डोरी।

रहँकला—सज्ञा पु. [स. रथ+हि कला] (१) एक हल्की गाड़ी। (२) तोप लादने की गाड़ी। (३) गाड़ी पर लदी छोटी तोप।

रहँचटा—सज्ञा पु [स रस+हि. चाट] प्रेमानद का चस्का, प्रीति की चाह।

रहँट—सज्ञा पु [स. आरघट्ट, प्रा. अरहट्ट] कुएँ से पानी निकालने का एक यत्र जिसके खीचे जाने पर उसमे बँधी बहुत सी बालटियाँ या घड़े थोड़े श्रम से ही बहुत सा पानी निकाल देते है। सामान्यतया इस यत्र को बैल खीचते है। उ.—बारबार रहँट के घट ज्यौ भरि-भरि लोचन ढरतु - २२५३।

रहँटा—सज्ञा पु [हि. रहँट] सूत काटने का चर्खा।

रहँटी—सज्ञा स्त्री [हि. रहँटा] कपास ओटने की चर्खी।

रहचटा—सज्ञा पु [हि रहँचटा] प्रीति की चाह।

रहचह—सज्ञा स्त्री. [अनु.] चिड़ियों की चहचहाहट।

रहट—सज्ञा पु. [हि. रहँट] कुएँ से पानी निकालने का

रहँट। उ.—बारबार रहट के घट ज्यों भरि भरि लोचन ढरतु—२२५३।

रहत—क्रि अ. [हि. रहना] रहता है। उ.—(क) ज्यौ मृग नाभि कमल निज अनुदिन निकट रहत नहि जानत—१-४९। (ख) भूखे छिन न रहत मनमोहन—१०-२३१।

रहति—क्रि. अ. स्त्री. [हि रहना] रहती है। उ.—घर की नारि बहुत हित जासौ रहति सदा सँग लागी—१-७९।

रहन—सज्ञा स्त्री. [हि. रहना] (१) रहने की क्रिया या भाव, रहना।

यौ०—रहन-सहन—चाल-ढाल, तौर-तरीका।

(२) ससार में जीवित रहना। उ.—बौरे मन, रहन अटल करि जान्यौ—१-३१९। (३) रहने का ढंग, व्यवहार, आचरण।

रहना—क्रि. अ. [स राज, पु. हि. राजना] (१) स्थित होना, ठहरना। (२) रुकना, प्रस्थान न करना। (३) एकही दशा में बहुत समय तक ठहरना। (४) बसना, निवास करना। (५) अस्थायी रूप से ठहरना। (६) काम करना स्थगित कर देना। (७) चलना बद कर देना। (८) विद्यमान या उपस्थित होना। (९) चुप-चुप या बिना किसी काम-काज के समय बिताना। (१०) काम-काज या नौकरी करना। (११) स्थित या स्थापित होना। (१२) सभोग या समागम करना। (१३) जीना, न मरना। (१४) बच जाना, शेष रह जाना।

रहनि, रहनी—सज्ञा स्त्री. [हि. रहना] (१) रहने की क्रिया, भाव या ढग, आचरण-व्यवहार। (२) जीवित रहने की क्रिया या भाव। (३) लगन, प्रीति।

रहनो—कि. अ. [हि. रहना] रहना।

रहम—सज्ञा पु. [अ.] (१) दया। (२) अनुग्रह।

रहमान—सज्ञा पु. [अ.] दयालु ईश्वर।

रहल—सज्ञा स्त्री. [अ.] पुस्तक रखने की चौकी।

रहस—सज्ञा पु. [स रहस्] (१) रहस्य। (२) लीला, क्रीड़ा। (३) सुख, आनद। उ.—भयौ जदुबस अति रहस, सूर जन मगलाचार गायौ—१०उ०-२५।

रहसत—क्रि. अ. [हि रहसना] (१) प्रसन्न या आनंदित होता है। उ.—(क) इहि बिधि रहसत-बिलसत दपति—७३२। (ख) परस्पर मिलि हँसत रहसत हरषि करत बिलास—पृ. ३४३ (२२)। (ग) कबहुँ रहसत मचत लै सँग एक एक सहेलि—२२७८।

रहसना, रहसनो—क्रि. अ [हि. रहस+ना] प्रसन्न या हर्षित होना।

रहसबधावा—सज्ञा पु. [हि. रहस+बधाई] विवाह की एक रीति जिसमें वधू का मुख देखकर उपहार आदि दिये जाते है।

रहसि—सज्ञा पु [हि रहस] (१) आनंद, प्रसन्नता। उ.—देस देस भयो रहसि सूर प्रभु जरासध सिसुपाल की हाँसी—१०३०-२२। (२) गुप्त या एकांत स्थान। उ.—सुनि बल-मोहन बैठ रहसि मै कीन्हो कछू बिचार—सारा. ६०२।

क्रि. अ. [हि रहसना] हर्षित, आनदित या प्रसन्न होकर। उ.—(क) कबहुँक बैठ्यौ रहसि रहसि कै ठोटा गोद खिलायौ—१-३०१। (ख) इतनी सुनत घोष की नारी रहसि चली मुख मोरी—१०-२९३।

रहस्य—सज्ञा पु. [स] (१) गुप्त भेद। (२) गुप्त स्थान। उ.—कहुँ पौढे कमला के सँग मे परम रहस्य एकात—सारा. ६७२। (३) मर्म या भेद की बात। (४) गूढ बात।

रहस्यवाद—सज्ञा पु. [स.] वह धार्मिक वृत्ति जिसम ईश्वर से परोक्ष भाव या रूप से सबध स्थापित किया जाता है।

रहस्यवादी—वि. [स रहस्यवादिन्] (१) रहस्यवाद-सबधी। (२) रहस्यवाद में विश्वास रखनेवाला।

रहाइ, रहाई—क्रि. अ. [हि. रहना] रहता है। उ.—(क) ऊँच-नीच ब्यौरौ न रहाइ—१-२३०। (ख) महाकष्ट दस मास गर्भ बसि, अधोमुख-सीस रहाई—१-३१८। (ग) अग तपति कछु सुधि न रहाई—७४८।

सज्ञा स्त्री.—(१) रहने की क्रिया, भाव या रीति। (२) चैन, आराम।

रह्यात—क्रि. अ. [हि. रहना] रहता है। उ.—छिनक मौन रह्यात —३५९।

रह्याना, रह्यानो—क्रि अ. [हि. रहना] (१) रहना। (२) होना।

रह्याय—क्रि. अ [हिं. रहना] रहता है। उ.—छिन जियरा न रह्याय हो—२४००।

रह्यायो, रह्यायौ—क्रि. अ [हि रहना] रह गया, शेष बचा। उ.—क्रोध बचन करि सबसे बोले, छत्री कोउ न रह्यायो—सारा २२२।

रह्यावन—सज्ञा पु [हि रहना] पशुओं के रहने या एकत्र होने का स्थान।

रह्या सह्या—वि [हि रहना + सहना (अनु.)] बचा-बचाया, बचा-खुचा, शेष।

रह्याही—क्रि. अ [हि. रहना] (१) रहते हैं। उ.—बादल-छाहँ, धम-धौराहर जैसैं थिर न रह्याही—१-३१९। (२) टिकता या ठहरता है। उ.—जद्यपि सुख-निधान द्वारावति तोऊ मन कहुँ न रह्याही—१० उ०-१०३।

रहि—क्रि. अ [ह. रहना] (१) रहकर। (२) रह जा, रुक जा, चुप रह। उ—(क) रहि री माँ धीरज उर धारे—५९५। (ख) रहि रहि अबला बोल न बोलै —९-१४०।

प्र०—रहि न सके—अपने को रोक न सके। उ.—रहि न सके, नरसिह रूप धरि, गहि कर असुर पछारयौ—१-१०९। रहि गयौ—शेष रहा, बच रहा। उ.—एक बार महा परलै भयौ, नारायन आपुहि रहि गयौ—९-२। रहि जात—रहा जाता है, चैन पड़ती है। उ.—कान्ह तुमहि बिनु रहत नहि, तुमसौ क्यो रहि जात—५८९। रहि गए—स्तब्ध होकर एक ही स्थान पर ठहरे रहे। उ.—निरखि सुर-नर सकल मोहे रहि गए जहाँ के तहाँ—१० उ०-२४।

रहित—वि. [स.] बिना, बगैर, हीन। उ.—(क) अति उन्मत्त निरकुस मैगल चितारहित असोच—१-१०२। (ख) ब्रह्म पूरन अकल कला ते रहित—२५५६।

रहियै—क्रि. स. [हि. रहना] टिक जाइए, ठहरिए, अस्थायी रूप से निवास कीजिए। उ.—सुनि सबहिनि सुख कियौ आजु रहियै जमुना-तट—५८९।

रहिल—सज्ञा पु [देश] चना (अनाज)।

रहिहै—क्रि. अ. [हि रहना] बच सकेगी, बनी रह सकेगी। उ.—सूरदास अब बसै कौन ह्याँ पति रहिहै ब्रज त्यागै—१०-३१७।

रही—क्रि. अ. [हि रहना] ध्यान न दिया, उपेक्षा की, गनीमत थी। उ.—चोरी रही, छिनारो अब भयौ, जान्यौ ज्ञान तुम्हारौ—७७३।

रहीम—वि [अ.] दयालु, कृपालु।

सज्ञा पु.—(१) प्रसिद्ध कवि अब्दुर्रहीम खानखाना। (२) ईश्वर का एक नाम।

रहु—क्रि. अ. [हि. रहना] रुक, बोल मत, चुप रह। उ—रहु रहु राजा यौं नहि कहियै दूषन लागै भारी —८-१४।

रहुआ, रहुवा—सज्ञा पु. [हि. रहना] दूसरे के यहाँ रोटियों पर रहनेवाला।

रहूगण, रहूगन—सज्ञा पु [स. रहूगण] एक राजा जो अगिरस गोत्रीय था और जिसने कपिल मुनि से ज्ञान सुना था। उ—नृपति रहूगन कै मन आई, सुनियै ज्ञान कपिल सौ जाई—५-४।

रहै—क्रि. अ. [हि. रहना] रहता है।

मुहा०—चित न रहै—चित्त स्थिर या शांत नहीं होता। उ.—तबही तै व्याकुल भइ डोलति चित न रहै कितनौ समझाऊँ—१६५४।

रहौंगौ—क्रि अ [हि. रहना] रहूँगा, मानूँगा, सहमत होऊँगा। उ.—बरज्यौ हौ न रहौंगौ—१०-१९४।

रह्यो रह्यौ—क्रि. अ [हि. रहना] (१) शेष रहा था, बचा था। उ.—हा करुनामय कुजर टेरचौ, रह्यौ नही बल थाक्यौ—१-११३। (२) वास करता था, रहता था। उ.—जब मै नाभि-कमल मै रह्यौ—२-३७।

राँक, राँका, राँकौ—वि [स. रक] दरिद्र, कंगाल। उ. —छोरी बदि बिदा किए राजा, राजा ह्वै गए राँकौ —१-११३।

यौ०—राँकौ-फीकौ—बहुत ही दीन। उ.—बडौ कृतघ्नी और निकम्मा बधन, राँकौ-फीकौ—१-१८६।

राँग, राँगा—सज्ञा पु. [स. रग, हि. राँगा] एक धातु

जो सफेद और नरम होती है। उ.—(क) नारि आनद भरी राँग सी ह्वै ढरी, द्वार आपने खरी अग पुलकी—२१५५। (ख) बातन हरत मन राँग ह्वै ढरै री—२४२३।

राँच—क्रि अ. [हि राँचना] आकृष्ट हुआ, रम गया। उ.—विषय अखेटक नृप मन राँच—४-१२।

अव्य. [हि. रच] जरा सा, तनिक।

राँचना, राँचनो—क्रि अ. [स रजन] (१) आसक्त या अनुरक्त होना। (२) लीन या मग्न होना। (३) रग पकड़ना।

क्रि. स.—रँगना, रँग चढ़ाना।

राँचि—क्रि. अ. [हि. राँचना] अनुराग करके।

यौ०—राँचि राँचि करि—बड़ी लगन या रुचि से, बड़े चाव से। उ.—यह तन राँचि राँचि करि बिरच्यौ, कियौ आपनौ भायौ—१-६७।

राँची—क्रि. अ. [हि राँचना] रँग गयी, लीन या मग्न हो गयी। उ.—धाय सुघरी सील कुल छाँडे राँची वा अनुराग—६५६।

राँचे—क्रि. अ. [हि. राँचना] आसक्त या मुग्ध हुए। उ.—स्याम प्यारी-नैन राँचे—६७६।

राँचै—क्रि. अ. [हि. राँचना] अनुरक्त हो, प्रेम करे। उ.—जौ अपनौ मन हरि सौ राँचै—१-८१।

राँजना, राँजनो—क्रि अ. [स. रजन] काजल लगाना।

क्रि स —रँगना, रजित करना।

क्रि. स. [हि. राँगा] राँगे से जोड़ना।

राँटा—सज्ञा पु. [देश.] टिटिहरी चिड़िया।

सज्ञा पु. [हि. रहँटा] सूत कातने का चर्खा।

राँड़—वि. स्त्री. [स रडा] विधवा, बेवा।

राँढ़ना, राँढ़नो—क्रि. स. [स. रुदन] रोना।

राँध—सज्ञा पु. [स. परात] (१) निकट का स्थान। (२) पड़ोस।

क्रि. वि.—पास, निकट, समीप।

सज्ञा स्त्री. [हि. राँधना] भोगने बनाने या राँधने की क्रिया या भाव।

वि.—परिपक्व अवस्था या बुद्धिवाला।

राँधना, राँधनो—क्रि. स. [स. रधन] (भोजन) पकाना।

राँधि—क्रि. स. [हि. राँधना] पका कर। उ.—सुरसो मेथी, सोवा पालक बथुआ राँधि लियौ जु उतालक—३९६।

राँध्यो, राँध्यौ—क्रि. स. [हि. राँधना] पकाया। उ.—बथुआ भली भाँति रचि राँध्यौ—२३२१।

राँभति—क्रि. अ. [हि राँभना] (गाय) बँबाती या बोलती है। उ —राँभति गाइ बछा हित सुधि करि—४८०।

राँभना, राँभनो—क्रि. अ. [स. रभण] गाय का बोलना।

राआ—सज्ञा पु [स. राजा] राजा, सम्राट।

राइ—सज्ञा पु. [स. राजा, प्रा. राया] (१) राजा, सम्राट। उ.—(क) निज पुर आइ राइ भीषम सौ कही जो बातैं हरि उचरी—१-२६८। (ख) सुक कह्यौ, सुनौ परिच्छित राइ, देहुँ तोहिं बृत्तात सुनाइ—६-५। (२) राय, सरदार।

सज्ञा स्त्री. [हि. राई] 'राई' नामक वस्तु।

मुहा०—राइ-लोन उतारि—नजर लगने पर उतारा करके राई और नमक आग में डालकर। उ.—कबहुँ अँग भूषन बनावति राइ-लोन उतारि—१०-११८।

राइता—सज्ञा पु. [हि. रायता] पतले दही में उबाले हुए साग आदि के साथ मसाले डालकर बनाया गया नमकीन पदार्थ। उ.—पानौरा राइता पकौरी—२३२१।

राई—सज्ञा पु [स. राजा, प्रा. राया] (१) राजा। उ.—कुदनपुर कौ भीषम राई—१० उ०-७। (२) राय, सरदार। (३) राज्य, राज्याधिकार। उ.—तुम्है मारि महिरावन मारै, देहि बिभीषन राई—९-१४०। (४) प्रभु, स्वामी। उ.—किलकि झटकि उलटे परे देवनि-मुनि-राई—१०-६६।

सज्ञा स्त्री.—राजा होने का भाव, राजापन।

वि.—सपन्न, उत्तम, श्रेष्ठ। उ.—सूर स्याम ऐसे गुन राई—१८८०।

सज्ञा स्त्री [स. राजिका, अ. राइआ] (१) बहुत छोटी सरसो-जैसा एक मसाला।

मुहा०—राई काई करना—टुकड़े-टुकड़े कर डालना। राई काई होना—टुकड़े-टुकड़े हो जाना। राई-नोन (लोन) उतारना—नजर लगने पर राई-नमक उतार

कर आग में डालना। राई नोन (लोन) उतारि— नजर लगने से बचाने के लिए राई नोन उतार कर और आग में डालकर। उ.—कबहूँ अँग भूषन बनावति राई-लोन उतारि। राई लोन उतारै—नजर से बचाने के लिए राई-नोन उतारकर आग में डालती है। उ.—जाकौ नाम कोटि भ्रम टारै, तापर राई-लोन उतारै—१०-१२९। राई से पर्वत करना—(१) थोड़ी बात को बहुत बढ़ा देना। (२) असभव बात को भी संभव कर देना। राई से पर्वत करि डारै—छोटी या असभव बात को बहुत बड़ा या संभव कर देता है। उ.—अविगति गति जानी न परै। राई ते पर्वत करि डारै पर्वत राई करै।

(२) बहुत थोड़ी मात्रा या परिमाण।

मुहा०—राई भर—(१) बहुत छोटा। (२) बहुत थोड़ा। राई-रत्ती करके—छोटी-छोटी रकम, तौल या नाप के हिसाब से।

राउ—सज्ञा पु. [स. राजा, प्रा राय, राव] राजा। उ. —(क) हरि, हौ सब पतितनि कौ राउ—१-१४५। (ख) कह्यौ वृषभ, तुम ऐसेहि राउ—१-२९०।

राउत—सज्ञा पु. [स राज+पुत्र, प्रा. राअउत] (१) कोई राजवश। (२) वीर पुरुष। (३) क्षत्रिय।

राउर—सज्ञा पु. [स राज+पुर, प्रा० राय+उर] राज महल का अत पुर, रनिवास, राजमहल। उ.—ब्रज घर-घर बूझत नँद-राउर, पुत्र भयौ, सुनि कै उठि धायौ—१०-२४८।

वि. आपका।

राउल—सज्ञा पु. [स. राजकुल] (१) राजा। (२) राजकुल का पुरुष।

राकस—सज्ञा पु. [स. राक्षस] राक्षस।

राकसिनि, राकसिनी—सज्ञा स्त्री. [हि राकस] राक्षसी।

राका—सज्ञा स्त्री. [स.] पूर्णिमा की रात। उ.—(क) ब्रजप्राची राका तिथि यशुमति शरद सरस रितु नद—१३३१। (ख) स्वेत छत्र मनो ससि प्राची दिसि उदय कियौ निसि राका—२५६६।

राकापति—सज्ञा पु. [स.] चंद्रमा।

राकेश, राकेस—सज्ञा पु. [स. राकेश] चद्रमा।

राक्षस—संज्ञा पु. [स.] (१) दैत्य, असुर। (२) दुष्ट व्यक्ति। (३) विवाह जिसमें कन्या के लिए युद्ध किया जाय।

राक्षसपति—सज्ञा पु. [स.] रावण।

राक्षसी—वि. [स. राक्षस] (१) राक्षस-संबंधी। (२) राक्षसो जैसा जघन्य या विकट।

राख - सज्ञा स्त्री. [देश.] भस्म, खाक। उ.—निंदत मूढ़ मलय चदन को राख अग लपटावै—२-१३।

राखत—क्रि स [हि. रखना] (१) रक्षा करता है। उ—राखत नहि कोउ करुनानिधि अति बल ग्राह गह्यौ—८-४। (२) स्थिर या स्थापित करता है, रखता है। उ.—इक लोहा पूजा मै राखत, इक घर बधिक परौ—१-२२। (३) जीवित रहने देता है, बचाता या उपेक्षा करता है। उ.—वै है काल तुम्हारे प्रगटे काहे उनकौ राखत—५२२।

राखति—क्रि. स. स्त्री.[हि. रखना] रोकती या ठहराती हूँ।

प्र०—बाँधि राखति—बाँधकर रखती हूँ। उ.—मै बाँधि राखति सुतहि मेरे देत महरहि गारि—३८७।

राखनहार—वि. [हि. रखना+हार] बचानेवाला, रक्षक। उ—(क) राखनहार अहै कोउ औरै—७-४। (ख) गोकुल-ग्वाल-गाइ-गोसुत के येई राखनहार—५०८।

राखना, राखनो—क्रि. स. [हि. रखना] (१) धरना, स्थित करना। (२) बचाना, रक्षा करना। (३) पालन या निर्वाह करना। (४) सग्रह करना। (५) सौप देना। (६) रेहन या बधक करना। (७) अधिकार में कर लेना। (८) नियुक्त करना। (९) पकड या रोक लेना। (१०) सामने न लाना। (११) व्यवहार करना। (१२) आरोप करना। (१३) ठहराना, निवास कराना।

राखहि—क्रि. स [हि. रखना] रखती (है)।

प्र०—बस राखहि—बश या अधिकार में रखती (है)। उ.—इद्रिय बस राखहि किन पाँचौ—१-८३।

राखहु—क्रि. स. [हि. रखना] रोक लो, जाने मत दो। उ.—गोपालहि राखहु मधुबन जात—३४३१।

राखि—क्रि. स. [हि. रखना] (१) बचा लो, रक्षा करो। उ.—(क) हा जगदीस राखि इहि अवसर प्रगट पुकारि

कह्यौ—१-१४७। (ख) नमस्कार करि बिनय सुनाई, राखि-राखि असरन सरनाई—६-५। (२) **धारण करके**। उ.—जोगी जोग धरत मन अपनै सिर पर राखि जटै—१-२६३।

प्र०—राखि लियो—(१) **बचा लिया, रक्षा कर ली**। उ.—(क) अंबरीष व्रत राखि लियौ—१-२६। (ख) सूरदास प्रभु कठिन बिपति सौं राखि लियौ जग जागी—१-२५०। राखि लीज—**बचा लीजिए, रक्षा कर लीजिए**। उ.—जिहिं उपाय अपनौ यह बालक राखि कंस सौं लीजै—१०-९।

राखिहै—क्रि. स. [हि. रखना] **रक्षा करेगा, बचायेगा**। उ.—(क) उलटि जाहु नृप-चरन-सरन मुनि, वहै राखिहै भाई—९-७। (ख) मेरे मारत कौन राखिहै—१०४२।

राखी—क्रि. स. [हिं. रखना] **बचा ली**। उ.—रानी सबै मरत तें राखी—२६२१।

राखी—संज्ञा स्त्री. [सं. राखी] **रक्षाबंधन का डोरा जो हिंदुओं के यहाँ श्रावण पूर्णिमा को पुरुषों की दाहनी कलाई पर बाँधा जाता है**।

संज्ञा स्त्री. [हि. राख] **राख, खाक**।

क्रि. स. [हि. रखना] (१) **बचायी, रक्षा की**। उ.—सभा माँझ द्रौपदि पति राखी—१-११३। (२) (**ध्यान में**) **बसायी, स्मरण रक्खी**। उ.—सखी नृपति सों यह कहि भाखी, नृप सुनिकै हिरदै मैं राखी—६-७। (३) **प्रस्तुत या उपस्थित की**। उ.—जाबवती अरपी कन्या हरि मनि राखी समुहाइ—सारा० ६४९।

राखु—क्रि. स. [हि. राखना] **रक्षा करो, बचाओ**। उ.—चटचटात अँग-अंग फटत है, राखु राखु प्रभु मोहि—५८९।

राखैं—क्रि. स. [हि. राखना] **स्थिर या स्थित करते हैं, ठहराते या लगाते हैं**। उ.—मन राखैं तुम्हरे चरननि पै—१-१९६।

राखै—क्रि स. [हि. राखना] **पालता-पोसता या रक्षा करता है**। उ.—लोक रचै, राखै अरु मारै—१०-३।

राखौं—क्रि स [हि राखना] **रक्षा करूँ**। उ.—कहि धौं प्रान कहाँ लौं राखौं, रोकि देह मुख द्वार—९-९२।

राखौ—क्रि स. [हि राखना] **बचाओ, रक्षा करो**। उ.—(क) राखौ पति गिरिवर गिरिधारी—१-२४८। (ख) लाज मेरी राखौ स्याम हरी—१-२५४।

राख्यो, राख्यौ—क्रि स [हि राखना] (१) **बचाया, रक्षा की**। उ.—(क) राख्यौ गोकुल बहुत बिघन तैं कर-नख पर गोबर्धनधारी—१-२२। (ख) राख्यौ स्याम, नहीं तिहिं मारयौ—५७४। (२) **निर्वाह या पालन करने में सहायक हुआ**। उ.—(क) भारत मैं मेरौ प्रन राख्यौ—१-१७७। (ख) धन्य सुपुत्र पिता-पन राख्यौ—९-१५१। (ग) देव ने राख्यौ बालक यह सुखकारी—सारा० ४१९। (२) (**मन**) **स्थिर या स्थित किया, (ध्यान) लगाया**। उ.—अनत नहीं चित राख्यौ—१०-१११। (३) **निश्चित या निर्धारित किया**। उ.—ताकौ नाम रुद्र बिधि राख्यौ—३-७।

राग—संज्ञा पु. [सं] (१) **चाह, कामना, प्रवृत्ति**। (२) **कष्ट, क्लेश**। (३) **प्रेम, प्रीति**। उ.—राग-द्वेष, बिधि-अबिधि, असुचि-सुचि, जिहिं प्रभु जहाँ सँभारी—१-१५७। (४) **सुगंधित लेप, अंगराग**। (५) (**विशेषतः लाल**) **रंग**। (६) **संगीत की ध्वनि**। उ.—सुमिरि सनेह कुरंग कौ, स्रवननि राच्यौ राग—१-३२५।

मुहा०—अपना राग अलापना—**दूसरों से मेल न खाने वाली अपनी ही बात कहे जाना**।

रागना, रागनो—क्रि. अ. [हिं राग] (१) **प्रेम करना**। (२) **रँग जाना**। (३) **निमग्न या लीन हो जाना**।

क्रि. स.—**गाना, अलापना**।

रागिनि, रागिनी—संज्ञा स्त्री. [सं. रागिनी] **किसी राग की पत्नी (संगीत)**। उ.—गावत मलारी सुराग रागिनी गिरिधरन लाल छबि सोहनो—२२८०।

रागी—संज्ञा पु. [सं. रागिन्] (१) **प्रेमी**। (२) **विषयासक्त**।

वि.—(१) **रँगा हुआ**। (२) **लाल, अरुण**। (३) **रँगनेवाला**। (४) **कामना या चाह रखनेवाला**। उ.—सूर सुजस-रागी न डरत मन सुनि जातना कराल—१-१८९।

संज्ञा स्त्री. [सं. राज्ञी] **राजा की पत्नी, रानी**।

राघव—संज्ञा पु. [सं] (१) **रघुवंशी**। (२) **श्रीराम**।

उ.—कुसुम-बिमान बैठी बैदेही देखी राघव पास—९-८२।

राच—क्रि. अ [हि. राचना] **रँग गयी, अनुरक्त हो गयी।** उ.—रुकमिनि पुत्री हरि रँग राच—१० उ०-७।

राचत—क्रि. अ [हि. राचना] **प्रसन्न होता है।** उ.—एक नाचत, एक राचत—२४२५।

राचना, राचनो—क्रि. स. [हि. रचना] **बनाना, रचना।**

क्रि. अ. **रचा जाना, बनना।**

क्रि. अ [स रजन] (१) **रँगा जाना।** (२) **आसक्त या अनुरक्त होना।** (३) **मग्न या लीन होना।** (४) **प्रसन्न होना।** (५) **भला जान पड़ना, शोभित होना।** (६) **सोच या चिंता में पड़ना।**

क्रि स. **आसक्त या अनुरक्त करना।**

राची—क्रि. स. [हि राचना] **बनायी, रची।** उ.—एक जीव देही द्वै राची—१६३६।

क्रि. अ.—(१) **रँग गयी, रंजित हो गयी।** उ.—(क) प्रेम मानि कछु सुधि न रही अँग रहे स्याम रँग राची। (ख) सूर प्रभु के अग राची चितै रही चित लाइ—८४८। (२) **आसक्त या अनुरक्त हो गयी।** निरखि जो जेहि अग राची तहीं रही भुलाइ—१९५४।

राचे—क्रि. अ. [हि. राचना] **रँग गये, रंजित हुए।** उ.—(क) ताही के सिधारो पिय जाके रँग राचे—२००३। (ख) अब हरि औरहि रँग राचे—३३९३।

राचै—क्रि. अ. [हि. राचना] **सोच या चिंता मे पड़े।** उ.—हानि भए कछु सोच न राचै।

राच्छसि, राच्छसी—सज्ञा स्त्री. [हि. राक्षसी] **राक्षसी।** उ.—बदन निहारि प्रान हरि लीनौ परी राच्छसी जोजन ताई—१०-५०।

राच्यो, राच्यौ—क्रि. स. [हि. रचना] **रचा, आयोजित किया।** उ.—धनि धनि सूरदास के स्वामी अद्भुत राच्यौ रास।

क्रि. अ.—(१) **आसक्त या अनुरक्त हुआ।** उ.—बिरचि मन बहुरि राच्यौ आइ। (२) **लीन या निमग्न हुआ।** उ.—वाकै रूप सकल जग राच्यौ।

राछ—सज्ञा पु. [स. रक्ष] (१) **औजार।** (२) **जलूस।**

राछस—सज्ञा पु. [स. राक्षस] **राक्षस।**

राछसि, राछसी—सज्ञा स्त्री. [हि. राक्षसी] **राक्षसी।**

राज—सज्ञा पु. [स राज्य] (१) **शासन, राज्य-प्रबंध।** उ.—ताकौ सुमिरि राज तुम करौ—१-२६१।

यौ०—राज-काज—**शासन-प्रबध।** उ—राज काज कछु मन नहि धरै। राज-पाट—(१) **राज-सिंहासन।** (२) **शासन।** उ.—राजपाट सिंहासन बैठी नील पदुम हूँ सौ कहै थोरी—१-३०३। राज-समाज—**शासन प्रबध और अधिकारी वर्ग।** उ.—गए बन कौ तजि राज समाज—५-३।

मुहा०—राज करना—**खूब सुख भोगना।** राज करै—**सदा सुख भोगे (आशीर्वाद या मगल कामना)।** उ—राज करै वै धेनु तुम्हारी—४५५। राज देना—**शासन-प्रबध सौंपना, शासनाधिकार देना।** दीन्हो राज—**शासनाधिकार सौंपा।** उ—दीन्हे मार असुर हरि ने तब देवन दीन्हो राज—सारा०। दै राज—**शासनाधिकार सौंपकर।** उ.—भरतहुँ दै पुत्रनि कौ राज—५-३। राज पर बैठना—**राज्याधिकार पाना।** राज पर बैठाना—**राज्याधिकार देना।** राज बैठारचौ **शासनाधिकार दिया।** उ.—नरहरि हिरनाकसिप जब मारचौ, अरु प्रहलाद राज बैठारचौ—८-७। राज रजना या राजना—(१) **शासन-प्रबध करना।** (२) **राजाओ जैसा सुख भोगना।** राज राजै—**राज्याधिकार प्राप्त करके सुख भोगते है**—लका राज बिभीषन राजै—१ ३६। राज रजाना—**बहुत सुख देना।**

(२) **राजा द्वारा शासित भूमि, राज्य।** उ.—जौ तोहिं नाहि बाहु-बल-पौरुष अर्ध राज देउँ लक—९-१३४। (३) **पूरा अधिकार।** (४, **अधिकार या शासन का समय।** (५) **देश, जनपद।**

सज्ञा पु. [स. राजन्] (१) **राजा।** उ.—यह कहियौ ब्रज जाइ नद सौ कस राज अति काज मँगायौ—५२२। (२) **कारीगर, थवई।**

सज्ञा पु. [फा. राज] **भेद, रहस्य।**

राजई—क्रि. अ. [हि. राजना] **शोभित होता है।** उ.—मेहरो सिर पर मुकुट लटक्यो कठ माला राजई—१० उ०-२४।

राजकन्या—सज्ञा स्त्री. [स.] **राजा की पुत्री।**

राजकर—संज्ञा पु [स.] 'कर जो राजा लेता है।

राजकीय—वि [स.] राज्य संबधी।

राजकुँअर—संज्ञा पु. [स राजकुमार] राजकुमार। उ—लख्यौ सुभद्रा इहि सन्यासी। राजकुँअर कोउ भेष उदासी—१०उ०-४३०१।

राजकुँअरि, राजकुँआरि, राजकुँआरी—संज्ञा स्त्री. [स. राजकुमारी] राजकुमारी।

राजकुमार—संज्ञा पु. [स.] राजा का पुत्र।

राजकुमारि राजकुमारी—संज्ञा स्त्री. [स राजकुमारी] राजकुमारी।

राजगढ़—संज्ञा पु. [हि. राजा+गढ] किला या गढ जिसमे राजा रहता हो। उ.—निरभय देह राजगढ ताकौ—१-४०।

राजगद्दी—संज्ञा स्त्री [हि. राजा+गद्दी] (१) राज-सिंहासन। (२) राज्याभिषेक। (३) राज्याधिकार।

राजगीर—संज्ञा पु. [स. राज+गृह] थवई, कारीगर।

राजगृह—संज्ञा पु [स.] राजमहल।

राजछत्र—संज्ञा पु [स.] राजचिह्न-रूप मे राजा पर लगाया जाने वाला छत्र या छाता। उ.—राजछत्र नाही सिर धारौ—१-२६१।

राजतंत्र—संज्ञा पु. [स.] राजा द्वारा शासन।

राजत—संज्ञा पु [स रजत] चाँदी (धातु)।

क्रि. अ. [हि. राजना] बिराजते हैं। उ.—(क) प्रगट ब्रह्म राजत द्वारावति वेद पुरान उचारेउ। (ख) मध्य गोपाल मडली राजत—४३२।

राजति—क्रि. अ. [हि. राजना] शोभित होती हैं। उ.—(क) अति बिसाल बारिज-दल लोचन राजति काजर-रेख री—१०-१३६। (ख) सूरदास जोरी अति राजति—४७३।

राजतिलक—संज्ञा पु. [हि राजा+तिलक] राज्याभिषेक। उ.—नृपति जुधिष्ठिर राजतिलक दै मारि दुष्ट की भीर—सारा ७८७।

राजत्व—संज्ञा पु. [स.] राजा का भाव, कर्म या पद।

राजदंड—संज्ञा पु. [स.] (१) राजशासन। (२) वह दड जो राजा या राज्यविधान द्वारा दिया जाय।

राजदरबार—संज्ञा पु. [हि. राज+फा. दरबार] राज्यसभा।

राजदूत—संज्ञा पु. [स.] राजा या शासन द्वारा नियुक्त किया हुआ दूत।

राजद्रोह—संज्ञा पु [स.] राजा या राज्य के प्रति किया गया विद्रोह।

राजद्रोही—वि. [हि राजद्रोह] राजद्रोह करनेवाला।

राजधर्म—संज्ञा पु. [स] राजा का धर्म या कर्तव्य। उ—(क) राजधर्म तउ भीपम गायौ—१-२६१। (ख) राजधर्म सुनि इहै सूर जिहि प्रजा न जाहिं सताए—३३६३।

राजधानी—संज्ञा स्त्री. [स.] वह प्रधान नगर जहाँ राजा रहता हो या जहाँ से शासन-प्रबध होता हो।

राजन—संज्ञा पु. [हि राजा] हे राजा (सबोधन)। उ.—राजन कहौ दूत काहू कौ कौन नृपति है मारयौ—९-९८।

क्रि. अ. [हि. राजना] राज करने (लगे)।

प्र०—लागे राजन—राज्य करने लगे। उ—सूर-दास श्रीपति की महिमा मथुरा लागे राजन—२८१७।

राजना—क्रि. अ. [स. राजन=शोभित होना] (१) बिराजना। (२) सोहना, शोभित होना।

राजनीति—संज्ञा स्त्री. [स] (१) वह नीति जिससे राज्य की सुरक्षा हो और शासन दृढ बना रहे। उ.—(क) राजनीति जानौ नही, गो-सुत चरवारे—१-२३८। (ख) सडामर्क रहे पचि हारि। राजनीति कहि बार-बार—७-२। (ग) हरि है राजनीति पढि आए—३३६३।

राजनीतिक—वि. [स.] राजनीति-सबधी।

राजनो—क्रि. अ [स. राजन] (१) बिराजना। (२) सोहना, शोभित होना।

राजन्य—संज्ञा पु. [स.] (१) क्षत्रिय। (२) राजा।

राजपंथ, राजपथ—संज्ञा पु. [स. राजपथ] खूब चौड़ा मार्ग, राजमार्ग। उ.—(क) सुनु ऊधौ निर्गुन कटक ते राजपथ क्यौ रूँधौ। (ख) राजपथ तै टारि बतावत उज्ज्वल कुचल कुपैडो—३३१३।

राजपुत्र—संज्ञा पु. [स] राजकुमार।

राजपुत्री—संज्ञा स्त्री. [स.] राजकुमारी।

राजपुरुष—सज्ञा पु [स.] राजकर्मचारी ।
राजपूत—सज्ञा पु. [स राजपूत] (१) राजकुमार । (२) क्षत्रियों के वश-विशेष ।
राज-प्रासाद—सज्ञा पु. [स] राजमहल ।
राजभंडार—सज्ञा पु. [स राजभाडार] राजकोष ।
राजभक्त—वि. [स.] राजा या राज्य के प्रति भक्ति या सम्मान-भाव रखनेवाला ।
राजभक्ति—सज्ञा स्त्री. [स] राजा या राज्य के प्रति सम्मान-भाव या भक्ति रखनेवाला ।
राजभवन—सज्ञा पु. [स.] राजमहल, राजप्रासाद ।
राजभाषा—सज्ञा स्त्री. [स.] वह भाषा जिसमें किसी राज्य का राज-कार्य होता हो ।
राजभोग—सज्ञा पु. [स] (१) एक तरह का धान । (२) राज्य-सुख । (३) देवताओं का प्रातःकालीन भोग ।
राजमहल—सज्ञा पु. [हि. राजा + अ महल] राजप्रासाद ।
राजमहिषी—सज्ञा स्त्री. [स.] पटरानी ।
राजमाता—सज्ञा स्त्री [स.] राजा की माता ।
राजमारग, राजमार्ग—सज्ञा पु. [स. राजमार्ग] खूब चौड़ा मार्ग, राजपथ । उ.—छाँडि राजमारग यह लीला कैसे चलहि कुपैंडे—३१६९ ।
राजमुनि—सज्ञा पु [स] राजर्षि । उ - महाराज रिषिराज राजमुनि देखत रहे लजाई - १-४० ।
राजयोग—सज्ञा पु. [स.] (१) अष्टाग योग जिसमे क्रमशः यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि का अभ्यास किया जाता है । (२) ग्रहों का ऐसा योग जिससे मनुष्य राजसी सुख भोग सके ।
राजरवनि, राजरवनी—सज्ञा स्त्री. [स. राजा + रमणी] राजा की स्त्री । उ.--(क) राजरवनि सुमिरे पति-कारन, असुर-बंदि तै दिए छुडाई—१-२४ । (ख) भूप अनेक बदि तै छोरे राज-रवनि जस अति बिस्तारौ —१-१७२ ।
राजराज—सज्ञा पु. [स.] (१) राजाओं का राजा, राजाधिराज । (२) कुबेर । (३) चंद्रमा ।
राजराजेश, राजराजेश्वर—सज्ञा पु. [स.] राजाओ का राजा, राजाधिराज ।

राजराजेश्वरी—सज्ञा स्त्री. [स.] महारानी ।
राजरोग—सज्ञा पु [हि राजा + रोग] (१) असाध्य रोग । उ.—जाकौ राजरोग कफ बाढत दह्यौ खवावत ताहि—३१४५ । (२) क्षय रोग ।
राजर्षि—सज्ञा पु. [स] वह ऋषि जो राजवश या क्षत्रिय कुल का हो ।
राजलक्ष्मी—सज्ञा स्त्री. [स.] राजवैभव, राज्यश्री ।
राजवंश—सज्ञा पु. [स.] राजा का कुल ।
राजवी—सज्ञा पु [स. राजा] राजा ।
राजश्री—सज्ञा स्त्री [स. राज्यश्री] राजवैभव, राज्यलक्ष्मी ।
राजस—वि. [स.] रजोगुण से उत्पन्न ।
सज्ञा पु —(१) राज्याभिमान, राज-मद । उ.—इहि राजस को को न बिगोयौ । हिरनकसिपु हिरनाच्छ आदि दै रावन कुभकरन कुल खोयौ—१-५४ । (२) क्रोध, आवेश ।
वि. [स राजा] राजा या राज्य-सबधी । उ.—राजस रीति सुरन कहि भाषी—२४५९ ।
राजसत्ता—सज्ञा स्त्री [स.] राजशक्ति ।
राजसभा—सज्ञा स्त्री. [स.] राजा का दरबार ।
राजसमाज—सज्ञा पु. [स.] राजाओ का दरबार या मंडल ।
राजसिंहासन—सज्ञा पु [स] राजगद्दी ।
राजसिक—वि. [स. राजस] रजोगुणी ।
वि. [हि राजसी] राजाओं-जैसा ।
राजसिरी—सज्ञा स्त्री [स. राज्यश्री] राजलक्ष्मी ।
राजसी—वि. [हि राजा] राजा के योग्य शान, ठाट-बाट या तडक-भडक वाला ।
वि. स्त्री. [स] रजोगुण की प्रधानतावाली ।
राजसू, राजसूय—सज्ञा पु. [स.] एक यज्ञ । उ.—बडो जग्य राजसू रचायौ—सारा. ७३१ ।
राजस्व—सज्ञा पु. [स.] राजकर, राजधन ।
राजहंस—सज्ञा पु. [स] एक तरह का हंस ।
राजही—क्रि. अ. [हि. राजना] सोहते है, सुशोभित है । उ —हरि-नख उर अति राजही—१०-११६ ।
राजा—सज्ञा पु. [स राजन्] (१) नृप, भूप । उ.—जिनकौ मुख देखत दुख उपजत तिनकौ राजा-राय

कहै—१-५३। (२) स्वामी, अधिपति। (३) बालकों के लिए प्रेम और दुलार का संबोधन। उ—सो राजा जो अगमन पहुँचै, सूर सु भवन उताल —१०-२२३।

राजाज्ञा—संज्ञा स्त्री. [स.] राजा की आज्ञा।

राजाधिराज—संज्ञा पु. [स.] राजाओं का राजा।

राजि—संज्ञा स्त्री. [स.] (१) कतार, अवली। (२) रेखा।

राजित—वि. [स.] (१) शोभित। (२) बिराजमान।

राजिव—संज्ञा पु. [स. राजीव] कमल।

राजिववर—संज्ञा पु. [स राजीव+वर] श्रेष्ठ कमल। उ.—सुनि मधुकरि भ्रम तजि कुमुदनि कौ, राजिववर की आस—१-३३९।

राजी—संज्ञा स्त्री. [स.] (१) पंक्ति, श्रेणी। उ—राजति रोम-राजी रेख—६३५।

वि. [अ. राजी] (१) कोई बात मानने को प्रस्तुत, सहमत। (२) हर्षित, प्रसन्न (३) सुखी।

यौ०—राजी-खुशी—सकुशल और सानंद।

संज्ञा स्त्री. सहमति, अनुकूलता।

राजीव—संज्ञा पु. [स.] (१) कमल। उ—मैं जु रह्यौ राजीव-नैन दुरि, पाप-पहार दरी—१-१३०। (२) नील कमल।

राजु—संज्ञा पु. [हि. राज] अधीनस्थ प्रदेश, राज्य। उ—तज्यौ कंस कौ राजु—८०८।

राजेश्वर—संज्ञा पु [स] राजाओं का राजा।

राजै—क्रि अ. [हिं राजा] (१) राज्य करते है।

मुहा०—राज राजै—राज्य का सुख भोगते हैं। उ—लंका राज बिभीषन राजै—१-३६।

(२) सुशोभित है। उ—पानि पदुम आयुध राजै—१-६९।

राज्ञी—संज्ञा स्त्री [स] रानी, राजमहिषी।

राज्य—संज्ञा पु [स.] (१) शासन। उ.—राज्य बिभीषन दैहौ—९-११३। (२) राजा द्वारा शासित प्रदेश।

राज्यश्री—संज्ञा स्त्री. [स] राज्य की शोभा और वैभव।

राज्याभिषेक—संज्ञा पु. [स.] नये राजा का अभिषेक।

राज्यारोहण—संज्ञा पु. [स.] राजा का प्रथम बार सिंहासनासीन होकर राज्याधिकार प्राप्त करना।

राट—संज्ञा पु. [स. राट्] (१) राजा। (२) श्रेष्ठ व्यक्ति। (३) किसी कौशल में बढ़ा-चढ़ा व्यक्ति।

राठ—संज्ञा पु [स. राष्ट्र] (१) राज्य। (२) राजा।

राठवर, राठौर—संज्ञा पु. [स. राष्ट्रकूट, हि. राठौर] दक्षिण भारत का एक राजवंश।

राड़—वि. [देश.] (१) निकम्मा। (२) कायर।

राढ़—वि. [हि. राड] (१) निकम्मा। (२) कायर।

संज्ञा स्त्री. [स. राटि] रार, झगड़ा।

राढ़ि—संज्ञा पु. [स.] बंग देश का उत्तरी प्रदेश।

राणा—संज्ञा पु. [स. राट्] (१) राजा। (२) उदयपुर के शासकों की उपाधि।

रात—संज्ञा स्त्री. [स. रात्रि] रात्रि, रजनी। उ.—अँधियारी भादौं की रात—१०-१२।

मुहा०—रात-दिन—सदा, सर्वदा। उ.—यह ब्यौहार लिखाय रात-दिन पुनि जीतौ पुनि मरतौ—१-२०३।

वि. [हिं. राता] लाल, अरुण।

रातड़ी, रातरी—संज्ञा स्त्री [स रात्रि] रात, रजनी।

रातना, रातनो—क्रि. अ [स. रक्त, प्रा. रत्त+हि ना] (१) रंग से लाल हो जाना। (२) रँग जाना। (३) आसक्त या अनुरक्त होना।

राता—वि [स. रक्त, प्रा० रत्त] (१) लाल, अरुण। (२) रँगा हुआ। (३) आसक्त, अनुरक्त।

क्रि अ [हि रातना] आसक्त या अनुरक्त हुआ या है। उ—ज्यों चकोर ससि राता—९-४९।

राति—संज्ञा स्त्री. [स रात्रि] रात, रात्रि। उ—तनक-तनक पग चलिहौ कैसै, आवत ह्वैहै राति—४११।

रातिचर—संज्ञा पु. [हि. रात+स चर] राक्षस।

रातिब—संज्ञा पु. [अ.] पशु का दैनिक आहार।

राती—संज्ञा स्त्री. [हि. रात] रात, रात्रि। उ.—निमिष निमिष मो बिसरत नाही सरद सुहाई राती २९८१।

मुहा०—दिन-राती—सदा, सर्वदा। उ—दिन-राती पोषत रह्यौ, जैसै चोली पान—१-३२५।

वि. [हि. राता] लाल रंग की। उ.—(क) पहिरे राती चूनरी—१-८८ (ख) धौरी धूमरि राती

रौछी बोल बुलाइ चिन्हौरी—५४५। (ग) अँगिया नील माँडनी राती—पृ० ३४५ (३८)।

क्रि. अ [हि. रातना] (१) रँग गयी। उ.—कुबिजा भई स्याम रँग-राती—१-६३। (२) अनुरक्त या आसक्त हो गयी।

रातुल—वि. [स. रक्तालु, प्रा० रत्तालु] लाल रंग का। उ —उर मोतिनि की माला री पहिरे, रातुल चीर, वारे कन्हैया।

राते, रात—वि. [हि. राता] लाल रंग का। उ.—(क) चोली चतुरानन ठग्यौ, अमर उपरना राते (हो)—१-४४। (ख) वै जो देखत राते राते फूलन फूले डार—२७९८। (ग) सूरदास स्याम रँग राचे, फिर न चढै रँग रातै—३०२४।

रातौ—वि. [हि. रातौ] लाल (रग का)। उ.—(क) सेत हरी रातौ अरु पियरौ रग लेत है धोई—१-६३। (ख) सुन्दर रूप रतालू रातौ—२३२१।

क्रि. अ [हि. रातना] रँग गया। उ —हरि-पद पकज पियौ प्रेम-रस ताही कै रँग रातौ—१-४०।

रात्र, रात्रि—सज्ञा स्त्री. [स. रात्रि] रात, निशा।

मुहा०—दिन-रात्र (रात्रि)—सदा, सर्वदा। उ.—छल-बल करि जित तित हरि पर-धन धायौ सब दिन रात्र—१-२१६।

रात्रिचर, रात्रिचारी—वि. [स.] रात मे विचरने वाला।

सज्ञा पु.—राक्षस, निशाचर।

रात्री—सज्ञा स्त्री. [स. रात्रि] रात, निशा।

राधन—सज्ञा पु. [स.] (१) साधना। (२) साधन।

सज्ञा स्त्री. [स. आराधना] पूजा, आराधना। उ.—कर्म धर्म तीरथ बिनु राधन ह्वै गए सकल अकाथ—१-२०८।

राधना, राधनो—क्रि. स. [स. आराधना] (१) पूजा या आराधना करना। (२) पूर्ण या सिद्ध करना। (३) काम निकालना।

राधा—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) प्रीति। (२) वृषभानु गोप की पुत्री जो श्रीकृष्ण के प्रति अनन्य प्रेम-भाव रखती थी।

राधाकांत—सज्ञा पु. [स.] श्रीकृष्ण।

राधाकुंड—सज्ञा पु. [स.] गोवर्द्धन के निकट एक सरोवर।

राधारमण, राधारमन, राधारवन—सज्ञा पु [स. राधा + रमण] श्रीकृष्ण। उ.—तिहूँ भुवन भरि नाद समानो राधारवन बजाई—पृ० ३४७ (५३)।

राधावल्लभ—सज्ञा पु. [स] श्रीकृष्ण।

राधावल्लभी—वि. [स.] श्रीकृष्ण या विष्णु से संबधित।

सज्ञा पु —वैष्णवो का एक प्रसिद्ध संप्रदाय।

राधाष्टमी—सज्ञा स्त्री. [स.] भादों सुदी अष्टमी जिस दिन राधा का जन्म हुआ माना जाता है।

राधिका—सज्ञा स्त्री [स] वृषभानु गोप की कन्या राधा जो श्रीकृष्ण की प्रेयसी थी।

राध्य—वि. [स.] आराध्य।

रान—सज्ञा स्त्री. [फा.] जाँध, जघा।

राना—सज्ञा पु [हि राणा] राणा।

क्रि अ. [स. राग] अनुरक्त होना।

रानी—सज्ञा स्त्री. [स राज्ञी, प्रा० राणी] (१) राजा की पत्नी। उ.—करुना करति मदोदरि रानी—९-१६०। (२) स्वामिनी। (३) 'स्त्री' के लिए आदर सूचक शब्द।

रानीकाजर—सज्ञा पु [हि. रानी + काजल] धान-विशेष।

रानो—क्रि. अ. [स. राग] अनुरक्त होना।

रानौ, रान्यौ—सज्ञा पु. [हि. राणा, राना] (१) राजा। उ.—(क) जाति गोत कुल नाम गनत नहि रक होय कै रानौ—१-११। (ख) जतन जतन करि माया जोरी, लै गयौ रक न रानौ—१-३२९। (ग) की मारि डारियो दुहुँनि को होइ सो होइ यह कहत रान्यौ—२६०२। (२) महाराज, परम प्रभु। उ.—भज्यौ न श्रीपति रानौ—१-४७।

रापरंगाल—सज्ञा पु [स.] एक प्रकार का नृत्य।

रापी—सज्ञा स्त्री. [हि. राँपी] चमड़ा साफ करने और काटने का औजार।

राब—सज्ञा स्त्री. [स. द्रावक] औटाकर गाढ़ा किया हुआ गन्ने का रस।

राबड़ी—सज्ञा स्त्री [हि. राब+ड़ी] रबड़ी, बसौंधी।

राम—सज्ञा पु. [स.] (१) परशुराम। (२) बलराम।

(३) दशरथ के बड़े पुत्र श्रीरामचद्र जो दस अवतारों मे एक माने जाते हं।

मुहा०—राम शरण होना—(१) सन्यासी हो जाना। (२) मर जाना। राम जाने—(१) मुझे नही मालूम। (२) भगवान को साक्षी करके। राम राम करना—(१) प्रणाम करना। (२) भगवान को जपना। राम राम करके—बड़ी कठिनता से। राम राम होना—भेंट या मुलाकात होना। राम राम हो जाना—मर जाना। राम राम है—बिदा-सूचक प्रणाम। उ.—सुनहु सूरज प्रभु अबकै मनाइ ल्याउँ बहुरि रुठायही जू तौ मेरी राम राम है जू—२२५१।

(४) ईश्वर, भगवान। उ.—(क) कहत हे आगे जपिहैं राम—१-५७। (ख) पढौ भाइ राम-मुकुद मुरारि—७-४।

रामकली—सज्ञा स्त्री. [स.] एक रागिनी।

रामचंद्र—सज्ञा पु. [स.] दशरथ के बड़े पुत्र जो कौशल्या के गर्भ से जन्मे थे।

रामजनी—सज्ञा स्त्री. [हि. राम+जनना] (१) वेश्या। (२) कन्या जिसके पिता का पता न हो।

रामटोड़ी—सज्ञा स्त्री. [स.] एक संकर रागिनी।

रामतरोई—सज्ञा स्त्री. [हि. राम+तुरई, तरोई] एक तरकारी। उ.—खीरा रामतरोई तामे—२३२१।

रामता—सज्ञा स्त्री. [स.] राम का गुण या भाव।

रामतारक सज्ञा पु. [स.] एक मत्र--रा रामाय नम।

रामति—सज्ञा स्त्री. [हिं. रमना] (भिखारी की) फेरी।

रामत्व—सज्ञा पु [स] राम का गुण या भाव।

रामदल—सज्ञा पु. [स.] (१) राम की बानरी सेना। (२) प्रबल सेना।

रामदाना—सज्ञा पु [स. राम+हिं. दाना] एक तरह का दाना जिसकी गिनती 'फलाहार' में की जाती है।

रामदास—सज्ञा पु. [स.] (१) हनुमान। (२) शिवा जी के गुरु जो 'समर्थ' रामदास कहलाते हैं।

रामदूत—सज्ञा पु. [स.] हनुमान।

रामधाम—सज्ञा पु. [स.] साकेत लोक जो भगवान राम का नित्यलोक माना जाता है।

रामधुन—सज्ञा स्त्री [स. राम+हि धुन] राम-नाम जपने, भजने या कीर्तन करने की किया या भाव।

रामनवमी—सज्ञा स्त्री. [स.] चैत्र सुदी नवमी जिस दिन श्रीराम का जन्म हुआ था।

रामना—क्रि. अ [स. रमण] घूमना-फिरना।

रामनामी—सज्ञा पु. [हि. राम+नाम] (१) दुपट्टा जिस पर सारे में 'राम-राम' छपा हो। (२) गले का हार-विशेष जिसके बीच के टिकडे पर 'राम' अकित हो।

रामनो—क्रि. अ. [स. रमण] घूमना-फिरना।

रामनौमी—सज्ञा स्त्री. [स. रामनवमी] चैत्र सुदी नवमी जिस दिन श्रीराम का जन्म हुआ था।

रामपुर—सज्ञा पु. [स.] (१) अयोध्या। (२) बैकुंठ।

रामफटाका—सज्ञा पु. [स. राम+हिं. फटाका] रामानुज के अनुयायियो का लबा तिलक।

राममंत्र—सज्ञा पु. [स.] एक मत्र—रा रामाय नम।

रामरज—सज्ञा स्त्री. [स] एक तरह की पीली मिट्टी।

रामरस—सज्ञा पु. [हि. राम+रस] नमक।

रामराज्य—सज्ञा पु. [स.] (१) श्रीरामचद्र का सुखद शासन। (२) शासन जिसमें प्रजा सब तरह सुखी रहे।

रामरौला—सज्ञा पु. [स. राम+हि. रौला] व्यर्थ का कोलाहल।

रामलीला—सज्ञा स्त्री. [स.] राम-चरित्र का अभिनय।

रामवाण—वि. [स.] अचूक (औषध)।

रामशर—सज्ञा पु. [स.] एक तरह का सरकडा।

रामश्री—सज्ञा पु. [स.] एक राग।

रामा—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) लक्ष्मी। (२) राधा। (३) सीता।

रामानंद—सज्ञा पु. [स.] एक वैष्णवाचार्य जो 'रामावत' संप्रदाय के प्रवर्तक थे।

रामानंदी—सज्ञा पु [हिं. रामानद] रामानंद के 'रामावत' सप्रदाय का अनुयायी।

रामानुज—सज्ञा पु. [स.] (१) राम का छोटा भाई। (२) एक प्रसिद्ध वैष्णवाचार्य जो 'वैष्णव' संप्रदाय के प्रवर्तक थे।

रामायण—सज्ञा पु. [स.] (१) ग्रथ जिसमे राम-कथा वर्णित हो। (२) वाल्मीकि-कृत रामायण। (३) गो० तुलसीदास-कृत रामायण।

रामायणी—वि. [स. रामायणीय] रामायण-सबधी।

सज्ञा पु —रामायण का पडित।

रामायन—सज्ञा पु. [स. रामायण] रामायण।

रामायुध—सज्ञा पु [स.] धनुष।

रामावत—सज्ञा पु [स.] रामानद का संप्रदाय।

रामेश्वर—सज्ञा पु. [स.] वह शिवलिंग जो श्रीराम द्वारा लंका के लिए पुल बाँधने के पूर्व स्थापित किया गया कहा जाता है। यह भारत के चार मुख्य तीर्थो में एक है जो दक्षिण में समुद्रतट पर है।

राय—सज्ञा पु. [स. राजा, प्रा० राया] (१) राजा। (२) सामत। (३) सम्मान की एक उपाधि। (४) भाट, बदीजन। (५) एक लता।

सज्ञा स्त्री. [फा.] सम्मति, मत।

रायता—सज्ञा पु [स. राजिकाक्त] उबाले हुआ कुम्हड़े, लौकी, बूँदी आदि को पतले दही में मसाला डालकर बनाया गया खाद्य। उ.—पानौरा रायता पकौरी डभकौरी मुँगछी सुठि सौरी—३९६।

रायबेल—सज्ञा स्त्री. [हि. राय+बेल] एक लता।

रायभोग—सज्ञा पु. [स. राजभोग] धान-विशेष।

रायमुनिया, रायमुनी—सज्ञा स्त्री. [हि. राय+मुनिया] 'लाल' पक्षी की मादा।

रायमुनयनि—सज्ञा स्त्री. बहु. [हि रायमुनियाँ] अनेक रायमुनिया पक्षी। उ.—मनु रायमुनैयनि पाँति पिजरा तोरि चली—१०-२४।

रायरासि—सज्ञा स्त्री [स. राज+राशि] राजकोष।

रायसा—सज्ञा पु [हि. रासो] काव्य जिसमें राजा-विशेष का जीवन-चरित्र हो।

राया—सज्ञा पु. [स. राजा] राजा।

रार, रारि, रारी—सज्ञा स्त्री. [स राटि, प्रा राडि] (१) लड़ाई-झगड़ा, टटा। उ.—(क) कृपा करि रारि डारी मिटाई—८-९। (ख) उनकौ मारि तुरत मै कीन्हौ मेघनाद सौ रार—९-१०४। (ग) ऐसी कैसे हरि करै कतहि बढावति रारी—१०६१। (२) हठ, जिद। उ.—जागत ही उठि रारि करत है—१०-२३१।

रारिया, रारी—वि. [हि रार] झगड़ा करनेवाला।

राल—सज्ञा स्त्री. [स.] एक पेड़ का चिपचिपा रस।

सज्ञा स्त्री. [स. लाला] पतला लसदार थूक जो कुछ बच्चो और बूढ़ो के मुख से कभी-कभी बहने लगता है।

मुहा०—राल गिरना, चूना, टपकना या बहना—किसी पदार्थ को देखकर उसे पाने की बहुत इच्छा होना।

राव—सज्ञा पु. [स. राजा, प्रा. राया] (१) राजा। उ.—राव-रक हरि गनत न दोइ—१-५। (२) सरदार सामत। (३) धनी। (४) भाट, बदीजन।

सज्ञा पु [स. रव] ध्वनि, शब्द।

राव-चाव—सज्ञा पु. [हि. राव+चाव] लाड-प्यार।

रावट—सज्ञा पु. [हि. रावल] राजमहल।

रावटी—सज्ञा स्त्री. [हि. रावट] (१) छोलदारी। (२) छोटा घर। (३) बारहदरी।

रावण—वि. [स.] दूसरों को रुलानेवाला।

सज्ञा पु —लका का प्रसिद्ध राजा जिसके पिता का नाम विश्रवा और माता का कैकसी था। सीता-हरण का अपराध करने पर श्रीराम ने इसे मारा था।

रावणारि—सज्ञा पु. [स.] श्रीरामचद्र।

रावणि—सज्ञा पु. [स.] रावण का पुत्र मेघनाद।

रावत—सज्ञा पु. [स. राजपुत्र, प्रा. राय+हि. उत] (१) सामत, सरदार। (२) शूर-वीर। (३) छोटा राजा।

रावन—सज्ञा पु. [स. रावण] लका का राजा रावण। उ—राजा कौन बडौ रावन तै गर्बहि गर्ब गरै—१-३५।

रावनगढ़—सज्ञा पु. [स. रावण+गढ] लका।

रावना—सज्ञा पु. [स. रावण] रावण।

रावना, रावनो—क्रि. स. [स. रावण] रुलाना।

रावर, रावरा—सज्ञा पु. [स. राजपुर+प्रा० राय+उर] रनिवास।

वि. [हि. राउ+का (विभक्ति)] आपका।

रावरी—वि. [हि रावर] आपकी। उ.—(क) टेक परिहै जानि सब रावरी—५५१। (ख) सूरदास प्रभु आनि मिलावहु, ऊधौ, कीरति होइ रावरी—३४३२।

रावरीय—वि. [हिं. रावर] आपकी ही। उ.—सूर स्याम प्यारी अति राजति रावरीय दुहाई—२२३९।

रावरे—वि [हि. रावर] आप ही, (आपको ही)। उ.—पाँच पति हित हारि बैठे, रावरे हित मोर—७९२।

रावरो, रावरौ—वि. [हि. रावर] आपका। उ.—मानहिगी उपकार रावरौ करौ कृपा बलवीर—७९२।

रावल—सज्ञा पु. [स. राजपुर, हि. राउर] रनिवास। सज्ञा पु. [पा० राजुल] (१) राजा। (२) कुछ राजाओ की उपाधि। (३) सरदार, सामंत। (४) एक अादरसूचक संबोधन। (५) मथुरा का निकटवर्ती एक गाँव जहाँ राधा का जन्म होना कहा जाता है।

राशि, राशी—सज्ञा स्त्री. [स. राशि] (१) समूह, ढेर, पुज। (२) पृथ्वी जिस मार्ग से होकर सूर्य की परिक्रमा करती है, उस पर पड़ने वाले तारे-समूह जो बारह हैं—मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धन, मकर, कुभ और मीन।

मुहा०—राशि आना—अनुकूल होना। राशि मिलना—मेल मिलना।

राष्ट्र—सज्ञा पु [स.] (१) राज्य। (२) देश।

राष्ट्रिय, राष्ट्रीय—वि. [स. राष्ट्रिय] राष्ट्र-संबंधी।

रास—सज्ञा पु. [स.] (१) कोलाहल। (२) वह मडलाकार नृत्य जिसका आरंभ श्रीकृष्ण द्वारा शरद् पूर्णिमा की रात्रि को किये गये उनके नृत्य से माना जाता है। उ.—(क) सो गोपिनि सँग रास रमावै—१०-३। (ख) गोप नारी सग मोहन कियौ रास बनाइ—४९८। (३) नाटक-विशेष जिसमें श्रीकृष्ण की रासलीला का अभिनय किया जाय।

सज्ञा स्त्री. [अ.] घोड़े की लगाम।

मुहा०—रास कडी करना या रखना—अधिकार या अकुश को कड़ा रखना। रास मे लाना—अधिकार या अकुश में लाना।

सज्ञा स्त्री. [स. राशि] (१) ढेर, समूह, पुज। उ.—(क) जहँ बिधु-भानु समान एक रस सो बारिज सुख-रास—१-३३९। (ख) बरनौ कहा अग अँग-सोभा भरी भाव जल-रास री—१०-१३९। (२) राशि (ज्योतिष)। (३) जोड। (४) धान-विशेष।

रासक—सज्ञा पु [स] हास्य-प्रधान एकाकी नाटक-विशेष।

रासधारी—सज्ञा पु. [स रासधारिन्] रासलीला का अभिनेता।

रासभ—सज्ञा पु [स] (१) गदहा, गर्दभ। उ.—गैवर मेटि चढावत रासभ प्रभुता मेटि करत हिनती—१२२८। (२) एक दैत्य जिसे बलराम ने मारा था।

रासमंडल—सज्ञा पु. [स.] (१) रास-क्रीड़ा का स्थान। (२) रासलीला में श्रीकृष्ण और राधा के साथ भाग लेनेवाली गोपियो का समूह, रासलीला करनेवालो की मडली। उ.—रास-मडल बने स्याम स्यामा।

रासमंडली सज्ञा स्त्री. [स.] रासधारियो की टोली।

रासलीला—सज्ञा स्त्री [स.] (१) मडलाकार नृत्य जो शरत पूर्णिमा की रात्रि को श्रीकृष्ण ने किया था। (२) रासधारियों द्वारा उक्त लीला-नृत्य का अभिनय।

रास-विलास—सज्ञा पु [स.] (१) रास-क्रीड़ा। (२) आनद-मगल।

रासविहारी—सज्ञा पु. [स.] श्रीकृष्ण।

रासि, रासी—सज्ञा स्त्री. [स. राशि] (१) समूह, पुज, ढेर। उ.—(क) कचन-रासि गँवाई—१-३२८। (ख) सूरदास सुख की रासि कापै कहि आवै—१०-२०१। (ग) सूरदास प्रभु आनद रासी—५८९। (घ) मुरली अधर सकल अँग सुन्दर रूप-सिधु की रासी—३१०८। (२) पृथ्वी द्वारा सूर्य की परिक्रमा के मार्ग मे पड़नेवाले तारक-समूह। उ.—(क) चौथै सिह रासि के दिनकर जीति सकल महि लैहैं—१०-८६। (ख) रासि सोधि इक सुदिन धरचौ—१०-८८।

रासु—वि [फा रास्त] (१) सरल। (२) ठीक।

सज्ञा पु [स. रास] रास (लीला)।

रासेश्वरी—सज्ञा स्त्री. [स] राधा।

रासो—सज्ञा पु. [स. रहस्य] राजा-विशेष की युद्धवीरता आदि को लेकर लिखा गया पद्यमय जीवन-चरित्र।

रास्त—वि. [फा.] (१) सीधा। (२) उचित।

रास्ता—सज्ञा पु. [फा.] (१) राह, मार्ग, पथ।

मुहा०—रास्ता काटना—(१) चलनेवाले के सामने से होकर निकल जाना। (२) यात्रा में समय

बिताना। रास्ता देखना—प्रतीक्षा करना। रास्ता पकडना—चल देना। रास्ता बताना—टालना, हटाना। रास्ते पर लाना—सीधे ढग पर लाना।

( ) रीति, चाल। (३) तरकीब, उपाय।

मुहा०—रास्ता बताना–तरकीब या उपाय बताना।

राह—सज्ञा पु. [स राहु] राहु (ग्रह)।

सज्ञा पु. [फा] (१) मार्ग, पथ। उ.—(क) चलहु न तुम क्यौ सूधै राह—५-४। (ख) काहे को भरि भरि ढारति हौ इन नैन राह के नीर —२६८६।

मुहा०—राह गहना - मार्ग-विशेष पर चलना। राह मन गहियौ—राह-विशेष पर ही चलने का मन में निश्चय किया। उ —ये सब बचन सुने मनमोहन वहै राह मन गहियौ—१०-३१३। राह ताकना या देखना – प्रतीक्षा करना। राह पडना - डाका या लूट पड़ना। राह लगना—(१) ठीक रास्ते पर आ जाना। (२) अपने काम से काम रखना। राह बताना—टालना, हटाना। राह पर लगाना या लाना —ठीक मार्ग बताना।

(२) प्रथा, रीति, चाल। उ.—(क) हमहि छाँडि कुबिजा मन बाँध्यौ कौन बेद की राह—२७६८। (ख) हमहि छाँडि कुबिजहि मन दीनो मेटि बेद की राह—३३९७। (३) तरकीब, उपाय।

सज्ञा पु. [हिं. रोहू] रोहू मछली।

राहगीर—सज्ञा पु. [फा.] बटोही, पथिक।

राहचलता—वि. [फा. राह + हि. चलना] पथिक।

राहचौरंगी—संज्ञा पु. [फा. राह + हि. चौरगी] चौराहा।

राहजनी—सज्ञा स्त्री. [फा. राहजनी] लूट, डकैती।

राहत—सज्ञा स्त्री. [अ.] सुख, चैन, आराम।

क्रि. अ. [हि. रहना] रहता है।

राहना, राहनो—क्रि. अ. [हिं. रहना] रहना।

राही—सज्ञा पु. [फा.] पथिक, बटोही।

राहु—सज्ञा पु. [स.] नौ ग्रहों में एक जिसके पिता का नाम विप्रचित्ति और माता का सिंहिका था। सागर-मंथन के समय जब वह चोरी से अमृत पीने लगा था तब सूर्य और चद्र के सकेत से विष्णु ने उसका सिर काट दिया था। परंतु अमृत के प्रभाव से वह मरा नही। तभी से उसका सिर 'राहु' और कबध 'केतु'-रूप में जीवित है। उसी के ग्रसने पर सूर्य और चद्र-ग्रहण होता है। उ —(क) कहँ वह राहु कहाँ वै रवि-ससि आनि सँजोग परै—१-२६४। (ख) राहु ससि-सूर के बीच मै बैठि कै, मोहिनी सौ अमृत माँगि लीन्हृचौ—८-८। (ग) ऊँच-नीच जुवती बहु करिहैं सतऐं राहु परे है—१०-८६।

राहै—सज्ञा पु सवि. [स. राहु] राहु ने, राहु द्वारा। उ - बिलपति अति पछिताति मनहि मन चद्र गहे जनु राहै—२८०१।

रिगए, रिगन—सज्ञा पु. स्त्री [स. रिगण] (१) रेंगना, घुटनो के बल चलना। उ.—फिरि हरि आय जसोदा के गृह रिगन लीला करिहै—सारा. ५७१। (२) सर-कना, फिसलना। (३) डिगना, विचलित होना।

रिंगना, रिगनो—क्रि. अ. [हि. रेगना] (१) रेंगना। (२) धीरे धीरे चलना। (३) घूमना-फिरना।

रिगाइ, रिगाई—क्रि. स. [हिं. रिंगाना] (बहुत समय तक) खूब घुमा फिराकर। उ.--सूर स्याम मेरौ अति बालक मारत ताहि रिगाई—५१०।

रिगाना, रिंगानो—क्रि स. [स. रिगण] (१) रेंगने को प्रवृत्त करना। (२) धीरे धीरे चलाना। (३) बहुत समय तक घुमाना-फिराना।

रिगावत—क्रि स. [हि. रिगाना] रेंगने-जैसा धीरे-धीरे चलाते हे। उ.– कबहुँ कान्ह-कर छाँडि नद पग द्वैक रिगावत—१०-१२२।

रिगावै—क्रि स. [हि. रिगाना] धीरे धीरे चलाती है। उ.—कबहुँक पल्लव पानि गहावै, आँगन माँझ रिंगावै —१०-१३०।

रिग्यो, रिग्यौ—क्रि. अ. [हि. रिगना] रेंग कर आया। उ.—मनहुँ बिबर ते उरग रिग्यौ तकि गिरि के सधि थली—२०७१।

रिंद—वि [फा.] (१) उदार। (२) मनमौजी।

रिआयत—सज्ञा स्त्री. [अ.] (१) कृपा। (२) छूट।

रिआया—सज्ञा स्त्री. [अ.] प्रजा।

रिक्त—वि. [स.] (१) खाली, शून्य। (२) निर्धन।

रिक्तता—सज्ञा स्त्री. [स] **रिक्त होने का भाव।**

रिखभ—सज्ञा पु [स ऋषभ] **बैल।**

रिचा—सज्ञा स्त्री [स. ऋचा] **ऋचा।**

रिच्छ, रिछ—सज्ञा पु [स. ऋक्ष] **भालू।**

रिछराज, रिछराजा—सज्ञा पु [स. ऋक्षराज] **जाबवान।** उ.—ताको मारि सिह मीन लै गयौ, सिह हत्यो रिछराजा—१० उ०-२६।

रिजाली—सज्ञा स्त्री. [फा. रजील=नीच] **निर्लज्जता।**

रिजु—वि. [स. ऋजु] (१) **सीधा।** (२) **सुगम।** (३) **सज्जन।** (४) **प्रसन्न।** (५) **ईमानदार।**

रिझई—क्रि. स [हि. रिझाना] **रिझा ली।** उ.—(क) सूर स्याम ऐसे मोहि रिझई—१२०९। (ख) मिटचो काम तनु ताम रिझई मदन गोपाल—२१५१।

रिझए—क्रि. स. [हि. रिझाना] **रिझा लिये, प्रसन्न या अनुकूल किये।** उ.—(क) कबहुँ न रिझए लाल गिरिधरन बिमल-बिमल जस गाइ—१-१५५। (ख) सूरज प्रभु सेवा करि रिझए—पृ० ३२१ (३)।

रिझकवार—वि. [हि. रीझना+वार] **रीझनेवाला, मुग्ध या प्रसन्न होनेवाला।**

रिझयो, रिझयौ—क्रि. स. [हि. रिझाना] **अनुकूल या प्रसन्न कर लिया।** उ—सूरदास प्रभु बिबिध भाँति करि मन रिझयौ हरि पी को।

रिझवत—क्रि. म [हि. रिझाना] **रिझाते या प्रसन्न करते हो।** उ—बिबिध बचन मुदेस बानी इहाँ रिझवत काहि—२८५०।

रिझवति—क्रि. स स्त्री. [हि. रिझाना] **रिझाती या मुग्ध करती है।** उ.—आपुन रीझि कत को रिझवति यह जिय गर्व बढावति—पृ० ३५१ (७२)।

रिझवार—सज्ञा पु. [हि. रीझना+वार] (१) **रीझने या मोहित होनेवाला।** (२) **प्रसन्न या अनुकूल होनेवाला।** (३) **प्रेम या अनुराग करनेवाला।** (४) **गुण का आदर करनेवाला।**

रिझाई—क्रि. स. [हि रिझाना] **मुग्ध कर लिया।** उ.—सूर स्याम ऐसे गुन-आगर, नागरि बहुत रिझाई (हो)—७००।

रिझाउ—क्रि. स. [हि. रिझाना] **मुग्ध करो।** उ—पालागौ ऐसी इन बातनि उनही जाइ रिझाउ—३०७२।

रिझाए—क्रि. स [हि. रिझाना] **प्रसन्न या अनुकूल कर लिया।** उ—बिटप भजि जमलाजुन तारे, करि अस्तुति गोबिद रिझाए—३८६।

रिझाना, रिझानो—क्रि. स. [स. रजन] (१) **प्रसन्न या अनुकूल करना।** (२) **मुग्ध या मोहित करना।**

रिझायल—वि. [हि. रीझना+आयल] (१) **रीझनेवाला।** (२) **अनुकूल या प्रसन्न होनेवाला।**

रिझाव—सज्ञा पु [हि रीझना+आव] (१) **मुग्ध या मोहित होने का भाव।** (२) **प्रसन्न या अनुकूल होने का भाव।**

रिझावति—क्रि. स. [हि. रिझावना] **मुग्ध करती है।** उ.—ललिता ललित बजाय रिझावति मधुर बीन कर लीन्हे।

रिझावना, रिझावनो—क्रि. स [हि. रिझाना] (१) **प्रसन्न या अनुकूल करना।** (२) **मुग्ध, आसक्त या मोहित करना।**

रिझावैं—क्रि. स. [हि. रिझाना] **प्रसन्न या अनुकूल कर लें।** उ.—जल ही मै सब बाँह टेकि कै देखहु स्याम रिझावैं—७९१।

रिझावै—क्रि. स. [हि. रिझाना] **मुग्ध करता है।** उ.—तान की तरग रस रसिक रिझावै (हो)—६२९।

रिझावौ—क्रि. स. [हि. रिझाना] **प्रसन्न या अनुकूल करूँ।** उ.—कहा करौ, किहि भाँति रिझावौ हौ तुमको सुदर नँदलाल—१-१२७।

रिझै—क्रि. स [हि. रिझाना] **मुग्ध करके।** उ.—(क) रैनि नृत्यत रिझै पिय मन तडित तें छबि लसी—१८६२। (ख) सूर स्याम इहि भाँति रिझै कै तुमहूँ अधर-रस लेहु—२३४३।

प्र०—रिझै लई—**मुग्ध कर ली।** उ.—तब भए स्याम बरस द्वादस के, रिझै लई जुवती वा छबि पर १०-३०१।

रिझौहाँ—वि [हि. रीझ+औहाँ] **रीझनेवाला।**

रिढना, रिढनो—क्रि अ [हि. कढिरना] **अग-दोष अथवा वैसे ही अन्य किसी कारण से घसिटते हुए चलना।**

रितयो, रितयौ—क्रि. स. [हि. रितवना] खाली कर दिया। उ.—कुबुधि कमान चढाइ कोप करि बुधि-तरकस रितयौ—१-६४।

रितवना, रितवनो—क्रि स. [हि. रीता+ना] रीता या खाली करना।

रिताना, रितानो—क्रि. स. [हि रीता] खाली करना।

रितु—सज्ञा स्त्री [स. ऋतु] ऋतु। उ.—रितु आए कौ खेल कन्हैया सब दिन खेलत फाग —१०-३२८।

रितुवंती—सज्ञा स्त्री. [स. ऋतुमती] रजस्वला स्त्री।

रिद्धि, रिधि—सज्ञा स्त्री. [स ऋद्धि] बढती, समृद्धि।

रिद्धि-सिद्धि, रिधि-सिधि—सज्ञा स्त्री [स ऋद्धि सिद्धि] समृद्धि और वैभव।—उ.—तेरौ दु ख दूरि करिवे कौ रिधि-सिधि फिरि-फिरि जाही—१-३२३।

रिन—सज्ञा पु [स. ऋण] ऋण।

रिनिआँ, रिनियाँ, रिनी—वि [हि ऋणी] ऋणी।

रिपु—सज्ञा पु. [स.] दुश्मन, शत्रु। उ.—तऊ सुभाव न सीतल छाँडै रिपु-तन-ताप हरै—१-१७।

रिपुता—सज्ञा स्त्री [स] शत्रुता, बैर।

रिपुमार—सज्ञा पु. [स. रिपु+मार=काम] कामदेव का नाश करनेवाले। उ —गिरिसुत तिन पति विवश करन को अक्षत लै पूजत रिपुमार—२३११।

रिम—सज्ञा पु. [स. अरिम्] शत्रु, बैरी।

रिमझिम—सज्ञा स्त्री [अनु.] छोटी-छोटी बूँदों की वर्षा, फुहार।

क्रि. वि.—वर्षा की छोटी-छोटी बूँदो से।

रिमहर—सज्ञा पु. [स. अरिम्+हर] शत्रु-नाशक।

रिमिका—सज्ञा स्त्री [देश.] काली मिर्च की लता।

रियासत—सज्ञा स्त्री. [अ.] (१) राज्य। (२) रईसी।

रिर, रिरि—सज्ञा स्त्री. [हि. रार] हठ, जिद।

रिरना, रिरनो, रिरिना, रिरिनो—क्रि. अ. [अनु.] गिड़गिडाना।

रिरिहा—वि. [हिं. रिरना] गिड़गिडाकर याचना करनेवाला।

रिलना, रिलनो—क्रि. अ. [हि. रेलना] (१) घुसना, प्रवेश करना। (२) हिलना, मिलना, एक हो जाना।

रिवाज—संज्ञा पु. [अ.] प्रथा, रीति, चलन।

रिश्ता—सज्ञा पु. [फा.] नाता, सबंध।

रिश्तेदार—सज्ञा पु [फा.] नातेदार, सबंधी।

रिश्तेदारी—सज्ञा स्त्री. [फा.] नाता, संबंध।

रिश्वत—सज्ञा स्त्री [अ.] घूस, उत्कोच।

रिष—सज्ञा पु [स ऋषि] ऋषि।

रिषभ—सज्ञा पु. [स ऋषभ] (१) बैल। (२) ऋषभदेव। उ.—बहुरौ रिषभ बडे जब भए। नाभि राज दै बन कौ गए—५-२।

रिषभदेव—सज्ञा पु [स ऋषभदेव] ऋषभदेव जो राजा नाभि के पुत्र थे। उ —रिषभदेव तब जन्मे आइ, राजा के गृह बजी बधाइ—५-२।

रिषय, रिषि—सज्ञा पु [स. ऋषि] ऋषि। उ.—(क) सेष सारद रिषय नारद सत चितत सरन—१-३०८। (ख) प्रगटे रिषय सप्त अभिराम—३-८। (ग) रिषि समाधि महँ त्योंही रह्यौ, सृगी रिषि सौं लरिकन कह्यौ—१-२९०।

रिषिराज—सज्ञा पु [स. ऋषि+राज] श्रेष्ठ ऋषि। उ.—(क) महाराज रिषिराज राजमुनि देखत रहे लजाई—१-४०। (ख) महर भवन रिषिराज गए—१०-८५।

रिषीस्वर—सज्ञा पु [स ऋषि+ईश्वर] श्रेष्ठ ऋषि। उ.—च्यवन रिषीस्वर बहु तप कियौ—९-३।

रिष्ट—वि. [स हृष्ट] (१) प्रसन्न। (२) मोटा-ताजा।

रिष्यमूक—सज्ञा पु [स ऋष्यमूक] दक्षिण का एक पर्वत जहाँ श्रीराम ने सुग्रीव से मित्रता की थी।

रिस—सज्ञा स्त्री [स. रुष] गुस्सा, क्रोध। उ.—(क) रिस भरि गए परम किंकर तब पकरयौ छुटि न सकौ—१-१५१। (ख) सँटिया लिए हाथ नँदरानी थर थरात रिस गात—१०-३४१।

मुहा०—रिस मारना—क्रोध को रोकना। रिस निवारना—क्रोध दूर करना। रिस निवारि—क्रोध दूर करके, क्रोध दूर करो। उ.—अपनी रिस निवारि प्रभु पितु मन अपराधी सो परम गति पाई ७४।

रिसना, रिसनो—क्रि. स. [हि. रसना] किसी द्रव का छोटे छिद्रो से छनछन कर बाहर आना।

रिसवाना, रिसवानौं—क्रि.स [हि. रिसाना] क्रुद्ध होना।

रिसहा—वि. [हि रिस+हा] क्रोधी।

रिसहाई—वि स्त्री. [हि. रिसाया] क्रुद्ध, कुपित। उ.—(क) लखि लीनी तब चतुर नागरी ये मो पर सब है रिसहाई। (ख)जननी अतिहि भई रिसहाई-१५४४।

रिसहाया—वि. [हि रिसाया] नाराज, क्रुद्ध।

रिसाइ—क्रि. अ. [हि. रिसाना] क्रुद्ध होकर। उ—(क) नाहि कॉंचौ कृपानिधि हौ करौ कहा रिसाइ—१-१०६। (ख) जसोदा ग्वालिनि गारी देति रिसाइ—५१०।

रिसात—क्रि. अ. [हि. रिसाना] क्रुद्ध होता है। उ.—कान्ह सौ आवत क्योऽब रिसात—३६६।

रिसाति—क्रि. अ. [हि. रिसाना] क्रुद्ध होती है। उ.—(क) कतहि रिसाति जसोदा इन सौ—३५९। (ख) हँसति रिसाति बोलावति बरजति देखहु उलटी चालहि—११८१।

रिसाना—क्रि. अ [हि. रिस+आना] क्रुद्ध होना।
क्रि. स.—किसी पर अप्रसन्न होना।

रिसानी—क्रि अ. [हि. रिसना] क्रुद्ध हुई। उ.—जसोदा एतो कहा रिसानी - १०-३४३।

रिसाने—क्रि. अ [हि. रिसाना] क्रुद्ध हुए। उ - (क) आपुहि-आपु बलकि भए ठाढे, अब तुम कहा रिसाने—१०-२१४। (ख) आपुस ही मै सबै रिसाने—१०६०।

रिसानौ—क्रि अ. [हि. रिसाना] क्रुद्ध होना।
क्रि स—किसी पर क्रुद्ध होना, बिगडना।

रिसान्यो, रिसान्यौ—क्रि स [हि रिसाना] (किसी पर) क्रुद्ध हुआ। उ - (क) सूर स्याम सँग मन उठि लाग्यौ मो पर बारबार रिसान्यौ—१४६०। (ख) मोपर कहा रिसान्यौ—१६७१।

रिसायौ—क्रि. अ [हि रिसाना] क्रुद्ध हुआ। उ—ध्रुव बिमाता-बचन सुनि रिसायौ—४-१०।

रिसाल—सज्ञा पु. [अ. इरसाल] राज्य-कर।

रिसाला—सज्ञा पु [फा.] घुड़सवारो की सेना।

रिसाहि—क्रि. अ. [हि. रिसाना] क्रुद्ध होती है। उ—तनक दधि कारन जसोदा इतौ कहा रिसाहि—३५०।

रिसि—सज्ञा स्त्री. [हि. रिस] क्रोध।

रिसिआना, रिसिआनौ—क्रि अ [हि. रिसाना] क्रुद्ध या कुपित होना।
क्रि. स.—किसी पर क्रुद्ध होना।

रिसिक—सज्ञा स्त्री. [स रिषीक] तलवार।

रिसियाना, रिसियानौ—क्रि अ. [हि. रिसाना] क्रुद्ध या कुपित होना।
क्रि स.—किसी पर क्रुद्ध होना।

रिसैयॉ—सज्ञा स्त्री [हि. रिस] गुस्सा, क्रोध। उ.—खेलत मै को काकौ गुसैयॉं। हरि हारे जीते श्रीदामा, बरबस ही कत करत रिसैयॉं—१०-२४५।

रिसौहॉं-वि. [हि. रिस+औहॉं] (१) कुछ-कुछ क्रुद्ध। (२) क्रोध से युक्त।

रिहा—वि. [फा.] छूटा हुआ, मुक्त।

रिहाई—सज्ञा स्त्री. [फा.] छुटकारा, मुक्ति।

रिहाए—क्रि. स. [हि. रिहाना] मुक्त किये, छुड़ाये। उ.—सूर कृपालु भए करुनामय आपुन हाथ सो दूत रिहाए।

रिहाना,रिहानौ—क्रि.स. [फा.रिहा] छुड़ाना,मुक्त करना।
क्रि अ—छूटना, मुक्त होना।

रीधना, रीधनौ—क्रि. स. [सं. रधन] (भोजन) पकाना, रॉंधना।

री—अव्य [स रे] (१) स्त्री के लिए सबोधन। उ.—(क) राम जू कहॉं गए री माता—९-४९। (ख) सखी री, काहै गहरु लगावति—१०-२३। (ग) मैया री, मोहि माखन भावै—१०-२६४। (घ) सुनि सुनि री तै महरि जसोदा तै सुत बडौ लडायौ—१०-३३९। (२) मादा पशु, पक्षी, कीट, पतग आदि के लिए सबोधन। उ—भृ गी री, भजि स्याम कमल-पद जहॉं न निसि कौ त्रास—१-३३९।

रीछ—सज्ञा पु [स. ऋक्ष] भालू। उ.—रीछ लगूर किलकारि लागे करन—९-१३८।

रीछराज—सज्ञा पु. [स ऋक्ष+राज] जामवत।

रीझ—सज्ञा स्त्री. [स रजन] (१) प्रसन्न होने की क्रिया या भाव। उ—तनक रीझ पै देत सकल तन—१०-१५२। (२) मुग्ध, आसक्त या मोहित होने की क्रिया या भाव।

क्रि. अ. [हि. रीझना] प्रसन्न होकर । उ.—रे मूरख, तू कहा पढायौ कैसे देउँ तोहि रीझ—सारा. ११८ ।

रीझत—क्रि अ. [हि रीझना] प्रसन्न या अनुकूल होता है । उ.—जौ रीझत नहि नाथ गुसाईं तौ कत जात जँच्यौ—१७४ ।

रीझति—क्रि. अ. [हि रीझना] मुग्ध या मोहित होती है । उ.—रीझति नारि कहति मथुरा की—सारा. ५०४ ।

रीझना, रीझनो—क्रि अ. [स. रजन] (१) प्रसन्न या अनुकूल होना । (२) मुग्ध या मोहित होना ।

रीझही—क्रि. अ [हि. रीझना] प्रसन्न या अनुकूल होते हैं । उ —कबहुँ किएँ भक्ति हू के न ये रीझही—८-८ ।

रीझि—क्रि. अ. [हि. रीझना] (१) प्रसन्न या अनुकूल होकर । उ. —सरबस प्रभु रीझि देत तुलसी कै पाता—१-१२३ ।

प्र०—रीझि जाही—प्रसन्न हो जाते हैं । उ.—कबहुँ किऐ बैर के रीझि जाही—८-८ ।

(२) मुग्ध या मोहित होकर । उ.—रीझि तैहि रूप दियौ अग सूवौ कियौ—२५८४ ।

रीझीं—क्रि. अ. [हि. रीझना] मुग्ध या मोहित हुई । उ.—ब्रज-ललना देखति गिरिधर कौं । एक-एक अँग-अँग पर रीझीं, अरुझीं मुरलीधर कौं—५४७ ।

रीझी—क्रि. अ. [हि. रीझना] मुग्ध या मोहित हो गयी । उ —देखत रीझी घोषकुमारी—७९९ ।

रीझे—क्रि. अ. [हि. रीझना] (१) प्रसन्न हो गये । उ.—सूरदास प्रभु करत कलेवा रीझे स्याम सुजान—१०-२१२ । (२) मुग्ध या मोहित हो गये । उ —कैधौ मृग-जूथ जुरे मुरली-धुनि रीझे—६४२ । (ख) सूर-प्रभु सर्वज्ञ स्वामो देखि रीझे भारि—७८१ । (ग) कहा देखि रीझे राधा सौ चचल नैन बिसालहिं—१० उ०-१०१ ।

रीझै—क्रि. अ. [हि. रीझना] प्रसन्न या मुदित होती है । उ.—मोहन-मुख रिस की ये बातैं, जसुमति सुनि-सुनि रीझै—१०-२१५ ।

रीझौं—क्रि. अ [हि रीझना] प्रसन्न या अनुकूल होऊँगा । उ.—ऐसे नहि रीझौं मैं तुम सौं—७९१ ।

रीठ, रीठि—सज्ञा स्त्री [स. रिष्ट] तलवार ।

वि. – (१) अशुभ । (२) बुरा ।

रीठा—सज्ञा पु. [स. रिष्ट, प्रा. रिट्ठ] एक वृक्ष या उसका छोटा और काला फल ।

रीढ़—सज्ञा स्त्री. [स. रीढक] पीठ की खड़ी हड्डी, मेरुदंड ।

रीत—सज्ञा स्त्री. [स. रीति] (१) प्रकार, ढग । (२) रिवाज, प्रथा ।

रीतना, रीतनो—क्रि. अ [स. रिक्त, प्रा. रित्त + हि. ना] खाली या रिक्त होना ।

क्रि स.—खाली या रिक्त करना ।

रीता—वि. [स. रिक्त, प्रा. रित्त] खाली, रिक्त ।

रीति—सज्ञा स्त्री [स.] (१) ढग, प्रकार, ढब । उ.—(क) किंचित स्वाद स्वान-बानर ज्यौं घातक रीति ठटी—१-९८ । (ख) जा दिना तै जन्म पायौ यहै मेरी रीति—१-१०६ । (ग) मत्री काम क्रोध निज दोऊ अपनी-अपनी रीति—१-१४१ । (घ) कहाँ वह प्रीति कहाँ वह बिछुरन कहाँ मधुबन की रीति—२७१६ । (२) रस्म-रिवाज, परिपाटी उ.—(क) नई रीति इन अबहिं चलाई १०४१ । (३) स्थिति, दशा । उ.—भई रीति हठि उरग छछूंदरि छाँडै बनै न खात—३०५७ । (४) नियम । (५) साहित्य में वर्णन की वह वर्ण-योजना जिससे उसमें ओज, प्रसाद या माधुर्य आता है । (६) स्वभाव ।

रीती—वि स्त्री [हि. रीता] खाली, रिक्त । उ.—(क) देखै जाइ मटुकिया रीती – १०-२७१ । (ख) गहि गहि पानि मुटुकिया रीती उरहन कै मिस आवति जाति—१०-३३२ ।

सज्ञा स्त्री. [स. रीति] (१) ढग । (२) परिपाटी ।

रीते—वि. बहु. [हि. रीता] खाली, रिक्त ।

रीतै—क्रि. स. [हि. रीतना] खाली या रिक्त करता है । उ.—रीतै, भरै, भरे पुनि ढारै—१-१०५ ।

रीतौ—वि. [हि. रीता] खाली, रिक्त । उ.—पाहन पतित बान नहिं बेधत, रीतौ करत निषग—१-३३२ ।
रीत्यो, रीत्यौ—क्रि. अ. [हि. रीतना] खाली या रिक्त कर दिया है । उ.—हमहूँ समुझि परी नीके करि यहै असित तनु रीत्यौ—२८८४ ।
रीधि सीधि—सज्ञा स्त्री. [स ऋद्धि-सिद्धि] ऋद्धि-सिद्धि ।
रीस—सज्ञा स्त्री [हिं. रिस] गुस्सा, क्रोध ।
सज्ञा स्त्री. [स. ईर्ष्या] (१) डाह, ईर्ष्या । (२) स्पर्द्धा, होड़ । उ.—कह्यौ हिमालय सिव प्रभु ईस । हमकौ उनकौ कैसी रीस ।
रीसना, रीसनो—क्रि. अ. [हिं. रिस] क्रुद्ध होना ।
रुंज—सज्ञा पु. [देश.] एक तरह का बाजा । उ. (क) रुज मुरज डफ झाँझ झालरी यत्र पखावज तार—२४३७ । (ख) बाजत ताल मृदग झाँझ डफ रुज मुरज बाँसुरि ध्वनि थोरी—२४४८ ।
रुंड—सज्ञा पु [स.] (१) बिना सिर का धड़, कबध । (२) शरीर जिसके हाथ-पैर कटे हो ।
रुंदाइ—क्रि. स. [हि. रुँदाना] पैरो से कुचलवा कर । उ.—मारौ गज तै रुँदाइ मनहि यह अनुमान्यो—२४७५ ।
रुंदाऊँ—क्रि. स. [हि. रुदाना] पैरो से कुचलवा दूँगा । उ.—रगभूमि गज चरन रुँदाऊँ—२४५९ ।
रुँदाना, रुँदानो, रुँदवाना, रुँदवानो—क्रि. स [हि. रौंदना का सक. या प्रेर] पैरो से कुचलवाना, खुँदवाना ।
रुँधती—सज्ञा स्त्री. [स. अरुधती] वशिष्ठ मुनि की स्त्री ।
रुँधना, रुँधनो—क्रि. अ. [स. रुद्ध+ना] (१) मार्ग न मिलने से रुकना या अटकना । (२) फँसना, उलझना । (३) काम में लगना । (४) रोक या रक्षा के लिए कँटीली झाड़ी आदि से घेरा जाना ।
रुँधि—क्रि. अ. [हि. रुँधना] फाँसकर, बद करके । उ.—ब्रज पिजरी रुँधि मानो राखे निकसन को अकुलात—२७०३ ।
रु—अव्य [हि. अरु] और ।
रुआ—सज्ञा पु. [स. रोम] (१) शरीर के छोटे बाल, रोम । (२) सेमर के फूल का घूआ ।

रुआना, रुआनो—क्रि. स. [हि. रुलाना] रुलाना ।
रुआब—सज्ञा पु [हि रोब] (१) धाक । (२) डर ।
रुई—सज्ञा स्त्री [हि. रूई] कपास, रूई । उ.—यह ससार सुआ-सेमर ज्यौ सुन्दर देखि लुभायौ । चाखन लाग्यौ रुई गई उडि हाथ कछू नहि आयौ—१-३३५ ।
रुऐदा—वि. [हि. रोना+ऐदा] रुआसा ।
रुकना, रुकनो—क्रि. अ. [हि रोक] (१) मार्ग न मिलने से अटकना या ठहरना । (२) स्वेच्छा से ठहर जाना या आगे न बढ़ना । (३) सोच-विचार के कारण आगे काम न करना । (४) काम आगे न होना । (५) क्रम या सिलसिला बद हो जाना ।
रुकमिनि, रुकमिनी—सज्ञा स्त्री. [सं. रुक्मिणी] रुक्मिणी जो श्रीकृष्ण की पहली पटरानी थी ।
रुकवाना, रुकवानो, रुकाना, रुकानो—क्रि स. [हि. रुकना का सक. या प्रेर.] रुकने या रोकने को प्रवृत्त करना ।
रुकाव—सज्ञा पु. [हिं. रुकना] रुकावट, अटकाव ।
रुकावट—सज्ञा स्त्री. [हि. रुकना] (१) रोकने की क्रिया या भाव । (२) बाधा, अडचन ।
रुकुम—सज्ञा पु. [स. रुक्म] रुक्म जो रुक्मिणी का भाई और श्रीकृष्ण का साला था ।
रुकुमि, रुकुमी—सज्ञा पु [स. रुक्मी] रुक्मी जो रुक्मिणी का भाई और श्रीकृष्ण का साला था ।
रुक्का—सज्ञा पु. [अ. रुक्कअ] छोटा पत्र या पुरजा । उ.—एक उपाय करौ कमलापति, कहौ तौ कहि समुझाऊँ । पतित-उधारन नाम सूर प्रभु यह रुक्का पहुँचाऊँ—९-१७२ ।
रुक्ख—सज्ञा पु. [हिं. रूख] पेड, वृक्ष ।
सज्ञा पु. [हि रुख] रुख ।
रुक्म—सज्ञा पु. [स.] (१) सोना, स्वर्ण । (२) रुक्मिणी का एक भाई जो उसका विवाह शिशुपाल से करना चाहता था । रुक्मिणी-हरण के अवसर पर रुक्म के विरोध करने पर श्रीकृष्ण ने इसके बाल मूड़ कर छोड़ दिया था । उ.—कुदनपुर को भीषम राई । रुक्म आदि ताके सुन पाँच—१० उ.-७ ।
रुक्मिणि, रुक्मिणी, रुक्मिनि, रुक्मिनी—सज्ञा स्त्री.

[सं. रुक्मिणी] श्रीकृष्ण की पहली पटरानी जो विदर्भ के राजा भीष्मक की पुत्री थी। उ.—कुदन-पुर को भीषम राई। ' ' । रुक्मिणी पुत्री हरि रँग राँच—१० उ.-७।

रुक्मी—संज्ञा पु. [स. रुक्मिन्] रुक्मिणी का एक भाई।

रुक्ष—वि. [स. रूक्ष] (१) जिसमे चिकनाहट या स्निग्धता न हो, रूखा। (२) जिसमें रसिकता न हो। (३) जिसमे रस न हो। (४) जिसमें जल या तरी न हो।

रुक्षता—संज्ञा स्त्री. [स. रूक्षता] (१) रूखापन। (२) सूखापन। (३) अरसिकता।

रुख—संज्ञा पु. [फा. रुख] (१) मुख का भाव, आकृति। (२) आकृति या चेष्टा से प्रकट इच्छा। उ.—(क) जाहु लिवाइ सूर के प्रभु कौ कहति बीर के रुख की—४२५। (ख) जितही जितहि रुख करैं लडैती तितही आपुन आवै—२२७५।

मुहा०— रुख देना—ध्यान देना। रुख फेरना या बदलना—ध्यान न देना।

(३) कृपादृष्टि।

मुहा०—रुख फेरना या बदलना—अप्रसन्न होना।

(४) सामने या आगे का भाग। (५) शतरज का एक मोहरा जो 'हाथी' कहलाता है।

क्रि. वि.—(१) तरफ, ओर। (२) सामने।

सज्ञा पु. [हि रूख] पेड, वृक्ष।

वि. [हि. रूखा] (१) सूखा, शुष्क। (२) अरसिक।

रुखनि—सज्ञा पु. सवि. [हि. रुख+नि] इच्छा के अनुकूल। उ.—धन्य नद धनि मातु असोमति चलत जाके रुखनि—९८१।

रुखसत - सज्ञा स्त्री [अ.] (१) विदाई। (२) छुट्टी।

रुखाई—सज्ञा स्त्री. [हि. रूखा] (१) रूखापन, उदासीनता। उ.—कै तौ रुखाई छाँड़िए—१८०९। (२) सूखापन, शुष्कता।

रुखानल—सज्ञा पु. [स रोषानल] क्रोधाग्नि।

रुखाना, रुखानो—क्रि. अ. [हि. रूखा] (१) चिकना न रह जाना। (२) सूख जाना। (३) उदास, उदासीन या कठोर हो जाना।

रुखानी—सज्ञा स्त्री. [स. रोक+खनित्र] एक औजार।

रुखावट—सज्ञा स्त्री. [हि. रूखा] रूखापन।

रुखिता—सज्ञा स्त्री. [स. रुषिता] मानवती नायिका।

रुखौंहों—वि. [हि. रूखा] रूखेपन से युक्त।

रुग्ण, रुग्न—वि. [स. रुग्ण] रोगी।

रुग्णता, रुग्नता—सज्ञा स्त्री. [स. रुग्ण] रोगी होने का भाव।

रुच—सज्ञा स्त्री. [स. रुचि] प्रवृत्ति, इच्छा।

रुचना, रुचनो—क्रि. अ [स. रुचि] भला लगना।

रुचि—सज्ञा स्त्री [स.] (१) प्रवृत्ति, झुकाव, इच्छा। उ.—कोटि लालच जौ दिखावहु नाहिनै रुचि आन—१-१०६। (२) प्रीति, चाह। उ.—हम रुचि करी सूर के प्रभु सौ दूजो मन न सुहाइ—३२१०। (३) सुख, आनंद। उ.—कोटि देहु तौ रुचि नहिं मानौ बिनु देखे नहि जैहौ—१०-३५।

प्र०—रुचि करि—बहुत प्रसन्न या हर्षित होकर। उ.—कान्हैं लै जसुमति कोरा लै रुचि करि कठ लगाए—१०-५३।

मुहा०—रुचि-रुचि—बहुत चाव या उमग से।

(४) छवि, शोभा। उ.—मुख मै मुख औरै रुचि बाढति हँसत देत किलकारी—१०-९१। (५) भूख, भोजन की इच्छा। (६) स्वाद।

प्र०—रुचि करि—स्वाद लेकर। उ. बन फल लै मँगाइ कै रुचि करि लागे खान—४३७। (७) एक अप्सरा।

वि.—फबता हुआ, शोभा के अनुकूल।

क्रि. वि.—सुख, सुविधा या इच्छा के अनुसार। उ.—तेल लगाइ कियौ रुचि मर्दन—१-५२।

रुचिकर—वि [स.] अच्छा लगनेवाला।

रुचिकारक—वि. [स] (१) अच्छा लगनेवाला। (२) स्वादिष्ट।

रुचिकारि, रुचिकारी—वि. [स. रुचिकारिन्, हिं. रुचिकारी] (१) अच्छा लगने वाला, मनोहर। उ.—कोउ निरखि कटि पीत काछनी मेखला रुचिकारि—६३४। (२) स्वादिष्ट।

रुचिमान—वि. [स. रुचि+हिं. मान] सुदर, मनोहर।

रुचिर—वि. [स.] (१) सुदर, मनोहर। उ.—रुचिर

रोमावली हरि कै चारु उदर सुदेस—६३४ (२) **मीठा ।**
रुचिरता—सज्ञा स्त्री. [स.] **सुदर होने का भाव ।**
रुचिराइ, रुचिराई—सज्ञा स्त्री [स रुचिर] **सुदरता ।**
रुची—सज्ञा स्त्री [स. रुचि] (१) **इच्छा ।** (२) **स्वाद ।**
रुचै—क्रि अ [हि रुचना] **अच्छा या प्रिय लगे ।** उ. —(क) कछू हौस राखै जनि मेरी जोइ जोइ मोहि रुचै री—१०-१७६ । (ख) जोइ जोइ रुचै सोइ तुम मोपै माँगि लेहु किन तात—१०-३०८ ।
रुच्छ—वि [हि. रुक्ष] (१) **रूखा ।** (२) **अप्रसन्न ।**
सज्ञा पु [हि. रूख] **पेड, वृक्ष ।**
रुज—सज्ञा पु [स. रुज] (१) **कष्ट ।** (२) **घाव ।** (३) **रोग ।** (४) **एक बाजा ।**
रुजा—सज्ञा स्त्री. [स रुज] (१) **रोग ।** (२) **पीड़ा ।**
रुजाली—सज्ञा स्त्री. [स] **अनेक रोग या कष्ट ।**
रुजी—वि. [हि. रुज] **रोगी, अस्वस्थ ।**
रुजू—वि. [अ. रुजूअ] (१) **प्रवृत्त ।** (२) **किसी ओर ध्यान लगाये ।**
रुझना, रुझनो—क्रि अ. [स. रुद्ध, प्रा. रुज्झ] **घाव भरना ।**
क्रि. अ. [हि. उलझना] **उलझना ।**
रुझान—सज्ञा पु. [अ. रुजहान] **प्रवृत्ति ।**
रुठ—सज्ञा पु [स. रुष्ट, प्रा. रुट्ठ] **गुस्सा, क्रोध ।**
रुठना, रुठनो—क्रि अ. [हि रूठना] **रूठ जाना ।**
रुठाना, रुठानो—क्रि स. [हि. रूठना] **अप्रसन्न कर देना ।**
रुठायहौ—क्रि. स [हि. रुठाना] **अप्रसन्न करोगे ।** उ. सुनहु सूरज प्रभु अबके मनाइ ल्याउँ बहुरि रुठायहौ जू तौ मेरी राम राम है जू—२२४१ ।
रुणित—वि. [स] **बजता या शब्द करता हुआ ।** उ.—चरन रुणित नूपुर ध्वनि मानो सूर बिहरत है बाल मराल ।
रुत—सज्ञा स्त्री. [स. ऋतु] **ऋतु ।**
संज्ञा पु. [स.] (१) **कलरव ।** (२) **ध्वनि ।**
रुतबा—सज्ञा पु [अ.] (१) **पद ।** (२) **प्रतिष्ठा ।**
रुदंती—वि [हि रुदना] **रोती-बिलखती हुई ।**
रुदति—क्रि. वि. [हि. रुदना] **रोती-बिलखती ।** उ.—सकल सुरभि यूथ दिन प्रति रुदति पुर दिसि धाइ—३४२४ ।
रुदन—सज्ञा पु [स. रोदन] **रोने की क्रिया, क्रंदन ।** उ —(क) मीडत हाथ सीस धुनि ढोरत रुदन करत नृप पारथ—१-१२७ । (ख घरी एक सजन कुटॅब मिलि बैठे रुदन बिलाप कराही—१-३१९ । (ग) धरे न धीर अनमने रुदन बल सो हठ करनि परे—पृ. ३३१ (५) ।
रुदना, रुदनो—क्रि. अ. [हि रुदन] **रोना, बिलापना ।**
रुदराच्छ, रुदराछ—सज्ञा पु [स रुद्राक्ष] **रुद्राक्ष ।**
रुदित—वि [स.] **रोता हुआ ।**
रुद्ध—वि. [स] (१) **घेरा या रोका हुआ ।** (२) **बंद, मुँदा हुआ ।**
यौ०—रुद्धकंठ—**जो प्रेमावेश आदि के कारण बोल न सके ।**
रुद्र—सज्ञा पु. [स] (१) **एक गणदेवता जो क्रोध-रूप माने जाते हैं । इनकी सख्या ग्यारह है ।** उ.—तब इक पुरुष भौह तै भयौ, होत समय तिन रोदन ठयौ । ताकौ नाम रुद्र बिधि राख्यौ—३-७ । (२) **ग्यारह की सख्या ।** (३) **शिव का एक रूप ।** (४) **रौद्र रस ।**
वि —**डरावना, भयकर ।**
रुद्रक—सज्ञा पु [स. रुद्राक्ष] **रुद्राक्ष ।**
रुद्रतेज—सज्ञा पु. [स रुद्र+तेज] **स्वामिकार्तिक ।**
रुद्रपति—सज्ञा पु. [स] **शिव, महादेव ।** उ.—रुद्रपति, छुद्रपति लोकपति वोकपति धरनिपति, गगनपति अगमबानी—१५२२ ।
रुद्राक्ष—सज्ञा पु. [स.] **एक वृक्ष का बीज जिसकी माला शैव लोग पहनते हैं ।**
रुद्राणी, रुद्रानी—सज्ञा स्त्री. [स. रुद्राणी] **पार्वती ।**
रुधिर—सज्ञा पु. [स.] **रक्त, लहू ।** उ.—रुधिर मेद मल-मूत्र कठिन कुच उदर गध गधात—२-२४ ।
रुधिराशी—वि. [स.] **रक्त पीनेवाला ।**
रुनकझुनक—सज्ञा स्त्री [अनु.] **नूपुर आदि का रुनझुन शब्द ।** उ.—रुनकझुनक कर ककन बाजै—१०-२९९ ।
रुनझुन—सज्ञा स्त्री [अनु.] **नूपुर आदि की झनकार ।** उ.—(क) कटि किंकिनि रुनझुन सुनि तन की हुस

करत किलकारी। (ख) रुनझुन करति पाइँ पैजनियाँ —१०-१०६।

रुनाई—सज्ञा स्त्री [हि अरुणाई] लाली, अरुणता।

रुनित—वि. [स. रुणित] बजता या झनकार करता हुआ। उ.—चरन रुनित नूपुर कटि किंकिन करतल ताल रसाल—पृ ३५० (६४)।

रुनी—सज्ञा पु. [देश.] घोड़ों की एक जाति।

रुनुक, रुनुकझुनुक—सज्ञा स्त्री. [अनु.] नूपुर आदि की झनकार या रुनझुन ध्वनि। उ.—(क) रुनुक झुनुक नूपुर पग बाजत धुनि अति ही मन-हरनी—१०-१२३ (ख) सूरदास प्रभु गिरिवरधर को चली मिलन गजराजगामिनी झनक रुनुक बन धाम—१९०२।

रुनुझुनु—सज्ञा स्त्री. [अनु.] नूपुर आदि की झनकार।

रुपना, रुपनो—क्रि अ. [हि रोपना] (१) रोपा या लगाया जाना। (२) डट जाना, अड़ जाना।

रुपमनी—सज्ञा स्त्री. [हि. रूपवती] सुंदरी (स्त्री)।

रुपया—सज्ञा पु [स. रुप्य] (१) चाँदी का एक सिक्का जो पहले सोलह आने के बराबर था और अब सौ नये पैसे के बराबर है। (२) धन-सम्पत्ति।

मुहा०—रुपया उडाना—खूब धन खर्च करना। रुपया जोडना—धन जमा करना। रुपया पानी मे फेकना—व्यर्थ धन खरचना।

यौ०—रुपया-पैसा—धन-सम्पत्ति।

रुपहरा, रुपहला—वि. [हि. रूपा=चाँदी, रुपहला] चाँदी जैसे उज्ज्वल रग का।

रुपैया—सज्ञा पु. [हि. रुपया] रुपया।

रुपौला—वि. [हि. रुपहला] रुपहला।

रुबाइ, रुबाई—सज्ञा स्त्री. [अ] वह कविता जिसमें चार मिसरे हो।

रुमावलि, रुमावली—सज्ञा स्त्री. [स. रोमावली] नाभि से पेट तक गयी हुई रोयो की पक्ति।

रुरना, रुरनो—क्रि अ [देश] छा जाना।

रुराइ, रुराई—सज्ञा स्त्री. [हि रूरा] सुदरता। उ.—मैं सब लिखि सोभा जो बनाई। सजल जलद तन बसन कनक रुचि उर बहु दाम रुराई।

रुरुआ—सज्ञा पु [हि. ररना, ररआ] एक तरह का उल्लू जिसके सबध मे प्रसिद्ध है कि यदि वह किसी का नाम लेकर रटने लगे तो वह मर जाता है।

रुरुक्ष—वि [स] रूखा, रुक्ष।

रुलनि क्रि अ [हि रुलना] हिलती-डोलती है। उ. —बेनी पीठि रुलति झकझोरी—६७२।

रुलना, रुलनो—क्रि. अ. [स. लुलन] (१) मारे-मारे फिरना या घूमना। (२) इधर-उधर हिलना-डोलना।

रुलाई—सज्ञा स्त्री. [हिं. रोना] (१) रोने की क्रिया या भाव। (२) रोने की प्रवृत्ति या आवेग।

सज्ञा स्त्री [हि. रुलना] हिलना-डोलना। उ. —नील, सेत अरु पीत लाल मनि लटकन भाल रुलाई—१०-१०८।

रुलाना, रुलानो—क्रि. स [हि. रोना का प्रेर.] रोने मे प्रवृत्त कराना।

क्रि. स. [हि. रुलना] (१) इधर-उधर घुमाना-फिराना। (२) हिलाना-डोलाना। (३) नष्ट करना।

रुवाँ—सज्ञा पु. [हिं. रोवाँ] सेमल के फूल का घूआ।

रुवाई—सज्ञा स्त्री. [हि. रुलाई] रोने की क्रिया या भाव।

रुष—सज्ञा पु. [स.] गुस्सा, क्रोध।

सज्ञा पु. [हि. रुख] (१) चेहरे का भाव। (२) चेष्टा या आकृति द्वारा प्रकट इच्छा। (३) शतरज का 'हाथी' नामक मोहरा।

रुषा सज्ञा स्त्री. [स.] गुस्सा, क्रोध।

रुष्ट—वि. [स.] क्रुद्ध, अप्रसन्न।

रुष्टता—सज्ञा स्त्री. [स.] अप्रसन्नता।

रुष्ट-पुष्ट—वि. [स. हृष्टपुष्ट] मोटा-ताजा।

रुष्टि—सज्ञा स्त्री. [स.] गुस्सा, क्रोध।

रुसना, रुसनो—क्रि. अ. [हि. रूसना] नाराज होना।

रुसवा—वि. [फा.] बदनाम, निंदित।

रुसवाई—सज्ञा स्त्री. [फा.] बदनामी।

रुसित—वि. [स रुषित] अप्रसन्न, क्रुद्ध।

रुस्तम—सज्ञा पु. [अ.] (१) फारस का एक प्रसिद्ध वीर। (२) वीर पुरुष।

मुहा० छिपा रुस्तम—वह जो देखने में सीधा-

सादा और साधारण हो, परन्तु काम पडने पर बहुत गुणी, योग्य और कुशल सिद्ध हो।

रुह्—वि. [स] उत्पन्न।

रुहठि—सज्ञा स्त्री. [हि रोहट=रोना] रूठने की क्रिया या भाव। उ—रुहठि करै, तासौं को खेलै—१०-२४५।

रुहिर—सज्ञा पु [स. रुधिर, प्रा. रुहिर] खून, रक्त।

रुहिराता—वि. [प्रा रुहिर+हि राता] खून छलकने से लाल हो जानेवाला।

रुहिराते—वि. [हि रुहिराता] जो खून छलकने से लाल हो गया हो। उ.—उर नख-छत ककन छत पाछे सोभित है रुहिराते—२१३६।

रूँगटा—सज्ञा पु [हिं रोगटा] रोम, रोआँ।

रूँगटाली—सज्ञा स्त्री. [हि रोगटा+वाली] भेंड़।

रूँदना—क्रि. स [हिं. रोदना] पैरो से कुचलना।

रूँध—वि. [स. रुद्ध] रुका हुआ, अवरुद्ध।

रूँधना, रूँधनो—क्रि. स [स रुधन] (१) कटीली झाड़ी आदि से घेरना, बाढ़ लगाना। (२) चारो ओर से घेरकर रोकना। (३) मार्ग बन्द करना।

रूँधे—क्रि स. [हिं. रूँधना] बद या अवरुद्ध कर दिये। उ.—सुरति के दस द्वार रूँधे, जरा घेरयौ आइ—१-३१६।

रूआ—सज्ञा पु. [हि. घूआ] कपास का घूआ।

रूइ, रूई—सज्ञा स्त्री. [हि. रोवाँ, रोई, रूई] कपास के कोष के अन्दर का घूआ जिसके चिटकने पर कोमल रेशे के लच्छे निकलते है। उ.—पवन लागत ज्यौ रूइ उडाइ—११-३।

मुहा०—रूई का गाला—बहुत कोमल और सफेद। रूई की तरह तूमना—(१) अच्छी तरह नोचना। (२) बहुत मारना-पीटना। रूई की तरह धुनना या धुनकना—बहुत मारना-पीटना। रूई सा—बहुत कोमल।

रूख—सज्ञा पु [स वृक्ष, प्रा. रुक्ख] पेड, वृक्ष। उ—(क) बूझो द्रुम प्रति रूख राय कोउ कहै न पिय को नाउँ—१-१५। (ख) वै ए दोऊ रूख उखारे यमला-र्जुन तोरे—३०८१। (ग) पाके फल वै देखि मनोहर चढे कृपा करि रूख—३२२७।

वि. [हि रूखा] (१) शुष्क। (२) कठोर।

रूखड़ा—सज्ञा पु [हि रूख] पेड, वृक्ष।

रूखना, रूखनो—क्रि अ [हिं. रूसना] रूठना।

रूखरा—सज्ञा पु. [हिं. रूखडा] पेड, वृक्ष।

वि [हि. रूखा] (१) शुष्क। (२) कठोर।

रूखा—वि. [स. रुक्ष, प्रा. रुक्ख] (१) जो चिकना न हो। (२) जिसमें चिकना पदार्थ न लगा हो। (३) जो रुचिकर, चटपटा या स्वादिष्ट न हो।

मुहा०—रूखा-सूखा—जिसमें घी-तेल आदि रुचि-कर या स्वादिष्ट बनानेवाले पदार्थ न पड़े हों।

(४) सूखा, नीरस। (५) जिसमें प्रेम या रसिकता न हो। (६) कठोर, परुष, अनुदारतापूर्ण। उ—लगर ढीठ, गुमानी, टूँडक, महा मसखरा रूखा—१-१८६।

मुहा० – रूखा पडना या होना—(१) बेमुरौव्वती करना। (२) क्रुद्ध या अप्रसन्न होना।

(७) विरक्त, उदासीन।

रूखापन—सज्ञा पु. [हि रूखा+पन] (१) चिकनाहट का अभाव। (२) शुष्कता। (३) नीरसता। (४) अरसिकता। (५) व्यवहार या वचन की कठोरता। (६) उदासीनता। (७) स्वादहीनता।

रूखी—वि स्त्री. [हि. रूखा] (१) जिसमे चिकने पदार्थ न लगे हो। उ—षटरस भोजन त्यागि कहौ को रूखी रोटी खात—पृ ३२१। (२) कठोर, परुष। उ.—अब कैसे रहति स्याम रँग राती ए बातैं सुनि रूखी—३०२९।

रूखे—वि. [हि. रूखा] (१) कठोर, अप्रसन्न।

मुहा०—रूखे हो—अप्रसन्न या क्रुद्ध हो। उ.—हमही पर पिय रूखे हो—२१४१। ह्वै गए रूखे—अप्रसन्न या क्रुद्ध हो गये। उ.—यह सुनि कै ह्वै गए वै रूखे—८९६।

रूखो, रूखौ—वि. [हिं. रूखा] बिना चिकनाई का। उ.—साँच-झूठ करि माया जोरी आपुन रूखो खातो—१-३०२।

रूचना, रूचनो—क्रि. स. [हि. रुचना] रुचिकर लगना।

रूझना, रूझनो—क्रि. अ. [हि. उलझना] उलझना।

रूठ—संज्ञा स्त्री. [स रुष्टि, प्रा. रुट्ठि] (१) रूठने की क्रिया या भाव। (२) गुस्सा, क्रोध।

रूठन - संज्ञा स्त्री. [हि रूठना] (१) रूठने की क्रिया या भाव। (२) क्रोध, अप्रसन्नता।

रूठना—क्रि. अ. [स रुष्ट, प्रा रुट्ठ+हि. ना] अप्रसन्न या क्रुद्ध होना, रूसना।

रूठनि—संज्ञा स्त्री. [हि. रूठना] (१) रूठने की क्रिया या भाव। (२) कोप, अप्रसन्नता।

रूठनो—क्रि. अ [हि रूठना] रूसना।

रूठब - संज्ञा स्त्री. [हि रूठना] रूठने की क्रिया या भाव। उ —तोहि किन रूठब सिखई प्यारी-२२०१।

रूठि—क्रि. अ. [हि रूठना] क्रुद्ध या अप्रसन्न होकर। उ.—(क) ताकौ काल रूठि का करिहै जो चित चरन धरे—१-८२। (ख) हौ जु रही हठि रूठि मौन धरि —२७३६। (ग) कितिक कठिन सुरतरु प्रसून की, या कारन तू रूठि रही री—१० उ.-३०।

रूठेहिं—वि. सवि. [हि. रूठना] रूठे हुए या अप्रसन्न (व्यक्ति) को। उ.—रूठेहि आदर देत सयाने इहै सूरज सगाइए—१६८८।

रूड़, रूड़ा—वि. [हि. रूरा] श्रेष्ठ, उत्तम।

रूढ़—वि. [स.] (१) सवार, आरूढ। (२) प्रसिद्ध, प्रचलित। (३) गँवार, उजड्ड। (४) कठिन, कठोर। (५) अविभाज्य (सख्या)।

संज्ञा पु —वह शब्द जो दो शब्दो या शब्द और प्रत्यय के योग से बना हो, परतु जिसके खड सार्थ न हों।

रूढ़ा—संज्ञा स्त्री. [स.] प्रसिद्ध, प्रचलित।

रूढ़ि—संज्ञा स्त्री. [स.] (१) उत्पत्ति। (२) प्रसिद्धि, ख्याति। (३) प्रथा, चाल। (४) विचार, निश्चय। (५) रूढ़ शब्द की शक्ति जिससे वह खडों के सार्थ न होने पर भी अर्थ का बोध कराता है।

रूप—संज्ञा पु. [स.] (१) सूरत-शकल, आकार। उ.—रूप-रेख-गुन जाति-जुगुति बिनु निरालब कित धावै —१-२। (२) स्वभाव। (३) सुदरता।

मुहा०—रूप हरना—अपने सुदरतर या सुंदरतम रूप से दूसरे या दूसरों को लज्जित करना।

(४) शरीर, देह। उ —(क) रहि न सके नरसिंह रूप धरि गहि कर असुर पछारयौ—१-१०९। (ख) काग-रूप करि रिषि गृह आयौ, अर्ध निसा तिहि बोल सुनायौ—६-८। (ग) धेनु-रूप धरि पुहुमि पुकारी सिव-बिरचि के द्वारा—१०-४।

मुहा०—रूप लेना—देह धरना। रूप लीनो—देह धारण की। उ. पाछे पृथु को रूप हरि लीनो।

(५) वेश, भेस। उ —(क) रूप मोहिनी धरि ब्रज आई—१०.५०। (ख) अति मोहिनी रूप धरि लीनो —१०-५१। (६) दशा, स्थिति, अवस्था। (७) समानता, सादृश्य। (८) भेद। (९) चिह्न, लक्षण। (१०) चाँदी, रूपा।

वि.—सुदर, मनोहर।

रूपक—संज्ञा पु. [स.] (१) मूर्ति। (२) दृश्यकाव्य। (३) एक अर्थालकार।

रूपगर्विता—वि. [स] जिसे रूप का गर्व हो।

रूपचतुर्दशी—संज्ञा स्त्री. [स.] कार्तिक कृष्ण चतुर्दशी जिसे 'नरकाचौदस' भी कहते हैं।

रूपजीविनी—संज्ञा स्त्री. [स.] वेश्या।

रूपधारी—वि. [स] (दूसरे का) रूप धारण करनेवाला।

रूपता—संज्ञा स्त्री. [स] (१) रूप का भाव। (२) सुदरता, मनोहरता।

रूपमंजरी—संज्ञा स्त्री [स] (१) एक फूल। (२) धान-विशेष।

रूपमनी—वि. स्त्री. [हि रूपमान] रूपवती, सुदरी।

रूपमय—वि. [स. रूप+हि. मय] बहुत सुन्दर। उ. — नील निचोल छाल भइ फनि मनि भूषन रोम रोम पट उदित रूपमय।

रूपमान—वि. [स. रूपवान्] बहुत सुन्दर।

रूपरेख, रूपरेखा—संज्ञा स्त्री. [स. रूप+रेखा] (१) आकार, शक्ल। उ.—(क) कहा करौ नीके करि हरि को रूप-रेख नहि पावति। (ख) आदि अनादि रूपरेखा नहि, इनतै नहि प्रभु और बियौ—१०-८५। (२) ढाँचा। (३) चिह्न, लक्षण।

रूपवंत—वि. [सं. रूपवान् का बहु] सुंदर।
रूपवती—वि स्त्री. [स] सुंदरी (स्त्री)।
रूपवान, रूपवान् - वि. [स. रूपवत्] सुंदर।
रूपसी—संज्ञा स्त्री. [स] सुंदरी नारी।
रूपांतर—संज्ञा पु [स] बदला हुआ रूप।
रूपांतरित—वि. [स.] जिसका रूप बदल गया हो।
रूपा – संज्ञा पु. [स. रूप्य] (१) चाँदी। उ.—लोह तरै मधि रूपा लायौ, ताके ऊपर कनक लगायौ—७-७। (२) राधा की एक सखी का नाम। उ.—करि राधा, किनि हार चुरायौ।... । प्रेमा दामा हसा रगा हरषा रूपा जाउ—१५८०।
रूपाजीवा—संज्ञा स्त्री. [स.] वेश्या।
रूपाश्रय—संज्ञा पु. [स.] सुंदर पुरुष।
रूपी – वि. [स. रूपिन्] (१) रूपधारी। (२) सदृश।
रूपे—संज्ञा स्त्री. सवि. [हि रूपा] चाँदी से। उ.—ताँबे, रूपे, सोने सजि राखी वै बनाइकै—२६२८।
रूपै—संज्ञा स्त्री सवि. [हि रूपा] चाँदी से। उ.—खुर ताँबै, रूपै पीठि, सोनै सीग मढी—१०-२४।
रूपै—संज्ञा पु. सवि. [हि रूप] रूप या सौंदर्य का।
 संज्ञा स्त्री. सवि. [हि. रूपा] चाँदी का।
रूप्य वि. [स] (१) सुंदर। (२, उपमेय।
 संज्ञा पु [हि. रूपा] चाँदी।
रूबरू—क्रि. वि [फा] सामने, समक्ष।
रूम—संज्ञा पु [फा.] टर्की या तुर्की देश।
रूमना, रूमनो—क्रि स. [हि. झूमना का अनु.] झूमना।
रूमाल—संज्ञा पु [फा.] कपड़े का चौकोर टुकड़ा।
रूमी—वि. [फा.] (१) रूम देश का। (२) रूम-वासी।
रूरना, रूरनो—क्रि. अ. [स. रोरवण] (१) चिल्लाना। (२) विलाप करना।
रूरा—वि. पु. [स रूढ] श्रेष्ठ, सुंदर।
रूरि—क्रि. अ. [हि. रूरना] (१) चिल्ला कर। (२) विलाप करके। उ.—सर्गहि सबै चलो माधौ के ना तौ मरिहौ रूरि (रूरी)—१० उ.-८२।
रूरी—वि. स्त्री. [हि. रूरा] श्रेष्ठ, सुंदर। उ.—(क) दसकँवि दूध दतुरियाँ रूरी—१०-११७। (ख) आरोगत मुख की छवि रूरी—३९६।

रूष—संज्ञा पु. [हि. रूख] पेड़, वृक्ष।
रूषना, रूषनो - क्रि. अ. [हि. रोष] रूठना।
 संज्ञा पु.—अप्रसन्न होने या रूठने का भाव या कार्य। उ.—प्रानहि पियहि रूषनो कैसौ सुन बृषभानु दुलारी—२२७५।
रूषा—संज्ञा पु. [हि. रूख] पेड़, वृक्ष।
 वि. [हि रूखा] (१) शुष्क। (२) कठोर।
रूषि—क्रि. अ. [हि. रूसना] अप्रसन्न होकर, रूठकर।
 प्र०—रूषि रही—अप्रसन्न हो रही है, रूठी है।
 उ.—आजु तेरे तन मै नयो जोबन ठौर ठौर सु बन्यो पिय मिलि मेरे मन काहे रूषि रही बेकाज—२२०२।
रूषी—क्रि अ. [हिं. रूषना] रूठी, अप्रसन्न हुई। उ.—तू जु झुकति है और रूसने अब कहि कैसे रूषी—२२७५।
रूसन—संज्ञा प. [हि. रूसना] रूठने या अप्रसन्न होने का भाव या कार्य। उ.—तासो न रूसन कीजै हित कै मनाइ लीजै—२२३१।
रूसनहारी—वि. [हि. रूसना+हारी] रूठने या अप्रसन्न होने वाली। उ.—ज्यौ ज्यौ मैं निहोरे करौ त्यौ त्यौ यो बोलति है री अनोखी रूसनहारी—२०४७।
रूसना—क्रि. अ. [हि. रोष] रूठना, अप्रसन्न होना।
रूसने—क्रि. अ. [हिं. रूसना] रूठ जाने (पर)। उ.—तू जु झकति है और रूसने अब कहि कैसे रूषी—२२७५।
रूसनो—क्रि. अ. [हि. रूसना] रूठना।
रूसा—संज्ञा पु. [स. रूषक] 'अड़ूसा' वृक्ष।
 संज्ञा पु. [स. रोहिष] एक सुगंधित घास।
रूसि—क्रि अ. [हि. रूसना] अप्रसन्न होकर, रूठकर।
 उ. - (क) कहाँ मै जाउँ, कह धौ रहौ रूसिकै—१५८६। (ख) कहा चूक हमको पिय लागे रूसि रहे हौ काहे जू—१९६१।
रूसिबे—संज्ञा स्त्री. [हि. रूसना] अप्रसन्न होने या रूठने की। उ.—यह रितु रूसिबे की नाही—२१९४।
रूसे—वि. [हि. रूसना] रूठे हुए, अप्रसन्न। उ. - यह उपकार तुम्हारो सजनी रूसे कान्ह मिलाए री—पृ० ३१९ (८३)।

रूह—संज्ञा स्त्री. [अ.] (१) जीवात्मा। (२) सत्त, सार।

रूहना, रूहनो—क्रि. अ. [स. रोहण] उमडना।
क्रि. अ. [हि. रूंधना] घेरना, छेंकना।

रेंकना, रेकनो—क्रि. अ. [अनु.] (१) गदहे का बोलना। (२) भद्दे स्वर से गाना।

रेंगत—क्रि. अ. [हि. रेंगना] (१) घुटनो के बल या धीरे धीरे चलता है। उ.—(क) गिरि गिरि परत घुटुरुवनि रेंगत—१०-११३। (ख) ठुमुकि-ठुमुकि पग धरनी रेंगत—१०-१२६। (२) धीरे-धीरे चलता है। उ.—कोउ पहुँचे कोउ रेंगत मग मे—९१९। (३) घूमते-फिरते (हैं)। उ.—तुम्हरी कमल-बदन कुम्हिलैहै रेंगत घामहि माँझ—४११।

रेंगना—क्रि. अ. [स. रिंगण] (१) कीड़ो आदि का पेट के बल चलना। (२) शिशु का घुटनो के बल या ठुमक ठुमककर चलना। (३) धीरे-धीरे चलना, घूमना-फिरना।

रेंगनि, रेंगनियाँ—संज्ञा स्त्री. [हि. रेंगना] शिशु की घुटनों या ठुमक-ठुमक चलने की क्रिया। उ.—(क) धूसर धूरि घुटुरुवनि रेंगनि—१०-१०५। (ख) मै बलिहारी रेंगनियाँ—१०-१३२।

रेंगनो—क्रि. अ. [स. रिंगण] (१) कीड़ो आदि का पेट के बल चलना। (२) शिशु का घुटनो के बल या ठुमुक-ठुमुककर चलना। (३) धीरे-धीरे चलना या घूमना-फिरना।

रेंगाना, रेंगानो—क्रि. स. [हि. रेंगना] (किसी को) रेंगने को प्रवृत्त करना।

रेंगै—क्रि. अ. [हि. रेंगना] (शिशु) घुटनो के बल या ठुमुक-ठुमुक कर चले। उ.—कब मेरौ लाल घुटुरुवन रेंगै, कब धरनी पग द्वैक धरै—१०-७६।

रेंड—संज्ञा पु. [स. एरण्ड] एक पेड़।

रेंडना—क्रि. अ. [हि. रेंड] पेड़-पौधे का बढना।

रेंडी—संज्ञा स्त्री. [हि. रेंड] रेंड़ के बीज।

रेंरना, रेंरनो—क्रि. अ. [अनु.] बच्चे का धीरे-धीरे रोना।

रे—अव्य. [स.] (१) पुरुष के लिए संबोधन शब्द। उ.—(क) रामहिं राम पढौ रे भाई—७-२। (ख) रे पिय, लंका बनचर आयौ—९-११९। (ग) रे रे अध बीसहू लोचन पर-तिय हरन बिकारी—९-१३२। (२) पहिलिंग वर्ग के पदार्थ आदि के लिए संबोधन शब्द। उ.—रे मन, छाँड़ि बिषय को रँचिबौ—१-५९।

रेख—संज्ञा स्त्री. [स. रेखा] (१) लकीर, रेखा। उ.—अति बिसाल बारिज-दल लोचन राजति काजर-रेख री—१०-१३६।

मुहा०—रेख काढना, (खाँचना, खीचना या बनाना)—(१) लकीर बनाना। (२) जोर देकर या निश्चय पूर्वक कहना। काढति रेख—रेखा बनाती है। उ.—तृन तोरचो गुन जात जिते गुन काढति रेख मही। रेख बनाई—रेखा खीची। उ.—भृकुटि बिच तकि मृगमद की रेख बनाई—६१६। रेख देना—रेखा खीचकर सीमाबद्ध करना। दै रेख—रेखा द्वारा सीमा बद्ध करके। उ.—गयौ सो दै रेख, सीता कह्यौ सो कह्यौ न जाई—९-६०।

(२) निशान, चिह्न।

यौ०—रूप-रेख—आकार, ढाँचा, प्रारभिक रूप।

(३) गिनती, गणना। (४) लेखा, लिखावट।

यौ०—कर्मरेख, करमरेख—भाग्य का लेख। उ.—सूर सीय पछिताति यहै कहि, करम-रेख मेटी नहिं जाई—९-५९।

(५) निकलती हुई नयी मूछे।

मुहा०—रेखा आना, भीजना या भीनना निकलती हुई मूछें दीख पड़ना।

रेखता—संज्ञा पु. [फा.] एक प्रकार का गाना जो अरबी-फारसी मिश्रित हिंदी में होता था और जिससे 'उर्दू' को बहुत समय तक 'रेखता' कहा जाता रहा।

रेखना—क्रि. स. [हि. रेखा] (१) रेखा खीचना। (२) खरोचना।

रेखनि—संज्ञा स्त्री. बहु. [हि. रेखा] रेखाएँ। उ.—कर कपोल भुज धरि जंघा पर लेखति माइ नखन की रेखनि—२७२२।

रेखनो—क्रि. स. [हि. रेखना] (१) रेखा बनाना। (२) खरोंच डालना।

रेखहि—क्रि. स. [हि. रेखना] रेखा या चिह्न बनाये। उ.—बनमाला तुमको पहिरावहि धातु-चित्र तनु रेखहि—४२६।

रेखांकन—सज्ञा पुं. [स.] (१) रूप-रेखा अंकित करने का कार्य। (२) रेखाचित्र।

रेखा—सज्ञा स्त्री [स.] (१) लकीर। (२) लिखावट।
यौ०—कर्मरेखा या भाल की रेखा—भाग्य में लिखी बात, भाग्य-लेख। उ.—सूर न मिटै भाल की रेखा—९-११६।
(३) गिनती, गणना। (४) सूरत-शक्ल, आकार। (५) हथेली, तलुए आदि की लकीरें।

रेखागणित—सज्ञा पु. [स.] गणित का वह विभाग जिसमें रेखाओं द्वारा अनेक प्रकार के सिद्धांत निश्चित किये जाते हैं।

रेखाचित्र—सज्ञा पु. [स.] (१) केवल रेखाओ से बना चित्र। (२) शब्द-चित्र।

रेखित—वि. [स. रेखा] (१) अंकित, लिखित। (२) जिस पर रेखा पड़ी हो। (३) मसका या फटा हुआ।

रेखी—सज्ञा स्त्री. [स रेखा] रेखा, पंक्ति। उ.—कोमल नील कुटिल अलकावलि रेखी राजति भाल—३३३३।

रेखें—सज्ञा स्त्री. बहु. [स. रेखा] रेखाएँ। उ—(क) अब क्यौ मिटत हाथ की रेखे—३१४८। (ख) गनतहिं गनत गई सुनि सजनी कर अँगुरिन की रेखे—३१९०।

रेखै—क्रि. स. [हि. रेखना] रेखा खींचती या चित्र बनाती है। उ.—भीति बिन कर चित्र रेखै—२०४३।

रेखो, रेखौ—क्रि. स. [हिं. रेखना] रेखा खींचते या खींचती या अथवा चित्र अंकित करते या करती हो।
प्र०—चित्र करति रखौ—चित्र अंकित करती हो उ.—भीति बिनु चित्र तुम करति रेखौ—१२४६।

रेग—सज्ञा स्त्री. [फा.] बालू।

रेगिस्तान—सज्ञा पु. [फा.] मरुस्थल।

रेचक—वि. [स.] जिसके खाने से दस्त आ जाय।
सज्ञा पु.—प्राणायाम की तीसरी क्रिया जिसमें स्वांस को विधिपूर्वक बाहर निकालने का अभ्यास किया जाता है। उ.—सब आसन रेचक अरु पूरक कुंभक सीखे पाइ—३१३४।

रेचन—सज्ञा पु. [स.] दस्त लाने की औषध।

रेचना, रेचनो—क्रि. स. [स. रेचन] दस्त लाना।

रेजगारी, रेजगी—संज्ञा स्त्री. [फा.] छोटे सिक्के।

रेजा—सज्ञा पु. [फा. रेजा] छोटा टुकडा या खंड।

रेणु—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) धूल। (२) बालू।

रेणुका—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) धूल। (२) बालुका। (३) परशुराम की माता का नाम।

रेत—सज्ञा स्त्री. [स. रेतजा] (१) बालू। उ.—सूरदास जन ते बिछुरे ज्यौ कृत राई रेत—३३०९।

रेतना, रेतनो—क्रि स. [हिं. रेत] (१) रेती या वैसे ही किसी औजार से रगड़ना। (२) धीरे-धीरे काटना।

रेतला—वि. [हि. रेतीला] रेतीला, बलुआ।

रेता—सज्ञा स्त्री. [हि. रेत] (१) धूल। (२) बालू।

रेती—सज्ञा स्त्री. [हि. रेतना] रेतने का औजार।
सज्ञा स्त्री. [हि. रेत] बालू, रेत।

रेतीला—वि. पु. [हि. रेत+ईला] बलुआ।

रेनु—सज्ञा स्त्री. [स रेणु] (१) धूल। उ.—(क) लै लै चरन-रेनु निज प्रभु की रिपु के स्रोनित न्हात—९-१४७। (ख) माधौ, मोहिं करौ बृंदाबन-रेनु—४८९। (ग) करहु मोहि ब्रज-रेनु—४९२। (२) रेत। (३) धूल के कण। उ.—भूमिरेनु कोउ गनै—२-३६।

रेनुका—सज्ञा स्त्री. [स रेणुका] (१) धूल। (२) बालू। (३) परशुराम की माता का नाम।

रेफ—सज्ञा पु [सं.] (१) रकार (र)। (२) 'रकार' का वह रूप जो किसी अक्षर के ऊपर लगता है।

रेरना, रेरनो—क्रि. स. [हि. रे+करना] 'रे' कहकर या दुलार-तिरस्कार के साथ पुकारना।

रेल—सज्ञा स्त्री. [हि. रेलना] (१) बहाव, धारा। (२) अधिकता, भरमार।

रेलठेल—सज्ञा स्त्री. [हि. रेलना+ठेलना] (१) भीड़-भड़क्का। (२) भरमार, अधिकता।

रेलना, रेलनो—क्रि. स. [देश.] (१) ढकेलना, धक्का देकर आगे बढ़ाना। (२) खूब ठूँस-ठूँस कर खाना।
क्रि. अ.—ठसाठस भरा होना।

रेल-पेल—सज्ञा स्त्री. [हिं. रेलना+पेलना] (१) भीड़-भाड़। (२) अधिकता।

रेला—सज्ञा पु. [देश.] (१) जल-प्रवाह। (२) धावा। (३) धक्कमधक्का। (४) अधिकता। (५) समूह।

रेलि—क्रि. वि. [हि. रेलना] अधिकता से । उ.—फूली माधवी मालती रेलि—२४०७ ।

रेवड़—सज्ञा पु [देश.] भेड़-बकरी का झुड ।

रेवड़ी—सज्ञा स्त्री. [देश.] चीनी या गुड के पाग में तिल चिपका कर बनायी गयी टिकिया ।

रेवत—सज्ञा पु. [स.] (१) एक राजा जिसकी पुत्री रेवती बलराम को ब्याही थी । (२) एक पर्वत । उ.–द्वारका माँह उत्पात बहु भाँति करि बहुरि रेवत अचल गयौ धाई—१० उ.-४३ ।

रेवती—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) सत्ताईसवाँ नक्षत्र । (२) बलराम की पत्नी जो राजा रेवत की कन्या थी । उ. —रविबशी भयौ रैवत राजा।' । ता गृह जन्म रेवती लयौ ।'' । हलधर कौ तुम देहु बिबाहि—९-४ ।

रेवतीरमण—सज्ञा पु [स.] (१) बलराम । (२) विष्णु ।

रेवा—सज्ञा स्त्री. [स] नर्मदा नदी जिसके किनारे किसी समय हाथी बहुत पाये जाते थे । उ.—मनहुँ सेज रेवा हृद ते उठि आवत है गजराज—२१८५ ।

रेवाउतन—सज्ञा पु. [स. रेवा+उत्पन्न] हाथी (रेवा-तट किसी समय हाथियो की अधिकता के लिए विख्यात था) ।

रेशम—सज्ञा पु. [फा.] एक तरह का महीन चमकीला और चिकना रेशा जो एक प्रकार के कीड़े तैयार करते है, पाट, कौशेय ।

रेशमी—वि. [फा.] रेशम का बना हुआ ।

रेशा—सज्ञा पु [फा.] तंतु या महीन सूत ।

रेष—सज्ञा स्त्री [हि. रेख] रेख, रेखा ।

रेसम—सज्ञा पु. [फा. रेशम] एक तरह का महीन चमकीला और चिकना रेशा जो एक प्रकार के कीड़े तैयार करते है, पाट, कौशेय । उ —(क) पँचरँग रेसम लगाउ—१०-४१ । (ख) रतन जटित बर पालनौ रेसम लागी डोर—१०-४७ (ग) रेसम बनाइ नव-रतन पालनौ—१०-४८ ।

रेसमी—वि. [फा. रेशमी] रेशम का ।

रेसा—सज्ञा पु. [फा. रेशा] ततु या महीन सूत ।

रेह—सज्ञा स्त्री. [देश.] खार मिली मिट्टी ।

सज्ञा स्त्री. [स. रेख] लकीर, रेखा ।

रेहन—सज्ञा पु. [फा.] बंधक, गिरवीं ।

रेहुआ—वि. [हि. रेह] जिसमें रेह अधिक हो ।

रेहू—सज्ञा पु. [हि. रोहू] एक तरह की मछली ।

रैंगति—क्रि. अ. [हि. रेंगना] धीरे धीरे चलना । उ.—एक ग्वालि गो-सुत ह्वै रैंगति—३४८४ ।

रैता–सज्ञा पु. [देश] श्रीकृष्ण का सखा एक ग्वाल-बाल । उ.—रैता पैता मना मनसुखा हलधर सगहि रैहौ—४१२ ।

रैतिक—वि [स] पीतल का ।

रैतुआ, रैतुवा—सज्ञा पु [हि. रायता] रायता ।

रैदास—सज्ञा पु. [देश] (१) एक प्रसिद्ध भक्त जो जाति का चमार और रामानद का शिष्य था । (२) चमार ।

रदासी—वि. [हि. रैदास] रैदास के सप्रदाय का ।

रैन, रैना– सज्ञा स्त्री. [स. रजनी] रात, रात्रि ।

रैना—क्रि. अ. [स. रजन] (१) रँगा जाना । (२) मुग्ध, आसक्त या अनुरक्त होना ।

क्रि. स.—(१) रँगना । (२) अनुरक्त करना ।

रैनि, रैनी—सज्ञा स्त्री. [स. रजनी] रात, रात्रि । उ.—रवि बहु चढयौ रैनि सब निघटी—४०८ । (ख) आजु रैनि नहि नीद परी—२५४४ ।

रैनो—क्रि. अ. [स. रजन] (१) रँगा जाना । (२) मुग्ध, आसक्त या अनुरक्त होना ।

क्रि. स.—(१) रँगना । (२) अनुरक्त करना ।

रैयत—सज्ञा स्त्री. [अ.] प्रजा ।

रैया—सज्ञा पु [हि. राव] छोटा राजा । उ.—जानि रिपु हानि तजि कानि यदुराज की बबकि उठि फूलि बसुदेव रैया—२६०७ ।

रैयाराव—संज्ञा पु. [हि. राजा+राव] (१) छोटा राजा । (२) सामतो की एक प्राचीन उपाधि ।

रैवंता—संज्ञा पु [हि. रज+वत] घोड़ा ।

रैवत—संज्ञा पु. [स.] (१) गुजरात का एक पर्वत । (२) एक सूर्यवशी राजा जिसकी पुत्री रेवती बलराम को ब्याही थी । उ —रविबसी भयौ रैवत राजा । ता गृह जन्म रेवती लयौ । ' रैवत ब्याह कियौ भुवि आइ । । हलधर ब्याह भयौ या भाइ —९-४ ।

रैवतक—सज्ञा पु. [स] गुजरात का एक पर्वत जहाँ अर्जुन ने सुभद्रा का हरण किया था।

रैसा—सज्ञा पु [स रेष] कलह, युद्ध।

रैहर—सज्ञा पु [स. रेष] लडाई, कलह।

रैहै—क्रि. अ [हि. रहना] रहेगा, बसेगा। उ.—नैकु सुनत जो पैहौ ताकै, सो कैसै ब्रज रैहै री—७११।

रैहौ—क्रि. अ. [हि. रहना] (साथ) रहूँगा। उ.—हलधर सर्गहि रैहौ—४१२।

रैहौ—क्रि अ [हि. रहना] रहना। उ—मोहि नियरै तुम रैहौ—६८०।

प्र०—रैहौ—मानोगे। उ.—हम जानति तुम यौ नहि रैहौ, रैहौ गारी खाइ—१०२९।

रोग, रोगटा—सज्ञा पु. [स. रोमक, प्रा० रोअक, हि. रोग+टा] शरीर का रोम या रोआँ।

रोगटि, रोगटी—सज्ञा स्त्री [हि रोना] खेल मे बुरा मानना या बेइमानी करना। उ.—रोगटि करत तुम खेलत ही मे, परी कहा यह बानि।

रोगटे—सज्ञा पु. बहु. [हि. रोगटा] रोम।

मुहा०—रोगटे खडे होना—भयानक या क्रूर कर्म देखकर जी दहलना।

रोठा—सज्ञा पु. [देश] कच्चे आम की सूखी फाँक।

रोवॅ—सज्ञा पु [स. रोम] शरीर के रोम।

रो—क्रि. अ. [हि. रोना] रुदन या विलाप करो।

मुहा०—रो बैठना—निराश होकर रह जाना। रो रोकर—(१) दुख और कष्ट के साथ। (२) बहुत रुक-रुककर। रो-रोकर घर भरना—बहुत विलाप करना। रो-गाकर—दु ख के साथ और गिड़गिड़ाकर।

रोऑ—सज्ञा पु. [हि. रोयाँ] शरीर के रोम।

रोआइ, रोआई—सज्ञा स्त्री. [हि. रुलाई] रुलाई।

रोआसा—वि. [हि. रोना+आसा] जो रोने को हो।

रोइ—क्रि. अ. [हि. रोना] रोकर, विलाप करके। उ.—(क) मातु-पिता अतिही दुख पावत, रोइ रोइ सब कृष्न बुलावत—५४९। (ख) नद पुकारत रोइ—५८९।

प्र०—दीन्हौ रोइ—रो दिये, रो पडे। उ.—भीर देखत अति डराने दुहुँनि दीन्हौ रोइ १०-२९०।

रोइँ—सज्ञा पु [हि. रोवँ] रोम, रोगटा।

रोऊ—वि [हि. रोना] रोनेवाला। उ—निर्बिन, नीच कुलज, दुर्बुद्धी, भोदू, नित को रोऊ—१-१८६।

रोएँदार—वि [हि. रोआँ+फा दार] जिसके या जिसमे बहुत रोम या रोएँ हो।

रोए—क्रि. अ [हि. रोना] रो दिये। उ—काल-बली तै सब जग काँप्यौ, ब्रह्मादिक हूँ रोए—१-५२।

रोक—सज्ञा स्त्री. [स रोधक] (१) बाधा, अटकाव, अवरोध। (२) मनाहीं, निषेध। (३) काम मे बाधा। (४) रोकनेवाली वस्तु। उ—आनदे मधुबन के वासी गई नगर की रोक—१० उ०-२।

सज्ञा पु. [स. रोक=नगद] रोकड़।

रोकटोक—सज्ञा स्त्री. [हि. रोकना+टोकना] (१) कार्य में बाधा या प्रतिबध। (२) मनाही, निषेध।

रोकड़—सज्ञा स्त्री. [स रोक] (१) नगद रुपया। (२) पूँजी जो किसी व्यापार में लगायी जाय।

रोकत—क्रि. स [हि. रोकना] (१) रोकता या बाधा डालता है। उ—काहे को रोकत मारग सूधो। (२) अधिकार मे लेता या करता है। उ.—इक मारत इक रोकत गेदहि—५३३।

रोकनहार, रोकनहारा—वि. [हि. रोकना+हार] रोकने या बाधा देनेवाला। उ.—सूर ऐसौ कौन जो पुनि तुमहि रोकनहार—११७१।

रोकना, रोकनो—क्रि. स [हि रोक] (१)चलने या बढने न देना। (२) जाने से मना करना। (३) कार्य स्थगित करना। (४) मार्ग छेकना। (५) अड़चन या बाधा डालना। (६) वर्जन या मना करना। (७) ऊपर लेना, ओटना। (८) वश मे करना। (९) सेना का सामना करना।

रोकि—क्रि. स. [हि रोकना] (१) मार्ग छेंककर। उ.—रोकि रहत गहि गली—१०-३२८।(२) वश मे रखकर। उ.—प्रान कहाँ लौ राखौ रोकि—९-९२।

रोके—क्रि. स. [हि रोकना] (द्वार आदि पर अधिकार करके) मार्ग अवरुद्ध किये हुए। उ.- द्वार कपाट कोटि भट रोके—१०-११।

रोक्यो, रोक्यौ—क्रि. स. [हि. रोकना] वर्जन या मना

किया। उ.—हरि-दरसन कौं जात क्यौं रोक्यौ बिना बिचार—३-११।

रोख, रोखा—सज्ञा पु. [स. रोष] गुस्सा, क्रोध।

रोग—सज्ञा पु. [स.] बीमारी, व्याधि।

मुहा०—रोग लेना—माता, पिता आदि गुरुजनो का बालको को स्वस्थ रखने के लिए उनका रोग-धोग अपने ऊपर लेने की कामना करना। लीन्हे रोग—(बालको के) रोग-धोग अपने ऊपर लेने की कामना की। उ.—सूर स्याम गाइन सँग आए मैया लीन्हे रोग—४९३।

रोगग्रस्त—वि. [स.] बीमार, रोग से पीड़ित।

रोगन—सज्ञा पु. [फा रौगन] (१) चिकनाई। (२) पालिश जिससे कोई वस्तु चमकने लगे।

रोगिणि, रोगिणी, रोगिनि, रोगिनी—वि. स्त्री. [स. रोगिणी] बीमार (स्त्री)।

रोगिया—वि. [हिं. रोग] रोगी, बीमार। उ.—यथा-योग ज्यौ होत रोगिया कुपथी करत नई।

रोगी—वि. [हि. रोग] बीमार, अस्वस्थ। उ.—(क) कलहा, कुही, मूष रोगी—१-१८६। (ख) अंध छीन जे रोगी—३२०६।

रोचक—वि. [स.] (१) रुचनेवाला। (२) मनोरजक।

रोचकता—सज्ञा स्त्री. [स.] रोचक होने का भाव।

रोचन—वि. [स.] (१) रुचनेवाला। (२) प्रिय। (३) लाल (रग का)। उ.—मिलि रिस रुचि लोचन भए रोचन चितवत चित्त पराई ओर—२१३१।

सज्ञा पु.—(१) रोली, रोचना। उ—(क) कनक-थार भरि दधि-रोचन लै बेगि चलौ मिलि गावति—१०-२३। (ख) रोचन भरि लै देत सीक सौं स्रवन निकट अति ही चातुर की—१०-१८०। (२)गोरोचन।

रोचना—सज्ञा स्त्री. [स. रोचन] रोली। उ.—एकनि माथै दूब-रोचना—१०-२५।

रोचि—सज्ञा स्त्री. [स. रोचिस] (१) प्रभा, शोभा। (२) किरण।

रोज—सज्ञा पु. [स. रोदन] रोना-धोना, विलाप।

सज्ञा पु. [फा. रोज] दिन, दिवस।

अव्य.—प्रतिदिन, नित्य।

रोजगार—सज्ञा पु. [फा रोजगार] (१) पेशा, उद्यम।

मुहा०—रोजगार चमकना—पेशे में लाभ होना। रोजगार छूटना—बिना पेशे के होना। रोजगार चलना—पेशे में लाभ होने लगना। रोजगार लगना—पेशा मिल जाना। रोजगार लगाना—पेशे का प्रबध कर देना। रोजगार से होना-पेशा मिल जाना।

(२) तिजारत, व्यापार।

रोजमर्रा—अव्य. [फा. रोजमर्रा] प्रतिदिन, नित्य।

रोजा—सज्ञा पु. [फा रोजा] (१) व्रत। (२) रमजान के ३० दिनो का व्रत।

रोजाना—क्रि. वि. [फा. रोजाना] प्रतिदिन, नित्य।

रोजी—सज्ञा स्त्री. [फा. रोजी] जीविका।

रोजीना—सज्ञा पु. [फा. रोजीना] प्रतिदिन का।

रोट—सज्ञा पु. [हिं रोटी] (१) मोटी रोटी। (२) पूआ।

रोटिका—सज्ञा स्त्री. [हि. रोटी] छोटी रोटी।

रोटिहा—वि. [हिं. रोटी+हा] केवल भोजन पर रहने वाला (सेवक)।

रोटी—सज्ञा स्त्री. [देश] (१) चपाती, फुलका। उ.—(क) गोपालराय दधि माँगत अरु रोटी—१०-१६३। (ख) रोटी रुचिर कनक बेसन करि—२३२१। (२) भोजन, रसोई।

मुहा०—रोटी कपडा—खाना-कपड़ा। रोटी कमाना—जीविका का अर्जन करना। रोटी को रोना—भूखो मरना। रोटी का मारा—भोजन के बिना दुखी। किसी के यहाँ रोटी तोडना—किसी का दिया खाना। रोटी लगना—भोजन पाकर इतराना। रोटी लगाना—जीविकार्जन का साधन निश्चित कर देना। रोटी-दाल से खुश—अच्छा खाता-पीता। रोटी-दाल चलना—जीवन-निर्वाह होना।

रोड़ा—सज्ञा पु. [स. लोष्ठ, प्रा. लोट्ट] पत्थर का टुकड़ा।

मुहा०—रोडा अटकाना या डालना—बाधा या अड़चन डालना।

रोदन—सज्ञा पु. [स] रोना, क्रंदन। उ.—(क) माता ताको रोदन देखि, दुख पायौ मन माहि बिसेखि। (ख) तब इक पुरुष भौह तैं भयौ, होत समय तिन रोदन ठयौ—३-७।

रोदसि, रोदसी—सज्ञा स्त्री [स. रोदसि] (१) स्वर्ग। (२) भूमि, पृथ्वी।

रोदा—सज्ञा पु [स रोध] धनुष की डोरी।

रोध सज्ञा पु [स रोध] (१) रुकावट, बाधा। (२) तट, किनारा।

रोधक—सज्ञा पु [स.] रोकनेवाला।

रोधन—सज्ञा पु. [स.] (१) रुकावट। (२) दमन।

रोधना, रोधनो—क्रि स. [स. रोधन] रोकना।

रोन—सज्ञा पु [स. रमण] रमण।

रोना—क्रि. अ [स रोदन, प्रा रोअन] (१) रुदन या विलाप करना, दुख से आँसू बहाना।

मुहा०—रोना-कलपना या रोना-धोना—विलाप करना। रोना-पीटना—छाती या सिर पीटकर रोना। किसी वस्तु को रोना—वस्तु-विशेष के लिए बहुत दुखी होना। रोना-गाना—बहुत दुख से और गिड़-गिड़ाकर कहना।

(२) चिढ़ना, बुरा मानना। (३) पछताना।

सज्ञा पु. दुख, शोक।

मुहा०—रोना या रोना-पीटना पड़ना—शोक छा जाना।

वि.—(१) छोटी सी बात पर भी बहुत दुखी होने वाला। (२) बात-बात पर खीझने और चिढ़नेवाला। (३) हर समय रोवांसा रहनेवाला।

रोनी धोनी—वि. स्त्री. [हि. रोना+धोना] हर समय दुखी रहकर आँसू बहानेवाली।

सज्ञा स्त्री. मनहूसियत।

रोप—सज्ञा पु [स.] ठहराव, रुकावट।

रोपक—वि. [स.] रोपनेवाला।

रोपण—सज्ञा स्त्री. [सं.] (१) स्थापित करना। (२) (बीज या पौधा) जमाना या उगाना। (३) मोहित या मुग्ध करना।

रोपना—क्रि. स. [स रोपण] (१) (पौधा) जमाना या उगाना। (२) पौधे को एक स्थान से उखाड़कर दूसरे पर लगाना। (३) दृढता के साथ स्थापित करना। (४) बीज बोना। (५) मोहित करना। (६)(हाथ या बर्तन) फैलाना या बढ़ाना।

मुहा०—हाथ रोपना—माँगने को हाथ फैलाना।

रोपनी—सज्ञा स्त्री [हिं. रोपना] रोपने का काम।

रोपनो—क्रि. स [हि. रोपना] (१) (पौधा) जमाना। (२) (बीज) उगाना। (३) पौधा एक स्थान से उखाड़ कर दूसरे पर लगाना। (४) दृढ़ता से स्थापित करना। (५) कुछ माँगने को (हाथ या पात्र) फैलाना या बढ़ाना। (६) मोहित करना।

रोपित—वि [स.] (१) लगाया या जमाया हुआ। (२) स्थापित। (३) खड़ा किया हुआ।

रोपी—क्रि. स. [हि. रोपना] (१) दृढता से स्थापित की। उ.—रोपी सुथिर थुनी—१०-२४। (२) मुग्ध हुई। उ.—अँखियाँ स्याम रूप रोपी—३४८७।

रोपै—क्रि. स [हि रोपना] दृढता से स्थापित करते है। उ.—मालिनि बाँधै तोरना (रे) आँगन रोपै केरि—१०-४०।

रोप्यो, रोप्यौ—क्रि. स. [हि रोपना] (१) लगाया, जमाया (२)। उ.—रोप्यौ द्वार सुभगति कलपतर—१० उ०-७०। दृढता के साथ स्थापित किया। उ. (क)—बीच सभा अगद पद रोप्यौ। (ख) सर-पजर रोप्यो चहुँ दिसि ते जहाँ पवन नहि जाय—सारा (५१)।

रोब—सज्ञा पु [अ. रूअब) धाक, आतक।

मुहा०—रोब जमाना—आतक बैठाना। रोब मिट्टी मे मिलना (मिटना)—धाक न रह जाना। रोब मिट्टी मे मिलाना (मिटाना)—प्रभाव नष्ट करना। रोब दिखाना—प्रभाव डालना। रोब मे आना—(१) प्रभावित होना। (२) भय मानना।

रोबदार—वि. [अ.] प्रभावशाली, तेजस्वी।

रोम—सज्ञा पु [स. रोमन्] (१) रोयाँ, रोंगटा, लोम। उ—(क) सूर स्याम के एक रोम पर देउँ प्रान बलिहारी—१०-१३७। (ख) इक इक रोम बिराट किए तन किटि कोटि ब्रह्माड—४८७।

मुहा०—रोम-रोम प्रति-प्रत्येक रोंगटे में। उ.—जिह्वा रोम-रोम प्रति नाही पौरुष गनौं तुम्हारे—९-१४७। रोम रोम मे—सारे शरीर में। रोम रोम से—सच्चे हृदय से, तन मन से।

(२) छेद, छिद्र।

रोमकूप—सज्ञा पु. [स] छिद्र जिनसे शरीर के रोयें निकले होते हैं।

रोमनि—सज्ञा पु. सवि [हिं रोम+नि] रोम में। उ.—सत सत अघ प्रति रोमनि—१-१९२।

रोमपाट—सज्ञा पु. [स.] ऊनी कपडा।

रोमराजी—सज्ञा स्त्री. [स] (१) रोमावली। (२) नाभि से पेट तक की रोम-पक्ति। उ.—राजति रोमराजी रेष—६३५।

रोमलता—सज्ञा स्त्री. [स.] नाभि से पेट तक की रोम-पक्ति।

रोमहर्ष—सज्ञा पु [स.] रोगटे खड़े होना।

रोमहर्षण—वि [स.] जिससे रोगटे खडे हो, भयकर।

रोमांच—सज्ञा पु. [स.] (१) भय से रोओ का खड़े होना। (२) हर्ष से रोओ का खड़े होना। उ.—तनु पुलकित रोमाच प्रगट भए आनद अश्रु बहाइ—७५८।

रोमांचित—वि. [स.] (१) हर्षित। (२) भयभीत।

रोमालि, रोमाली—सज्ञा स्त्री. [स.] रोमावली।

रोमावलि, रोमावली—सज्ञा स्त्री. [स] (१) रोयों की पक्ति। (२) नाभि से पेट तक की रोम-पक्ति। उ. —(क) रुचिर रोमावली हरि कै चारु उदर प्रदेस—६७४। (ख) रोमावली अनूप बिराजति जमुना की अनुहारि—६३७। (ग) उर सुदेस रोमावलि राजति —पृ. ३४० (९३)।

रोमिल—वि. [स. रोम] रोयेदार।

रोयाँ—सज्ञा पु. [हि. रोम] रोम, लोम।

मुहा०—एक रोयाँ न उखडना—जरा भी हानि न होना। रोयाँ खडा होना—(१) हर्षित होना। (२) भयभीत होना। रोयाँ पसीजना—तरस आना।

रोयो, रोयौ—क्रि. अ. [हि रोना] रुदन किया।

मुहा०—नख-सिख तै रोयौ—तन-मन से बहुत दुखी होकर पछताया। उ.—चारु मोहिनी आइ आँध कियौ, तब नख-सिख तै रोयौ—१-४३।

रोर, रोरा—सज्ञा स्त्री. पु. [स रवण, हि रोर] (१) कोलाहल। उ.—जिनके जात बहुत दुख पायो, रोर परी यहि खेरे। (२) रोने-चिल्लाने का शब्द। (३) पक्षियो का कोलाहल। उ.—तमचुर खग-रोर सुनहु बोलत बनराई—१०-२०२। (३) उपद्रव, हलचल। (४) अत्याचार, दुख, कष्ट। उ.—रोर कै जोर तै सोर घरनी कियौ—१-५।

वि.—(१) प्रचड। (२) उपद्रवी, अत्याचारी।

रोरि, रोरी—सज्ञा स्त्री. [हि रोली] रोली। उ.—(क) मुख-मडित रोरी रँग सेंदुर माँग छुही—१०-२४। (ख) काजर-रोरी आनहू (मिलि) करौ छठी कौ चार—१०४०।

सज्ञा स्त्री. [हि. रोर] चहल-पहल, धूम। उ. —रोरि परी गोकुल मै जहँ तहँ—२५२१।

वि. [हि रूरा] सुदर, रुचिर। उ.—उर बन-माल काछनी काछे करि किकिनि छवि रोरी—पृ ३४५ (३९)।

रोरित, रोरीत—वि. [हि. रोर] कोलाहलपूर्ण।

रोल—सज्ञा स्त्री पु [हि रोर] (१) शोर, कोलाहल। (२) ध्वनि, शब्द। उ.—आजु भोर, तमचुर के रोल। गोकुल मै आनद होत है, मगल धुनि महराने टोल—१०-९४।

रोला—सज्ञा पु. [हि रोर] (१) शोर। (२) घोर युद्ध।

सज्ञा पु. [स.] एक छद (पिगल)।

रोली—सज्ञा स्त्री. [स. रोचनी] चूने-हल्दी से बनी लाल बुकनी, पूजा के अवसर पर जिसका टीका या तिलक लगाया जाता है।

रोवत—क्रि. अ. [हि रोना] रोता या विलाप करता है। उ.—(क) लीन्हे गोद बिभीषन रोवत—९-१६०। (ख) मूँदि मुख छिन सुसुकि रोवत—३६०।

रोवति—क्रि अ [हि. रोना] रोती है। उ.—तासु बृषभ कै पग त्रय नाहि, रोवति गाइ देखि करि ताहि —१-२९०।

रोवन—सज्ञा पु. [हि. रोना] रोने का कार्य या भाव।

प्र०—रोवन लग्यौ—रोने लगा। उ.—रोवन लग्यौ मृतक सो जान—१-२९०।

रोवनहार, रोवनहारा—वि. [हि. रोवना+हार] रोने या शोक करनेवाला।

रोवना—क्रि. अ. [हि. रोना] रुदन करना।

वि.—(१) जल्दी ही रो देनेवाला। (२) जल्दी बुरा मान जाने या चिढनेवाला।

रोवनिहार, रोवनिहारा—वि. [हिं. रोवनहार] रोने या शोक करनेवाला।

रोवनी-धोवनी—संज्ञा स्त्री. [हि. रोवना + धोवना] रोने-धोने की वृत्ति, मनहूसी।

वि.—रोनी सूरत बनाये रहनेवाली।

रोवनो—क्रि. अ. [हिं. रोना] रोना, रुदन करना।

वि. (१) जल्दी रो देनेवाला। (२) जल्दी चिढ़ने वाला।

रोवाँ—संज्ञा पु. [हि. रोयाँ] रोम, रोंगटा।

रोवासा—वि. [हिं. रोवना] रोने को तैयार।

रोवैं—क्रि. अ. [हि रोवना] रोते है। उ.—(क) रोवै वृषभ तुरग अरु नाग—१-२८६। (ख) पुत्र-कलत्र देखि सब रोवैं—१-१४१।

रोवैं—क्रि. अ. [हिं. रोवना] रोता हूं। उ.—कमलनैन हरि हिलकिनि रोवै—३४६।

रोवौ—क्रि. अ. [हि रोवना] रोता रहा। उ—हौ डरपौ काँपौ अरु रोवौ, कोउ नहि धीर धराउ—४८१।

रोशन—वि. [फा.] (१) जलता हुआ। (२) चमकदार। (३) प्रसिद्ध। (४) प्रकट।

रोशनाई—संज्ञा स्त्री. [फा.] (१) स्याही। (२) रोशनी।

रोशनी—संज्ञा स्त्री. [फा.] (१) प्रकाश। (२) दीपक। (३) दीपमाला का प्रकाश। (४) ज्ञान आदि का प्रकाश।

रोप—संज्ञा पु [स.] गुस्सा, क्रोध। उ.—(क) रोष बिषम किन्हौ रघुनदन सिय की बिपति बिचारि—९-१२४। (ख) इतनी कहि उकसारत बाहै रोष सहित बल धायौ—३७४। (२) द्वेष। (३) लडाई का जोश।

रोषी—वि. [स. रोपिन्] क्रोधी।

रोस—संज्ञा पु. [स. रोष] गुस्सा, क्रोध।

रोसी—वि. [स दोष] क्रोधी।

रोसनाई—संज्ञा स्त्री. [फा. रोशनाई] स्याही।

रोसनी—संज्ञा स्त्री. [फा. रोशनी] रोशनी।

रोह—संज्ञा पु. [देश.] नील गाय।

रोहण संज्ञा पु. [स.] (१) चढ़ाई। (२) उगना।

रोहना, रोहनो—क्रि. अ. [स. रोहण] (१) चढ़ना। (२) ऊपर उठना। (३) सवार होना।

क्रि. स —(१) चढ़ाना। (२) धारण करना।

रोहिणि, रोहिणी—संज्ञा स्त्री. [स. रोहिणी] (१) वसुदेव की एक पत्नी जो बलराम की माता थी। (२) सत्ताइस नक्षत्रो में चौथा जो चंद्रमा की स्त्री कहा गया है।

रोहिणीपति—संज्ञा पु. [स.] (१) चद्र। (२) वसुदेव।

रोहित—वि. [स.] लाल रंग का, लोहित।

संज्ञा पु.-(१) लाल रंग। (२) रक्त। (३) कुकुम।

रोहिनि, रोहिनी—संज्ञा स्त्री. [स. रोहिणी] (१) वसुदेव की स्त्री जो बलराम की माता थी। उ.—देखत नद जसोदा रोहिनि अरु देखत ब्रज लोग—४९३। (२) सत्ताइस नक्षत्रो मे चौथा। उ.—कृष्न पच्छ, रोहिनी, अर्द्ध निसि हर्षन जोग उदार—१०-८६।

रोही—वि. [स. रोहिन्] चढनेवाला।

संज्ञा पु. [देश.] एक हथियार।

रोहू - संज्ञा स्त्री [स. रोहिष] एक तरह की मछली।

रौट, रौटि—संज्ञा स्त्री. [हि. रोना] (१) खेल में बुरा मानना। (२) चिढ़कर बेईमानी करना। उ —रौटि करत तुम खेलत ही मै परी कहा यह बानि—५३४।

रौंथ—संज्ञा स्त्री. [देश.] चौपायो की जुगाली।

रौंद, रौंदन—संज्ञा स्त्री. [हि. रौंदन] रौंदने की क्रिया।

रौंदना, रौंदनो—क्रि. स. [स मर्दन] (१) पैरो से कुचलना। (२) लातो से मारना।

रौ—संज्ञा स्त्री. [फा.] (१) गति, चाल। (२) वेग, झोक। (३) पानी का बहाव। (४) किसी बात की धुन।

संज्ञा पु [स रव] (१) शोर। (२) ध्वनि। उ.—गोरभन गोपाल गरजनि घन धूमि दुदुभिन रौ की—२७५०।

रौगन—संज्ञा पु. [अ. रौगन] (१) तेल। (२) पक्का रग।

रौजा—संज्ञा पु. [अ रौजा] (१) बाग। (२) प्रसिद्ध कब्र।

रौणी—संज्ञा स्त्री. [स. रमणी] नारी, स्त्री।

रौत—संज्ञा पु. [हि रावत] ससुर।

रौताइन—संज्ञा स्त्री. [हि. राव, रावत] (१) रावत की स्त्री। (२) स्त्री के लिए आदरसूचक संबोधन।

रौताई—सज्ञा स्त्री [हि रावत+आई] रावत होने का भाव या पद।

रौद्र—वि. [स.] (१) रुद्र-संबधी। (२) भयंकर। (३) क्रोध-सूचक।

सज्ञा पु.—(१) क्रोध। (२) काव्य के नौ रसो में एक जिसमें क्रोध का वर्णन होता है।

रौद्रता—सज्ञा स्त्री. [स.] (१)भयकरता। (२) प्रचडता।

रौन—सज्ञा पु [स. रमण] (१) विलास, क्रीडा। (२) मैथुन। (३) घूमना, विचरना। (४) पति।

रौनक—सज्ञा स्त्री. [अ. रौनक] (१) चमक-दमक। (२) प्रफुल्लता। (३) शोभा, सुहावनापन।

रौना—सज्ञा पु. [स. रमण] गौना, मुकलावा।

सज्ञा पु. [हि रोना] दुख, शोक।

रौनी—सज्ञा स्त्री [स रमणी] (सुन्दरी) स्त्री।

रौप्य—सज्ञा पु. [स.] चाँदी, रूपा।

वि.—चाँदी का बना हुआ।

रौर, रौरई—सज्ञा स्त्री, पु. [हि रोर] शोर, कोलाहल। उ.—रैनि कहूँ फँग परे कन्हाई कहति सबै करि रौर—२०९०।

रौरव—वि. [सं.] (१) डरावना। (२) कपटी।

सज्ञा पु.—इक्कीस नरको मे पाँचवाँ।

रौरा—सज्ञा पु. [हि रौला] (१) शोर। (२) उद्यम।

सर्व. [हि. रावरा] आपका।

रौराना—क्रि. अ. [हि रोद, रोरा] प्रलाप करना।

रौरानी—क्रि. अ. [हि रौराना] प्रलाप करने लगी। उ.—अब यह और सृष्टि बिरहिनि की बकत बाइ रौरानी।

रौरानो—क्रि. अ. [हि रौराना] प्रलाप करना।

रौरि—सज्ञा स्त्री. [हि. रोर] शोर-गुल, कोलाहल। उ.—तिनके जात बहुत दुख पायो रौरि परी यहि खेरे—२६६४।

रौरे—सर्व [हि. राव, रावत] आप।

रौल, रौला—सज्ञा पु [स. रवण] (१) शोर। (२) उद्यम।

रौलि—सज्ञा स्त्री. [देश] चपत, धौल।

रौस—सज्ञा स्त्री. [फा रविश] (१) चाल, गति। (२) रग-ढग। (३) बाग की क्यारियो के बीच का मार्ग।

रौहार, रौहाल—सज्ञा स्त्री [देश.] घोड़ों की एक जाति।

वि. [फा रहवार] चलनेवाला।

ल

ल—देवनागरी वर्णमाला का अट्ठाईसवाँ व्यजन जिसका उच्चारण-स्थान दत है।

लंक—सज्ञा स्त्री. [स.] कमर, कटि। उ.—उर सुदेस रोमावलि राजति मृग-अरि की सी लक—पृ. ३४०-९३।

सज्ञा स्त्री. [स. लका] लका द्वीप जहाँ रावण का राज्य था। उ.—(क) गहि सारँग रन रावन जीत्यो, लक बिभीषन फिरी दुहाई—१-२४। (ख) जरिहै लक कनकपुर तेरौ उदवन रघुकुल भान—९-७९। (ग) लैहै लक बीस भुज भानी—९-११६।

लंकनाथ, लंकनायक—सज्ञा पु. [स. लका + नाथ, नायक] (१) रावण। (२) विभीषण।

लंकपति—सज्ञा पु. [सं. लका+पति] लंका का राजा रावण।

लंकपुर—सज्ञा पु. [स. लका+पुर] लका। उ—लक पुर आइ रघुराइ डेरा दियौ—९-१४२।

लंकपुरी—सज्ञा स्त्री. [स. लका+पुरी] लका।

लंका—सज्ञा स्त्री. [स.] भारत के दक्षिण का एक द्वीप जहाँ रावण का राज्य था। उ—(क) लका बसत दैत्य अरु दानव—९-८६। (ख) रे पिय, लका बनचर आयौ—९-११९।

लंकादाही—सज्ञा पु. [स लकादाहिन्] हनुमान।

लंकाधिपति—सज्ञा पु. [स.] रावण।

लंकापति—सज्ञा पु. [स.] (१) रावण। उ—(क) जनक-सुता हित हत्यौ लकापति—१-२५५। (ख) मारौ आजु लक लकापति—९-७५। (२) विभीषण।

लंकापति-अनुज—सज्ञा पु. [स.] (१) विभीषण। (२) कुंभकर्ण।

लंकापती—सज्ञा पु. [स. लंकापति] लंका का स्वामी या राजा। उ—आइ बिभीषन सीस नवायौ। देखत ही रघुबीर धीर कहि लकापती बुलायौ—९-११२।

लंकार—सज्ञा पु. [स. अलकार] भूषण, अलंकार, साज-शृंगार। उ.—बिधि सो धेनु दई बहु बिपुनि सहित सर्व लकार—२६२९।

लंकारि—सज्ञा पु. [स. लका+अरि] श्रीरामचद्र।

लंकाल—सज्ञा पु. [हिं.] शेर, सिह।

लंकिनी—सज्ञा स्त्री [स.] एक राक्षसी जिसे, लका में प्रवेश करते समय हनुमान ने मारा था।

लंकृत—वि. [स. अलकृत] सजा-सजाया, विभूषित, शोभित। उ.—(क) हृदय हार बिन ही गुन लकृत —२०८८। (ख) सुदर स्याम गड लकृत—३३२०। (ग) मानो इदु आये नलिनी दल लकृत अमी ओसकन जाल—३४५३।

लंकेश, लंकेस—सज्ञा पु [स. लकेश] (१) रावण। उ.—(क) कह्यौ लकेस दै ठेस पग की तबै—९-११। (ख) दै सीता अवधेस पाइँ परि, रहु लकेस कहावत ९-१३३। (२) बिभीषण।

लंकेश्वर, लंकेस्वर—सज्ञा पु [स. लकेश्वर] (१) रावण। उ.—लकेस्वर बाँधि राम-चरननि तर डारौ —९-८५। (२) विभीषण।

लंग—सज्ञा स्त्री. [हिं. लाँग] धोती की लाँग जो पीठ की ओर खोसी जाती है।

सज्ञा पु. [फा.] लँगड़ापन।

वि जो लँगड़ा हो।

लंगड़—वि. [हि. लँगडा] जो लँगड़ता हो।

सज्ञा पु. [हिं. लगर] लगर।

लॅगड़ा—वि. [फा. लग] (१) जिसका एक पैर टूटा हो। (२) जिसका एक पाया टूटा हो।

सज्ञा पु. [देश.] एक तरह का कलमी आम।

लॅगड़ाना, लॅगड़ानो – क्रि. अ. [हिं. लँगडा] लँगड़े होकर चलना।

लगर—वि. [देश.] (१) दुष्ट। (२) ढीठ।

लंगर—सज्ञा पु. [फा.] (१) लोहे का बड़ा काँटा जो नाव या जहाज रोकने के लिए जल में डाल दिया जाता है। (२) लकड़ी का कुंदा जो पशु को भागने से रोकने के लिए उसके गले से बांधा जाता है। (३) लोहे की भारी जजीर। (४) चांदी का तोड़ा जो पैर में पहना जाता है। (५) सिलाई के मोटे टाँके।

वि. (१) भारी, बोझीला। (२) नटखट, उपद्रवी। उ.—सूर स्याम दिन दिन लगर भयौ—८६२। (३) धृष्ट, दुष्ट, अनाचारी। उ.—(क) लगर ढीठ गुमानी टूँडक—१-१८६। (ख) महर बड़ौ लगर सब दिन कौ हँसति देखि मुख गारि—७०३।

मुहा०—लगर करना—(१) उपद्रव करना। (२) दुष्टता या धृष्टता करना।

सज्ञा स्त्री.—ढिठाई, शरारत, उपद्रव। उ.—सूर स्याम जहँ तहाँ खिझावत जो मन भावत, दूरि करौ लगर सगरी—१०४५।

वि. [हि लँगडा] जो लँगड़ाकर चलता हो।

लॅगरई, लॅगराई—सज्ञा स्त्री. [हिं. लगर+अई, आई] नटखटपन, ढिठाई। उ.- (क) अजहूँ छाँडोगे लँगराई, दोउ कर जोरि जननि पै आये—३७०। (ख) अब पाई इनकी लँगराई रहते पेट समाने—पृ. ३२६ (५६)। (ग) दूरि करौ लँगराई वाकी—११६४।

मुहा०—लँगरई (लँगराई) करना या ठानना—नटखटपन या शरारत करना। लँगरई करत—शरारत या नटखटपन करता है। उ.—कालिंहि तै लँगरई करत अति—४२५। करन लँगरई लागे—शरारत करने लगे है। उ.—मोहन करन लँगरई लागे—७७०। लँगरई कीन्हौ—शरारत की है। उ.—बहुत लँगरई कीन्हौ मोसौ—३४४। लँगरई ठानी—शरारत की। उ.—स्याम लँगरई ठानी—१०-२५३।

लॅगराना, लॅगरानो—क्रि. अ. [हि. लँगडाना] लँगड़े होकर चलना।

लॅगरी—वि. [हि. लगर] (१) शरारत भरी, नटखटपन की। उ.—भरन देहु जमुना जल हमको, दूरि करौ बातै ए लँगरी—८५३। (२) धृष्ट, दुष्ट। उ—सूर स्याम मुख पोछि जसोदा कहति, सबै जुवती है लँगरी—१०-३१९। (३) निर्लज्ज। उ.—बन मे पराई

नारि रोकि राखी बनवारी, जान नही देत, ह्यां कौन ऐसी लँगरी—१०४५ ।

सज्ञा स्त्री.—शरारत, नटखटपन। उ.—भली कही यह कुँवर कन्हाई, आजु मेटिहौ तुम्हरी लँगरी–८५४।

लँगरैयाँ—सज्ञा स्त्री बहु. [हि. लगर] शरारतें, नटखटपन की बातें। उ.—जा दिन तैं सचरे गोपिनि मैं, ताही दिन तैं करत लँगरैयाँ—७३५ ।

लँगरैया – सज्ञा स्त्री. [हि. लगर] शरारत, नटखटपन। उ.—दूरि करै लँगरैया—८६२ ।

लंगी – वि. [हि. लग] लँगड़ाती हुई, लँगडी । उ.—ग्राह गह्यौ गज बल बिनु ब्याकुल, बिकल गात, गति लगी—१-२१ ।

लगर—सज्ञा पु. [स. लागूली] (१) एक (विशेष) बदर। उ —(क) रीछ लगूर किलकारि लागे करन–९-१३८ । (२) (बदर की) पूँछ। उ —सन अरु सूत चीर पाटबर लै लगूर बँधाए—९-९८ ।

लंगूरफल—सज्ञा पु. [हि. लगूर+स फल] नारियल।

लंगूल—सज्ञा पु [स. लागूल] (बंदर की) पूँछ।

लँगोट, लँगोटा—सज्ञा पु [स. लिग+ओट या पट्ट] कमर पर बाँधने का एक विशेष वस्त्र।

यौ०—लँगोटबद—ब्रह्मचारी।

लँगोटिया—वि. [हि. लँगोट] लँगोटी बाँधने के दिनों का, बचपन का।

मुहा०—लँगोटिया दोस्त या यार–बचपन का मित्र।

लँगोटी—सज्ञा स्त्री. [हि. लँगोट] कोपीन, कछनी।

मुहा०—लँगोटी पर फाग खेलना —कम सामर्थ्य या साधन होने पर भी अधिक व्यय करना। लँगोटी बँधवाना—बहुत दीन या दरिद्र कर देना। लँगोटी बिकवाना—इतना दरिद्र या दीन कर देना कि पहनने को लँगोटी भी न रह जाय।

लंघन—सज्ञा पु. [स.] (१) फाका, उपवास। (२) लाँघने की क्रिया। (३) अतिक्रमण।

लंघना, लंघनो—क्रि स. [हि. लाँघना] लाँघना, पार चले जाना, नाँघना।

सज्ञा स्त्री. [स.] उपेक्षा, अवमानना।

लंघै—क्रि. स. [हि. लघना] पार जाता है, लाँघ जाता है। उ.—जाकी कृपा पगु गिरि लघै—१-१ ।

लंठ—वि. [हि. लट्ठ] उजड्ड, गँवार, मूर्ख।

लंडूरा—वि. [देश.] बिना मूँछ का।

लंतरानी—सज्ञा स्त्री. [अ.] डींग, शेखी।

लंपट—वि. [स.] (१) विषयी, कामुक, व्यभिचारी। उ —मगन भयौ माया-रस लपट—१-९८ । (२) लोभी, कामी। उ.—(क) साधु-निदक, स्वाद-लपट–१-१२४। (ख) अति रस-लपट मेरे नैन—२७६५ ।

सज्ञा पु —उपपति, यार।

लंपटता—सज्ञा स्त्री. [स] दुराचार, कामुकता।

लंब—सज्ञा पु [स.] (१) समकोण बनानेवाली रेखा। (२) प्रलबासुर जिसे श्रीकृष्ण ने मारा था।

सज्ञा स्त्री., पु विलंब।

वि. लंबा।

यौ०—लबतडग—बहुत लंबा।

लंबा—वि. [स. लब] (१) जो किसी एक दिशा में दूर तक चला गया हो।

मुहा०—लबा करना—(१) चलता करना, टालना। (२) पटककर चित कर देना। लबा होना—चल देना।

(२) जिसकी ऊँचाई अधिक हो। (३) जिसका विस्तार अधिक हो। (४) बड़ा, दीर्घ।

लंबाई—सज्ञा स्त्री. [हि. लबा] लबे होने का भाव।

लंबान—सज्ञा स्त्री., पु. [हि. लबा] लबाई।

लंबायमान—वि. [हि. लबा] लेटा हुआ।

लंबी—वि. स्त्री. [हि. लबा] (१) जिसकी ऊँचाई या विस्तार अधिक हो। (२) बड़ी, दीर्घ।

मुहा०—लबी तानना—ओढकर सो जाना। लबी साँस लेना—दुख की ठढी साँस लेना।

लंबुल—वि. [हि. लबा] लबा, ऊँचा।

लंबोतड़ा, लंबोतरा – वि [हि. लबा] लबे आकार का।

लंबोदर—सज्ञा पु. [स.] (१) पेटू। (२) गणेश।

लँहड़ा—सज्ञा पु. [देश.] समूह, झुड।

लईं—क्रि. स. [हि लेना] ली।

प्र०—लईं बुलाइ—बुलवा लीं। उ.—लईं भीतर भवन बुलाइ सब सिसु-पाइँ परी—१०-२५ ।

लई—क्रि स. [हि. लेना] ले ली। उ.—कामना-धेनु

पुनि सप्तरिषि कौ दई लई उन बहुत मन हर्ष कीन्हे —८-८।

प्र०—चुराइ लई—**चुरा ली**। उ—तबहि निसिचर गयौ छल करि लई सीय चुराइ—९-६०। रिझै लई—**रिझा ली**। उ—रिझै लई जुवती वा छवि पर—१०-३०१। लइ लाइ—**लगा ली, व्यस्त कर लिया**। उ—बातनि लई राधा लाइ—६८३।

लउटी—सज्ञा स्त्री [हि लकुटी] **लकड़ी**।

लए—क्रि स. [हि लेना] (१) **लिये या थामें हुए**। उ.—लए लकुटिया द्वारै ठाढे—८-१५। (२) **साथ बैठाये, लगाये या लिये हुए**। उ.—सूर स्याम लए जननि खिलावति—१०-२३९। (३) **उठा लिये, पहुँचा दिये**। उ—आँगन मै हरि सोइ गए री। दोउ जननी मिलि कै हरुऐ करि, सेज सहित तब भवन लए री—१०-२७४।

लकड़बग्घा—सज्ञा पु. [हि. लकडी+बाघ] **एक जगली पशु**।

लकड़हारा—वि [हि. लकडी+हारा] **लकड़ी बेचनेवाला**।

लकड़ी—सज्ञा स्त्री [स. लगुड] (१) **काठ**। (२) **ईंधन**।

मुहा०—लकडी देना—**मुरदे को जलाना**। लकडी ठोकना—**मुरदे की कपाल-क्रिया करना**।

(३) **छडी, लाठी**।

मुहा०—लकडी जैसा (सा)—**बहुत दुबला-पतला**। लकडी चलना—**मार-पीट होना**। लकडी होना—(१) **दुबला-पतला होना**। (२) **सूखकर कड़ा होना**।

लकरियन, लकरियनि—सज्ञा स्त्री बहु [हि. लकडी] **लकड़ियो या ईंधन (के लिए)**। उ.—जब हम तुम बन गए लकरियन पठए गुरु की भामा—१०उ०-६६।

लकरी—सज्ञा स्त्री. [हि. लकडी] (१) **लकड़ी, डडी**। उ.—हमरे हरि हारिल की लकरी—३३६०।

मुहा०—सिर ठोकी लकरी—**मुरदे की कपाल-क्रिया की**। उ.—लै देही घर-बाहर जारी, सिर ठोकी लकरी—१-७१।

लकवा—सज्ञा पु [अ. लकवा] **एक वात रोग**।

लकीर—सज्ञा स्त्री. [हि. लीक] (१) **धारी**। (२) **पक्ति**।

मुहा०—लकीर का फकीर—**पुराने ढंग पर चलनेवाला**। लकीर पर चलना (पीटना)—**किसी तरह पुरानी प्रथा निभाना**।

लकुट, लकुटि, लकुटिआ, लकुटिया, लकुटी—सज्ञा स्त्री. [स लगुड, हि लकुट] **लाठी, छडी**। उ.-(क) तहाँ तहि त्रासत अस्म, लकुट, पद-त्रान—१-१०३। (ख) माया नटी लकुटि कर लीन्हे कोटिक नाच नचावै—१-४२। (ग) चतुर ग्वालि कर गह्यौ स्याम कौ, कनक लकुटिआ पाई—८४२। (घ) करै टहल लकुटिया सौ डरि—३९२। (ङ) लकुट लै लै त्रास दीन्हौ—२५८३। (च) दौरि दामन देहिगी लकुटी जसोदा पानि—२७५६।

मुहा०—बिरध समय की हरत लकुटिया—**बुढ़ापे का सहारा छीनता है**। उ.—बिरध समय की हरत लकुटिया पाप-पुन्य डर नाही। लकुट बजना—**लकड़ी से मार पड़ना**। लकुट बाजिहै—**लकड़ी से मार पड़ेगी**। उ.—लादत जोतत लकुट बाजिहै, तब कहँ मूँड दुरैहौ—१-३३१।

लकुटी—सज्ञा स्त्री. [हि. लकुट] **लाठी, डडा**।

लक्कड़—सज्ञा पु. [हि. लकडी] **लकड़ी का कुदा**।

लक्का—सज्ञा पु. [अ लक्का] **एक तरह का कबूतर**।

लक्खी—वि [हि. लाख] **लाख के रग का**।

वि. [हि. लाख (सख्या)] **लखपती, बहुत धनी**।

लक्तक—सज्ञा पु. [स] **अलता, अलक्तक**।

लक्ष—वि. [स] **एक लाख**।

सज्ञा पु. (१) **अक जो एक लाख का द्योतक हो**। (२) **पैर**। (३) **चिह्न**। (४) **लक्ष्य**। (५) **एक प्रकार का अस्त्र**।

लक्षक—वि. [स.] **लक्ष कराने या जतानेवाला**।

सज्ञा पु—**शब्द जो सबध से अर्थ सूचित करे**।

लक्षण—सज्ञा पु. [स.] (१) **आसार, चिह्न**। उ.—अमल अकास कास कुसुमनि मिलि लक्षण स्वाति जनाए—२८५४। (२) **नाम**। (३) **परिभाषा**। (४) **शरीर के विशेष चिह्न**। (५) **रग-ढग**।

लक्षणा—सज्ञा स्त्री. [स.] **शब्द की शक्ति-विशेष जिससे उसका अभिप्राय सूचित हो**।

लच्चना, लच्चनो—क्रि. स. [हि लखना] देखना, निहारना, ताकना।

लच्छि—सज्ञा स्त्री. [स लक्ष्मी] लक्ष्मी।

सज्ञा पु [स. लक्ष्य] लक्ष्य।

लच्छित – वि. [स] (१) बताया हुआ। (२) देखा हुआ। (३) अनुमानित। (४) चिह्न या लक्षण-युक्त।

सज्ञा पु.—'लक्षण' से ज्ञात शब्दार्थ।

लच्छिता—सज्ञा स्त्री. [स.] नायिका जिसका प्रेम ज्ञात हो जाय।

लच्छी—सज्ञा स्त्री [स. लक्ष्मी] लक्ष्मी।

लच्छम—सज्ञा पु. [स] चिह्न, लक्षण।

लच्छमण—सज्ञा पु [स.] (१) राजा दशरथ के तीसरे पुत्र जिनका जन्म सुमित्रा के गर्भ से हुआ था और जिनको उर्मिला ब्याही थी। (२) दुर्योधन का पुत्र।

लच्छमणा—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) श्रीकृष्ण की एक पटरानी जो मद्र देश के राजा बृहत्सेन की पुत्री थी। (२) श्रीकृष्ण के पुत्र सांब की पत्नी। उ.—स्याम सुनि साँब गयौ हस्तिनापुर तुरत लक्ष्मणा जहाँ स्वयवर रचायौ—१० उ०-४६।

लच्छमी—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) धन की अधिष्ठात्री जो विष्णु की पत्नी मानी जाती है। (२) धन-सपत्ति। (३) शोभा, छवि। (४) सुदर और सौभाग्यशालिनी स्त्री या बधू।

लच्छमीकान्त—सज्ञा पु. [स.] विष्णु और उनके अवतार।

लच्छमीपति—सज्ञा पु. [स.] विष्णु और उनके अवतार।

लच्छमीपुत्र—वि [स] बहुत धनी।

लच्छमीरमण—सज्ञा पु. [स.] विष्णु और उनके अवतार।

लच्छमीवल्लभ—सज्ञा पु. [स.] विष्णु और उनके अवतार।

लच्छय—सज्ञा पु [स.] (१) निशाना। (२) जिस पर आक्षेप किया जाय। (३) उद्देश्य। (४) अनुमानित प्रसंग। (५) 'लक्षणा' शक्ति से प्रकट अर्थ।

लच्छयक—वि. [स.] (१) लक्ष्य करने-करानेवाला। (२) सकेत द्वारा सूचित करनेवाला।

लच्छयार्थ—सज्ञा पु. [स.] 'लक्षणा' से प्रकट अर्थ।

लख—वि. [स. लक्ष] लाख (संख्या)। उ.—(क) चौरासी लख जोनि स्वाँग धरि—२-१३। (ख) द्वै लख धेनु द्विजनि कौ दीन्ही—१०-३.२।

लखत—क्रि. स. [हि लखना] देखता है या देखते हैं। उ—इहिं बिधि लखत—१-१८९।

लखति—क्रि स. [हि. लखना] दिखायी देती है। उ.—लखति पास बन सारी—२५६२।

लखन—सज्ञा पु. [स. लक्ष्मण] श्रीराम के छोटे भाई लक्ष्मण। उ.—लखन दल सग लै लंक घेरी--९-१३८।

सज्ञा स्त्री. [हि. लखना] लखने की क्रिया या भाव।

लखना—क्रि. स [स. लक्ष] (१) समझ जाना, ताड़ लेना। (२) देखना।

लखनि—सज्ञा स्त्री [हि. लखना] लखने की क्रिया या भाव।

प्र.—जाति लखनि—समझी या जानी जा सकती है। उ.—सूर प्रभु महिमा अगोचर जाति कापै लखनि—९८१।

लखनो-क्रि. स. [हि. लखना] (१) समझना, ताड जाना। (२) देखना।

लखपति, लखपती—वि. [स लक्ष + पति, हि. लखपति] जिसके पास लाखों की सपत्ति हो, बहुत धनी।

लखमी—सज्ञा स्त्री [स. लक्ष्मी] लक्ष्मी।

लखराँव—सज्ञा पु [हि. लाख + रावँ] बाग जिसमें बहुत पेड़ हो।

लखलखा—सज्ञा पु [फा. लखलखा] (१) सुगधित द्रव्य। (२) मूर्च्छा दूर करने का सुगधित द्रव्य।

लखाई—क्रि. स [हि. लखाना] दिखायी, बतायी। उ.—यह औषधि इक सखी लखाई—७४८।

लखाउ—सज्ञा पु. [हि. लखना] (१) पहचान। (२) निशानी।

लखाना, लखानो—क्रि. अ. [हि. लखना] दिखायी पड़ना।

क्रि. स.—(१) दिखलाना। (२) समझाना, सुझाना।

लखायो, लखायौ—क्रि. स. [हि. लखना] दिखायी दिया। उ.—(क) मग मैं अद्भुत चरित लखायौ—४-१२। (ख) खोजत जुग गए बीति अत मोहूँ न लखायौ—४९२।

लखाव—सज्ञा पु [हि. लखना] (१) चिह्न। (२) निशानी।

लखावत—क्रि. स. [हि. लखाना] दिखाता है, दिखाता

(हुआ)। उ.—आतम ह्म लखावत डोलत घट घ व्यापक जोई—३०२२।

लखि—क्रि. स [हि लखना] **देखकर**। उ.—रिषिनि कह्यौ, तुव सतम जग्य अरभ लखि इद्र कौ राज हित कप्यौ हीयौ—४-११।

मुहा०—लखि न जाइ—(१) **दिखायी नही पडता।** उ—मदिर मै गए समाइ, स्यामल तनु लखि न जाइ—१०-२७५। (२) **देखने की सामर्थ्य, योग्यता या पात्रता न रही।**

लखिआ, लखिया—वि. [हि लखना] **देखनेवाला।**

वि. [हि. लाख] **लखपती, बहुत धनी।**

लखी—क्रि. स [हि. लखना] **देखी, दिखायी दी।** उ—लखी न राघव नारि—९-७५।

लखेरा—वि [हि.लाख] **लाख की चूडी आदि बनानेवाला।**

लखै—क्रि. स. [हि. लखना] **देखता-समझता है।** उ.—भक्त सात्विकी सेवै सत, लखै तिन्है मूरति भगवत—३-१३।

लखोट, लखोटि, लखोठ, लखोठि—सज्ञा स्त्री. पु [हि. लकुट] **लाठी, छड़ी, लकड़ी।**

लखो, लखौ—क्रि. स [हि. लखना] **देखो।** उ.—लखौ अब नैन भरि, बुझि गई अगिनि झरि—५९७।

लखौट—सज्ञा स्त्री. [हि लाख+औट] **लाख की बनी हुई चूड़ियाँ।**

लखौटा—सज्ञा पु. [हि. लाख+औटा] (१) **डिब्बा जिसमें सेंदुर आदि रक्खा जाय।** (२) **उबटन-विशेष।**

लखौरी—सज्ञा स्त्री [हि. लाखा] (१) **भृगी का घर।** (२) **एक तरह की पतली ईट।**

सज्ञा स्त्री. [हि. लाख (सख्या)] **किसी देवता पर लाख की सख्या मे फल, फूल, पत्ती आदि चढ़ाना।**

लख्यो, लख्यौ—क्रि स. [हि. लखना] **देखा, लक्ष्य किया।** उ—गौतम लख्यौ, प्रात है भयौ—६-८।

लग—क्रि. वि. [हि. लौ] (१) **तक, पर्यन्त।** (२) **समीप।**

अव्य. (१) **लिए, वास्ते।** (२) **साथ।**

सज्ञा स्त्री. [हि. लौ] **लगन, प्रीति।** उ.—(क) लग लगान नहि पावत स्याम—८७८। (ख) जब कहुँ लग लागे नही तब वाको जिव अकुलाइ री—८८०। (ग) लग लागे पागे उर अतर कठिन सिलीमुख पायक—२२२९।

लगत—क्रि अ [हि. लगना] (१) **लगता है, लगते हैं।**

प्र०—लगत गोहारी—**पुकार मचाते हो।** उ.—परसुराम, तुम आइ लगत क्यो नही गोहारी—९-१४।

मुहा०—पलक लगत—**नीद आती है।** उ.—तब तौ पलक लगत दुख पावत—३४०५।

(२) **छाती से लगते है।** उ.—लगत सेष-उर बिलखि जगत-गुरु—९-६२। **छेड़छाड़ या शरारत करता है।** उ—औरनि सो करि रहे अचगरी मोसौ लगत कन्हाई।

लगति—क्रि. अ. [हि. लगना] **छूती या स्पर्श करती है।** उ.—वाके आश्रम जोउ बसत, माया लगति न ताय।

लगती—क्रि. अ [हि. लगना] **प्रभावित करती (है)।**

मुहा०—लगती बात—(१) **चुभने या पीड़ा पहुँचाने वाली बात।** (२) **मर्म या भेद भरी बात।**

लगन—सज्ञा स्त्री. [हि. लगना] (१) **प्रवृत्ति या ध्यान लगाने की क्रिया।** उ.—कस्यप रिषि सुर-तात सु लगन लगावन रे—१०-२८। (२) **प्रीति, स्नेह।** (३) **लगाव, सबध।**

सज्ञा पु [स. लग्न] (१) **विवाह का मुहूर्त।** (२) **सहालग।** (३) **शुभ कार्य का मुहूर्त।**

यौ०—लगन घरी—**शुभ कार्य का मुहूर्त।** उ—लगन घरी आवत यातै न्हवाइ बनावौ—१०-९५।

(४) **दिन का उतना अश जितने में राशि-विशेष का उदय रहता है।** उ.—(क) सोइ तिथि-बार-नछत्र लगन ग्रह सोइ जिहि ठाट ठयौ—१-२९८। (ख) लगन सोधि सब जोतिष गनिकै—१०-८६।

लगनपत्री—सज्ञा स्त्री. [स. लग्नपत्रिका] **विवाह के मुहूर्त का निर्णय-सूचक पत्र जो कन्या पक्षवाले वर-पक्षवालो को भेजते है।**

लगनवट—सज्ञा स्त्री. [हि लगन] **प्रेम, लौ।**

लगना—क्रि. अ. [स. लग्न] (१) **दो वस्तुओ का मिलना या सटना।** (२) **एक वस्तु का दूसरे मे जुड़ना।** (३) **किसी वस्तु के तल पर पड़ना।** (४) **सिया या जड़ा जाना।** (५) **सम्मिलित होना।** (६) **उगना, जमना।**

(७) ठिकाने पर पहुँचना। (८) क्रम से सजाया जाना। (९) खर्च होना। (१०) अनुभव होना। (११) स्थापित होना। (१२) कोई संबंध या रिश्ता होना। (१३) चोट या आघात पहुँचना। (१४) टकराना। (१५) पोता या मला जाना। (१६) जलन या किनकिनाहट उत्पन्न करना। (१७) बरतन के तल में लग जाना। (१८) शुरू हो जाना। (१९) काम में आना। (२०) काम के लिए जरूरी होना। (२१) चलना। (२२) जारी होना। (२३) रगड खाना। (२४) सडना, गलना। (२५) भीड़-भाड के कार्य का आरंभ होना। (२६) प्रभाव पड़ना। (२७) नियत या निश्चित होना। (२८) आरोप होना। (२९) जल उठना। (३०) ठीक, उपयुक्त या कामलायक होना। (३१) हिसाब या जोड़ होना। (३२) साथ हो जाना। (३३) चिमटना। (३४) कार्य में तत्पर होना। (३५) छूना, स्पर्श करना। (३६) दूध दुहा जाना। (३७) गड़ना, चुभना। (३८) बदले में दिया जाना। (३९) निकट पहुँचना। (४०) छेड़छाड़ करना। (४१) मुँदना, बंद होना। (४२) बाजी, दाँव या शर्त पर रखा जाना। (४३) अंकित या चिह्नित होना। (४४) धार का तेज किया जाना। (४५) ताक या घात में रहना। (४६) एकत्र होना। (४७) दाम आँका जाना। (४८) परच जाना। (४९) बिछना। (५०) होना। (५१) सामने या बराबर आना।

लगनि—संज्ञा स्त्री. [हिं लगना] (१) प्रवृत्ति या ध्यान लगने की क्रिया। (२) प्रीति। (३) लगाव, संबंध।

लगनो—क्रि. अ. [हिं. लगना] लगना।

लगभग—क्रि. वि. [हिं. लग+भग अनु.] करीब-करीब।

लगर—संज्ञा पु. [देश.] एक शिकारी पक्षी।

लगलग—वि. [अ लकलक] दुबला, सुकुमार।

लगव—वि. [अ. लग्वो] (१) झूठा, (२) व्यर्थ।

लगवाना, लगवानो—क्रि स. [हिं. लगाना का प्रेर०] लगाने को प्रवृत्त करना।

लगवार, लगवारा, लगवारो—संज्ञा पु. [हिं. लगना+वार] यार, उपपति।

लगाइ—क्रि. स. [हिं. लगाना] (१) लगाकर। (२) आरोपित करके। उ—तिहि बहु अवगुन देइ लगाइ ५-४। (३) सटाकर, चिपकाकर। उ.—(क) सूर स्याम बिरुझाने सोए लिए लगाइ छतियाँ महतारी—१०-१९६। (ख) लीन्ही जननि कंठ लगाइ—५८०। (४) साथ लेकर। उ—लिये अमरगन संग लगाइ—१०६६। (५) मलकर, पोतकर। उ—कुच बिष बाँटि लगाइ कपट करि बालघातिनी परम सुहाई—१०-५०।

लगाई—क्रि स [हिं लगाना] छुई, स्पर्श की।

मुहा०—मुँह न लगाई—बात भी नहीं की। उ. —अष्ट-सिद्धि बहुरौ तहँ आई। रिषभदेव ते मुँह न लगाई—५-२।

लगाई—क्रि स. [हिं. लगाना] (१) की, कर दी। उ.—(क) बन मैं आजु अबार लगाई—४७१। (ख) जननी जिय व्याकुल भई कान्ह अबेर लगाई—५८९। (२) जोड़कर, संयुक्त करके। उ—पटकत सिला गई आकासहिं दोउ भुज चरन लगाई - १०-४।

प्र०—प्रीति लगाई—प्रेम किया। उ.- मिटि गए राग-द्वेष सब तिनके जिन हरि प्रीति लगाई—१-३१८। दीठि लगाई—नजर लगा दी। खेलत मैं कोउ दीठि लगाई—१०-२००। टेर लगाई—पुकारा, आवाज दी। उ—सखा द्वार परभात सों सब टेर लगाई—१०-२०९। होड लगाई—स्पर्द्धा या प्रतियोगिता के लिए सन्नद्ध हुए। उ—हमहूँ तुम मिलि होड लगाई—६६८। मोहिनी लगाई—मुग्ध या वशीभूत कर लिया। उ.—(क) स्याम बरन इक मिल्यौ ढोटौना तेहिं मोकौं मोहनी लगाई ८४९। (ख) देखत ही मोहिनी लगाई—१४४०। समाधि लगाई —ध्यानावस्थित होकर। उ—और कौन अबलनि ब्रत धारचौ योग-समाधि लगाई—३३४३।

लगाउ—क्रि. स. [हिं. लगाना] जोड़ो, बाँधो, संबद्ध करो। उ—पालनौ अति सुन्दर गढि पचरंग रेसम लगाउ—१०-४१।

लगाऊँ—क्रि. स. [हिं. लगाना] लेप करूँ, मलूँ। उ.—मृगमद तन न लगाऊँ—२१५०।

लगाए—क्रि. स. [हिं. लगाए] (१) मले,रगड़े। उ—तन

उबटन तेल लगाए—१०-१८३ । (२) आघात किये । उ —माता सँटिया ढूँक लगाए —३९१ । (३) साथ में ले लिये । उ.—ग्वाल-सखा सब सग लगाए—४४८ ।

लगातार—क्रि. वि [हिं. लगना+तार] बराबर, निरंतर । वि.—क्रम से होता रहनेवाला ।

लगाद—सज्ञा स्त्री. [हि लगाव] प्रेम, लौ । क्रि वि. [हि. लग] पर्यन्त, तक ।

लगान—सज्ञा पु [हि लगाना] भूमि कर ।

लगाना—क्रि. स [हिं. लगना] (१) एक वस्तु को दूसरे से मिलाना या सटाना । (२) एक वस्तु को दूसरी से जोडना । (३) किसी वस्तु के तल पर कुछ चिपकाना, गिराना या रगडना । (४) सीना, टाँकना । (५) सम्मिलित करना । (६) जमाना, उगाना । (७) उपयुक्त स्थान पर पहुँचाना । (८) क्रम से सजाना । (९) खर्च करना । (१०) अनुभव कराना । (११) स्थापित करना । (१२) चोट या आघात पहुँचाना । (१३) लेपना, पोतना, मलना । (१४) प्रवृत्ति आदि उत्पन्न करना । (१५) काम में लाना । (१६) सडाना, गलाना ।(१७) भीड-भाड एकत्र करने का आयोजन करना । (१८) दी जानेवाली सख्या आदि नियत या निश्चित करना । (१९) अभियोग लगाना । (२०) जलाना । (२१) ठीक स्थान पर बैठाना, जड़ना । (२२) हिसाब या जोड़ करना । (२३) साथ या पीछे चलने को नियुक्त करना । (२४) साथ मे सबद्ध करना । (२५) चुगली खाना ।

यौ०—लगाना-बुझाना—लड़ाई-झगड़ा कराना । (२६) साथ या पीछे ले चलना । (२७) काम में तत्पर करना । (२८) दूध दुहना । (२९) गड़ाना, धँसाना । (३०) समीप पहुँचाना । (३१) छुआना, स्पर्श कराना । (३२) बंद करना । (३३) बाजी, दाँव या शर्त पर रखना । (३४) किसी बात का अभिमान करना । (३५) पहनना, धारण करना । (३६) धार तेज करना । (३७) अंकित या चिह्नित करना । (३८) बदले में लेना । (३९) मूल्य आँकना । (४०) परचाना । (४१) नियत स्थान या कार्य पर पहुँचाना । (४२) बिछाना, फैलाना । (४३) करना । (४४) सामने या बराबर ले जाना ।

लगानी—क्रि. अ [हि. लगना] अनुरक्त हो गयी, प्रीति करने लगी । उ —दिन दिन देन उरहनौ आवति, ठुकि ठुकि करति लरैया । । सूर स्याम सुन्दरहिं लगानी, वह जानै बल भैया—३७१ ।

लगानो—क्रि. स. [हि. लगाना] लगाना ।

लगाम—सज्ञा स्त्री. [फा.](१) लोहे का वह ढाँचा जो घोड़े को वश मे रखने के लिए उसके मुँह में रखा जाता है ।

मुहा०—लगाम चढाना या देना--(किसी को)बोलने से रोकना ।

(२) उक्त ढाँचे से बँधी डोरी या तस्मा जो सवार या हाँकनेवाले के हाथ में रहता है, रास, बाग ।

लगाय—क्रि स [हि. लगाना] लगाकर ।

प्र० —राखी घात लगाय—ताक या घात में रहे । उ.—सहसबाहु के सुतनि पुनि राखी घात लगाय—९-१४ ।

सज्ञा स्त्री. [हि लगाव] प्रेम, लौ । उ.—सूर जहाँ लौ स्याम-गात है, तिनसौ क्यो कीजिए लगाय ।

लगायत—क्रि. वि [हि. लगाना] तक, पर्यन्त ।

लगाये—क्रि स. [हि. लगाये] सजा-सँवारकर और खाद्य पदार्थ परोसकर रखे । उ —सखा सब बोलि हरि मडली ब्रनहिं के पात दोना लगाये—११७५ ।

लगायो, लगायौ—क्रि. स. [हि. लगाना] (१) आरोपित किया । उ.—तुमहुँ मोहि अपराध लगायौ—३७६ । (२) कान भरे । उ.—ब्रजनारी बटपारिनि है सब चुगली आपुहि खाइ लगायौ—११६१ । (३) मढा, जड़ा । उ. – लोह तरै मधि रूपा लायौ, ताकै ऊपर कनक लगायौ—७-७ ।

प्र०—चित, ध्यान या मन लगायौ—लौ लगायी, ध्यान किया, भक्ति या प्रीति की । उ.—(क) हरि सौ चित्त न लगायौ—१-३०१ । (ख) अरु एकहिं सौ चित्त लगायौ—४-३ । (ग) मन-क्रम-बचन कहति हौ साँची मै मन तुमहि लगायौ—१२२३ । (घ) हरि-पद

सौं नृप ध्यान लगायौ—२-२। कठ लगायौ—गले या छाती से लगा लिया। उ.—(क) भरत शत्रुहन कियौ प्रनाम, रघुबर तिन्है कठ लगायौ—९-५५। (ख) सूरदास प्रभु रसिक सिरोमनि हँसि करि कठ लगायौ—३५६।

लगार—सज्ञा स्त्री. [हि. लगना+आर] (१) **नियमित रूप से काम करने या कुछ देने का भाव या कार्य, बधेज।** (२) **लगने की क्रिया या भाव, लगाव, संबध।** उ.—सहसौ फन फन फूँकरै नैन न तनहिं लगार। (३) **सिलसिला, तार, क्रम।** उ—सात दिवस नहिं मिटी लगार, बरस्यौ सलिल अखडित धार—१०६१। (ख) अखड धारा सलिल निझरो मिटी नही लगार—९७३। (४) **प्रीति, लगन।** (५) **भेद लाने या लेने-वाला।** उ.—और सखी इक स्याम पठाई। । बैठी आइ चतुरई काछे वह कछु नही लगार—२२-३२। (६) **वह जिससे घनिष्ठ सबध या मेल हो।** (७) **टिकने का स्थान।**

लगालगी—सज्ञा स्त्री [हि लगना] (१) **लगन, प्रीति।** (२) **हेल-मेल, मोल-जोल, सबध।**

लगाव—सज्ञा पु. [हि. लगना+आव] **सबध।**

लगावट—सज्ञा स्त्री. [हि. लगाव] **सबध, लगाव, वास्ता।** (२) **प्रीति, लगन।**

लगावत—क्रि. स. [हि. लगाना] **आरोपित करता है या करते है।** उ—झूठै लोग लगावत मोकौ, माटी मोहिं न भावै—१०-२५३।

लगावति—क्रि. स. [हि. लगाना] (१) **आरोपित करती है।** उ—(क) सूर सु कत हठि दोष लगावति, घर ही को माखन नहि खात—१०-३०८। (ख) अनलहते अपराध लगावति बिकट बनावति बात—१०-३२६। (२) **मिलाती या जोड़ती है।**

प्र०—न पलक लगावति—**सोती नही।** उ.—नैकु न पलक लगावति डोल—६३०।

लगावति—क्रि. स. स्त्री [हि लगाना] (१) **करती है।** उ.—सखी री, काहे गहरु लगावति—१०-२३। (२) **सबंध जोड़ती है।** उ.—कहा करौ, तुम बात कहूँ की कहूँ लगावति—१०७१। (३) **मिलाती या सबद्ध करता है।** (४) **दोष या अपराध लगाती है।** उ.—(क) झूठेहि मोहि लगावति ग्वारि—१०-३०४। (ख) जननी कै खीझत हरि रोए झूठेहि मोहि लगावति धगरी—१०-३१९। (५) **चिपटाती या चिपकाती है।**

प्र०—कठ लगावति—**गले या छाती से लगाती है।** उ.—लै जननी सुत कठ लगावति—३९१।

लगावन—सज्ञा स्त्री. [हि. लगाना] **लगाने की क्रिया या भाव।**

प्र०—लगावन पावै—**सम्पन्न कर पाता है।** उ.—पांडे नहि भोग लगावन पावै—१०-२४९।

सज्ञा स्त्री. [हि. लगाव] **सबध, लगाव।**

लगावना, लगावनो—क्रि. स. [हि. लगाना] **लगाना।**

लगावहु—क्रि. स [हि. लगाना] (१) **मलो, रगडो, पोतो।** उ—बिप्रनि कह्यौ, याहि अन्हवावहु। याकै अग सुगध लगावहु—५-३। (२) **लगा लोगे।** उ.—गैयनि पै कहुँ चोट लगावहु—४०१।

प्र०—चित्त लगावहु—**ध्यान करो, मानसिक सबध जोड़ो।** उ.—ताही सौं तुम चित्त लगावहु—५-२।

लगावै—क्रि. स. [हि लगाना] **करे।**

प्र०—प्रीति लगावै—**प्रेम या भक्ति करे।** उ.—हरि-पद-पकज प्रीति लगावै—३-१३।

लगावै—क्रि. स [हि लगाना] (१) **सबद्ध करती है, सबध कराती है।** (२) **प्रवृत्ति को उकसाती है।** उ.—महामोहिनी मोहि आत्मा अपमारगहि लगावै—१-८२। (३) **छुआता या स्पर्श कराता है।** उ.—धेनु फिरति बिललाति बच्छ थन कोउ न लगावै—५८९। (४) **आरोप लगाता या लगाती है।** उ.—जौ तू रामहि दोप लगावै करौ प्रान को घात—९-७७। (५) **लक्ष्य करके चलाती है।** उ.—भृकुटी धनुष कटाक्ष बाण मनो पुनि-पुनि हरिहि लगावै—८७५।

लगावो, लगावौ—क्रि. स. [हि. लगाना] **करती हो।** उ.—बेगि करौ किन, बिलब काहे लगावौ—१०-९५।

लगि—क्रि अ [हि लगना] **सटकर, निकट होकर।** उ—सूर स्याम बैठे ऊखल लगि—३६९।

क्रि. वि. [हि. लग] **तक, पर्यंत, ताईं।** उ.—(क) अजहूँ लगि राज करै—१-३७। (ख) माता

पिता बंधु-सुत तौ लगि, जौ लगि जिहि कौ काम—१-७६। (ग) जब लगि काल न पहुँचै आइ—७-२। (घ) कहँ लगि तिनकौ करौ बखान—९-८। (ङ) तब लगि सबै सयान रहे - ६४६।

अव्य.—वास्ते,के लिए। उ.—(क) अबिहित बाद-बिबाद सकल मत इन लगि भेष धरत—१-५५। (ख) जन लगि भेष बनायौ—१-९०। (ग) तात बचन लगि राज तज्यौ—१०-१९८।

सज्ञा स्त्री. [हि लग्गी] लबा बाँस।

लगिहै - क्रि. स. [हि. लगना] (१) लगेगी, होगी। उ—घरिक मोहि लगिहै खटिका मै—६७०। (२) चोट या आघात पहुँचेगा उ.—दौरत कहा, चोट लगिहै कहुँ—१०-२२६।

लगी—क्रि. स. [हि. लगना] प्रवृत हुई।

प्र०—कहन लगी बोलने को प्रवृत्त हुई, बोलने लगी। उ.—कहन लगी अब बढ़ि-बढ़ि बात—३५५।

लगी—क्रि अ. [हिं लगना] (१) हुई, हो गयी। उ.—पवन पुत्र पैठि मुख पधारे तहाँ लगी कछु बार – ९-७४। (२) व्यस्त हो गयी। उ. - आपु लगी गृह कामहि—५१५। (३) आवश्यकता हुई, अनुभव की। उ.—भूख लगी मोहि भारी—३९५। (४) प्रवृत्त हुई।

प्र०—लगी खवावन—खिलाने मे प्रवृत्त हुई। उ माता सुनत तुरत लै आई लगी खवावन रति सौ—१०-३१२।

सज्ञा स्त्री. [हि. लग्गी] लबा बाँस।

लगु—अव्य [हिं. लग] (१) वास्ते। (२) सग।

लगुआ, लगुवा—वि. [हि लगना] पीछे-पीछे या साथ-साथ लगा रहनेवाला।

लगुड़—सज्ञा पु. [स.] डडा, लाठी।

लगूर, लगूल—सज्ञा स्त्री [स. लागूल] पूँछ, दुम।

लगे—क्रि. अ. [हि लगना] (१) जडे गये, लगाये गये। उ.—बिच-बिच हीरा लगे (नँद) लाल गरे को हार—१०-४०। (२) अकुरित हुए, उगे। उ—क्रम क्रम लगे फूल-फल आइ—९-५९। (३) जान पड़े। उ.—तुमको कैसे स्याम लगे—१३१८। (४) प्रतीक्षा करने को प्रवृत्त हुए। उ.—बैठि एकात जोहन लगे पथ सिव—८-१०। (५) प्रवृत्त हुए।

प्र०—करन लगे—करने को प्रवृत्त हुए। उ.—बान बरषा लगे करन अति क्रुद्ध ह्वै—१-२७१।

लगै—क्रि. अ सवि [हि. लगना] लगने से, लगने पर। उ.—दुर्जन बचन सुनत दुख जैसौ बान लगै दुख होय न तैसौ—४-५।

लगैगी—क्रि. स. [हि लगना] लग जायगी।

मुहा०—दीठि लगैगी—नजर लग जायगी। उ—बाहेर जिन कबहूँ खैयै सुत, डीठि लगैगी काहू १००४।

लगौंहाँ—वि. [हि लगना] लगन लगानेवाला।

लगौ—क्रि. स. [हि. लगना] लग जाय।

मुहा०—रोग-बलाइ लगौ—(तुम्हारा) रोग-धोग मुझे लग जाय। उ.—बाल-गोपाल लगौ इन नैननि रोग-बलाइ तुम्हारी—१०-९१।

लगात—सज्ञा स्त्री [हि लागत] लागत।

लग्गा—सज्ञा पु. [स लगुड] (१) लबा बाँस। (२) दाँव।

सज्ञा पु. [हि. लगना] काम शुरू करना।

लग्गी—सज्ञा स्त्री. [हि. लग्गा] लबा बाँस।

लग्घड़—सज्ञा पु [देश.] बाज पक्षी, शचान।

लग्न—सज्ञा पु. [स.] (१) दिन का उतना अश जितने में राशि-विशेष का उदय रहता है। उ.—(क) बृष है लग्न, उच्च के निसिपति, तनहि बहुत सुख पैहै—२०-८६। (ख) पुष्प नछत्र नौमी जु परम दिन लग्न सुद्ध सुभबार—सारा०-१६०। (२) शुभ कार्य का मुहूर्त। (३) विवाह का समय। उ.—एकहि लगन सबहि कर पकरेउ, एक मुहूर्त ब्रियाहे।

वि—लगा या मिला हुआ।

लग्नक—सज्ञा पु [स.] जमानत करनेवाला, प्रतिभू।

लग्यो, लग्यौ—क्रि स. [हि. लगना] (१) लग गया सन गया, तल पर पड़ गया। उ.—कर नवनीत परस आनन सौ, कछुक खात कछु लग्यौ कपोलनि—१०-१२१। (२) प्रवृत्त हुआ।

प्र०—लग्यौ गुहारि—पुकार सुनी। उ.—ताकौ हरन कियौ, दसकधर हौ तिहिं लग्यौ गुहारि—९-६५।

लघिमा—सज्ञा स्त्री. [स. लघिमन्] (१) लघु होने का भाव, लघुत्व ।(२) आठ सिद्धियों में चौथी जिसे प्राप्त कर लेने पर मनुष्य छोटा और हल्का बन सकता है ।

लघु—वि. [स.] (१) आयु मे कनिष्ठ, छोटा । उ.—(क) लघु सुत-नाम नरायन धरयौ—६-४ । (ख) लघु सुत नृपति-बुढापौ लयौ—९-७४ । (२) लवाई मे जो बडा या बडी न हो, छोटा, छोटी । उ.—लघु लघू लट सिर घूंघरवारी—१०-९३ । (३) आकार या विस्तार में छोटा । उ —अस्त्र विद्या समर बहुरि लाग्यौ करन, कबहुँ लघु कबहुँ दीरघ सो होइ—१० उ०—५६ । (४) थोड़ा, कम ।

लघुचेता—वि. [स. लघुचेतस्] तुच्छ विचारोंवाला ।

लघुता—सज्ञा स्त्री [स.] (१) छोटाई, छोटापन । उ.—मुरली कौन सुकृत-फल पाए । । लघुता अग, नही कछु करनी, निरखत नैन लगाए—६६१ । (२) तुच्छता, अपयश, ओछापन । उ.—अब तौ सूर भजी नँदलालहिं की लघुता की होइ बडाई—११९३ ।

लघुत्व—सज्ञा पु. [स.] (१) लघुता । (२) तुच्छता ।

लचक—सज्ञा स्त्री. [हि. लचकना] झुकाव, लचन ।

लचकना—क्रि. अ. [हि. लचक] (१) लचना, बीच से झुकना । (२) (कोमलता या हाव-भाव के सकेत-स्वरूप) स्त्री की कमर का झुकना या लचकना ।

लचीला—वि [हिं. लचना+ईला] (१) जो सरलता से झुक या लच सकता हो । (२) जिसमें सहज ही परिवर्तन या उतार-चढ़ाव हो सकता हो ।

लचीलापन—सज्ञा पु. [हिं. लचीला+पन] लचीला होने का भाव, अवस्था या गुण ।

लचुइ, लचुई—सज्ञा स्त्री. [हिं. लुचुई] मैदा की पूरी ।

लच्छ—सज्ञा पु. [स. लक्ष्य] (१) बहाना । (२) निशाना ।

सज्ञा पु. [स. लक्ष] लाख (सख्या) ।

सज्ञा स्त्री. [स.] श्री, लक्ष्मी ।

यौ०—लच्छ-लच्छ · लाखो । उ.—रोम-रोम हनु मत्र लच्छ लच्छ बान—९-९६ ।

लच्छण, लच्छन—सज्ञा पु. [स. लक्षण] (१) आदत, स्वभाव । (२) आसार, चिह्न । (३) गुण । उ.—(क) मुक्त नरनि के लच्छन कहौ—३-१३ ।(ख) गर्ग निरूपि कह्यौ सब लच्छन—१०-८७ ।

सज्ञा पु. [स. लक्ष्मण] श्रीराम के अनुज, लक्ष्मण ।

लच्छना—सज्ञा स्त्री. [स. लक्षणा] लक्षणा (शब्दशक्ति) ।

लच्छमी—सज्ञा स्त्री. [स. लक्ष्मी] श्री, लक्ष्मी । उ.—चहूँ ओर चतुरग लच्छमी कोरिक दुहियत धैन री—१०-१३९ ।

लच्छा—सज्ञा पु. [अनु.] (१) तारो का गुच्छा । (२) पतले-लबे कटे टुकड़े । (३) इस प्रकार के लौकी के टुकड़ों की बनी मिठाई । (४) मैदे की एक मिठाई । (५) पैर का एक गहना जो सामान्यतया चाँदी का होता है ।

लच्छागृह—सज्ञा पु. [स. लाक्षागृह] लाक्षागृह ।

लच्छि—सज्ञा स्त्री. [स. लक्ष्मी] लक्ष्मी ।

सज्ञा पु. [स. लक्ष] लाख की सख्या ।

लच्छित—वि. [स. लक्षित] (१) देखा या लक्ष्य किया हुआ । (२) अकित, चिह्नित । (३) लक्षण से युक्त ।

लच्छिनाथ—सज्ञा पु. [स. लक्ष्मीनाथ] विष्णु ।

लच्छिनिवास, लच्छिनिवासा—सज्ञा पु. [सं. लक्ष्मी+निवास] (१) विष्णु या उनके अवतार । (२) बैकुठ ।

लच्छी—वि. [देश.] एक तरह का घोड़ा ।

सज्ञा स्त्री. [स. लक्ष्मी] श्री, लक्ष्मी ।

सज्ञा स्त्री. [हिं. लच्छा] गुच्छी, अट्टी ।

वि. [स. लक्षण] लक्षणो से युक्त ।

लच्छेदार—वि. [हिं. लच्छा+फा. दार] (१) जिसमें लच्छे पड़े हों । (२) (बात) जिसका सिलसिला न टूटे, पर साथ ही जो रोचक भी हो ।

लछ—सज्ञा पु. [स. लक्ष] लाख योनियाँ । उ.—नृप चौरासी लछ फिरि आयौ—४-१२ ।

लछन—सज्ञा पु. [स. लक्ष्मण] श्रीराम के अनुज लक्ष्मण । उ.—श्रीरघुनाथ-लछन ते मारे—९-५७ ।

सज्ञा पु. [स. लक्षण] (१) आदत, स्वभाव । (२) आसार, चिह्न । (३) गुण ।

लछना, लछनो—क्रि. अ. [हि. लखना] देखना, ताड़ना ।

लछमन, लछिमन—सज्ञा पु [स. लक्ष्मण] श्रीराम के

अनुज लक्ष्मण। उ.—लछिमन सीता देखी जाइ—१-१६१।

लछमना, लछिमना—सज्ञा स्त्री. [स. लक्ष्मण] **श्रीकृष्ण की एक पटरानी।** उ.—बहुरि लछमना सुमिरन कीन्हो। ताहि स्वयबर मैं हरि लीन्हौ।

लछमी, लछिमी- सज्ञा स्त्री. [स. लक्ष्मी] **श्री, लक्ष्मी।** उ.—लछिमी सी जहँ मालिनि डोलै—१०-३२। (ख) लछमी सहित होति नित क्रीडा—१-३३७।

लज—सज्ञा स्त्री. [स. लज्जा] **शर्म, लाज।**

लजना, लजनो—क्रि. अ. [स. लज्जा] **लज्जित होना।**

लजवाना, लजवानो —क्रि. स. [हिं. लजाना] **(किसी को) लज्जित करना।**

लजाइ—क्रि. अ. [हिं. लजाना] **लज्जित होता है या होते हैं, लजाकर।** उ.—सूर हरि की निरखि सोभा कोटि काम लजाइ—३५२।

लजाई—क्रि अ [हिं. लजाना] **लज्जित हो गये, लजा गये।** उ.— नँदनदन मुख देखौ माई। अग-अंग-छवि मनहुँ उये रवि, ससि अरु समर लजाई—६२६।

प्र० – रहे लजाई—**लज्जित हो गये, लजा गये।** उ.— हरि के जन की अति ठकुराई। महाराज, रिषि-राज, राजमुनि, देखत रहे लजाई—१-४०।

लजाऊँ—क्रि अ. [हिं. लजाना] **लज्जित होऊँ।** उ.—भक्त-बछल बानौ है मेरौ, बिरुदहि कहा लजाऊँ—१०-४।

लजाति—क्रि. अ. [हिं. लजाना] **लज्जित होती है।** उ.—(क) सूरज दोष देत गोबिद कौ गुरु लोगनि न लजाति—१०-२९४। (ख) प्राननाथ बिछुरे सखी जीवत न लजाति—२५४३।

लजाधुर—वि. [स लज्जाधर] **जो बहुत लज्जा करे।**

लजाना, लजानो—क्रि. अ [स. लज्जा] **लज्जित होना।**

क्रि. स. **लज्जित करना।**

लजानी—क्रि. अ. [हिं. लजाना] **लज्जित हुई।** उ.—(क) सुदर मूरति देखि कै घन घटा लजानी—४७५। (ख) यह बानी कहति ही लजानी—७७६। (ग) रूप लकुट अभिमान निडर ह्वै जग-उपहास न सुनत लजानी—पृ ३३३ (२९)।

लजाने—क्रि अ. [हिं. लजाना] **लज्जित हुए।** उ.—कटि निरखि केहरि लजाने—१०-२३४।

लजान्यो, लजान्यौ—क्रि. अ. [हिं. लजाना] **लज्जित हुआ।** उ.—मनहुँ चद्रहि अब लजान्यो राहु घेरो जाल —१३५५।

लजायो, लजायौ – क्रि. अ [हि. लजाना] **लज्जित हुआ।** उ.—गयो सो सब दिन हार जात मन बहुत लजायो १० उ.-३।

लजारा—वि. [हि. लाज] (१) **लज्जाशील।** (२) **लज्जित।**

लजारू, लजारू, लजालु, लजालू—सज्ञा पु. [स. लज्जालु, हि. लजालू] **एक पौधा।** उ.—रुचिर लजालु लोनिका फाँगी—३९६।

लजावन—वि [हि लजाना] **लज्जित करनेवाला।** उ.—बलि बलि जाउँ अरुन अधरनि की बिद्रुम-बिब लजावन—६६४।

लजावनहार, लजावनहारा, लजावनहारो—वि. [हि. लजावना] **लज्जित करने वाले।**

लजावना, लजावनो—क्रि. स. [हि. लजाना] **लजाना, लज्जित करना।**

वि.—**लज्जित करने वाला।** उ.—सुदर डाँडी चुनी बहुत लायौ कोटिक मदन लजावनो—२२८०।

लजावै—क्रि. स. [हि. लजाना] **लज्जित करे।** उ.—(क) आन पुरुष कौ नाम लै पतिब्रतहि लजावै--२-९। (ख) लोह गहै लालच करि जिय कौ औरौ सुभट लजावै—९-१५२।

लजियाना, लजियानो—क्रि. अ. [हि. लजाना] **लजाना, लज्जित होना।**

क्रि. स.—**लज्जित करना।**

लजीज—वि [अ. लजीज] **स्वादिष्ट, सुस्वादु।**

लजीला—वि. [हि. लाज+ईला] **जो लजाता हो।**

लजुरि, लजुरी—सज्ञा स्त्री. [स. रज्जु, माग० लज्जु] **कुएँ से पानी भरने की रस्सी।**

लजे—क्रि अ [हि लजना] **लज्जित हुए।** उ. (क) तारकगन लजे—पृ. ३४० (१०)। (ख) सूर स्याम वैसेइ मनमोहन, वैसेहि प्यारी निरखि लजे—१८३३।

लजौर, लजौरा—वि. [हि. लाज + आवर] जो लजाता हो, लजानेवाला।

लजोहन, लजोहा—वि. [स लज्जावह] जो लजाता हो, लजीला। उ.—रति-बिलास करि मगन भए अति निरखत नैन लजोहन—पृ ३१५ (४४)।

लजोही—वि. [हि लजोहा] लजानेवाली।

लजौना—वि. [हि लाज+औना] (दूसरे को) लज्जित करने में समर्थ। उ.—सूर नद-सुत मदन लजौना —२४२१।

लजौहाँ—वि [हि. लजोहा] जो लज्जित हो।

लजौहीं—वि. स्त्री [हि. लजौहाँ] जो लज्जित होती हो।

लज्जत—सज्ञा स्त्री. [अ. लज्जत] स्वाद।

लज्जा—सज्ञा स्त्री [स.] (१) लाज। उ.—जो पै जिय लज्जा नहीं, कहा कहौ सौ बार—१-३६५। (२) मान-मर्यादा या प्रतिष्ठा का ध्यान।

लज्जाप्रद—वि [स] जिससे लज्जित होना पड़े।

लज्जावंत—वि. [सं] जो लजाता हो।

लज्जावती—वि. स्त्री [स] जो लजाती हो।

लज्यो—वि. [हि. लजना] लज्जित हुए। उ.- तारागन मन मे लज्यो—१८२४।

लज्जाशील—वि. [स] शीघ्र लजा जानेवाला।

लज्जित—वि. [हि. लज्जा] जो लजा गया हो। उ.—(क) देखिकै उमा कौं रुद्र लज्जित भए, कह्यौ मै कौन यह काम कीन्हौ—८-१०। (ख) लज्जित होहि पुर-बधू पूछै मुनियत अद्भुत बात—९-४३।

लट—सज्ञा स्त्री. [स. लट्वा] (१) बालो का लटकता हुआ गुच्छा, अलक। उ.—(क) लघु लघु लट सिर घूँघरवारी—१०-९३। (ख) लटकति लट चूमति —१०-७४। (ग) हौ जल भरति अकेली पनघट गही स्माम मेरी लट—८९०।

मुहा०—लट छिटकाना (१) सिर के बाल खोल-कर इधर-उधर बिखराना। (२) सिर के बाल खोल-कर बहुत नम्रता, विनय या दीनता दिखाना।

(२) उलझे हुए बालों का समूह।

मुहा०—लट छोरना—(१) उलझे हुए बाल खोल-कर बिखराना। (२) लटें बिखराकर दीनता दिखाना। लट छोरे—लटे बिखरा कर दीनता दिखाता हुआ। उ.—बिनवै चतुरानन कर जोरे। तुव प्रताप जान्यौ नहि प्रभु जू, करै अस्तुति लट छोरे—४८८।

सज्ञा स्त्री [हि. लपट] ज्वाला, लौ, लपट। उ. झपटि झपटति लपट फूल फल चट चटकि फटत लट लटकि द्रुम-द्रुम नवायौ—५९६।

लटक—सज्ञा स्त्री. [हि. लटकना] (१) लटकने की क्रिया या भाव। (२) लचक, झुकाव। (३) लुभावनी चाल या चेष्टा। उ.—प्राननाथ सो प्रान प्यारी प्रान लटक सो लीन्हे।

लटकत—क्रि. अ. [हि. लटकना] (१) लटकता है। उ—लटकन लटकत ललित भाल पर—१०९८। (२) झुकता है, गिरने लगता है। उ.—पटकत बास काँस कुस चटकत लटकत ताल तमाल—६१५। (३) लचक या बल खाकर। उ.—लटकत चलत नदकुमार।

लटकहिं—क्रि. अ. [हि. लटकना] लटकती है। उ.—लटकति ललित लटुरियाँ—१०-११६।

लटकति—क्रि. अ. [हि. लटकना] (१) झुककर। उ.—जसुमति लटकति पाइ परै—१०-१७। (२) लटकती (हुई या है)। उ.—लटकति बेसरि जननि की—१०-७२।

लटकन—सज्ञा पु [हि. लटकना] (१) लटकने की क्रिया या भाव। (२) लटकने वाली चीज। (३) लुभावनी चाल या चेष्टा। (४) नाक का एक गहना। (५) कलगी आदि मे लगा रत्नो का गुच्छा जो माथे पर हिलता-डोलता है। उ.—(क) लटकन लटकि रह्यो माथै पर—१०-९२। (ख) लटकन लटकत भाल—१०-९७।

लटकना—क्रि. अ. [स. लडन = झूलना] (१) ऊपरी आधार से नीचे झूलना। (२) ऊपरी आधार से नीचे लटककर हिलना-डोलना। (३) टँगना। (४) किसी ओर को झुकना। (५) लचक या बल खाना। (६) दुबिधा या अनिर्णय की स्थिति में होना। (७) कार्य आदि में देर होना।

लटकनि, लटकनी—सज्ञा स्त्री. [हिं. लटकना] (१)

लटकने की क्रिया या भाव। उ.—(क) लट लटकनि—१०-९१। (ख) लटकन लटकनि भाल की—१०-१०५। (२) **लचकती, बल खाती या लचकभरी चाल।** उ.—(क) भावति मद गयद की लटकनि—६१८। (ख) बझे जाइ खग ज्यौ पिय छबि लटकनी लस।

लटकनो—क्रि अ. [हि. लटकना] (१) **ऊँचे आधार से लटककर झूलना।** (२) **हिलना-डोलना।** (३) **टँगना।** (४) **झुकना।** (५) **लचकना।** (६) **दुबिधा मे पड़ना।** (७) **कार्य में देर होना।**

लटकवाना, लटकवानो—क्रि. स.[हि लटकाना का प्रेर.] **लटकाने का काम दूसरे से कराना।**

लटका—सज्ञा पु [हि. लटक] (१) **चाल, ढब।** (२) **बनावटी चेष्टा।** (३) **बातचीत का बनावटी ढग।** (४) **टोटका।** (५) **साधारण नुस्खा।**

लटकाए—क्रि. स. [हि. लटकाना] **टाँग दिये।** उ—अति बिस्तार नीपतरु तामै लै लै जहाँ-तहाँ लटकाए—७८४।

लटकाना, लटकानो—क्रि. स. [हि लटकना] (१) **ऊँचे आधार से टिकाकर निराधार छोड़ देना।** (२) **टाँगना।** (३) **झुकाना, लचकाना।** (४) **दुबिधा मे रखना।** (५) **कार्य में देर करना।**

लटकायो, लटकायौ—क्रि. स [हि. लटकाना] **टाँगा।** उ.—देखि तुही सीकै पर भाजन ऊँचै धरि लटकायौ—१०-३३४।

लटकि—सज्ञा स्त्री. [हि. लटकना] (१) **लटकने की क्रिया या भाव।** (२) **झुकाव।** उ—मुकुट लटकि अरु भृकुटी मटक देखौ—८३९।

क्रि. अ.—(१) **टेढे होकर, लचककर।** उ.—लकुटि लपेटि लटकि भए ठाढे, एक चरन धर धारे—६३२।

लटकीला—वि. [हि. लटक+ईला] **लचकदार।**

लटकै—क्रि. अ. [हि. लटकना] **दुबिधा में पड़ता है।**

प्र०—रह्यौ लटकै—दुबिधा मे ही पड़ा रहा। उ.—ना हरि-भक्ति, न साधु-समागम रह्यौ बीचही लटकै—१-२९२।

लटक्यो, लटक्यौ—क्रि. अ. [हि लटकना] **लटका, लटकने लगा या लगी।** उ—(क) हरि तोरी मोतिनि की माला कछु गर कछु कर लटक्यौ—११११। (ख) सेहरो सिर पर मुकुट लटक्यो—१० उ०-२४।

लटकौआ, लटकौवा—वि. [हि. लटकना] **लटकनेवाला।**

लटना, लटनो—क्रि. अ [स. लड=हिलना-डोलना] (१) **थककर गिरना या लड़खड़ाना।** (२) **श्रम, रोग आदि से शिथिल या अशक्त होना।** (३) **शक्ति या उत्साह से रहित होना।** (४) **थक जाना।** (५) **व्याकुल या विकल होना।**

क्रि अ. [स लल, लड=ललचाना] (१) **लेने को ललचाना या लुभाना।** (२) **लीन या अनुरक्त होना।**

लटपट, लटपटा—वि. [हि. लटपटाना] (१) **गिरता-पडता या लड़खड़ाता हुआ।** (२) **ढीला-ढाला, अस्त-व्यस्त।** (३) **टूटा-फूटा या अस्पष्ट (शब्द)।** (४) **अडबड, अव्यवस्थित।** (५) **अशक्त, शिथिल।** (६) **गिजा या मला-दला हुआ, जिसमे शिकन या सिलवटें पड़ गयी हो।**

लटपटाइ—क्रि अ. [हि लटपटाना] **लड़खड़ाकर।** उ.—लटपटाइ (लटपटात) पग धरनि धरत गज—१०६७।

लटपटात—वि [हि. लटपटाना] **लड़खड़ाता हुआ।** उ.—लटपटात पग धरनि धरत गज—१०६७।

लटपटान—सज्ञा स्त्री. [हि. लटपटाना] (१) **लड़खड़ाने की क्रिया या भाव।** (२) **लटक या लचकभरी गति या चाल।**

लटपटाना, लटपटानो—क्रि. अ. [स. लड+पत्] (१) **गिरना-पड़ना, लड़खड़ाना।** (२) **डिगना, स्थिर न रहना।** (३) **ठीक तरह से काम न करना।**

क्रि. अ. [स. लल, लड] (१) **लुभाना, ललचाना, लेने को लपकना।** (२) **लीन या अनुरक्त होना।**

लटपटी—वि. स्त्री. [हि. लटपटा] (१) **गिरती-पड़ती, लड़खड़ाती हुई।** उ.—चलत लटपटी चाल—१०-११४। (२) **ढीली-ढाली, अस्तव्यस्त।** उ.—(क) लटपटी पाग, उनीदे नैन। (ख) सूर देखि लटपटी पाग पर जावक की छवि तात। (३) **गिजी, मली-**

वली, शिकन या सिलवट भरी। उ.—त्रिबली पलोटन सलोट लटपटी सारी।

लटपटे—वि. [हि. लटपटा] ढीले-ढाले, अस्तव्यस्त। उ.—छूटे बदन अरु पाग की बाँधनि छुटी, लटपटे पेच अटपटे दिए—२००९।

लटा—वि [स. लट्ट] (१) लोलुप। (२) लुच्चा। (३) तुच्छ। (४) गिरा हुआ। (५) बुरा।

लटाना—क्रि. अ. [स. लल, लड=लुभना] (१) लुभाना, लेने को ललकना। (२) लीन या अनुरक्त होना।

लटानी—क्रि. अ. [हि. लटाना] लुभा गयी, लोभ से भर गयी। उ.—सकल सिंगार कियो ब्रज बनिता नख-सिख लोभ लटानी हो—२४००।

लटानो—क्रि. अ. [हि. लटाना] (१) लुभाना, लेने को ललकना। (२) लीन या अनुरक्त होना।

लटापटी—सज्ञा स्त्री. [हि. लटपटाना] (१) लड़खड़ाने की क्रिया या भाव। (२) लड़ाई-झगड़ा।

लटापोट—वि [हि. लोटपोट] मुग्ध, मोहित।

लटि—क्रि. अ. [हि. लटना] (१) लीन या अनुरक्त होकर। उ.—छपद कज तजि बेलि सौ लटि-लटि प्रेम न जान्यौ। (२) शिथिल या विकल होकर। उ.—सूर प्रान लटि लाज न छाँडत सुमिरि अवध आधार—२८८८।

लटिया—सज्ञा स्त्री. [हि. लट] लच्छी, अट्टी, आँटी।

लटी—सज्ञा स्त्री. [हि. लटा] (१) बुरी बात। (२) झूठी बात।

मुहा०—लटी मारना—गप्प हाँकना। मारत-फिरत लटी—गप्प हाँकता फिरता है। उ.—अरु झूठनि के बदन निहारत मारत फिरत लटी—१-९८।

(३) भक्तिन, सन्यासिनी। (४) वेश्या।

लटुआ—सज्ञा पु. [हि. लट्टू] लट्टू (खिलौना)।

लटुरियाँ—संज्ञा स्त्री. बहु. [हिं लटूरी] अलकें, लटें। उ.—(क) छिटकि रही चहुँ दिसि जु लटुरियाँ—१०-१०५ (ख) लटकति ललित लटुरियाँ—१०-११६।

लटुरिया, लटुरी—सज्ञा स्त्री. [हि. लटूरी] लट, अलक। उ.—लटकति ललित लटुरिया भ्रू पर—१०-१२४।

लटुवा, लटू—सज्ञा पु. [हिं. लट्टू] लट्ट (खिलौना)।

मुहा०—लटू (लटुवा) भई—मुग्ध या मोहित हो गयी। उ.—हम तौ रीझि लटू भई लालन महा प्रेम तिय जान—२८११।

लटूरी—सज्ञा स्त्री [हि. लट] लट, केश, अलक। उ.—लटकति ललित ललाट लटूरी—१०-११७।

लटट—वि. [स.] दुष्ट, दुर्जन।

लट्टपट्ट—वि [हि. लथपथ] लथपथ।

लट्टू—सज्ञा पु. [स लुठन] एक खिलौना जिसे लत्ती या डोरी से नचाया जाता है।

मुहा०—(किसी पर) लट्टू होना—(१) मुग्ध या मोहित होना। (२) रीझना। (३) पाने या प्राप्त करने को हैरान होना।

लट्ठ—सज्ञा पु. [स यष्ठि, प्रा लट्ठि] मोटा डंडा।

मुहा०—(किसी के पीछे) लट्ठ लिये घूमना (फिरना)—विरोध या प्रतिकूल आचरण करना।

लट्ठबाज—वि. [हि लट्ठ+फा. बाज] लठैत।

लट्ठमार—वि. [हि लट्ठ+मारना] (१) लट्ठ मारने-वाला। (२) कठोर, कर्कश।

लट्ठा—सज्ञा पु. [हि. लट्ठ] (१) लकड़ी का बड़ा या लंबा टुकडा। (२) एक मोटा कपड़ा।

लठ—सज्ञा पु [हि. लट्ठ] मोटा डडा।

लठबाँसी—वि. [हि लट्ठ+बाँस] लाठी-डडा बाँधे लडने को तैयार, लड़ाकू। उ—बटपारी, ठग, चोर उचक्का, गाँठिकटा, लठबाँसी—१-१८६।

लठिया—सज्ञा स्त्री. [हि. लाठी] लकड़ी, लाठी।

लठैत—वि [हि लट्ठ] लाठी बाँधने, चलाने या उसको लेकर लड़नेवाला।

लड़ंत—सज्ञा स्त्री. [हि. लडाई] (१) भिड़त। (२) मुकाबला, सामना।

लड़—सज्ञा स्त्री. [स. यष्ठि, प्रा. लट्ठि] (१) माला। (२) पक्ति, कतार।

मुहा०—लड मिलाना—मित्रता करना। लड मे रहना—दल या पक्ष मे रहना।

(३) पक्ति में गुँथी कलियो-मजरियो की छड़ी की तरह की पक्ति।

लड़इता, लड़इतो—वि. [हि लडैता] लाडले प्रियतम।

उ —तब कित लाड़ लडाइ लडइतो बेनी कुसुम गुहि गाढ़ी—पृ.३५३ (९५)।

लड़क—संज्ञा स्त्री. [हिं. ललक] ललक, चाव।

लड़कइयाँ, लड़कई—संज्ञा स्त्री. [हि लडका+ई] (१) लड़कपन। (२) नादानी। (३) चिलबिल्लापन।

लड़कना, लड़कनो—क्रि. अ [हिं. ललकना] ललकना।

लड़कपन—संज्ञा पु. [हिं. लडका+पन] (१) बाल्यावस्था। (२) चिलबिल्लापन, चचलता।

लड़का—संज्ञा पु. [हि. लाड़] (१) बालक। (२) पुत्र।

मुहा०—राह-बाट का लडका-लड़का जिसके माता-पिता का पता न हो। लडका-लडकी—संतान। लडका-बाला—(१) संतान। (२) परिवार, कुटुंब।

लड़काइ, लड़काई—संज्ञा स्त्री. [हि. लडका+ई] (१) बाल्यावस्था। (२) नादानी। (३) चिलबिल्लापन।

लड़कानि—संज्ञा स्त्री. [हि. लडका] लड़कपन।

लड़किनि, लड़किनी—संज्ञा स्त्री. [हिं. लडकी] (१) बालिका। (२) पुत्री।

लड़कीला—वि.[हि. लड़का+ईला] मोह-ममता से युक्त।

लड़कैयाँ—संज्ञा स्त्री. [हि. लडका+ऐयाँ] लड़कपन।

लड़कौरी—वि. स्त्री. [हि. लडका+औरी] (स्त्री.) जिसकी गोद मे बच्चा हो।

लड़खड़ाना, लड़खड़ानो—क्रि. अ. [स. लड=डोलना +हि. खडा] (१) डगमगाना। (२) झोका खाकर गिरना। (३) ठीक-ठीक न चलना।

मुहा०—जीभ लडखडाना—टूटे-फूटे शब्द या वाक्य निकलना।

लड़खड़ी—संज्ञा स्त्री. [हि. लडखड़ाना] डगमगाहट।

लड़ना, लड़नो—क्रि. अ. [स. रणन] (१) युद्ध या लड़ाई करना। (२) मल्लयुद्ध करना। (३) तकरार या हुज्जत करना। (४) वादविवाद करना। (५) टकराना। (६) विरुद्ध प्रयत्न करना। (७) मेल मिल जाना।

मुहा०—हिसाब लडना—(१) लेखा-जोखा ठीक होना। (२) कार्य या बात का सुभीता हो जाना।

(८) अनुकूल या ठीक होना। (९) लक्ष्य पर पहुँचना।

लड़बड़ाना—क्रि. अ. [हि. लडखडाना] लडखड़ाना।

लड़बावर, लड़बावला—वि. [हि. लडका+बावरा] (१) अल्हड़। (२) अनाड़ी। (३) (कार्य) जिससे मूर्खता प्रकट हो।

लड़बौरा—वि. [हि. लडबावरा] लड़बावरा।

लड़बौरी—वि स्त्री [हि. लडबौरी] अल्हड, अनाड़ी। उ.—सुन री राधा अति लडबौरी जमुन गई तब सग कौन री।

लड़ाइ, लड़ाई—संज्ञा स्त्री. [हि. लड़ना, लडाई] (१) भिड़त। (२) सग्राम, युद्ध। (३) कुश्ती। (४) तकरार, हुज्जत। (५) बहस, वादविवाद। (६) टक्कर। (७) विरुद्ध प्रयत्न या चाल। (८) बैर, अनबन।

क्रि. स. [हिं. लाड] प्यार-दुलार करके, प्यार-दुलार किया। उ.—(क) तब कित लाड लडाइ लडइते बेनी कुसुम गुहि गाढी—पृ. ३५३ (९५)। (ख) एक तौ लालन लाडनि लडाइ, दूजे यौवन बावरी—२०४९। (ग) कहिए कहा नद नदन सौ, जैसे लाड लडाई—२२७५। (घ) अरु कत लाड लडाइ राग रस हँसि हँसि कठ लगावै—३०९८।

लड़ाए—क्रि. स. [हि. लाड] प्यार-दुलार किया। उ.—लालन तुम ऐसे लाड लडाए—७९४।

लड़ाका, लड़ाकू—वि. [हि. लड़ना] (१) झगड़ालू। (२) वीर, योद्धा।

लड़ाना, लड़ानो—क्रि. स. [हि. लडना का प्रेर.] (१) लडने को प्रवृत्त करना। (२) झगड़ने को प्रवृत्त करना। (३) टक्कर खिलाना, भिड़ाना। (४) लक्ष्य पर पहुँचाना। (५) परस्पर उलझाना। (६) सफलता के लिए व्यवहार में लाना।

क्रि. स. [हिं. लाड] प्यार-दुलार करना।

लड़ायतो, लड़ायतौ—वि. [हिं. लडैता] प्यारा-दुलारा।

लड़ायौ—क्रि. स. [हिं. लाड़] (१) लाड़-प्यार या दुलार किया। उ.—(क) भाँति भाँति करि मोहिं लडायौ सघन कुज मे जाय—सारा. ३२५। (ख) आसा करि करि जननी जायौ, कोटिक लाड लड़ायौ—२-३०। (ग) बालक प्रतिपालक तुम दोऊ, दसरथ लाड लड़ायौ—९-५५। (२) लाड़-प्यार करके ढीठ बना दिया।

उ.—सुनि सुनि री तैं महरि जसोदा तैं सुत बडौ लडायौ—१०-३३९ ।

लड़ावत—क्रि. स. [हि. लाड] **लाड़-प्यार करता है ।** उ.— फिरि बसुदेव बसे अपने गृह परम रुचिर सुख धाम । राम-कृष्न को लाड लडावत जानत नहि दिन जाम—सारा ५३६ ।

लड़ावति—क्रि. स [हि लाड] **प्यार-दुलार करती है ।** उ.—सौमित्रा-कैकइ सुख पावति बहु बिधि लाड लडावति—सारा. १९५ ।

लड़ावति—क्रि. स. [हिं लाड] (१) **प्यार-दुलार करती है ।** (२) **आदर-प्रेम करती है ।** उ.—जनक-सुता बहु लाड़ लडावति निपट निकट सुख दीन्हो—सारा. ३०८ ।

लड़ावै—क्रि. स. [हि लाड] **लाड़-प्यार करती है ।** उ.—भूषन-बसन आदि सब रचि रचि माता लाड लड़ावै—सारा. १८२ ।

लड़ी—सज्ञा स्त्री [हिं. लड] (१) **माला ।** (२) **पक्ति, कतार ।** (३) **गुँथी हुई कलियो या मजरियो की छड़ी की तरह की पक्ति ।**

लड़ीला—वि. [हि. लाड] (१) **लाड़ला, दुलारा ।** (२) **लाड-प्यार से ढीठ हो जानेवाला ।** (३) **प्रिय ।**

वि. [हि लडनेवाला] **योद्धा ।**

लडुआ, लडुवा—सज्ञा पु. [स. लड्डुक] **लड्डू, मोदक ।** उ.—मृदु मुसुकनि मनो ठग-लडुआ मिषि गनि-मति सुध बिसरे—पृ. ३३१ (५) ।

लड़ैता—वि [हिं लाड+ऐता] (१) **दुलारा, लाडला ।** (२) **अधिक लाड़ प्यार के कारण धृष्ट हो जानेवाला ।** (३) **प्रिय, प्यारा ।**

वि. [हि. लडना] **वीर, योद्धा ।**

लड़ैती—वि स्त्री. [हि लडैता] **प्यारी ।** उ—जितहि जितहिं रुख करै लडैती तितही आपुन आवै—२२७५ ।

लड़ैते—वि. [हि. लडैता] **दुलारे, लाड़ले ।** उ.—(क) बहु जतननि ब्रजराज लडैते तुम कारन राख्यौ बल-भैया—१०-२२९ । (ख) कहा कहौ मेरे लाल लडैते जब तू बिदा कियौ—२६९८ ।

लड़ैतो, लड़ैतौ—वि. [हिं. लडैता] **दुलारा, लाड़ला ।** उ.—(क) मेरो अलक लडैतो मोहन ह्वैहै करत सकोच—२७०७ । (ख) पठै देहु मेरो लाल लडैतो, वारौ ऐसी हांसी—२७१० ।

लड़ैहौं—क्रि. स [हि लाड] **लाड-दुलार करूंगी ।** उ.—हौ अपने गोपाल लडैहौ, भौन-चाड सब रहौ धरी —१०-८० ।

लड्डू—सज्ञा पु [स. लडडुक] **मोदक ।**

मुहा०—लड्डू खिलाना—**आनदोत्सव करना ।** लड्डू मिलना—**कोई लाभ होना ।** लड्डू बँटना—**लाभ या प्राप्ति होना ।** ठग के लड्डू खाना—**होश-हवास में न रहना ।** मन के लड्डू उडाना, खाना या फोडना—**किसी लाभ या प्राप्ति की व्यर्थ कल्पना करना ।**

लड़याना, लड़यानो—क्रि. स [हि. लाड] **प्यार-दुलार करना ।**

लढ़ा—सज्ञा पु. [हि. लढिया] **बैलगाडी ।**

लढ़िया—सज्ञा स्त्री [हि. लुढकना] **बैलगाड़ी ।**

लत—सज्ञा स्त्री [स. रति] **बुरी आदत, दुर्व्यसन ।**

लतखोर, लतखोरा—वि. [हि. लात+फा. खोर] (१) **लात या मार खाने का काम करनेवाला ।** (२) **नीच ।**

लतपत—वि [हि. लथपथ] **लथपथ ।**

लतर—सज्ञा स्त्री. [हिं. लता] **बेल, लता ।**

लतहा—वि. [हि. लात+हा] **लात मारनेवाला (पशु) ।**

लता—सज्ञा स्त्री [स.] (१) **बेल, बल्ली ।** उ.—इद्रिय-मूल-किसान, महातृन-अग्रज बीज बई । जन्म-जन्म की बिपय बासना उपजत लता नई—१-१८५ । (२) **कोमल शाखा ।** उ—नाना भाँति पाँति सुदर मनौ कंचन की है लता बनाई ।

लताई—सज्ञा स्त्री. [स. लता] **कोमल शाखा ।** उ.—कबु कपोत कठ निसिबासर बाहु बली कटि कज लताई—१८८७ ।

लताकुंज—सज्ञा पु. [स.] **स्थान जो लताओ से छाया हो ।**

लतागृह—सज्ञा पु [स] **स्थान जो लताओ से छाया हो ।**

लताड़—सज्ञा स्त्री [हि लताडना] **लताड़ने की क्रिया या भाव, भर्त्सना ।**

लताड़ना, लताड़नो—क्रि. स. [हिं. लात] (१) **पैरो से रौंदना ।** (२) **लातों से मारना ।** (३) **हैरान करना ।**

लतापत्ता—सज्ञा पुं. [सं. लतापत्र] (१) पेड-पत्ते। (२) जड़ी-बूटी।

लताभवन—सज्ञा पु.[स]स्थान जो लताओ से छाया हो।

लतामंडप—सज्ञा पु [स]स्थान जो लताओ से छाया हो।

लतिका—सज्ञा स्त्री. [स.](१) बेल। (२) कोमल शाखा।

लतियर, लतियल—वि. [हिं. लात] लतखोरा।

लतियाना, लतियानो—क्रि. स. [हि लात+आना] (१) पैरों से रौदना। (२) लातो से मारना।

क्रि. स. [हि. लत्ती] लट्टू को नचाने के लिए उसमें डोरी या लत्ती लपेटना।

लतिहर, लतिहल—वि. [हिं. लात] लतखोरा।

लतीफा—सज्ञा पु [अ. लतीफा]हँसी की बात, चुटकुला।

लत्ता—सज्ञा पु. [स. लक्तक] (१) चिथडा। (२) कपड़ा।

मुहा०—लत्ता (लत्ते) लेना (ले डालना) किसी को खूब आड़े हाथो लेना।

लत्ती—सज्ञा स्त्री. [हिं. लात] (१) (पशु की) लात। (२) (पशु की) लात मारने की क्रिया।

सज्ञा स्त्री [हि लत्ता] (१) कपड़े की धज्जी। (२) लट्टू नचाने की डोरी।

लथपथ—वि. [अनु.] (१) भीगा हुआ, तराबोर। (२) (कीचड, रक्त आदि मे) सना हुआ।

लथाड़—सज्ञा स्त्री. [अनु लथपथ] (१) पटककर घसीटने की क्रिया। (२) पराजय। (३) हानि। (४) डाँट डपट, झिड़की।

मुहा०—लथाड पडना—डाँटा-डपटा जाना।

लथाड़ना, लथाड़ना, लथेड़ना, लथेड़नो—क्रि स [अनु लथपथ] (१) (कीचड आदि मे) सान लेना या सानकर गदा करना। (२) पटक कर घसीटना। (३) कुश्ती में पछाड़ना। (४) हैरान करना। (५) डाँटना-डपटना।

लदना, लदनो—क्रि अ. [हिं. लादना] (१) बोझ से भरा जाना। (२) आच्छादित होना। (३) किसी भारी चीज का दूसरी पर रखा जाना। (४) जेल जाना। (५) मर जाना।

लदलद—क्रि. वि. [अनु.] किसी गीली-जैसी चीज के ऊपर से गिरने का शब्द।

लदवाना, लदवानो—क्रि. स. [हिं. लादना का प्रेर.] लादने का काम दूसरे से कराना।

लदाइ—क्रि. स [हि लदाना] बोझ या भार आदि रखवाकर। उ.—गयौ पताल उरग गहि आन्यौ, ल्यायौ तापर कमल लदाइ—६००।

लदाई—सज्ञा स्त्री. [हि. लादना] लादने की क्रिया, भाव या मजदूरी।

लदाऊ—वि. [हि. लदना] लदने का भाव, भरौव।

लदाए—क्रि. स. [हिं. लदाना] बोझ या भार आदि रखवाये। उ.—ताही पर धरि कमल लदाए, सहस सकट भरि ब्याल पठाए—५८५।

लदान—सज्ञा स्त्री. [हि. लादना] लादने की क्रिया या भाव।

लदाना, लदानो—क्रि. स. [हि. लादना का प्रेर.] लादने का काम दूसरे से कराना।

लदाफँदा—वि. [हि. लदना+फँदना] भार से लदा हुआ।

लदाव—सज्ञा पु [हिं. लादना] (१) लादने की क्रिया या भाव। (२) भार, बोझ।

लदुआ, लदुवा—वि. [हिं. लादना] बोझ ढोनेवाला।

लद्दू—वि. [हि. लादना] बोझ ढोनेवाला।

लद्धड़—वि. [हिं लादना] जो फुर्तीला न हो।

लद्धड़पन—सज्ञा पु [हि. लद्धड] सुस्ती, ढिलाई।

लद्धना, लद्धनो—क्रि. स. [स लब्ध, प्रा. लद्ध =प्राप्त] पाना, प्राप्त करना।

लद्यो, लद्यौ—वि [हिं. लदना] भार या बोझ से लदा या दबा हुआ। उ.—सुत-धन-धाम-त्रिया-हित औरै लद्यौ बहुत बिधि भारौ—१-२१३।

लप—सज्ञा पु. [अनु.] (१) लचीली चीज को हिलाने का शब्द या कार्य। (२) छुरी जैसी लचीली चीज की चमक की गति।

मुहा०—लप लप करना—(१) लचीली चीज के हिलाने से होनेवाला शब्द। (२) चमाचम करना, चमकना। लप से—झट से, तुरंत।

सज्ञा पु. [देश.] (१) अँजुली। (२) अँजुली भर कोई वस्तु।

लपक—सज्ञा स्त्री. [अनु. लप] (१) ज्वाला, लपट, लौ। (२) चमक, लपलपाहट। (३) तेजी, वेग।

मुहा०—लपककर—(१) तेजी से जाकर। (२) झट से, तुरत।

लपकत—क्रि. अ [हि. लपकना] तेजी से चलता है। उ.—कबहुँक दौरि घुटुरुवनि लपकत, गिरत उठत पुनि धावै री—१०-९८।

लपकना, लपकनो—क्रि. अ. [हि. लपक] (१) तुरत दौड़ पड़ना। (२) तेजी से चलना। (३) आक्रमण के लिए झपटना। (४) कोई वस्तु लेने को तेजी से बढना या हाथ बढ़ाना।

लपका—सज्ञा पु. [हि. लपकना] लत, चस्का।

लपकि—क्रि. अ. [हि. लपकना] झपटकर। उ—ग्राज सो टूटि गजराज हाँकत परचो मनो गिरि चरन धरि लपकि लीन्हो—२५९०।

लपझप- वि. [अनु. लप+हि. झपट] (१) चुपचाप न बैठनेवाला। (२) तेज, फुरतीला।

मुहा०—लपझप चाल—तेज पर बेढगी चाल।

सज्ञा स्त्री. छीना-झपटी।

लपट—सज्ञा स्त्री [हि लौ+पट=विस्तार] (१) ज्वाला, लौ। उ.—(क) झपटि झपटत लपट—५९६। (ख) उचटत अति अगार, फुटत फर, झपटत लपट कराल —६१५। (२) तपी हुई वायु, आँच की तेजी। (३) सुगधित वायु का झोका। (४) सुगध, महक। उ — सूरदास प्रभु की बानक देखे गोपी ग्वाल टारे न टरत निपट आवै सौधे की लपट—८३९।

सज्ञा स्त्री.—[हि. लिपट] लिपटने की क्रिया या भाव।

लपटना, लपटनो—क्रि. अ [हि. लिपटना] (१) आलिगित होना। (२) सूत, डोरी आदि का किसी वस्तु के चारो ओर लपेटा जाना। (३) सट जाना। (४) उलझना, फँसना। (५) घिर जाना। (६) लगा या रत रहना।

लपटा—सज्ञा पु [हि. लपटना] सबध, लगाव।

लपटाइ—क्रि. स [हि. लपटाना] (१) सटाकर, लिपटाकर। उ.—(क) पूतना के प्रान सोखे आपु उर लपटाइ—४९८। (ख) यौ लपटाइ रहे उर-उर ज्यो मरकत मनि कचन मै जरिया—६८८। (२) कई फेरो से घेर लेना। उ.—उरग लियौ हरि कौ लपटाइ—५५५।

क्रि. अ. [हि. लपटना] लगकर, सन कर।

प्र०—रही लपटाय—लग गयी थी। उ.–आपुहि जाइ बाँह गहि ल्याई खेह रही लपटाइ—१०-२२६।

लपटाई—क्रि. अ. [हि. लपटना] चिपटकर।

प्र०—रहे लपटाई—चिपट गये। उ.—अति आनद सहित सुत पायौ, हिरदै माँझ रहे लपटाई—१०-५१।

लपटाए—क्रि. अ. [हि. लपटना] चिपट गये।

प्र०—रहे लपटाए—चिपटे रहे। उ —(क) उत्तर कहत कछू नहिं आयौ, रहे चरन लपटाए —९-३७। (ख) तब वह देह धरी जोजन लौ स्याम रहे लपटाए —१०-५३।

क्रि स. [हिं. लपटाना] लगाये या धारे हुए। उ.—सध्या समय साँवरे मुख पर गो-पद रज लपटाए —४१७।

लपटात—क्रि अ. [हिं. लपटना] (१) चिपटता या लिपटता है। उ.—(क) जम के फद परचौ नहि जब लगि चरननि किन लपटात—१-३१३। (ख) ऐसे अध जानि निधि लूटत, पर-तिय सँग लपटात—२-२४। (ग) ज्यो पतग हित जानि आपनो दीपक सौ लपटात—३३८६। (२) घेर लेता है। उ.—तउ कुटुँब कौ मोह न जात। तन-धन-लोभ आइ लपटात —१-३४२।

क्रि. स. [हि. लपटना] मलता, लगाता या पोतता है। उ —जेवत कान्ह नद इकठौरे। कछुक खात लपटात दोउ कर बाल केलि अति भोरे—१०-२२४।

लपटाति—क्रि. अ. [हिं. लपटना] लिपटी है, घेरे हुए है। उ.—तनक कटि पर कनक करधनि छीन छवि चमकाति। मनौ कनक कसौटिया पर लीक सी लपटाति—१०-१८४।

लपटाते—क्रि. अ [हि. लपटना] लिपट जाते। उ.—

जब उठि दान माँगते हँसि कै सग गात लपटाते—२५२८ ।

लपटान—सज्ञा स्त्री. [हिं. लपटना] लिपटने का भाव या क्रिया ।

प्र०—लागी लपटान— लिपटने लगी । उ.—तब मै कह्यौ, ठग्यौ कब तुमको, हँसि लागी लपटान—७०९ ।

सज्ञा स्त्री. [हिं. लपटाना] लिपटने की क्रिया या भाव ।

प्र०—लपटान दै—मलने, पोतने या लगाने दे । उ —गोपालहि माखन खान दै । सुनि री सखी, मौन ह्वै रहिए, बदन दही लपटान दै— १०-२७४ ।

लपटाना—क्रि. स [हिं. लपटना] (१) लिपटाना, आलिगन करना । (२) लपेटना । (३) घेरना । (४) मलना, पोतना, लगाना ।

क्रि अ.—(१) सटना, संलग्न होना । (२) फँसना, उलझना ।

लपटानि—सज्ञा स्त्री [हिं. लपटना] लिपटने या लगने की क्रिया या भाव । उ.—रथ तै उतरि चलनि आतुर ह्वै, कच रज की लपटानि—१-२७९ ।

लपटानी—क्रि स [हि लपटाना] (१) लिपट गयी, लिपटा लिया । उ —(क) रोवति जननि कठ लपटानी सूर स्याम गुन राई—७४३ । (ख) ब्रज जुवतिनि उपवन मै पाए लगी उठाय कठ लपटानी —१०-७८ । (ग) मै तो चरन-कमल लपटानी जो भावै सो होई री—१२०३ । (घ) सूरदास प्रभु कवन काज को माखी मधु लपटानी—३३७५ ।

क्रि अ. व्यस्त थी, लगी थी । उ.- मै गृह-काज रहौ लपटानी—१००१ ।

लपटाने—वि [हि लपटाना] मले या सने हुए, भरे या लगाये हुए । उ —(क) सो मुख चूमति महरि जसोदा दूध लार लपटाने (हो)—१०-१२८ । (ख) जे पद-कमल धूरि लपटाने, गहि गोपिनि उर लाए—५७१ ।

लपटानो, लपटानौ—वि. [हि. लपटाना] लगा, लिपटा या सना हुआ । उ —माखन कर, दधि मुख लपटानौ देखि रही नँदलाल—१०-२७० ।

क्रि. स. (१) लिपटाना, आलिगन करना । (२) लपेटना । (३) घेरना ।

क्रि अ.—(१) सटना, संलग्न होना । (२) उलझना, फँसना । (३) व्यस्त होना ।

क्रि अ भूत लिपटा रहा, छोड न सका । उ.—हिसा-मद-ममता रस भूल्यौ, आसा ही लपटानौ—१-४७ ।

लपटान्यो, लपटान्यौ—क्रि स [हि लपटाना] मला, लगाया, सान लिया । उ —कहुँ आए ब्रज-बालक सँग लै माखन मुख लपटान्यौ—१०-२७० ।

लपटायो, लपटायौ—क्रि स [हि. लपटाना] मला, साना लगाया । उ —तै जु गँवारि पकरि भुज याकी बदन दह्यौ लपटायो—१०-३३९ ।

लपटावति—क्रि स. [हि लपटाना] चिपटाती या आलिगन करती है । उ —सूरदास प्रभु अति रति नागर, गोपी हरषि हृदय लपटावनि—३९० ।

लपटावै—क्रि. स [हि लपटाना] लगाता या मलता है । उ —(क) निदत मूढ मलय चदन कौ, राख अग लपटावै–२१३ । (ख) मूत्र पुरीष अग लपटावै–५-२ ।

लपटाहीं—क्रि अ. [हि. लपटाना] लिपटते या आलिगन करते है । उ.—सूर स्याम देखत नारिनि कौ रीझि-रीझि लपटाही—१८४३ ।

लपटि—क्रि अ. [हि. लपटना] लिपटकर ।

प्र०—लपटि गयौ – लिपट या चिपट गया, गुडलो या फेरो से घेर लिया । उ –अति बल करि करि काली हारचौ । लपटि गयौ सब अग अग प्रति, निर्बिष कियौ सकल बल झारचौ—५७४ ।

लपट्यौ—वि [हिं. लपटना] लगाया, मला या पोता हुआ । उ —बिष लपट्यौ अस्तन मुख नाई–१०-५१ ।

लपना, लपनो—क्रि. अ. [अनु लप लप] (१) लचीली चीज का झोक के साथ लचना । (२) झुकना, लचना । (३) लपकना, ललचना ।

लपलपाना, लपलपानो—क्रि. अ [अनु लप लप] (१) लचीली चीज का झोक के साथ इधर-उधर लचना । (२) किसी पतली और लबी चीज का हिलना-डोलना या भीतर से बार-बार बाहर निकलना ।

मुहा०—जीभ लपलपाना (लपलपानो)—चखने या पाने की तीव्र इच्छा होना ।

(३) छुरी, तलवार आदि का चमकना ।

क्रि. स. (१) लचीली चीज को झोंक के साथ इधर-उधर लचाना । (२) किसी पतली और लबी चीज को हिलाना-डोलाना या बार-बार भीतर से बाहर निकालना ।

मुहा०—जीभ लपलपाना (लपलपानो)—चखने या पाने की तीव्र इच्छा करना ।

(३) छुरी, तलवार आदि को चमकाना ।

लपलपाहट—सज्ञा स्त्री [हि. लपलपाना+आहट] (१) लपलपाने की क्रिया या भाव । (२) चमक, झलक ।

लपसी—सज्ञा स्त्री. [स. लप्सिका] (१) भुने हुए आटे में शकर या गुड़ का शरबत डालकर पकायी गयी गाढी वस्तु । उ.—(क) लुचुई लपसी सद्य जलेबी—१०-२२७ । (ख) लुचुई लपसी घेवर खाजा-३९६ ।

लपाना, लपानो—क्रि. स. [अनु. लपलप] (१) लचीली चीज को झोक के साथ इधर-उधर लचाना । (२) पतली और लबी चीज को हिलाना-डोलाना । (३) आगे बढ़ाना ।

लपिटना, लपिटनो—क्रि अ. [हि. लपटना] (१) लिपटना, आलिंगित होना । (२) गुडलो या फेरों से घेरा जाना । (३) सटना, सलग्न होना । (४) फँसना, लिप्त होना । (५) लगा रहना, रत रहना ।

लपिटाना—क्रि. स. [हि. लपटाना] (१) लिपटाना, आलिंगन करना । (२) गुडल या फेरों से बाँधना । (३) चारो ओर से घेरना । (४) सटाना, संलग्न करना । (५) फँसाना, लिप्त करना ।

क्रि. अ.—(१) सटना, सलग्न होना । (२) उलझना, फँसना । (३) लगना, रत होना ।

लपिटाने—वि. [हि लपिटाना] उलझे हुए । उ.—बसन कुचील, चिहुर लपिटाने, बिपति जाति नहि बरनी—९-७३ ।

लपिटानो—क्रि. अ., क्रि. स [हि. लिपटाना] लिपटना ।

लपेट—संज्ञा स्त्री. [हि. लिपटना] (१) लपेटने की क्रिया या भाव । (२) घुमाव, फेरा । (३) कपड़े की तह की मोड । (४) ऐंठन, मरोड । (५) उलझन, फँसाव, चक्कर । (६) घेरा, परिधि । (७) पकड, बधन ।

लपेटत—क्रि स. [हि. लपेटना] घुमाव डालता है ।

प्र०—लपेटत जात—गुडल या फेरे डालकर बाँधता जाता है । उ —सूर स्याम सौ दाउँ बतायौ, काली अग लपेटत जात—५५४ ।

लपेटन—सज्ञा स्त्री. [हि लपेटना] (१) लपेटने की क्रिया या भाव, लपेट । (२) फेरा, घुमाव । (३) ऐंठन, मरोड़ । (४) फँसाव, चक्कर, उलझन ।

सज्ञा पु — (१) लपेटने की वस्तु । (२) बाँधने की वस्तु । (३) बाँधने का कपड़ा, बेठन । (४) पेर में उलझने या अटकाव डालनेवाली वस्तु ।

लपेटना, लपेटनो—क्रि. स. [हि. लिपटना] (१) सूत-डोरी जैसी चीज लपेट कर बाँधना या घेरना । (२) कपड़ा, कागज आदि लपेटकर बाँधना । (३) हाथ, पैर आदि की पकड़ मे लेना । (४) पकड में लाना । (५) झझट या उलझन में फँसाना । (६) गीली वस्तु लेपना या पोतना । (७) धूल आदि मलना या लगाना ।

लपेटवाँ—वि [हि. लपेटना] (१) जो लपेटकर बनाया गया हो । (२) जिसका अर्थ छिपा हुआ हो । (३) घुमाव-फिराव या चक्कर का ।

लपेटि—क्रि. स [हि. लपेटना] हाथ-पैरों की पकड़ में लेकर । उ.—लकुट लपेटि लटकि भए ठाढे—६३२ ।

लपोटना, लपोटनो—क्रि. स. [हिं. लिपटना] सानना, लगाना या लिपटा देना ।

लपोटी—वि. [हिं. लपोटना] सनी हुई । उ.—सूरज प्रभु की लहै जु जूठनि लारनि ललित लपोटी—१०-१६४ ।

लप्प—सज्ञा पु. [हि. लप] (१) अँजुली । (२) अँजुली भर कोई वस्तु ।

लप्पड़—सज्ञा पु. [हि. थप्पड] थप्पड़ ।

लप्पा—सज्ञा पु. [देश.] एक तरह का गोटा ।

लफंगा—वि [फा. लफगा] लपट, आवारा ।

लफना, लफनो—क्रि. अ. [हि. लपना] (१) लचीली चीज का झोक के साथ इधर-उधर लचना । (२) झुकना, लचना । (३) ललचना, लपकना ।

लफलफान, लफलफानि—सज्ञा स्त्री [हि. लपलपाना] (१) लपलपाने की क्रिया या भाव। (२) चमक, झलक।
लफाना, लफ़ानो—क्रि स. [हिं. लपाना] (१) लचीली चीज को फटकारना। (२) लचाना, झुकाना।
लफ्ज—सज्ञा पु. [अ लफ़्ज] (१) शब्द। (२) बात।
लब—सज्ञा पु. [फा.] ओठ।
लबझना, लबझनो—क्रि अ [देश.] फँसना, उलझना।
लबड़धोंधों—सज्ञा स्त्री. [हि. लबाड+धूम] (१) व्यर्थ का गुल-गपाडा। (२) प्रबध की गडबड़ी। (३) अनीति। (४) बेईमानी की चाल।
लबड़ना, लबड़नो—क्रि. अ [स लपन] (१) झूठ बोलना। (२) गप हाँकना।
लबधि—सज्ञा स्त्री [स लब्धि] प्राप्ति।
लबनी—सज्ञा स्त्री [स लभनी] लभनी।
लबरा—वि [स लपन] (१) झूठ बोलनेवाला। (२) गप हाँकनेवाला, गप्पी।
लबराई—संज्ञा स्त्री. [हि. लबारी] बढ-बढकर झूठी बाते करने की क्रिया, भाव या रीति।
लबरी—वि. स्त्री [हिं. लबरा] (१) झूठी। (२) गप्पिन। सज्ञा स्त्री [हि लिबडी] कपडा-लत्ता।
लबलहका—वि. [हि. लपना+लहकना] (१) लोभी, लालची। (२) चपल, चचल।
लबादा—सज्ञा पु. [फा.] (१) चोगा, रुईदार चोगा। (२) ढीला-ढाला और भारी वस्त्र।
लबार—वि. [हि लबडा] (१) झूठा। उ.—आजु गए औरहि काहू के, रिस पावति गहि बडे लबार—१९२७। (२) गप्पी।
लबारी—सज्ञा स्त्री. [हिं. लबार] झूठ बोलने का काम। वि. (१) झूठा। (२) गप्पी। (३) चुगलखोर।
लबालब—क्रि. वि [फा.] ऊपर तक।
लबासी—वि. [हिं लबार] झूठी और व्यर्थ की बाते गढ़नेवाला, गप्पी। उ —कपटी कान्ह लबासी। सज्ञा स्त्री.—झूठी और व्यर्थ की बात, गप्प।
लबेद—सज्ञा पु. [स. वेद का अनु.] वेद का खडन करनेवाला प्रसग या दतकथा।
लब्ध—वि. [स.](१) मिला हुआ। (२) कमाया हुआ। (३) भाग करने से आया हुआ (गणित)।
लब्धकाम—वि [स.] जिसकी इच्छा पूरी हो गयी हो।
लब्धकीर्ति—वि. [स लब्ध+कीर्ति] प्रसिद्ध, विख्यात।
लब्धनाम—वि [स लब्धनामन्] प्रसिद्ध।
लब्धप्रतिष्ठ—वि. [स.] सम्मानित, प्रतिष्ठित।
लब्धि—सज्ञा स्त्री [स.] प्राप्ति, लाभ।
लभनी—सज्ञा स्त्री. [स. लभन] हाँडी जो ताडी भरने के लिए ताड मे बाँधी जाती है।
लभ्य—वि [स.] (१) पाने योग्य। (२) उचित।
लमक—सज्ञा पु. [स.] (१) उपपति। (२) विलासी।
लमकना, लमकनो—क्रि. अ [हि लपकना] (१) लपकना। (२) उत्कठित होना।
लमछड़—वि [हि. लबा+छड] बहुत लबा। सज्ञा पु —भाला, बरछा।
लमधी—सज्ञा पु [देश] (१) समधी का बाप। (२) समधी का दूसरा समधी।
लमहा—सज्ञा पु. [अ.] क्षण, पल।
लमाना, लमानो—क्रि. स. [हि. लबा+ना] (१) लबा करना। (२) दूर तक आगे बढाना। क्रि. अ —चलते-चलते दूर निकल जाना।
लय—सज्ञा पु [स.] (१) विलीन होना, प्रवेश करना। (२) चित्तवृत्ति का एकाग्र होना। (३) प्रलय। (४) विनाश, लोप। उ.—ज्ञान, छमादिक सब लय भयो—१-२९०। (५) नृत्य, गीत और वाद्य का मेल। (६) वह समय जो स्वर निकालने में लगता है। सज्ञा स्त्री. (१) गाने का स्वर। (२) गीत की धुन।
लयन—सज्ञा पु. [स.] (१) विश्राम, शाति। (२) विश्रामस्थल। (३) आश्रय लेना।
लयलीन—वि [हिं. लवलीन] तल्लीन, लवलीन।
लयिक—वि [हि. लय+क] लय-सबधी।
लयो, लयौ—क्रि. स. [हि. लिया] (१) धारण की। उ.—जब जब जनम तुम्हारौ भयौ, तब तब मुडमाल मै लयौ—१-२२६। (२)चुकाया। उ.--ताहि सूल पर सूली दयौ। ताकौ बदलौ तुमसौ लयौ—३-५। (३) पाया। उ —चक्र सुदरसन सीतल भयौ, अभयदान दुरबासा लयौ—९-५। (४) पीछा किया। उ.—

धायो धर सर-सैल बिदिसि दिसि, चक्र तहाँ ह्वै जाइ लयौ—९-६। (५) ग्रहण या अगीकार किया। उ.—लघु सुत नृपति बुढापौ लयौ–९-१७४। (६) मनाया। उ.—जसुमति-गृह आनद लयौ—१०-२५०। (७) स्वागत किया। उ.—तब ब्रजराज सहित सब गोपिनि आगे ह्वै जो लयो—३४४४।

लर—सज्ञा स्त्री [हि. लड] लड़, लड़ी। उ.—(क) मोतिनि लर ग्रीवा—४५१। (ख) इक इक करि बिथराइ कै मोतिनि लर तोरचौ—१०५४। (ग) टूटैगी मोतिनि लर मोरी—१२०९। (घ) हौ बैठी पोवति मोतिनि लर—१४४७।

लरकइ, लरकई—सज्ञा स्त्री. [हि लरिकाई] (१) बाल्यावस्था। (२) नादानी। (३) चिलबिल्लापन।

लरकत—क्रि. अ. [हि लरकना] खिसककर। उ.—बिहरत गोपालराइ, मनिमय रचे अगनाइ, लरकत परिगनाइ घुटुरुनि डोलै—१०-१०१।

लरकना, लरकनो—क्रि. अ. [स. लडन = झूलना] (१) लटकना। (२) झुकना। (३) खिसकना, खिसककर नीचे आना।

लरका—सज्ञा पु. [हि लडका] (१) बालक। (२) पुत्र।

लरकाना, लरकानो–क्रि. स. [हि. लरकना] (१) लटकाना। (२) झुकाना। (३) खिसकाना, नीचे बढ़ाना।

लरकिनि, लरकिनी—सज्ञा स्त्री [हि लडकी] (१) बालिका। (२) पुत्री।

लरखत—क्रि अ. [हि लरखना] झूमता या लचकता है। उ—एक हरषत एक लरखत एक करत घातहि को लोचन गुलाल डारि सौधे ढरकावै—२४२५।

लरखना, लरखनो—क्रि. अ. [हिं. लडखडाना] (१) डगमगाना। (२) झुकना, झूमना, लचकना।

लरखर—सज्ञा स्त्री. [हिं. लडखडाना] लड़खड़ाने की क्रिया या भाव। उ.—सूर कहा न्यौछावर करिऐ अपने लाल ललित लरखर पर—१०-९३।

लरखरना—क्रि. अ. [हिं. लडखड़ाना] (१) लडखड़ाना। (२) झोका खाकर गिरना। (३) ठीक से काम न कर पाना।

लरखरनि—सज्ञा स्त्री. [हिं. लडखडाना] (१) डगमगाहट। (२) चलने या खडे होने मे ठीक से पैर न जमने का भाव। उ—सूर प्रभु की उर बसी किलकनि ललित लरखरनि—१०-१०९।

लरखरनो—क्रि. अ [हि लडखडाना] (१) डगमगाना। (२) झोका खाकर गिरना। (३) ठीक से काम न कर पाना।

लरखरात—क्रि अ. [हि लरखराना] डगमगाकर। उ.—लरखरात गिरि परत है, चलि घुटुरुनि धावै—१०-११२।

लरखराना, लरखरानो—क्रि. अ. [हि लडखडाना] (१) डगमगाना। (२) झोका खाकर गिरना। (३) ठीक से काम न कर पाना।

लरजना, लरजनो—क्रि. अ. [फा. लरजा] (१) काँपना, हिलना। (२) डरना, भयभीत होना।

लरजा—सज्ञा पु. [फा लरजा] (१) कँपकँपी। (२) भूचाल। (३) जूड़ी (रोग) जिसमे कँपकँपी लगती है।
क्रि. अ [हि. लरजना] (१) काँपा। (२) डरा।

लरजि—क्रि. अ. [हि. लरजना] भयभीत होकर।
प्र०—लरजि गई—भयभीत हो गयी। उ.—घटा आई गरजि, जुवति गई मन लरजि, बीजु चमकति तरजि डरत गाता—९५५।

लरझर—वि. [हि लड + झडना] अधिक, प्रचुर।

लरत—वि. [हि. लरना] जो लड़ रहे हो। उ.—निकसि सर तै मीन मानो लरत कीर छुराइ—३५२।

लरती—क्रि. अ [हि. लरना] लडती-झगडती। उ.—सूर तबहि हमसो जो कहती तेरै घाँ ह्वै लरती—१२७१।

लरतौ—क्रि. अ. [हि लरना] लड़ाई-झगडा करता। उ—उदर-अर्थ चोरी हिसा करि मित्र-बधु सौ लरतौ—१-२०३।

लरन—सज्ञा स्त्री. [हि लरना] लडने की क्रिया या भाव, लड़ने-झगड़ने। उ—लै किन जाहि भवन आपने हचाँ लरन कौन सो आई—२२७५।

लरना—क्रि अ. [हि. लडना] लडना-झगडना।

लरनि—सज्ञा स्त्री. [हि. लडना] (१) लड़ाई (में)। उ.—(क) भुज भुजग, सरोज नैननि बदन बिधु जित

लरनि—१०-१०९। (ख) कुटिल कुतल, मधुप मिलि मनु कियौ चाहत लरनि—३५१। (२) **लडने का ढग**। उ.—मोसौ बैर प्रीति करि हरि सौ ऐसी लरनि लरचौ।

लरनो—क्रि. अ [हि लडना] **लडना-झगडना**।

लराई—सज्ञा स्त्री. [हि. लडाई] (१) **युद्ध, सग्राम**। उ.—(क) तहँ भिल्लिनि सौ भई लराई—१-२८६। (ख) बाँबी पर अहि करत लराई—३९१। (ग) खजन जुग मानो लरत लराई कीर बुझावत रार।

मुहा०—माँडी लराई—**लडाई ठानी**। उ.—रुद्र भगवान अरु साबुक भिरे राम कुभाउ माँडी लराई—१० उ०-३५।

(२) **झगड़ा**। उ.—(क) लेहु यह अमृत तुम, सबनि कौ बाँटि, मेटौ लराई—८-८। (ख) उलटि जाहि अपने पुर माही, बादिहि करत लराई—३२१०। (३) **बैर, वैमस्य**। उ.—तुम तौ द्विज कुल-पूज्य हमारे, हम तुम कौन लराई—९-२८।

लराका—वि. [हि. लडाका] **झगडालू**।

लरि—क्रि अ [हि. लरना] **लडकर**। उ.—अर्जुन कहचौ, सबै लरि मुए—१-२८८।

लरिकइ, लरिकई—सज्ञा स्त्री [हि. लरिका] (१) **बाल्यावस्था**। (२) **नादानी**। (३) **चिलबिल्लापन**।

लरिक-सलोरी—सज्ञा स्त्री. [हि. लरिका+लोल] **बालको का खेल, खिलवाड़ का सुख**। उ—सूरदास प्रभु देत दिनहि दिन ऐसिऐ लरिक सलोरी—१०-२८६।

लरिका—सज्ञा पु. [हि. लडका] (१) **बालक**। उ—कहा भयौ जौ घर कै लरिका चोरी माखन खायौ—३५६। (२) **पुत्र**। उ.—वा घट मै काहू कै लरिका, मेरौ माखन खायौ—१०-१५६।

लरिकनि—सज्ञा पु सवि [हि. लडका+नि] **लड़को को**। उ.—(क) गो.स खाइ खवावै लरिकनि—१०-२७९। (ख) छिरकि लरिकनि मही सौ—१०-२८९।

लरिकहि—सज्ञा पु. सवि. [हि. लरिका] **लडके को**। उ.—काहू के लरिकहि हरि मारचौ—३६९।

लरिकाइ, लरिकाई—सज्ञा स्त्री. [हि. लडका+आई] (१) **बाल्यावस्था**। उ—लरिकाई कौ प्रेम कहौ अलि, कैसै छूटत—३४०७। (२) **नादानी, अज्ञानता**। उ.—कस कहा लरिकाई कीनी, कहि नारद समुझायौ—१०-४। (३) **चिलबिल्लापन, चंचलता**। उ—(क) लरिकाई कहुँ नैकु न छाँडत—१०-२४६। लरिकाई तब ही लौ नीकी चारि बरष कै पाँच—७७०।

लरिकिनि, लरिकिनी—सज्ञा स्त्री [हि. लडकी] (१) **बालिका, बालिकाएँ**। उ—उ.—(क) सग लरिकिनी चलि इह आवति दिन थोरी अति छबि तन गोरी—६७२। (ख) खेलन को मै जाउँ नही। और लरिकिनी घर-घर खेलति मोही को पै कहति तुही—१२४८। (२) **पुत्री**।

लरिहै—क्रि अ [हि. लरना] **लड़ेगे, लड़ाई करेंगे**। उ.—अब लौ कीन्ही कानि कान्ह अब तुम सौ लरिहै—११३१।

लरिहौ—क्रि. अ [हि लरना] **लड़ूँगा, लड़ाई करूँगा**। उ.—कै तुमही कै हमही माधौ, अपने भरोसै लरिहौ—१-१३४।

लरी—सज्ञा स्त्री. [हि. लडी] **लड़, लड़ी**। उ.—चपक बरन चरन करि कमलनि दाडिम दसन लरी।

लरे—क्रि. अ. [हि. लरना] **लड़े, युद्ध में प्रवृत्त हुए**। उ—एक समय सुर-असुर प्रचारि लरे, भई असुरनि की हार—७-७।

लरै—क्रि. अ. [हि लरना] **लडता है**। उ.—(क) सूर सुभट हठ छाँडत नाही, काटो सीस लरै—२७७०। (ख) कायर बकै लोभ ते भागै, लरै सो सूर बखानै—३३३७।

लरैया—सज्ञा स्त्री. [हि. लराई] **लड़ाई, झगड़ा, वाद-विवाद**। उ.—दिन दिन देन उरहनौ आवति, ढुकि-ढुकि करहि लरैया - ३७१।

लरौ—क्रि. अ. [हि. लरना] **लड़ो, युद्ध करो**। उ.—करिकै जज्ञ सुरनि सो लरौ—११-२।

लल—सज्ञा स्त्री. [स. लालसा] **प्रबल कामना**।

सज्ञा स्त्री. [हि ललो=जीभ] **धोखे की बात**।

सज्ञा पु. [देश.] **सार, तत्व**। उ.—अष्टसिद्धि नवनिधि सुर सपति तुम बिन तुसकन, कहूँ का कछु लल—१-२०४।

ललक, ललकन—संज्ञा स्त्री. [स. ललन, हि. ललक] ललकने की क्रिया या भाव, प्रबल कामना।

ललकत—क्रि अ. [हि. ललकना] पाने की बड़ी इच्छा से लपकता है। उ.—ललकत स्याम, मन ललचात।

ललकना, ललकनो—क्रि अ. [हि. ललक] (१) पाने की कामना से लपकना। (२) कामना मे पूर्ण होना।

ललकार—सज्ञा स्त्री. [हि. ले ले से अनु.+कार] (१) युद्ध की चुनौती, प्रचारण, (२) लडने का बढावा या प्रोत्साहन।

ललकारना, ललकारनो—क्रि. स. [हि. ललकार] (१) युद्ध की चुनौती देना, प्रचारणा। (२) लड़ने को बढ़ावा या प्रोत्साहन देना।

ललकित—वि. [हि. ललक] गहरी चाह से युक्त।

ललचना, ललचनो—क्रि अ. [हि. लालच] (१) पाने की प्रबल कामना होना। (२) लालसा से अधीर होना। (३) मोहित होना।

मुहा०—जी ललचना—कुछ पाने की प्रबल इच्छा या कामना होना।

ललचहा—वि. [हि. लालच] लोभी, लालची।

ललचाइ—क्रि. अ [हि. ललचना] लालच या पाने के लोभ से अधीर होकर। उ.—यह मनि अति अनुपम है सो सुनि, रहि न सक्यो ललचाइ—१० उ०-२६।

ललचात—क्रि. अ [हि. ललचना] ललचाता है।

मुहा०—मन ललचात—पाने की प्रबल इच्छा होती है। उ.—बार बार ललचात साध करि—१०७४।

ललचाना—क्रि. स. [हिं. ललचना] (१) पाने की प्रबल कामना करना। (२) लुभानेवाली वस्तु प्रस्तुत करके लालच उत्पन्न करना। (३) लुभाना, मोहित करना।

मुहा०—जी या मन ललचाना—मन लुभाना।

क्रि. अ.—पाने की प्रबल कामना होना।

ललचाने—क्रि. अ. [हि. ललचाना] मुग्ध या मोहित हो गये। उ.—(क) हरि छवि देखि नैन ललचाने—पृ. ३२२ (१५)। (ख) नारायण धुनि सुनि ललचाने—पृ. ३४७ (५५)।

ललचानो—क्रि. स. [हिं. ललचना] (१) पाने की प्रबल कामना करना। (२) लालच उत्पन्न करना। (३) लुभाना, मोहित करना।

क्रि. अ पाने की प्रबल कामना होना।

ललचावै—क्रि. अ [हि. ललचना] पाने की प्रबल कामना करता है। उ.—मृगतृष्ना आचार जगत-जल, ता सँग मन ललचावै—२-१३।

क्रि. स.—मुग्ध करता है। उ—नदलाल ललना ललचि ललचावै री—६२९।

ललचि—क्रि. अ. [हि. ललचना] मुग्ध होकर। उ.—नदलाल ललना ललचि ललचावै री—६२९।

ललचौहाँ—वि. [हि. लालच+औहाँ] ललचाया हुआ।

ललन—सज्ञा पु. [स.] (१) प्यारा-दुलारा बेटा। उ.—ललन, हौ या छवि ऊपर वारी—१०-९१। (ख) गहे अँगुरिया ललन की नँद चलत सिखावत—१०-१२२। (२) प्रिय नायक या पति। उ.— ललन, तुम ऐसे लाड लडाए। लै करि चीर कदम पर बैठे किन ऐसे ढँग लाए—७९४।

ललना—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) स्त्री, नारी। उ.—(क) ललना लै लै उछग अधिक लोभ लागै—१०-९०। (ख) ब्रज ललना देखति गिरिधर कौ—६४६। (२) पत्नी। उ.—अबर थके अमर ललना सँग—५६५। (३) राधा की एक सखी का नाम। उ.—कहि राधा किन हार चुरायो। । रत्ना कुमदा मोहा करुना ललना लोभा नूप—१५८०।

सज्ञा पु.—(१) प्यारा बच्चा। (२) प्रियतम।

लला—सज्ञा पु. [हि. लाल] (१) प्यारा-दुलारा लड़का या उसके लिए सबोधन। उ.—(क) दूरि खेलन जनि जाहु लला रे—१०-१५५। (ख) कीजै पान लला रे, यह लै आई दूध जसोदा—१०-२२९। (२) प्रिय के लिए प्यार का शब्द।

ललाई—सज्ञा स्त्री. [हि. लाल+आई] लाली, लालिमा। उ.—अधर अजन दाग मिटचो है पीक और मिटी बदन की ललाई—२००७।

ललाट—सज्ञा पु. [स.] (१) माथा, भाल। उ.—लोचन ललित ललाट भृकुटि बिच तकि मृगमद की रेख बनाई—६१६। (२) भाग्य।

मुहा०—ललाट का लिखा-जो भाग्य में बदा हो।

ललाट-पलट, ललाट-फलक—सज्ञा पु [स.] माथे या ललाट का तल।

ललाट-रेखा—सज्ञा स्त्री. [स.] भाग्य का लेख।

ललाना, ललानो—क्रि अ. [स ललन] ललचना।

ललाम—वि [स.] (१) सुन्दर, श्रेष्ठ। (२) लाल।

सज्ञा पु—(१) भूषण, अलकार। (२) रत्न।

ललामी—सज्ञा स्त्री. [स. ललाम+ई] (१) सुन्दरता, श्रेष्ठता। (२) लाली, लालिमा।

ललित—वि. [स.] (१) सुन्दर, मनोहर। उ.—(क) ललित गति राजत अति रघुबीर—९-२६। (ख) ललित श्रीगोपाल लोचन लोल—३५१। (२) हिलता-डोलता हुआ।

सज्ञा पु.—शृगार-रस का हाव-विशेष।

ललितई—सज्ञा स्त्री. [हि. ललित+ई] सुन्दरता।

ललिता—सज्ञा स्त्री [स.] राधा की प्रधान आठ सखियो में एक। उ—ललिता चद्रावली सहित राधा सँग कीरति महतारि—९२१।

ललिताई—सज्ञा स्त्री [स. ललित+आई] सुन्दरता।

लली—सज्ञा स्त्री. [हि लला] (१) दुलारी बेटी या उसके लिए दुलार का सबोधन (२) नायिका के लिए प्यार का शब्द।

ललौहाँ—वि [हि. लाल+औहाँ] जिसमे लाली हो।

लल्ला—सज्ञा पु. [हिं. लाल] दुलारा-प्यारा लडका या उसके लिए दुलार का सबोधन।

लल्लाट—सज्ञा पु [हि. ललाट] माथा, ललाट।

लल्लो—सज्ञा स्त्री [स. ललना] जीभ, जिह्वा।

लल्लो चप्पो, लल्लो पत्तो—सज्ञा स्त्री. [हिं लल्लो+अनु. चप्पो या पत्तो] चिकनी-चुपड़ी बात।

लवंग—सज्ञा पु [स.] लौंग।

लवंगलता—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) लौंग का पेड़ या उसकी शाखा। उ.—(क) फूले हीन चपक चारु चमेली फूले मलयज लवगलता बेलि सरस रस ही फूलडोल—२४०५। (ख) कनक बेलि सतदल सर मडित दृढतर लता लवग—३३२७। (२) राधा की एक सखी का नाम।

लव—संज्ञा पु [सं.] (१) बहुत थोड़ी मात्रा।

मुहा०—लव भर—जरा भी, थोड़ा सा।

(२) समय का एक मान। (३) श्रीराम का एक पुत्र।

सज्ञा स्त्री [हि. लौ] (१) चाह, लाग, राग। उ.—(क) सदा सँघाती श्रीजदुराइ, भजिए ताहि सदा लव लाइ—७-२। (ख) केवल स्यामहि सो लव लाई—१०२०। (ग) सूरदास प्रभु प्रकट मिलन को चातक ज्यौ लव लागी—२७२५। (२) आशा, कामना। उ.—बारहिबार इहै लव लागी गहे पथिक के पाइँ—२७०४।

लवका—सज्ञा स्त्री. [हि. लौकना] बिजली।

लवण—सज्ञा पु. [स.] (१) नमक। (२) एक असुर जिसे शत्रुघ्न ने मारा था। (३) सात समुद्रो मे एक जिसका पानी खारी है।

लवणासुर—सज्ञा पु. [सं] मधु दैत्य का पुत्र जो मथुरा में रहता था और जिसे शत्रुघ्न ने मारा था।

लवन—सज्ञा पु [स.] खेत काटने का कार्य या उसका वेतन।

संज्ञा पु. [स. लवण] नमक।

लवन-सिंधु—सज्ञा पु [स] सात समुद्रों में एक। उ.—अगम सुपथ दूरि दच्छिन दिसि तहँ सुनियत सखि सिधु लवन—१० उ.-९१।

लवना—क्रि स [हिं. लुनना] पके अन्न के पौधो को काटकर एकत्र करना, लुनना।

क्रि. अ. चमकना।

वि. [हि. लोना] (१) नमकीन। (२) सुदर।

लवनाई—सज्ञा स्त्री. [स. लावण्य] सुदरता।

लवनि, लवनी—सज्ञा स्त्री. [स. लवन] फसल की कटाई या उसकी मजदूरी।

सज्ञा स्त्री. [स. नवनीत] मक्खन, माखन।

लवनो—क्रि. स. [हिं. लुनना] लूनना।

क्रि. अ. चमकना।

लवर—सज्ञा स्त्री. [हि लपट] ज्वाला, लौ, लपट।

लवलासी—सज्ञा स्त्री [हि. लव+लसी] प्रीति की लगावट, प्रेम की तीव्रता।

लवलीन—वि. [हिं. लय+लीन] तन्मय, तल्लीन, मग्न। उ.—(क) जय जय धुनि सुनि करत अमरगन नर-नारी लवलीन—९-२६। (ख) सूरदास जहँ दृष्टि परति है होति तहीं लवलीन—४७८। (ग) स्याम बारि बिधि लई बिरद तजि हम जु मरति लवलीन—२८६६।

लवलेश, लवलेस—सज्ञा पु. [स. लवलेश] (१) थोड़ी मात्रा। (२) बहुत थोड़ा लगाव या सपर्क।

लवा—सज्ञा पु. [स. लावा] भुने हुए धान या ज्वार की खील, लावा।

सज्ञा पु. [स. लावक] तीतर की जाति का एक पक्षी।

वि. [हिं. लाना=लगाना] लगानेवाला।

लवाई—सज्ञा स्त्री. [देश.] हाल की ब्याई गाय।

सज्ञा स्त्री. [हि. लवना+आई] फसल की कटाई या उसकी मजदूरी।

सज्ञा स्त्री. [हि. लाना+आई] लाने का कार्य या उसकी मजदूरी।

लवाजमा—सज्ञा पु. [अ. लवाजिम] (१) दल-बल और साज-सामान। (२) आवश्यक सामग्री।

लवारा—सज्ञा पु. [हिं. लवाई] गाय का बछड़ा।

वि. [हि. आवारा] आवारा।

लवासी—वि. [हिं. लव+आसी] (१) बकवादी, गप्पी। (२) लपट। उ.—काहे दियो सूर सुख मे दुख कपटी कान्ह लवासी—३८३९।

लवैया—वि. [हि. लाना+ऐया] लानेवाला।

लशकर—सज्ञा पु. [फा.] (१) दल, सेना। (२) भीड-भाड़। (३) सेना टिकने का स्थान।

लशकारना—क्रि अ. [हिं. लशकर] शिकार करने को बढ़ावा देना, लहकारना।

लषन—सज्ञा पु. [स. लक्ष्मण] श्रीराम के अनुज लक्ष्मण। उ.—कनक-मृग मारीच मारचौ, गिरचौ लषन सुनाइ—९-६०।

लषना—क्रि. स. [हि. लखना] देखना, ताड़ना।

लक्षन, लष्मन—संज्ञा पु. [स. लक्ष्मण] श्रीराम के अनुज लक्ष्मण।

लस—सज्ञा पु. [स.] (१) चिपचिपाहट। (२) लासा। (३) चित्त लगने की बात, आकर्षण।

लसकर—सज्ञा पु [फा. लशकर] भीडभाड़, समूह। उ—घेरचौ आइ कुटुम लसकर मै—१-६४।

लसत—क्रि अ. [हि. लसना] (१) शोभित होता है। उ—मद मृदु हँसत अति लसत भारी - २५९६। (२) बिराजता है। उ.—(क) लसत चारु कपोल दुहुँ बिच सजल लोचन चारु। (ख) दसरथ-कौसल्या के आगै, लसत सुमन की छहियाँ—९-१९।

लसति—क्रि. अ स्त्री. [हि लसना] (१) बिराजती है। उ.—बरह-मुकुट कै निकट लसति लट—४१७ (२) शोभित होती है। उ—स्याम-देह दुकूल-दुति मिलि लसति तुलसी-माल ६२७।

लसदार—वि [हि. लस+फा दार] जिसमे लस हो।

लसन—सज्ञा स्त्री. [स.] शोभित होने की क्रिया या भाव।

लसना—कि. स. [स लसन] चिपकाना।

क्रि अ. (१) (आकर्षण के स्थान में) हर समय चिपके रहना। (२) शोभित होना, फबना। (३) बिराजना, विद्यमान होना।

लसनि—सज्ञा स्त्री. [हि लसना] (१) विद्यमानता। (२) शोभा, छटा।

लसम—वि. [देश.] खोटा, दूषित।

लसलसा—वि [हिं. लस] लसदार।

लसलसाना, लसलसानो—क्रि. अ. [हि लस] चिपचिपाना, चिपचिपा होना।

लसलसाहट—सज्ञा स्त्री [हि. लसलसा] चिपचिपाहट।

लसि—क्रि. अ. [हिं. लसना] स्थित होकर।

प्र.—रहे लसि—विद्यमान या सुशोभित है। उ.—सुबरन थार रहे हाथनि लसि, कमलनि चढि आए मानौ ससि—१०-३२।

लसित—वि. [स] सुशोभित।

लसी—सज्ञा स्त्री. [हि. लस] (१) चिपचिपाहट। (२) आकर्षण। (३) लाभ का डौल। (४) लगाव, सबध।

क्रि. अ [हिं. लसना] शोभित हुई।

लसीला—वि [हि लस+ईला] (१) लसदार। (२) सुंदर।

लस्टम पस्टम—क्रि वि [देश] (१) धीरे-धीरे। (२) किसी न किसी तरह से।

लस्त—वि. [हिं लटना] (१) थका हुआ। (२) अशक्त।

लस्त-पस्त—वि [हिं लस्त+फा पस्त] हारा-थका।

लस्सी—सज्ञा स्त्री. [हि लस] (१) छाछ, मठा। (२) पतले दही में शकर या नमक डालकर बनने वाला पेय।

लहँगा—सज्ञा पु [हिं. लक+अगा] स्त्रियो का एक घेरदार पहनावा। उ.—(क) कटि लहँगा नीलौ बन्यौ —१-४४। (ख) पगनि जेहरि लाल लहँगा—पृ ३४४ (२९)। (ग) कटि नील लहँगा—१० उ०-२४।

लहँडा, लहँड़ा—सज्ञा पु [देश.] झुड, समूह।

लहकना, लहकनो—क्रि. अ [अनु.] (१) हवा में लहरना। (२) हवा का बहना। (३) आग का दहकना। (४) चाह से भरना, ललकना। (५) पाने को ललचना। (६) भड़कना, उत्तेजित होना।

लहकाना, लहकानो—क्रि. स [हि. लहकना] (१) हवा में लहराना, झोका खिलाना। (२) आग दहकाना। (३) चाह से भर देना, ललकाना। (४) पाने को प्रेरित करना, ललचाना। (५) भडकाना। (६) शिकार करने को उत्तेजित करना।

लहकौर, लहकौरि, लहकौरी—सज्ञा स्त्री. [हि. लहना+कौर] विवाह की वह रीति जिसमें वर और बधू परस्पर कौर खिलाते है।

लहजा—सज्ञा पु [अ लहज] बोलने का ढग।

सज्ञा पु. पल, क्षण।

मुहा० लहजा—क्षण भर, पल भर।

लहटना—क्रि. अ. [हि. लहना+रटना] चसका लगना।

लहति—क्रि स [हि. लहना] पाती है। उ.—दासी तृष्ना भ्रमति टहल-हित लहति न छिन बिस्राम—१-१४१।

लहन—सज्ञा स्त्री. [हि. लहना] प्राप्त करने की क्रिया या भाव।

लहनदार—वि. [हि. लहना+फा. दार] पानेवाला।

लहना—क्रि. स [स. लभन, प्रा. लहन] प्राप्त करना।

सज्ञा पु (१) ऋण वसूल करना।

मुहा०—लहना चुकाना या साफ करना—ऋण अदा करना।

(२) मिलनेवाला धन। (३) भाग्य।

क्रि. स. [स. लवन] फसल काटना।

लहनि, लहनी—सज्ञा स्त्री. [हि लहना] (१) प्राप्ति। (२) भाग्यफल, फलभोग। उ.—लहनी काम के पाछे। दियौ आपनो लैहै सोई मिलै नहीं पाछे—१४०९।

लहनो, लहनौ—सज्ञा पु. [हि. लहना] (१) प्राप्त करने का भाव। उ.—सबके भाव दरस हरि लहनो —१०-२०। (२) सौभाग्य। उ.—लहनो ताको जाके आवै मै बडभागिनि पाए री—पृ० ३१९। (८३)।

क्रि. स प्राप्त करना।

क्रि. स. [स. लवन] फसल काटना।

लहबर—सज्ञा पु [हि. लहर] ऊँचा झडा।

लहमा—सज्ञा पु [अ लहम:] पल, क्षण।

लहर सज्ञा स्त्री [स. लहरी] (१) हवा के झोके से जल मे उठनेवाली हिलोर।

मुहा०—लहर लेना—समुद्र के किनारे लहरों से स्नान करना।

(२) उमंग, जोश। उ.—फूले फरे तरुवर आनँद लहर के—१०-३४। (३) मन की मौज या तरग। (४) शारीरिक पीडा का बार-बार उठनेवाला झोका। उ.—सूर सुरति तनु की कछु आई उतरत काम लहर (लहरि) के।

मुहा० - लहर देना या मारना—शरीर के किसी अंग में रह-रह कर पीडा उठना।

(५) प्रेमोन्माद। उ.—लहर उतारि राधिका-सिर तै दई तरुनिनि पै डारि—७६४। (६) आनन्दातिरेक।

यौ०—लहर-बहर—अत्यन्त सुख और आनन्द।

मुहा०—लहर आना—आनन्द आना। लहर लेना या मारना—सुख भोगना।

(७) स्वर-कप। (८) टेढ़ी या वक्र गति।

मुहा०—लहर देना या मारना—टेढ़े-टेढ़े चलना।

(९) टेढी मेढी रेखा। (१०) हवा का झोका।
(११) गध भरी वायु का झोका।

लहरदार—वि. [हि. लहर+फा. दार] टेढा, वक्र।

लहरना, लहरनो—क्रि. अ. [हि. लहराना] (१) हवा से हिलना-डोलना। (२) पानी का हिलोर मारना। (३) उमंग होना। (४) पाने की इच्छा होना। (५) लपट निकलना। (६) शोभित होना।

लहर-पटोर—सज्ञा पु. [हि लहर+पट] एक प्रकार का धारीदार रेशमी कपड़ा।

लहरा—सज्ञा पु. [हि लहर] (१) तरग। (२) आनन्द।

लहराना, लहरानो—क्रि. अ [हि लहर+आना] (१) हवा के झोके से हिलना-डोलना। (२) पानी का हिलोर मारना। (३) मुड़ते या झोका खाते चलना। (४) उमंग या उल्लास होना। (५) प्राप्ति की इच्छा होना। (६) आग दहकना। (७) शोभित होना।

क्रि. स. (१) हवा के झोके से हिलाना-डोलाना। (२) पानी मे हिलोर उठाना। (३) वक्र गति से चलाना। (४) हिलाना-डोलाना।

लहरि—सज्ञा स्त्री. [स. लहरी] (१) पानी की हिलोर या तरंग। (२) उमग, जोश। (३) पीड़ा का रह रहकर उठना। उ.—(क) सूर सुरति तनु की कछु आई उतरत काम लहरि कै—११६८। (ख)आवति लहरि मदन बिरहा की को हरि वेद हँकारे—३२५४।

मुहा०—लहर आना, देना या मारना—रह रहकर पीड़ा होना। साप काटने की लहर—साँप काटे प्राणी की वह स्थिति जब वह बेहोशी के बीच जाग-जाग पड़ता है। उ.—ल्यावौ गुनी जाइ गोविंद कौ, बाढी अतिहि लहरि—७५०।

(४) आनन्द की उमग। (५) भावना, उठान, वेग। उ.—स्याम उलटे परे देखे बढी सोभा लहरि—१०-६७। (६) स्वर की गूँज। (७) वक्र गति या रेखा। (८) गध-भरी वायु का झोका।

लहरिया—सज्ञा स्त्री. [हिं. लहर] (१) लहरदार चिह्न। (२) एक तरह का कपड़ा जिसमें लहरियाँ पड़ी होती है। (३) लहरियाँ पड़ी साड़ी। (४) लहर, हिलोर।

लहरी—संज्ञा स्त्री. [स.] (१) लहर। (२) मौज।

वि. आनदी, मनमौजी।

लहलह, लहलहा—वि [हि लहलहाना] (१) लहलहाता हुआ। (२) हर्षित, प्रफुल्लित।

लहलहाना, लहलहानो—क्रि. अ [हि. लहरना] (१) हरी-भरी पत्तियो से युक्त होना। (२) आनन्द से पूर्ण होना। (३) सूखे पेड मे फिर से पत्तियाँ निकलना। (४) दुर्बल शरीर मे पुन शक्ति आना।

लहलही—वि स्त्री. [हि लहलहा] (१) हरी-भरी। (२) हर्षित, प्रफुल्लित।

लहसुन—सज्ञा पु [स लशुन] एक पौधा जिसकी जड़ गोल गाँठ के रूप मे होती है और जिसमें बहुत तीक्ष्ण और उग्र गध होती है। उ.—जैसे काग हस की सगति लहसुन सग कपूर—२६८३।

लहसुनिया—सज्ञा स्त्री [हि लहसुन] एक रत्न।

लहा—सज्ञा पु [स. लाभ] नफा, फायदा, लाभ।

लहाछेह—सज्ञा पु [देश] नाचने की तेजी या झपट।

लहाना, लहानो—क्रि स [स. लभना] प्राप्त कराना, मिलाना।

क्रि. स. [हि. लहन] कौशल से बात करके अभिप्राय सिद्ध कराना।

लहालह—वि [हि. लहलहा](१) हरा-भरा। (२) प्रफुल्ल।

लहालोट—वि. [हि. लाभ+लोटना] (१) बहुत हर्षित या प्रफुल्लित। (२) मुग्ध, मोहित।

लहास—सज्ञा स्त्री [हि लाश] मृत शरीर।

लहि—अव्य. [हि. लहना] तक, पर्यन्त।

क्रि. स. (१) प्राप्त करो। उ.—सूर पाइ यह समौ लाहु लहि, दुर्लभ फिरि ससार—१-६८। (२) प्राप्त करके। उ.—रिपि-प्रसाद तैं तिन सुत जायौ, सुत लहि दपति अति सुख पायौ—६-४।

लहिए, लहिऐ—क्रि. स. [हि. लहना] (१) अनुभव कीजिए। उ.—कानन भवन रैनि अरु बासर कहूँ न सचु लहिए—२८९२। (२) प्राप्त कीजिए। उ.—प्रेम बँध्यो ससार प्रेम परमारथ लहिए—३४४३।

प्र०—अत नहि लहिए—समाप्त न कर सकिए, समाप्त करने मे समर्थ न होइए। उ —ऐसै कहौ कहाँ लगि गुन-गान, लिखत अत नहि लहिए—१-११२।

लहियत—क्रि. स [हि लहना] पाता है।

प्र०—पार न लहियत —पार या अंत नहीं पाता है। उ.—बासरहू या बिरह सिंधु को कैसेहुँ पार न लहियत—३३०० ।

लहियै—क्रि स [हि. लहना] पाइए, प्राप्त कीजिए। उ.—(क) सूरदास भगवत-भजन करि अंत बार कछु लहियै—१-६२। (ख) हरि-रस तौऽब जाइ कहुँ लहियै—२-१८ (ग) जातैं हरि-पुर बामा लहियै—३-१३।

लहियौ—क्रि. स. [हि. लहना] गतिविधि लक्ष्य करना, सावधान रहना। उ —मथुरा जाति हौ बेचन दहियौ, मेरे घर कौ द्वार सखी री, तब लौं देखति रहियौ। । । और नहीं या ब्रज मैं काऊ, नंद-सुवन मखि लहियौ—१०-३१३।

लही—क्रि स [हि लहना] (१) अनुभव की, मान ली। उ —पूरे चीर अंत नहिं पायौ, दुरमति हारि लही—१-२५८। (२) जान या समझ सका। उ.—तै सिव की महिमा नहिं लही—८-५। (३) पायी, प्राप्त की। उ.—अहो नँदरानि, सीख कौन पै लही री—३४८।

लहु—अव्य. [हि. लौ] (१) तक, पर्यन्त। (२) समान।

क्रि. स. [हि. लहना] लहो, प्राप्त करो।

वि. [स. लघु] छोटा, लघु।

लहुर—सज्ञा स्त्री. [हि. लहुरा] छोटाई, छोटापन। उ.—अरस-परस चुटिया गहै, बरजति है माई। महा ढीठ मानै नहीं कछु लहुर-बडाई—१०-१६२।

लहुरा वि. [स. लघु, प्रा. लहु + रा] छोटा, कनिष्ठ।

लहुरी—वि. स्त्री [हि. लहुर] छोटी, कनिष्ठा।

लहू—सज्ञा पु. [हि लोहू] रक्त, रुधिर।

मुहा०—लहूलुहान होना—रक्त से लथपथ होना।

लहे—क्रि. स. [हि लहना] पाये, प्राप्त किये। उ.—ब्रह्मा सो नारद सो कहे, ब्यास सोइ नारद सौ लहे—२-३७।

लहेरा—सज्ञा पु. [हि. लाह = लाख + एरा] (१) लाख का पक्का रंग चढ़ानेवाला। (२) पक्का रेशम रँगनेवाला रँगरेज।

लहैंगे—क्रि. स. [हि. लहना] पायेंगे, प्राप्त करेंगे। उ.—सूरदास प्रभु जसुमति को तजि मथुरा कहा लहैंगे—२५००।

लहै—क्रि. स. [हि. लहना] पा जाय, प्राप्त करे। उ.—(क) निर्गुन मुक्तिहुँ कौ नहि चहै, मम दर्सन ही तैं सुख लहै—३-१३। (ख) सूरज प्रभु की लहै जु जूठनि लारनि ललित लपोटी—१०-१६४।

यौ०—लहै-बहै—उचित, उपयुक्त या न्यायसंगत हो, समझ में आ सके और समझायी जा सके। उ —बात कहै जो लहै, बहे री—७७३।

लहौं—क्रि. स. [हि लहना] (१) पाऊँ, प्राप्त करूँ। उ —(क) नरक कि सरग लहौं—१-१५१। (ख) मै यह ज्ञान छली ब्रजबनिता, दियौ सु क्यों न लहौं—३-२। (२) पाता हूँ, प्राप्त करता हूँ। उ.—कबहुँक भोजन लहौं कृपानिधि, कबहुँक भूख सहौं—१-१६१।

लहौंगौ—क्रि स. [हि लहना] प्राप्त कर सकूँगा, पकड़ सकूँगा। उ —यह तौ झलमलात झकझोरत, कैसैं कै जु लहौंगौ—१०-१९४।

लह्यौ—क्रि स. [हि. लहना] (१) (जन्म) पाया। उ.—पुरबलो धौं पुन्य प्रगट्यौ, लह्यौ नर-अवतार—१-८८। (२) पहुँच सका, प्राप्त कर सका। उ.—सुरति-सरित-भ्रम भौंर लोल मैं मन परि, तट न लह्यौ—१-१६२। (३) समझा, प्राप्त किया। उ.—सूत सौनकनि सौं पुनि कह्यौ, बिदुर सो मैत्रेय सौं लह्यौ—१-२२७। (४) (वास) ग्रहण किया। उ.—हारि सकल भंडार-भूमि, आपुन बन-बास लह्यौ—१-२४७। (५) पाया, (प्राप्त) किया। उ.—प्रभु मैं तुम्हरो दरसन लह्यौ, माँगन कौ पाछै कहा रह्यौ—४-९। (६) अनुभव किया। उ.—पुर कौ देखि परम सुख लह्यौ—४-१२। (७) धारण किया, धरा। उ.—कहा जानि तुम मोसौं कह्यौ, यह सुनि रिषि-स्वरूप नृप लह्यौ—५-४।

लाँक—सज्ञा स्त्री. [हि. लंक] कमर, कटि।

लाँग—सज्ञा स्त्री. [स. लांगूल] धोती का वह भाग जो पीछे की ओर कमर में खोसा जाता है, काछ।

लाँगूल—सज्ञा पु. [स.] दुम, पूँछ।

वि. [हि. लंगर] ढीठ।

लाँगूली—सज्ञा पु. [स. लांगूलिन्] बंदर, बानर।

लोंघ—सज्ञा स्त्री. [स लघन्] बाधा, रुकावट ।
लोंघना, लोंघनो—क्रि स [स लघन] नांघना ।
लोंच, लोंची – सज्ञा स्त्री [देश] घूस, रिशवत ।
लांछन—सज्ञा पु. [स] (१) चिह्न । (२) दोष, कलक ।
लांछना—सज्ञा स्त्री [स लाछन] दोष, कलक ।
लांछनित, लांछित—वि. [स. लाछन] जिसे दोष लगा हो, कलंकित ।
लोंझ—सज्ञा स्त्री. [देश.] रुकावट, बाधा ।
लोंबा—वि. [हि लबा] लबा ।
लोंबी—वि. स्त्री. [हि लबी] लबी । उ तू जो कहति बल की बेनी ज्यों ह्वैहै लाँबी-मोटी—१०-१७५ ।
लाइ—सज्ञा स्त्री [स अलात, प्रा अलाय] अग्नि ।
क्रि स [हि. लगाना] (१) लगाकर ।
प्र०—दौ दीनी लाइ—आग लगा दी । उ.—पुनि जुरि दौ दीनी पुर लाइ—८-१२ ।
(२) मलकर, पोतकर, चिह्नित करके । उ —(क) देही लाइ तिलक केसरि कौ जोबन-मद इतराति—१०-२९४ । (ख) कियौ स्नान मृत्तिका लाइ—१-३४१ । (३) व्यस्त करके ।
प्र०—लई लाइ—व्यस्त कर लिया । उ.—बातनि लई राधा लाइ—६८३ ।
(४) पकड़कर । उ —कबहुँक हरि कौ लाइ आँगुरी चलन सिखावति ग्वारि—१०-११८ । (५) (चित्त वृत्ति) एकाग्र कर या करके, ध्यान लगा या लगाकर । उ.—(क) अजहूँ तू हरि-पद चित लाइ—४-६ । (ख) करन लगे सुमिरन चित लाइ—५-३ । (ग) कहौ सो कथा, सुनौ चित लाइ—९-९ । (घ) जो यह कथा सुनै चित लाइ—९-१०२ ।
लाइक—वि. [हि. लायक] (१) उचित । (२) सुयोग्य ।
लाई—सज्ञा स्त्री. [स. लाजा] लावा, खीलें ।
सज्ञा स्त्री. [हि लाना, लगाना] चुगली ।
यौ०—लाई-लुतरी—(१) चुगली । (२) चुगली खानेवाला, चुगलखोर ।
क्रि. स. [हि. लगाना] लगाकर ।
प्र०—हियै लियौ लाई—छाती से लगा लिया । उ.—अपनौ जानि हियै लियौ लाई—७-४ । छाती सो लाई छाती से लगाकर । उ —निसि-बासर छाती सौ लाई बालक लीला गाई—३४३५ ।
(२) प्रज्वलित करके, आग लगाकर । उ.—सूरदास प्रभु बिरह जरी है बिनु पावक दौ लाइ–३३२२ । (३) प्रभावित करके ।
प्र०—मोहनी लाई—मुग्ध या मोहित किया है । उ.—हृदय ते टरति नाहिन ऐसी मोहिनी लाई री —८८१ ।
(४) विलब या देर की । उ.—(क) खेलत बडी बार कहुँ लाई—१०-२३५ । (ख) बिप्र भवन रथ चढयौ चलत तब बार न लाई—१० उ०-८ ।
लाऊँ—क्रि स. [हि लगाना] (१) लगाऊँ । उ.—कुमकुम को लेप मेटि, काजर मुख लाऊँ—१-१६३ । (२) देर या विलब करूँ । उ.—अब विलब नहि लाऊँ—३८२ । (३) चिपटाऊँ । उ.—अकम भरि सबकौ उर लाऊँ—७९७ ।
लाऊ—सज्ञा पु [हि. अलावू] लौकी, कद्दू, घिया ।
लाए—क्रि स [हि लगाना] (१) लगाकर, लगाये । उ.—अति सुरूप बिष अस्तन लाए राजा कस पठाई —१०-५२ । (२) चिपटा लिये, (छाती से) लगा लिये । उ.—हरपवत जुवती सब लै लै मुख चूमति उर लाए—१०-९३ । (३) (विलब या देर) की, (दिन) लगा दिये । उ —(क) समुझत नहि चूक सखी अपनी बहुतै दिन हरि लाए—२८२२ । (ख) आवन कह्यौ बहुत दिन लाए करी पाछिली गाह—२८६८ ।
लाकड़ी - सज्ञा स्त्री. [हि. लकडी] लकड़ी ।
लाक्षणिक – वि [स.] लक्षणा-सबधी ।
लाक्षा—सज्ञा स्त्री. [स.] लाख, लाह ।
लाक्षागृह – सज्ञा पु [स.] लाख का घर जो दुर्योधन ने पाण्डवो के लिए बनवाया था, परन्तु जिसके जला देने पर भी वे बचकर निकल गये थे ।
लाख—वि. [स. लक्ष, प्रा लक्ख] (१) सौ हजार । उ. —(क) सब दै लेउ लाख लोचन कहे जो कोउ करत नये री—१३८८ । (ख) लाख मुँदरियाँ जायँगी कान्ह तुम्हारी मोल—पृ० २५३ (२७) । (२) बहुत अधिक ।

उ.—लाख जतन करि देखौ, तैमै बार-बार बिप घूँटै—१-६३ ।

मुहा०—लाख टके की बात—अत्यत उपयोगी सीख, या सलाह ।

क्रि. वि बहुत, अधिक, कितना भी ।

मुहा०—लाख से लीख होना—जहाँ सब कुछ हो, वहाँ कुछ न रह जाना । लाख का घर नाश होना—जहाँ लाखो का कार-बार या धन-वैभव हो, वहाँ कुछ न रह जाना ।

सज्ञा स्त्री. [स.] एक लाल पदार्थ जो कई वृक्षो की शाखाओ पर कीडो से बनता है, लाह । उ—आल मजीठ लाख सेदुर कहुँ ऐसेहि बुधि अवरेखत—११०८ ।

लाखना, लाखनो—क्रि अ [हि लाख] लाख लगाकर किसी धातु के पात्र का छेद बन्द करना ।

क्रि. स [हि लखना] समझ-बूझ लेना ।

लाखामंदिर—सज्ञा पु [हि. लाख+स मदिर] लाक्षा-गृह । उ—लाखामदिर कौरव रचियौ ।

लाखपति, लाखपती—वि [हि. लखपती] जिसके पास लाखो की सपत्ति हो, लखपती ।

लाखा—सज्ञा पु. [हि लाख] लाख का बना रग जो स्त्रियाँ होठो पर लगाती हे ।

लाखागृह—सज्ञा पु. [स. लाक्षागृह] लाख का बना वह घर जो दुर्योधन ने पाण्डवो को जला देने के लिए बनवाया था, परन्तु जहाँ से वे सुरक्षित ही निकल गये थे । उ—(क) लाखागृह तै, सत्रु-सैन तै, पाडव-बिपति निवारी—१-१७ । (ख) लाखागृह पाडवनि उबारे—१-३१ ।

लाखी—वि. [हि. लाख] मटमैले लाल रग का ।

लाखों—वि [हि. लाख] (१) कई लाख । (२) बहुत अधिक ।

लाग—सज्ञा स्त्री. [हिं. लगना] (१) लगाव, सबध । (२) प्रेम, प्रीति । (३) लगन, तत्परता । (४) युक्ति, उपाय । (५) विशेष कौशल का स्वाँग । (६) होड, स्पर्धा । (७) बैर, शत्रुता । (८) जादू, टोना । (९) शुभ कार्य में ब्राह्मण, नाई आदि को दिया जानेवाला नेग । (१०) लगान, भूमिकर । उ.—अपनो लाग लेहु लेखो करि जो कछु राज अस को दाम—२५०५ । (११) नृत्य-विशेष ।

अव्य. [हि. लग] वास्ते, लिए । उ.—खोयौ जन्म बिपय-सुख लाग—१-२९० ।

क्रि वि. [हि लौं] तक, पर्यन्त ।

लागडाँट—सज्ञा स्त्री. [हि. लाग+डाँट] (१) होड, स्पर्धा । (२) बैर, शत्रुता ।

लागत—सज्ञा स्त्री. [हि लगना] वह धन जो किसी वस्तु को तैयार करने मे व्यय हो ।

क्रि अ. (१) लागू या चरितार्थ होते हैं । उ.—जेते अपराध जगत लागत सब मोही—१ १२४ । (२) चोट या आघात होते (ही) । उ—लागत बान देव-गति पाई—९-५९ । (३) अनुभव करता है । उ—ग्वाल-बाल गाइनि के भीतर नैकहुँ डर नहि लागत—४२० । (४) उपयुक्त है, फबती है, ठीक जान पड़ती है । उ.—यह उपमा कछु लागत—६४५ । (५) सफल या कारगर होता है । उ.—सूर गारुडी गुन करि थाके, मत्र न लागत थर तै—७४४ । (६) स्थिर या एकाग्र होता है, चेन या शाति पाता है । उ.—नैकहुँ कहुँ मन न लागत काम-धाम बिसारि—७७७ ।

लागति क्रि अ [हि लगना] लगती है । उ.—(क) मुख मुसकाति महा छबि लागति—६३० । (ख) स्रवननि सुनत अधिक रुचि लागति—७१२ ।

लागन—सज्ञा स्त्री. [हि. लगना] लगने की क्रिया या भाव । उ.—लग लागन नहि पावत स्याम—८७८ ।

लागना, लागनो—क्रि. अ [हि. लगना] लगना ।

लागि—अव्य. [हि लगना] (१) कारण, हेतु । उ.—(क) माखन लागि उलूखल बाँध्यौ—३४७ । (ख) बचन लागि मै है कियौ जसुमति को पय पान-११४० । (२) वास्ते, लिए । उ—धन सुत-दारा काम न आवै, जिनहिं लागि आपुनपौ हारौ—१-८० ।

क्रि अ [हिं लगना] सटकर ।

मुहा०—कानि लागि कह्यौ—कान के पास मुँह

ले जाकर बहुत धीरे से कहा। उ.—कान लागि कह्यौ जननि जसोदा वा घर मैं बलराम—१०-२४०।

लागी—क्रि. अ [हि लगना] (१) लगी, पहुँची। उ. —कहुँ धौं चोट न लागी—१०-७९। (२) आरोपित हो गयी। उ.—तब तैं हत्या मद कौ लागी। यहै जानि सब सुर-मुनि त्यागी—९-१७३।

लागु—सज्ञा स्त्री. [हि. लगना] लगान, राजकर। उ. —लीजै लागु यहाँ तें अपनो जो कछु राज को अस —२५०७।

लागू—वि. [हि लगना] (१) जो लगने योग्य हो। (२) जो चरितार्थ हो सके।

लागे—अव्य [हि लगना] (१) कारण। (२) वास्ते।

क्रि अ. [हि. लगना] (१) चोट पहुँचायी, आघात किया। उ —मुरुनि के बचन बान सम लागे —४-६। (२) लग गये, संपादित करने लगे।

प्र०—कहन लागे—कहने में समर्थ हो गये। उ.—कहन लागे मोहन मैया मैया—१०-१५५। लागे खान—खाने लगे। उ —बन फल लए मँगाइ कै, रुचि करि लागे खान—४३८।

लागै—क्रि. अ [हि लगना] (१) सफल या कारगर होता है। उ —तंत्र न फुरै मंत्र नहिं लागै, चले गुनी गुन हारे—३२५४। (२) लगे, हो। उ.—तुमरे कुल कौ बेर न लागै होत भस्म सघात—९ ७७।

लागौं—क्रि. अ. [हि लगना] लगती हूँ।

प्र०—लागौं पाउँ—पैर छूती हूँ, विनम्र निवेदन करती हूँ। उ —अरि अरि सुदर नारि सुहागिनि लागौं तेरै पाउँ—९-४४।

लाग्यो, लाग्यौ—क्रि. अ. [हि. लगना] (१) लगा, जान पड़ा। उ.—अँचवत पय तातौ जब लाग्यौ रोवत जीभि डढै—१०-१७४। (२) लग गया।

मुहा०—मन लाग्यौ—प्रीति हो गयी। उ.—(क) जाकौ मन लाग्यौ नँदलालहिं ताहि और नहिं भावै (हो)—२-१०। (ख) सूरदास चित ठौर नही कहुँ मन लाग्यो नँदलालहि सौं—११८०।

लाघव—सज्ञा पु. [स.] (१) लघु होने का भाव, लघुता। (२) थोड़ा होने का भाव, कमी। (३) हाथ की सफाई या फुर्ती।

लाघवी—सज्ञा स्त्री [स लाघव+ई] फुर्ती, शीघ्रता।

लाचार—वि [फा] मजबूर, विवश।

क्रि. वि मजबूर या विवश होकर।

लाचारी—सज्ञा स्त्री [फा] मजबूरी, विवशता।

लाची—सज्ञा स्त्री. [हि इलायची] इलायची।

सज्ञा पु — एक तरह का धान।

लाछी—सज्ञा स्त्री. [स लक्ष्मी] लक्ष्मी।

लाज—सज्ञा स्त्री. [स. लज्जा] (१) शर्म, लज्जा। उ.—(क) माधौ जू, मोहि काहे की लाज—१-१५०। (ख) सूर पतित पावन करि लीजै बाँह गहे की लाज—१-२१९।

मुहा०—लाज गए—मर्यादा नष्ट हो जाने पर। उ —लाज गए कछु काम न सरिहै बिछुरत नद के तात —२५८१। लाज लगाई—मर्यादा या प्रतिष्ठा नष्ट की। उ.—ग्वालनि कै सँग भोजन कीन्हौ, कुल कौ लाज लगाई—१-२४४। लाज रखना—प्रतिष्ठा बचाना।

(२) चिंता, ध्यान। उ —हरि कह्यौ, मोहि बिरद की लाज—७-२।

लाजति—क्रि अ. [हि लाजना] लज्जित होती है। उ —(क) तडित दसन-छबि लाजति—६३८। (ख) कोटि मदन-छवि लाजति ६४५।

लाजना, लाजनो—क्रि अ. [हि. लाज+ना] लज्जित होना।

क्रि. स लज्जित करना।

लाजनि—सज्ञा स्त्री सवि [हि. लाज+नि] लाज से, लज्जा के कारण। उ —(क) निरखि कुरँग उन बालनि की दिसि लाजनि अँखियनि गोवै - ३४७। (ख) मोहिं कहति आनि जब नारी, बोलि जाति नहिं, लाजनि मारी—३९१। (ग) ब्रज बनिता सब चोर कहति, लाजनि सकुचि जात मुख मेरौ—३९९।

लाजवंत—वि [हि. लाज+वत] शर्मदार।

लाजवाब—वि [फा.] (१) अनुपम। (२) निरुत्तर।

लाजा—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) चावल। (२) खील, लावा।

सज्ञा स्त्री. [हि. लाज] शर्म, लज्जा। उ.—(क)

उनतैं कछू भयौ नहिं काजा। यह सुनि-सुनि मोहिं आवत लाजा—५२१। (ख) बालक सुनत होइ जिय लाजा—२४५९।

लाजिम, लाजिमी—[अ. लाजिम] (१) उचित। (२) आवश्यक। (३) अनिवार्य।

लाजी—क्रि स. [हि लाजना] लज्जित किया। उ.—कुल कुठार, जननी कत लाजी—२६६५।

लाजैं—क्रि. अ [हिं लाजना] लज्जित होते हैं। उ.—अबर गहत द्रौपदी राखी, पलटि अध-सुत लाजैं—१-३६।

लाजै—क्रि. अ [हिं लाजना] लज्जित होता है। उ.—तेरौ मुख देखत ससि लाजै—७१८।

लाजौं—क्रि. स [हिं लाजना] लज्जित करूँ, लाज लगाऊँ। उ.—तौ लाजौं गगा जननी कौं, सातनुसुत न कहाऊँ—१-२७०।

लाज्यो, लाज्यौ—क्रि. अ. [हिं. लाजना] लज्जित हुआ। उ.—स्यामा बदन देखि हरि लाज्यौ—२३००।

लाट—सज्ञा पु [स.] (१) एक प्राचीन देश जो गुजरात का भाग-विशेष था। (२) एक अनुप्रास।

सज्ञा स्त्री· [देश.] (१) मोटा-ऊँचा खभा। (२) वैसी बनावट या इमारत।

लाटानुप्रास—सज्ञा पु. [स.] एक शब्दालंकार।

लाटी—सज्ञा स्त्री [अनु. लट लट] वह स्थिति जिसमे मुँह का थूक और होठ सूख जाते हैं।

लाठी—सज्ञा स्त्री. [स. यष्टि, प्रा० लट्ठी] डडा, लकड़ी।

मुहा०—लाठी चलना—मार-पीट होना।

लाड, लाड़—सज्ञा पु. [स लालन] प्यार, दुलार। उ.—(क) आसा करि करि जननी जायौ, कोटिक लाड लडायौ—२-३०। (ख) प्रभु कै लाड बदति नहि काहू—२९७७।

मुहा०—लाड उतारना या उतार कर धर देना—मारपीट कर ढिठाई दूर कर देना। धरिहै लाड उतारि—उचित दड देकर ढिठाई दूर कर देगी। उ.—करि लरकनि के बर करत यह पुनि धरिहै लाड़ उतारि—११२५।

लाड़लड़ैता, लाड़लड़ैतो, लाडलड़ैतौ - वि. [हि. लाड +लडाना] प्यारा, दुलारा, लाडला। उ.—पठै देहु मेरौ लाडलडैतो बारौ ऐसी हाँसी।

लाड़ला, लाडला—वि. [हिं. लाड] प्यारा-दुलारा।

लाड़ा—सडा पु. [हि. लाड] दूल्हा, वर।

लाड़िली, लाडिली—वि. स्त्री. [हि. लाडला, लाडला] प्यारी, दुलारी।

सज्ञा स्त्री. प्यारी, दुलारी बेटी। उ.—ब्याकुल भई लाडिली मेरी, मोहन देहु जिवाइ—७५९।

लाड़िले, लाडिले—वि [हि. लाडला, लाडलौ] प्यारे, दुलारे। उ.—तुम जागौ मेरे लाडिले गोकुल सुखदाई—१०-२०९।

सज्ञा पु—प्यारा-दुलारा पुत्र।

लाड़िलो, लाड़िलौ, लाडिलो, लाडिलौ—वि. [हिं. लाडला, लाडला] प्यारा, दुलारा।

सज्ञा पु प्यारा-दुलारा पुत्र। उ.—नदराइ कौ लाडिलौ जीवै कोटिं बरीस—१०-२७।

लाड़ू—सज्ञा पु. [हिं. लड्डू] लड्डू, मोदक। उ.—(क) खीर खाँड घृत लावनि लाड़ू—३९६। (ख) स्याम दरस लाड़ू करि दीन्हो, प्रेम ठगौरी लाइ—पृ. ३२६ (५७)।

लात—ससा स्त्री. [देश.] (१) पैर, पद।

मुहा०—लात देना—लात रखना। दै लात—पैर रखकर। उ.—कैसै कहति लियौ छीकैं तै ग्वाल-कध दै लात—१०-२९०। लात फटकना—पैर से आघात करना। फटक्यौ लात—पैर से आघात किया। उ.—नैकु फटक्यौ लात,सबद भयौ आघात, गिरचौ भहरात सकटा सँहारचौ—१०-६२। लात पसारना—(१) पैर फैलाना। (२) (स्थिति या हैसियत देखकर) व्यय आदि करना। (अपनो पट देखि) पसारहिं लात—(१) अपना वस्त्र देखकर पैर फैलाता है। (२) अपनी हैसियत या स्थिति को देखकर काम करता है। उ.—हम तन हेरि चितै अपनौ पट देखि पसारहि लात—३२८२।

(२) पैर से किया गया प्रहार या आघात।

मुहा० —लात खाना—(१) पैर की ठोकर सहना। (२) मार खाना। लात चलाना—लात से

ठोकर देना। लात मारना—**तुच्छ या निरर्थक समझकर लेने या पाने की इच्छा न करना।** लात मार कर खड़ा होना—**बहुत अस्वस्थता के पश्चात् स्वस्थ होना।**

लाता—संज्ञा पु. [हिं. लात] **पैर, पद।** उ.—गौतम की नारि तरी नैकु परसि लाता—१-१२३।

लाद—संज्ञा स्त्री. [हिं. लादना] (१) **लादने की क्रिया।** (२) **आँत, अँतड़ी।** (३) **पेट।**

मुहा०—लाद निकलना—**तोंद निकलना।**

लादत—क्रि. स. [हिं. लादना] **लादता है।**

यौ०—लादत-जोतत—**लादने और जोतने के अवसर पर।** उ.- लादत-जोतत लकुट बाजिहै, तब कहँ मूँड दुरैहौ—१-३३१।

लादना, लादनो—क्रि. स. [स. लब्ध, प्रा. लद्ध+ना] (१) **किसी पर बहुत सी चीजें रखना।** (२) **(वाहन आदि को) भार से युक्त करना।** (३) **कर्तव्य या दायित्व का भार रखना।**

लादि—क्रि. स. [हिं. लादना] **(भार या सामान) रखकर या लादकर।** उ.—करि हियाव यह सौज लादि कै हरि कै पुर लै जाहि—१-३१०।

लादी—संज्ञा स्त्री. [हिं. लादना] **लादने की गठरी।**

लाध—संज्ञा पु. [स. लाभ] **प्राप्ति, लाभ।**

लाधना, लाधनो—क्रि. स. [स. लब्ध, प्रा. लद्ध+ना] **पाना, प्राप्त करना।**

लाधो, लाधौ—क्रि स. [हिं. लाधना] **पाया, प्राप्त किया।** उ.—(क) छिन छिन परसत अंग मिलावत प्रेम प्रगट ह्वै लाधौ—२५०८। (ख) सो सुख सिव सनकादि न पावत जो सुख गोपिन लाधो—२७५८।

लानत—संज्ञा स्त्री. [अ. लअनत] **धिक्कार।**

लाना—क्रि. अ. [हिं. लेना+आना] (१) **ले आना।** (२) **सामने रखना।** (३) **पैदा करना।**

क्रि. स. [सिं. लाय=आग+ना] **आग लगाना।**

क्रि. स. [हिं. लगाना] **लगाना।**

लाने—अव्य. [हिं. लाना=लगाना] **लिए, वास्ते।**

लानो—क्रि. अ. [हिं. लाना] (१) **ले आना।** (२) **सामने रखना।** (३) **पैदा या उत्पन्न करना।**

क्रि स. [हिं. लाय+ना] **आग लगाना।**

क्रि. स. [हिं लगाना] **लगाना।**

लाप—संज्ञा पु. [स. आलाप] **आलाप।**

लापता—वि. [अ ला+पता] (१) **जिसका पता न चल रहा हो, खोया हुआ।** (२) **गायब।**

लापरवा, लापरवाह—वि. [अ. ला+फा. परवाह] (१) **जिसे किसी बात की चिंता न हो।** (२) **जो सावधान न हो।**

लापरवाही—संज्ञा स्त्री. [हिं. लापरवाह] (१) **बेफिक्री, निश्चितता।** (२) **असावधानी।**

लापसी—संज्ञा स्त्री. [हिं. लपसी] **भुने हुए आटे में शरबत डालकर बनाया गया मीठा खाद्य।** उ.—लुचुई ललित लापसी सोहै—२३२१।

लाबर—वि. [हिं. लबार] (१) **झूठा।** (२) **गप्पी।**

लाभ—संज्ञा पु [स.] (१) **प्राप्ति।** (२) **नफा, फायदा।** उ.—(क) लाभ हानि कछु समुझत नाही—१-४६। (ख) दुख-सुख लाभ-अलाभ समुझि तुम, कतहिं मरत हौ रोई—१-२६२। (३) **भलाई, उपकार।**

लाभकर, लाभकारी—वि. [स.] **गुणकारक।**

लाभदायक—वि. [स.] **जिससे लाभ हो।**

लाभा—संज्ञा पु. [स. लाभ] **नफा, फायदा।** उ.—जुगल कमल-पद नख मनि-आभा। सतनि मन सतत यह लाभा—६२५।

लाम—संज्ञा पु. [फा लाम] (१) **फौज, सेना।**

मुहा०—लाम बाँधना—**चढाई, आक्रमण या युद्ध के लिए सेना सजाना।**

(२) **भीड-भाड़, समूह।**

मुहा०—लाम बाँधना—(१) **बहुत सा मजमा इकट्ठा कर लेना।** (२) **बहुत सा सामान जमा कर लेना।** (३) **खूब लंबी-चौड़ी बातें करना।**

क्रि. वि. [स. लंब] **दूर, फासले पर।**

लामन—संज्ञा पु [देश.] (१) **लँहगा।** (२) **स्त्रियों की धोती या साड़ी का निचला भाग।**

लामा—वि. [हिं. लंबा] **जो लंबाई में बड़ा हो।**

संज्ञा पु. [तिब्बती] **बौद्धों का तिब्बती धर्माचार्य।**

लामी—वि स्त्री. [हि लंबा] लंबी । उ.—अजहुँ न आइ मिले इहि औसर अवधि बतावत लामी—३०८० ।

लामैं—क्रि. वि [हि. लाम = दूर] फासले पर ।

लाय—संज्ञा स्त्री. [स. अलात, प्रा० अलाय] (१) ज्वाला, लपट । (२) आग, अग्नि ।

लायक—वि [अ लायक] (१) उचित, ठीक । (२) उपयुक्त । उ —(क) तुम लायक भोजन नहिं गृह मैं—१ २४१ । (ख) उपमा काहि देउँ, को लायक—६८८ । (ग) जा लायक जो बात होइ सो तैसियै तासो कहिये—३२१७ । (३) सुयोग्य, सत्पात्र । उ.- सूर स्याम रति पति के नायक सब लायक बनवारी—१९५४ । (४) समर्थ । उ.—तुम बिनु ऐसो कौन नद-सुत यह दुख दुसह मिटावन लायक—९५४ ।

लायकी—संज्ञा स्त्री. [हि. लायक + ई] (१) लायक होने का भाव । (२) सुयोग्यता, सत्पात्रता ।

लायचा—संज्ञा पु [देश.] एक बढ़िया रेशमी कपड़ा ।

लायची—संज्ञा स्त्री. [हिं इलायची] इलायची ।

लायो, लायौ—क्रि. स. [हि. लगाना] (१) (ध्यान, चित्त या मन) लगाया । उ.—(क) हठी प्रहलाद चित चरन लायौ—१-५ । (ख) जिन जिन हरि चर-ननि चित लायौ —४-८ । (ग) हरि-पद अबरीष चित लायौ —९-५ । (२) (भाव) उत्पन्न या अनुभव किया । उ.—इद्र देखि इरपा मन लायो—५-२ । (३) लगाया, जड़ा । उ.—लोह तरै, मधि रूपा लायौ—७-७ । (४) लगाया, छिड़का, स्पर्श कराया । उ.—काम पावक जरत छाती लोन लायौ आनि—३३५५ । (५) आच-रण या व्यवहार किया । उ.—सूर स्याम भुज गही नँदरानी, बहुरि कान्ह अपनै ढँग लायौ—१०-३४० ।

लार—संज्ञा स्त्री. [स. लाला] (१) वह पतला थूक जो कभी-कभी तार के रूप में मुँह से निकलता है ।

मुहा०—मुँह से लार टपकना—पाने की बहुत इच्छा होना ।

(२) पतला थूक जो प्राय. बच्चो और बूढो के मुँह से तार के रूप मे बहता है । उ.—सो मुख चूमति महरि जसोदा दूध लार लपटाने (हो)—१०-१२८ ।

संज्ञा स्त्री. [हि. तार अनु.] कतार, पंक्ति ।

अव्य. [मारवाडी लैर] (१) संग, साथ । उ.—जन्म-जन्म के दूत तिरोवन को नहिं लार लगाए—२९९६ । (२) पीछे ।

मुहा०—लार लगाना—फँसाना ।

लारनि—संज्ञा स्त्री. सवि. [हि. लार] लार से । उ.—सूरज प्रभु को लहै जु जूठनि लारनि ललित लपोटी—१०-१६४ ।

लाल—संज्ञा पु [स. लालक] (१) प्यारा-दुलारा बालक । उ —चलत लाल पैजनि के चाइ—१०-१३३ । (२) पुत्र, बेटा । उ.—लाल, हौ वारी तेरे मुख पर । । सूर कहा न्यौछावर करियै अपने लाल ललित लरखर पर—१०-९३ । (३) प्रिय व्यक्ति या प्रियतम के लिए संबोधन ।

संज्ञा पु. [स. लालन] प्यार-दुलार ।

संज्ञा स्त्री. [स. लालसा] चाह, इच्छा ।

संज्ञा पु [फा.] मानिक, माणिक्य (रत्न) ।

मुहा०—लाल उगलना—प्यारी-प्यारी बाते करना ।

वि.—(१) सुर्ख, अरुण, रक्त वर्ण । उ.—खेलत फिरत कनकमय आँगन पहिरे लाल पनहियाँ—९-१९ ।

यौ०—लाल अंगारा या लाल भभूका—बहुत ज्यादा लाल ।

(२) बहुत अधिक क्रुद्ध ।

मुहा०—लाल आँखे करना, दिखाना या निकालना—बहुत क्रोध से देखना । लाल पडना—क्रुद्ध होना । लाल-पीला होना—गुस्सा होना । लाल हो जाना या होना—क्रोध में भर जाना ।

(३) (चौसर की) जो (गोटी) सब चालें चलकर बीच के घर मे पहुँच जाय । (४) जो (खिलाड़ी) सबसे पहले जीत जाय ।

संज्ञा पु.—एक प्रसिद्ध छोटी चिड़िया जिसकी मादा 'मुनिया' कहलाती है ।

लालच—संज्ञा पु. [स. लालसा] (१) लोभ, लोलुपता । उ. (क) तिहि लालच कबहूँ कैसैहूँ, तृप्ति न पावत प्रान—१-१०३ । (ख) लोह गहै लालच करि जिय कौ, औरौ सुभट लजावै—९-१५२ । (ग) मनौ भुजग

अमी-रस-लालच फिरि फिरि चाहत सुभग सुचदहि—१०-१०७।

मुहा०—लालच देना—लोभ या लालसा उत्पन्न करना, प्रलोभन देना। लालच निकालना लोभ के लिए दंड देने को प्रस्तुत होना।

लालचहा—वि. [हि. लालच] लालची, लोभी।

लालची—वि. [हि. लालच+ई] लोभी। उ.—लोचन लालची भारी - पृ. ३३४ (३८)।

लालड़ी—सज्ञा पु. [हि. लाल+डी] लाल या अरुण रंग का एक नग।

लालन—सज्ञा पु [स.] लाड़-प्यार।

सज्ञा पु. [हि. लाला] (१) बालक, कुमार। (२) प्यारा-दुलारा पुत्र। उ.—(क) लालन, वारी या मुख ऊपर—१०-९१। (ख) अब कहा करो निछावरि, सूरज सोचति अपनै लालन जू पर—१०-९२।

लालना, लालनो—क्रि स. [स. लालन] दुलार करना।

लाल-बुझक्कड़—सज्ञा पु. [हि. लाल+बूझना] किसी बात का अट्कलपच्चू मतलब या कारण बतानेवाला।

लालमन, लालमनि, लालमनी—सज्ञा पु [हि. लाल+मणि] (१) श्रीकृष्ण। (२)एक तरह का तोता।

लालमुनियाँ—सज्ञा स्त्री [हि लाल+मुनियाँ] 'लाल' पक्षी की मादा।

लालमुनैयनि—सज्ञा स्त्री. सवि [हि लालमुनिया] 'लालो' (मादाओ) की। उ.—मनु लाल मुनैयनि पाँति पिंजरा तोरि चली—१०-२५।

लालरि, लालरी—सज्ञा स्त्री. [हि. लालडी] एक तरह का लाल नग।

लालस—वि. [स.] ललचाया हुआ, लोलुप।

लालसा, लालसाई—सज्ञा स्त्री. [स. लालसा] (१) चाह। उ.—निसि दिन इनि नैननि को री नँदलाल की लागी रहै लालसाई—१४९०। (२) उत्सुकता।

लाल सिखी—सज्ञा पु. [हि. लाल+शिखा] मुर्गा।

लालसी—वि. [हि. लालसा] (१) इच्छुक। (२) उत्सुक।

लाला—सज्ञा पु. [स. लालक] (१) सम्मानसूचक सबोधन या शब्द।

मुहा०—लाला-भइया करना- (१) सम्मान के साथ सबोधन या बात करना। (२) प्रेम या स्नेह के साथ संबोधन या बात करना।

(२) छोटो के लिए प्यार-दुलार सूचक सबोधन।

मुहा०—लाला-मुनुआँ करना – दुलार-प्यार के साथ बात या सबोधन करना।

(३) प्रिय व्यक्ति, विशेषत. नायक, के लिए सबोधन। उ.—मै तो लाला की छबि नेकहु न जोही—८३८।

सज्ञा स्त्री. [स.] लार, थूक।

सज्ञा पु. [फा.] पोस्त का लाल रंग का फूल।

वि. [हि लाल] लाल रंग का।

लालायित—वि. [सं.] ललचाया हुआ, उत्सुक।

लालिची—वि. [हि. लालच] लोभी। उ.—सूरदास प्रभु की सोभा को अति लालिची रहे ललचाने—१६९७।

लालित—वि. [स.] पाला-पोसा हुआ।

लालित्य—सज्ञा पु [स.] सौदर्य।

लालिमा—सज्ञा स्त्री. [स.] लाली, ललाई, अरुणिमा।

लाली—वि. स्त्री. [हि. लालना] पाली-पोसी या दुलार की हुई। उ.—काहे न दूध देहि ब्रज-पोषन हस्त-कमल की लाली—६१३।

लाली—सज्ञा स्त्री. [हि. लाल+ई] (१) ललाई, लालिमा उ.—अपनी लाली खोइ पीक की लाली पलकनि पायौ—१९६३। (२) मान-मर्यादा।

लाले—सज्ञा पु. [स. लाला] अरमान, अभिलाषा।

मुहा०—लाले पड़ना—देखने या पाने को तरस जाना।

लाल्हा—सज्ञा पु. [हि. लाल+साग] 'मरसा' का साग। उ.—चौलाई, लाल्हा अरु पोई—३९६।

लाव—सज्ञा पु [स.] (१) लवा पक्षी। (२) लौंग।

सज्ञा स्त्री. [हि. लाय=आग] आँच, अग्नि।

सज्ञा स्त्री. [देश.] (१) रस्सा। डोरी।

क्रि. स. [हि. लाना] लाओ, लाने का अभ्यास करो। उ.—सूरदास सोइ समष्टि करि व्यष्टि दृष्टि मन लाव—२-३८।

लावक—सज्ञा पु. [स.] लवा पक्षी।

लावण्य—संज्ञा पु [स] (१) लवण का भाव या धर्म। (२) सौदर्य, सलोनापन।

लावत—क्रि स. [हि. लाना] (१) आरोपित करता है। उ.—हारि-जीति कछु नैंकु न समुझत लरिकनि लावत पाप—१०-२१४। (२) स्पर्श करता है।

मुहा०—रसना तारू सौं नहि लावत—बराबर रट लगाये जाता है, जरा चुप नही होता। उ.—रसना तारू सो नहि लावत पीवैं पीव पुकारत—पृ० ३३० (९८)।

(३) चिपटाता है। उ—झुलत झुलावत कठ लावत बढी आनँद बेलि—२२७८।

लावति—क्रि. स. [हि. लाना] (१) करती है। उ.—परसहु बेगि, बेर कत लावति भूखे सारँग पानि—३९५। (२) लगाती या स्पर्श करती है। उ.—निरखत अक स्याम सुदर के बार-बार लावति लै छाती—२९७७।

लवदार—वि. [हि. लाव = आग + फा. दार] (१) तोप में बत्ती लगाने वाला। (२) (तोप) जो छोड़ी जाने को तैयार हो।

लावन—संज्ञा पु [स. लावण्य] सौंदर्य।

संज्ञा स्त्री. [हि. लावना] 'लाने' की क्रिया या भाव।

लावनता—संज्ञा स्त्री. [स. लावण्य + ता] सुदरता।

लावना—क्रि. स. [हि. लाना] लाना।

क्रि. स. [हि. लगाना] (१) स्पर्श कराना। (२) जलाना।

लावनि—संज्ञा स्त्री. [सं. लावण्य] सौंदर्य, सलोनापन। उ—सुन्दर मुख की बलि-बलि जाऊँ। । लावनि-निधि गुन निधि सोभा-निधि निरखि निरखि जीवन सब गाऊँ—६६३।

लावनी—संज्ञा स्त्री. [देश] एक प्रकार का लोक-गीत।

लावनो—क्रि स. [हि लावना] लाना।

क्रि. स [हि. लगाना] (१) स्पर्श कराना। (२) जलाना।

लाव-लश्कर—संज्ञा पु [फा] सेना और उसके साथ रहनेवाले लोग तथा सबका सामान।

लावहिंगे—क्रि. स. [हि. लावना] चिमटायँगे। उ—रति-सुख अत भरोगी आलस अकम भरि उर लावहिंगे—२१५८।

लावहि—क्रि. स. [हि लावना] (१) लगाता या स्पर्श कराता है।

मुहा०—जरे ऊपर लोन लावहि—जो पीड़ित या दुखी है, उसकी पीड़ा या दुख और भी बढाने का उपक्रम करता है। उ—जरे ऊपर लोन लावहि को है उनते बावरे—३२६०। (२) आरोपित करता है। उ—लावहि सांचेन को खोर—१०-३।

लावहु—क्रि. स. [हि. लावना] (१) सटाते हो। उ—कैसै बछरा थन लै लावहु—४०१। (२) लगाओ या स्पर्श कराओ।

मुहा०—जिनि लोन लावहु—नमक मत लगाओ, दुखी और पीड़ित का दुख या पीड़ा बढ़ाने वाले कार्य न करो और बात मत कहो। उ.—जाहु जिनि अब लोन लावहु देखि तुमही डरी—३३१८।

लावा—संज्ञा पु [स.] 'लवा' पक्षी।

संज्ञा पु. [स. लाजा] खील, लाई।

मुहा०—लावा मेलना—(१) जादू-टोना करना। लावा मेलि दए है—जादू-टोना कर दिया है, जादू फेर दिया है। उ.—लावा मेलि दए है तुमको बकत रहा दिन-आखो—३०२१।

संज्ञा पु [हि. लवना] खेत काटने वाला मजदूर।

लावा परछन—संज्ञा पु [हिं. लावा + परछना] विवाह की एक रीति जिसमें सप्तपदी के पूर्व कन्या के हाथ की डलिया मे उसका भाई धान का लावा डालता है।

लावारिस—वि. [अ.] (१) जिसका कोई उत्तराधिकारी न हो। (२) जिसका कोई मालिक न हो।

लावै—क्रि. स. [हि. लाना] (१) करता है। उ.—(क) देवै कौ बडौ महर, देत न लावै गहर—१०-३९। (ख) हरत बिलब न लावै—१०-१२६। (२) (एकटक) देखता है। उ०—लटकति बेसरि जननि की इकटक चख लावै—१०-७२। (३) लगाये, मले। उ.—कोढी लावै केसरि—३०२६।

लाश—संज्ञा स्त्री. [फा.] मृतक देह, शव।

लाष—संज्ञा पु. [स. लाक्षा] लाख, लाह। उ—लाष भवन बैठार दुष्ट ने भोजन मे विष दीन्हो—सारा. ७७७।

लाषना, लाषनो—क्रि स. [हि लखना] देखना, ताडना।

लास—सज्ञा पु [फा. लाश] मुरदा, शव।

सज्ञा पु.[स. लास्य] (१)नृत्य-विशेष। (२) नटक।

लासक—सज्ञा पु. [स.] (१) नाचनेवाला। (२) मयूर।

लासकी—सज्ञा स्त्री. [स] नाचनेवाली, नर्तकी।

लासा—सज्ञा पु [हि. लस] (१) लसदार चीज। (१) वह लसदार पदार्थ जिसे बाँस या डाली पर लगाकर बहेलिया पक्षी पकड़ता है। उ.—चितवन ललित लकुट लासा लट काँपै अलक तरग—पृ. ३२५ (३९)।

मुहा०—लासा लगाना—(फँसाने के लिए) लालच या प्रलोभन देना। लासा होना—हमेशा साथ लगे रहना।

लासानी—वि. [अ.] बेजोड़, अनुपम।

लासि—संज्ञा स्त्री. [स लास्य] नृत्य विशेष।

लासु,लासू, लास्य—सज्ञा पु [स. लास्य] (१) नृत्य। (२) (विशेषतया स्त्रियों का) नृत्य-विशेष।

लाह—सज्ञा स्त्री. [स. लाक्षा] लाख, चपड़ा।

सज्ञा पु. [स. लाभ] नफा, फायदा, लाभ।

सज्ञा स्त्री. [देश.] चमक, काति।

लाहक—वि. [हि. लहना+क] लहने या चाहनेवाले। उ.—प्रेम-प्रीति के लाहक—१-१९।

लाहन—सज्ञा पु. [देश.] ढोने की मजदूरी।

लाहल—सज्ञा पु. [अ. लाहौल] लाहौल।

लाहा—सज्ञा पु. [स. लाभ] फायदा, लाभ। उ—और बनिज मै नाही लाहा, होति मूल मै हानि—१-३१०।

लाही—सज्ञा स्त्री [हि. लाख, लाह] एक कीड़ा जो लाख उत्पन्न करता है।

वि मटमैले लाल रग का।

सज्ञा स्त्री. [हि. लावा] खील, लाजा, लावा।

लाहु, लाहो, लाहौ—सज्ञा पु. [स.लाभ] नफा, फायदा। उ.—(क) सूर पाइ यह समौ, लाहु लहि, दुर्लभ फिरि संसार—१-६८। (ख) जनि कछु प्रिया सोच मन करिहौ, मातु-पिता-परिजन-सुख लाहु—९-३४। (ग) यहै मोहिं लाहौ, नैननि दिखरावौ—१०-९५।

लाहौल—सज्ञा पु. [अ.] एक वाक्य का पहला शब्द जिसका प्रयोग प्राय घृणा सूचित करने के लिए किया जाता है।

लिग—सज्ञा पु [स.] (१) चिह्न, लक्षण। (२) साधन-हेतु। (३) मूल प्रकृति। (४) पुरुष की गुप्त इद्रिय। (५) शिव की मूर्ति-विशेष। (६) व्याकरण में वह भेद जिससे शब्द के स्त्री-पुरुष वर्ग का ज्ञान होता है। (७) एक पुराण।

लिगदेह—सज्ञा पु. [स] वह सूक्ष्म शरीर जो स्थूल के नष्ट होने पर भी कर्म-फल भोगने के लिए जीवात्मा के साथ रहता है। उ.—लिग-देह नृप कौ निज गेह, दस इद्रिय दासी सौ नेह—४-१२।

लिगनाश—सज्ञा पु [स.] अधकार।

लिगांकि—सज्ञा पु. [स] एक शैव संप्रदाय।

लिगायत—सज्ञा पु. [स.] एक शैव सप्रदाय।

लिगी—सज्ञा पु. [स. लिगिन्] (१) चिह्नवाला। (२) आडबर करनेवाला।

सज्ञा स्त्री. [स लिग] छोटा लिंग या पिंड।

लिए—अव्य —सप्रदान कारकीय चिह्न, के वास्ते। उ.—धन-मद-मूढनि अभिमानिनि मिलि लोभ लिए दुर्बचन सहै—१-५३।

क्रि. स. [हि. लेना] (१) (गोद मे) लेकर या लिये हुए। उ.—(क) जसुमति तब नद बुलावति लाल लिए कनियाँ दिखरावति—१०-९५। (ख) गोद लिए जसुदा नद-नदहि—१०-१०७। (ग) सूरदास प्रभु कौ लिए जसुदा चितै-चितै मुसुकानी—१०-१५३। (२) (साथ) लेकर या लिये हुए। उ.—सखा लिए तहँ गये—४३७।

प्र०—लाइ लिए—चिपटा लिया। उ.—मोहन कत खिझत अयानी, लिए लाइ हिऐ नदरानी—१०-१८३। बोलि लिए—बुला लिया। उ.—जागे नद जसोदा जागी बोलि लिए हरि पास—५१७।

लिक्खाड़—वि. [हि. लिखना] बहुत लिखनेवाला।

लिखत—सज्ञा स्त्री. [स. लिखित] लिखी हुई बात।

यौ.—लिखत-पढ़त—लिखा-पढ़ी।

क्रि. स [हि. लिखना] (१) लिखता है। (क) चित्रगुप्त जम द्वार लिखत है मेरे पातक झारि—१-१९७। (ख) बरस दिवस करि होत पुरातन फिरि-फिरि लिखत नयौ—१-२९८। (२) लिख लिखकर, लिखते-लिखते। उ.—सुर-तरुवर की साख लेखिनी लिखत सारदा हारै—१-१८३।

लिखति—क्रि स. [हि लिखना] चित्रित करती हो। उ.—भीति बिना तुम चित्र लिखति हौ, सो कैसै निबहै री—७७३।

लिखधार—सज्ञा पु [हि. लिखना+धार] लिखनेवाला, मुशी। उ —साँचौ सो लिखधार (लिखहार) कहावै। काया-ग्राम मसाहत करि कै, जमा बाँधि ठहरावै—१-१४२।

लिखन—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) लिखावट, लिखा हुआ लेख। (२) भाग्य-लेखा।

लिखना—क्रि. स. [स. लिखन] (१) चिह्न अंकित करना। (२) लिपिबद्ध करना। (३) चित्रित करना। (४) रचना, बनाना।

लिखनि—सज्ञा स्त्री [स. लिखन] (१) लिखावट, लिखा हुआ लेख। (२) कर्म का लेख।

लिखनी—सज्ञा स्त्री. [स. लेखनी] कलम।

लिखनो—क्रि. स. [हिं. लिखना] (१) अंकित करना। (२) लिपि बद्ध करना। (३) चित्रित करना। (४) रचना।

लिखवाई—सज्ञा स्त्री. [हि. लिखाई] (१) लिखावट। (२) लिखने का कार्य या मजदूरी।

लिखवाना, लिखवानो—क्रि. स. [हि. लिखाना] लिखने का काम दूसरे से कराना।

लिखहार—सज्ञा पु. [हि लिखना+हार] लिखनेवाला, मुशी। उ.—साँचौ सो लिखहार कहावै। काया-ग्राम मसाहत करि कै जमा बाँधि ठहरावै—१-१४२।

लिखा—वि. पु. [हिं. लिखना] (१) लिपिबद्ध। (२) अंकित, चित्रित।

लिखाई—सज्ञा स्त्री. [हि. लिखना] (१) लिखावट।

यौ०—लिखाई-पटाई—विद्याभ्यास, अध्ययन।

(२) लिखने का कार्य या मजदूरी।

लिखाना, लिखानो—क्रि. स. [स. लिखन] लिखने का काम दूसरे से कराना।

यौ०—लिखाना-पढ़ाना, लिखानो-पढ़ानो—शिक्षा देना।

लिखा-पढ़ी—सज्ञा स्त्री. [हि लिखना-पढ़ना] (१) पत्र-व्यवहार, चिट्ठी-पत्री। (२) कोई बात लिखकर पक्की करना।

लिखार—सज्ञा पु [हिं. लिखना+आर] लिखनेवाला।

लिखावट—सज्ञा स्त्री [हिं. लिखना+आवट] (१) लेख, लिपि। (२) लिखने का ढग या रीति।

लिखि—क्रि. स [हि. लिखना] (१) लिखकर।

मुहा०—लिखि राखी—भाग्य में लिख दिया है। उ.—जो कछु लिखि राखी नँदनदन मेटि सकै नहिं कोइ—१-२६२।

(२) अंकित या चित्रित करके। उ —(क) मनौ चितेरैं लिखि-लिखि काढी—३९१। (ख) मनौ चित्र की सी लिखि काढी—६४७। (ग) हरि के चलत देखियत ऐसी मनहुँ चित्र लिखि काढी—२५३५। (घ) नँदनदन ब्रज छाँडि कै को लिखि पूजै भीति—३४४३। (ङ) चित्ररेखा सकल जगत के नृपन की छिनिक मे मुरति तब लिखि दिखाई—१० उ०-३४।

लिखित—वि. स्त्री. पु. [स.] लिपिबद्ध की हुई।

सज्ञा पु —(१) लिखी हुई बात। (२) प्रमाणपत्र।

लिखी—वि. स्त्री. [हि. लिखना] चित्रित, अंकित। उ.—मनहुँ चित्र की सी लिखी मुखहिं न आवै बोल—१००८।

लिखेरा—सज्ञा पु. [हि. लिखना] लिखनेवाला।

लिखै—क्रि. स. [हिं. लिखना] (१) लिपिबद्ध करे। उ.—लिखै गनेस जनम भरि मम कृत—१-१२५। (२) चित्रित या अंकित करता है। उ.—तेरौ चित्र लिखै अरु निरखै बासर बिरह गँवावै—२०३२।

लिख्यो, लिख्यौ—सज्ञा पु. [हि. लिखना] (भाग्य में) लिखा हुआ लेख, भाग्य-लेख। उ.—(क) अखिल लोकनि भटकि आयौ, लिख्यौ मेटि न जाई—१-३१६।

(ख) गै अपराध कियौ सिसु भारे लिख्यौ न मेटयौ जाई—१०४।

क्रि. स. अंकित या चित्रित किया। उ.—लिख्यौ काजर नाग द्वारैं, स्याम देखि डराई—४९८।

लेच्छिवि, लिच्छिवी—संज्ञा पु. [सं.] एक प्राचीन राजवंश।

लिटाना—क्रि स. [हिं. लेटना] दूसरे को लेटने में प्रवृत्त करना।

लिट्ट—संज्ञा पु. [देश] मोटी रोटी जो केवल आग पर ही सेकी जाती है।

लिडार—वि. [देश.] डरपोक, कायर।

लिपट—संज्ञा स्त्री. [हिं. लिपटना] लिपटने की क्रिया या भाव।

लिपटना, लिपटनो—क्रि अ [सं. लिप्त] (१) चिमटना, चिपटना। (२) गले लगना। (३) (कार्य में) जी-जान से जुट जाना।

लिपटाना, लिपटानो—क्रि. स. [हिं. लिपटना] (१) चिपटाना, चिमटाना। (२) गले लगाना। (३) (कार्य में) जी-जान से जुटा देना।

लिपना, लिपनो—क्रि. अ [हिं. लीपना] (१) पोता जाना। (२) स्याही जैसी चीज का फैल जाना।

लिपवाना, लिपवानो—क्रि. स [हिं. लीपना] लीपने का काम दूसरे से कराना।

लिपाइ—क्रि. स. [हिं लिपाना] (फर्श आदि पर किसी चीज का) लेप करवा कर। उ.—चंदन आँगन लिपाइ, मुतियनि चौक पुराइ—१०-९५।

लिपाई—संज्ञा स्त्री [हिं. लीपना] लीपने की क्रिया, भाव या मजदूरी।

लिपाऊँ—क्रि. स. [हिं. लिपाना] लीपने का काम दूसरे से करा दूँ। उ.—चंदन भवन लिपाऊँ—८७६।

लिपाना, लिपानो—क्रि. स [हिं. लीपना] तह चढ़-वाना, लेप कराना, पुता देना।

लिपायो, लिपायौ—क्रि. स [हिं. लिपाया] (गच-विशेष को) पुता-लिपा दिया या लेप करा दिया।

उ.—(क) चंदन भवन लिपायौ—१०-४। (ख) भोजन कौ निज भवन लिपायौ—१०-२४८।

लिपावो, लिपावौ—क्रि स [हिं. लिपाना] (गच-विशेष को) पुता-लिपा लो, या लेप करा दो। उ.—ललिता बिसाखा अंगना लिपावो—२३९५।

लिपि—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) अक्षर लिखने की पद्धति। (२) लिखा हुआ लेख। (३) लिखावट।

लिपिक—संज्ञा पु. [सं] (१) लिखनेवाला। (२) मुंशी।

लिपिकार—संज्ञा पु [सं] (१) लिखनेवाला। (२) प्रतिलिपि करनेवाला।

लिपिबद्ध—वि. [सं.] लिखा हुआ, लिखित।

लिप्त—वि. [सं] (१) लिपा-पुता। (२) लीन।

लिप्सा—संज्ञा स्त्री [सं.] इच्छा, चाह।

लिबड़ना, लिबड़नो—क्रि. अ [अनु] कीचड़ आदि से लथपथ होना।

क्रि. स कीचड़ आदि से लथपथ करना।

लिबास—संज्ञा पु. [अ.] पोशाक, पहनावा।

लियाकत—संज्ञा स्त्री [अ. लियाकत] (१) योग्यता। (२) गुण। (३) शिष्टता, शील।

लियो, लियौ—क्रि. स. [हिं. लेना] (१) उठाया, धरा। उ.—गाइ-गोप-गोपीजन-कारन गिरि कर-कमल लियौ—१-१२१। (२) (जन्म) धारण किया। उ.—जब तैं जग जनम लियौ, जीव नाम पायौ—१-१२४। (३) ठाना, निश्चित किया। उ.—अत्रि पुत्र-हित बहु तप कियौ, तासु नारिहू यह ब्रत लियौ—४-३। (४) अपनाया। उ.—असी-इक कर्म बिप्र कौ लियौ—५-२। (५) हाथ में रक्खा। उ.—स्नान करि अंजली जल जब्रै नृप लियौ—८-१६।

प्र०—अँचल लियौ—अंचल से कुछ मुह ढक लिया। उ.—रुद्र को देखि कै मोहिनी लाज करि लियौ अँचल, रुद्र तब अधिक मोह्यौ—८-१०।

(६) (अंक या गोद में) उठा लिया। उ.—बालक लियौ उछंग दुष्टमति—१०-५०। (७) (चुराकर या छिपाकर) उतार लिया। उ.—कैसैं कहति लियौ छींके तैं, ग्वाल-कंध दै लात—१०-२९०।

लिलाट, लिलाटा, लिलार लिलारा—संज्ञा पु. [सं. ललाट] (१) माथा, मस्तक। उ.—(क) तिलक लिलार—१०-२४। (ख) मुकुलित अलक लिलार—

११८२। (२) भाग्य। उ.—सुनहु सखी री दोष न काहू जो बिधि लिखो लिलार—२६८७।

लिलारे—संज्ञा पु. सवि. [हि. लिलार] माथे पर। उ.—हृदय हार बिन ही गुन लक्त मृगमद मिल्यौ लिलारे—२०८८।

लिलोही—वि. [स. लल] लालची, लोभी।

लिव—संज्ञा स्त्री. [हि. लौ] लगन।

लिवाइ, लिवाई—क्रि. स. [हि. लिवाना] लेकर।

प्र०—गई लिवाइ—साथ ले गयी। उ.—स्याम कौ भीतर गई लिवाइ—१०-२२६। जाहु लिवाइ—साथ ले जाओ। उ—जाहु लिवाइ सूर के प्रभु कौ—४२५। चलौ लिवाइ—साथ ले चलो। उ.—(क) धेनु बन चलौ लिवाइ—६१९। (ख) ऊधो, सगहि चलौ लिवाइ—३१३४। ल्याए लिवाई—साथ ले आये। उ.—भरत दया ता ऊपर आई। ल्याये आस्रम ताहि लिवाई—५-३।

लिवाऊँ—क्रि स [हि. लिवाना] थमाऊँ, पकड़ाऊँ। उ—सूरदास भीषम परतिज्ञा अस्त्र लिवाऊँ (गहावन) पैज करी—१-२६८।

लिवाना, लिवानो—क्रि. स. [हि. लेना का प्रेर०] (१) लेने का काम दूसरे से कराना। (२) थमाना, पकड़ाना।

क्रि. स. [हि. लाना का प्रेर] लाने का काम दूसरे से कराना।

लिवाल—वि. [हि. लेना + वाला] लेने या खरीदनेवाला।

लिवावन—संज्ञा पु. [हि. लिवाना] साथ ले जाने। उ. कीरति महरि लिवावन आई—७५७।

लिवैया—वि. [हि. लेना] लेने या खरीदनेवाला।

वि. [हि. लाना] लानेवाला।

लिहाज—संज्ञा पु [अ. लिहाज] (१) व्यवहार में किसी बात का ख्याल या ध्यान। (२) कृपादृष्टि। (३) मुरव्वत, संकोच। (४) पक्षपात। (५) पद, सम्मान, सबंध आदि का ध्यान। (६) शर्म, लाज।

मुहा०—लिहाज उठना, टूटना या न रहना—(१) पद-मर्यादा आदि का ध्यान न रह जाना। (२) हया-शर्म न रह जाना।

लिहाड़ा—वि. [देश] बेकार, खराब, निकम्मा।

लिहाड़ी—संज्ञा स्त्री. [हि. लिहाडा] निंदा, उपहास।

मुहा०—लिहाडी लेना—निंदा या उपहास करना।

लिहाफ—संज्ञा पु. [अ. लिहाफ] भारी रजाई।

लिहित—वि [हि. लेह] चाटता हुआ।

लीक—संज्ञा स्त्री [सं .लिख्] (१) चिह्न, लकीर, रेखा।

मुहा०—लीक करके—निश्चयपूर्वक। लीक खिचना—(१) अटल और दृढ़ होना। (२) व्यवहार की मर्यादा बँधना। (३) साख बँधना। लीक खाँची—साख बँध गयी है। उ.—सूरदास भगवत भजत जे तिनकी लीक चहूँ दिसि (जुग) खाँची—१-१८। लीक खीचकर—जोर देकर, दृढ़तापूर्वक। कहति लीक मै खाँची—प्रतिज्ञा करके अथवा निश्चयपूर्वक कहती हूँ। उ.—सूर स्याम तेरे बस राधा, कहति लीक मैं खाँची—१४७५।

(२) गहरी पडी हुई लकीर या रेखा। उ.—मनौ कनक कसौरिया पर लीक सी लसटाति—१०-१८४। (३) गाडी का पहिया चलने से बननेवाली रेखा। (४) (पगडंडी जैसा) मार्ग का पड़ जाने वाला चिह्न।

मुहा०—लीक चलना या लीक पकडना—पगडंडी के सहारे आगे बढ़ाना। लीक पीटना—चली आने वाली प्रथा का किसी न किसी तरह निर्वाह करना।

(५) मर्यादा, महिमा। (६) लोक-व्यवहार की बँधी हुई परंपरा। उ.—नँदनदन के नेह-मेह जिनि लोक लीक लोपी—३४८७। (७) प्रथा, रीति। (८) सीमा, प्रतिबंध। (९) कलक, लाछन। उ.—तिन देखत मेरौ पट काढत लीक लगै तुम लाज—१-२२५। (१०) गिनती, गणना।

लीकति—संज्ञा स्त्री. [हि. लीक] लीक।

लीके—संज्ञा स्त्री सवि [हि. लीक] रेखा को।

मुहा०—करे कहति हौ लीके—निश्चय या प्रतिज्ञा पूर्वक कहता हूँ। उ.—और अग की सुधि नहिं जानै करे कहति हौ लीके—१४००

लीकौ—संज्ञा स्त्री. [हि. लीक] लकीर, रेखा।

मुहा०—खैचि कहति हौ लीकौ—निश्चय या प्रतिज्ञापूर्वक कहता हूँ। उ.—कोउ न समरथ अघ करिबे कौ, खैचि कहत हौ लीकौ—१-१३८।

लीख—संज्ञा स्त्री. [स. लिक्षा] जूँ का अंडा।

लीचड़—वि. [देश.] (१) निकम्मा। (२) पिंड या पीछा न छोड़नेवाला।

लीची—संज्ञा स्त्री [चीनी लीचू] एक पेड़ या उसका फल।

लीझी—संज्ञा स्त्री. [देश.] (१) उबटन के साथ छूटा हुआ मैल। (२) रस निचुड़ा चीफुर, सीठी।

वि.—(१) रस-रहित। (२) निकम्मा।

लीजतु—क्रि. स. [हिं लेना] लेता हूँ। उ.—(क) रवि, ससि, राहु सँजोग बिना ज्यौं, लीजतु है मन मानि—२-३८। (ख) जदपि मोहिं बहुतै समुझावत सकुचन लीजतु मानि—२७४७।

लीजै—क्रि. स. [हि. लेना] (१) बचा लीजिए। उ.—मोह-समुद्र सूर बूडत है, लीजै भुजा पसारि—१-१११।

प्र०—राखि लीजै—बचा लीजिए, रक्षा कीजिए। उ.—(क) नाथ सारगधर, कृपा करि दीन पर डरत भव-त्रास तैं राखि लीजै—१-१२०। (ख) सूर स्याम अबके इहिं औसर आनि राखि ब्रज लीजै—२८१९।

(२) (आक्रमण या सामना करके अथवा घेरकर) नष्ट कर दीजिए। उ.—जा सहाइ पाडव-दल जीतै अर्जुन कौ रथ लीजै—१-२६९। (३) ग्रहण कीजिए, अपनाइए। उ.—राजा कह्यौ, कहा अब कीजै, द्विजनि कह्यौ, चरनोदक लीजै—९-५। (४) ठानिए, निश्चित कीजिए। उ.—महाराज दसरथ मन धारी। अवधपुरी कौ राज राम दै, लीजै व्रत बनचारी—९-३०। (५) माँग लीजिए, ले लीजिए। उ.—कान्हा बलि आरि न कीजै, जोइ-जोइ भावै सोइ-सोइ लीजै—१०-१८३।

लीजौ—क्रि. स. [हि. लेना] कहना, बताना। उ.—मेरौ नाम नृपति सौ लीजौ, स्याम कमल लै आए—५८३।

प्र०—टेरि लीजै—बुला लेना, पुकार लेना। उ.—सूरदास प्रभु कहत सौह दै, मोहिं लीजौ तुम टेरि—४०१।

लीद—संज्ञा स्त्री. [देश.] पशुओ का मल।

लीन—वि. [स.] (१) जो किसी चीज में समा गया हो। (२) कार्य आदि में रत, सलग्न या तत्पर। (३) ध्यान-मग्न। (४) तन्मय, मग्न। उ.—सूरदास प्रभु प्रान न छूटत अवधि आस मे लीन ३२०६।

लीनता—संज्ञा स्त्री. [स.] (१) समा जाने की क्रिया या भाव। (२) कार्य आदि में सलग्नता या तत्परता। (३) मग्नता, तन्मयता। (४) ध्यान मग्नता।

लीना—वि. स्त्री. [स. लीन] ध्यानमग्न, अनुरक्त। उ.—अति ही चतुर सुजान जानमनि वा छवि पै भई मै लीना—१४९१।

लीनी—क्रि. स. स्त्री. [हिं. लेना] ले ली।

प्र०—गोद करि लीनी—गोद में उठा लिया। उ.—देखी परी जोगमाया, बसुदेव गोद करि लीनी—१०-४।

लीने—क्रि स [हि] लिये (हुए)। उ.—पैठि गए मुख ग्वाल धेनु-बछरा सँग लीने—४३१।

लीनो, लीनौ—क्रि. स. [हि लेना] (१) भजा, जपा, उच्चारण किया। उ.—जो कबहुँ नर-जन्म पाइ, नहिं नाम तुम्हारौ लीनौ—१-१२९। (२) (जन्म आदि) धारण किया। उ.—परशुराम जमदग्नि-गेह लीनौ अवतारा—९-१३।

प्र०—धरि लीनौ—(१) रूप या वेश बनाया या धारण किया। उ.—अति मोहिनी रूप धरि लीनौ—१०-५१। (२) धारण या स्थापित कर लिया, रख लिया। उ—छिन इक मै भृगुपति प्रताप बल करषि हृदय धरि लीनौ—९-११५।

लीन्यो, लीन्यौ—क्रि स. [हि. लेना] (१) पाया, प्राप्त किया। उ.—हरि, तुम बलि कौ छलि कहा लीन्यौ ८-१४। (२) लिया, पकड़ा, उठाया। उ.—तरुवर तब इक उपारि हनुमत कर लीन्यौ—९-९६।

लीन्ही—क्रि. स. [हिं. लेना] ली, ले ली। उ.—देह जमानति लीन्ही—१-१९६।

प्र०—हरि लीन्ही—हरण कर लिया। उ.—तहाँ बसत सीता हरि लीन्ही रजनीचर अभिमानी—०-१९९। सहि लीन्ही—सहन कर लिया। उ.—सुनहु सूर चोरी सहि लीन्ही—१०-३०३। लीन्ही फेंट छुड़ाइ—फेंट छुड़ा ली। उ.—रिस करि लीन्ही फेंट छुड़ाइ—५३९।

लीन्हे—अव्य. [हिं लीन्ह = लिया] (१) लिए, वास्ते। (२) के कारण, फेर या चक्कर में पड़कर। उ.—कचन मनि तनि काँचहि सैतत या माया के लीन्हे।

लीन्हे—क्रि. स [हि. लेना] (१) ले लिया, लिये (हुए)। उ. - हाथ धनुष लीन्हे – ९-६२।

प्र०—लीन्हे साथ-साथ ले लिया, (किसी के) साथ चलना स्वीकार कर लिया। उ.—अतरजामी प्रीति जानिकै लछिमन लीन्हे साथ—९-३७। लीन्हे गोद—गोद मे ले लिया, गोद में लेने को उठा लिया। उ.—जननि उबटि न्हवाइ कै (सिसु) क्रम सौ लीन्हे गोद —१०-८२। गाढै करि लीन्हे – मजबूती से पकड़ लिया। उ.—दोउ भुज धरि गाढै करि लीन्हे —३०-३१७। लीन्हे रोग—रोग-धोग (अपने ऊपर) ले लिये या लेकर (शिशु की) कल्याण-कामना की। उ.—सूर स्याम गाइनि सँग आए मैया लीन्हे रोग—४९३।

लीन्है—अव्य [हि लिए या लेना] के लिए, (में फँसे होने) के कारण। उ.—माया-मोह-लोभ के लीन्है, जानी न बृंदाबन रजधानी—१-१४९।

लीन्हों, लीन्हौ—क्रि. स. [हि. लेना] (१) ग्रहण किया। उ.—कछु दिन पत्र भच्छ करि बीते, कछु दिन लीन्हो पानी—सारा ७५। (२) ठाना, (प्रण आदि का) निश्चय किया। उ.—धर्म-पुत्र जब जग्य उपायौ, द्विज मुख ह्वै पन लीन्हौ—१-२९।

लीन्हो, लीन्हौ—क्रि. स. [हिं. लिया] (१) भार ग्रहण किया, उठाया। उ.—(क) सात दिवस गिरि लीन्हो—१-१७। (२) (वार करने को) उठाया। उ.—(क) रथ तै उतरि चक्र कर लीन्हौ—१-२७१। (ख) श्री रघुनाथ धनुष कर लीन्हौ—९-५९। (३) (आचमन या पान) किया। उ.—भोजन करि नँद अचमन लीन्हौ—१०-२३८। (४) पकड़ा, थाम लिया। उ.—अटपट आसन बैठि कै गो-धन कर लीन्हौ—४०९।

प्र०—गहि लीन्हौ—पकड़ लिया। उ.—पग सौ चाँपि घीच बल तोरचौ, नाक फोरि गहि लीन्हौ—५५८। झपि जल लीन्हौ—पानी में कूद पड़े। उ.—खेलत खेलत जाइ कदम चढि झपि जमुना जल लीन्हौ—५७६।

लीपना—क्रि. स [स. लेपन] गोबर, मिट्टी आदि का गाढ़ा या पतला लेप या घोल दीवार या फर्श पर चढ़ाना या पोतना।

मुहा०—लीपना-पोतना—(१) सफाई करना। (२) सारा काम बिगाड़ देना।

लीपि—क्रि. स. [हिं लीपना] (किसी चीज का) घोल फर्श आदि पर चढाकर। उ.—(क) चौक चंदन लीपि क धरि आरती सँजोइ—१०-२६। (ख) अस्थल लीपि पात्र सब धोए—१०-२६०।

लीबड़, लीबर—वि. [हि. लिबडना] कीचड आदि से लथपथ।

लीबे—सज्ञा पु. [हि. लेना] (गोद में) लेने की क्रिया या भाव। उ.—ऐसो भाग होइगो कबहूँ स्याम गोद मे लीबे—२९६६।

लीयो, लीयौ—क्रि. स. [हिं. लेना] लिया।

प्र०—माँगि लीयौ—माँग लिया। उ—कान्ह माँगि सीतल जल लीयौ—३९६।

लीर—सज्ञा स्त्री. [स. चीर] धज्जी, चिथड़ा।

लील—वि. [स नील] नीले रग का, नीला। उ.—लीलाबुज तनु लील वसन मनि चितयो न जात धूम के भोरे—३२४८।

लीलकंठ—सज्ञा पु. [स. नीलकठ] नीलकठ पक्षी।

लीलत—क्रि. स. [हि लीलना] लीलता है, लीलते (ही)। उ—जैसे मीन अहार लोभ ते लीलत परे गरे—पृ. ३२८ (७४)।

लीलना, लीलनो—क्रि. स. [हिं. निगलना] निगलना।

लीलम—सज्ञा पु. [हि. नीलम] नीलमणि, नीलम।

लीलया—क्रि. वि [स.] (१) खेल ही खेल में। (२) सहज ही में, अनायास।

लीलांबर—सज्ञा पु [स. नीलाबर] नीला अंबर या वस्त्र।

लीलांबुज—सज्ञा पु [स. नीलाबुज] नीला कमल। उ.—लीलाबुज तनु लील बसन मनि चितयो न जात धूम के भोरे—३२४८।

लीला—संज्ञा स्त्री. [सं] (१) खेल, क्रीडा। उ.—लीला करत कनक मृग मारचौ—९-११५। (२) प्रेम-विनोद। (३) अद्‌भुत् या रहस्यमय व्यापार । उ.—लीला सुभग सूर के प्रभु की ब्रज मैं गाइ जियौ—४८६। (४) ईश्वरावतारो के चरित्रो का अभिनय।
संज्ञा पु. [सं नील] काले रंग का घोड़ा।
वि.—नीले रंग का, नीला।

लीलाधर—संज्ञा पु. [सं] लीलावतारी, विष्णु या उनके प्रमुख अवतार, राम और कृष्ण। उ —निर्गुन ब्रह्म सगुन लीलाधर सोई सुत करि मान्यौ—१०-२६३।

लीलापुरुषोत्तम—संज्ञा पु. [सं.] श्रीकृष्ण।

लीलामय - वि. [सं.] (१) विनोद या क्रीड़ायुक्त। (२) रहस्यपूर्ण।

लीली—वि. स्त्री. [सं. नील] नीले रंग की, नीली। उ.—बदन सिर ताटंक गंड पर रतन जटित मनि लीली—१८४६।

लीले—संज्ञा पु. [सं. नील] काले रंग का घोड़ा। उ.—लीले सुरंग कुमैत स्याम तोहि परदे सब मन रंग—१० उ०-६।

लीलैव—क्रि. वि. [सं. लीला+इव] (१) लीला-रूप में। (२) खिलवाड में। (३) बहुत सहज रूप से।

लीलो, लीलौ—वि. [हि. नीला] नीले रंग का।

लीह—संज्ञा स्त्री. [देश.] जमीन, भूमि।

लुँगाड़ा—वि. [देश.] लुच्चा, लफंगा।

लुंचन—संज्ञा पु [सं.] नोचने या काटने की क्रिया।

लुंचित—वि [सं.] नोचा या काटा हुआ।

लुंज, लुंजा, लुंजै—वि. [सं लुंचन] (१) लूला-लँगड़ा। उ.—ए ऊधौ कहियौ माधौ सो मदन मारि कीन्ही हम लुंजै—२७२१। (२) बिना पत्ते का (पेड़), ठूँठ।

लुंठक—वि. [सं.] लुटेरा।

लुंठना, लुंठनो—क्रि. स [सं. लुंठन] (१) लुढ़कना। (२) लूटना।

लुंठित—वि. [सं.] (१) गिरा या लुढकता हुआ। (२) जो लूटा-खसोटा गया हो।

लुंड—संज्ञा पु. [सं रुंड] बिना सिर का धड़।

लुंडा—वि. [सं. रुंड] जिसके पूँछ और पंख न हों।

लुआठ, लुआठा—संज्ञा पु [सं लोक+काष्ठ] जलती या सुलगती हुई लकड़ी।

लुआठी—संज्ञा स्त्री. [हि. लुआठा] जलती हुई लकड़ी।

लुआब—संज्ञा पु. [अ.] लस, लासा।

लुआर—संज्ञा स्त्री. [हि. लू] तप्त वायु, लूक।

लुकंजन—संज्ञा पु. [सं. लोकांजन] वह अंजन जिसको लगानेवाला तो सबको देखता है, पर उसे कोई नहीं देख सकता।

लुकंदर—वि. [हि. लुकना] छिपनेवाला।

लुक—संज्ञा पु [सं लोक] लपट, ज्वाला।

लुकना, लुकनो—क्रि. अ. [सं. लुक] छिपना।

लुकाई—क्रि. अ. [हि. लुकना] छिपकर।
प्र०—रहे लुकाई—छिप गये। उ.—टेरि टेरि मैं भई बावरी दोउ भैया तुम रहे लुकाई - ४६२।

लुकाए—क्रि. अ. [हि. लुकना] छिपे।
प्र०—रहे लुकाए—छिप गये। उ.—डर ते तब हरि रहे लुकाए—२४३३।

लुकाट—संज्ञा पु. [सं. लकुच] एक पेड़ या उसका फल।
संज्ञा पु [हि. लुआठा] जलती हुई लकड़ी।

लुकाना—क्रि. स. [हि लुकना] छिपाना।
क्रि. अ.—लुकना, छिपना।

लुकाने—क्रि. अ. [हि. लुकाना] छिपे, छिप गये। उ.—कोउ कहै ग्वाल-बाल सँग खेलत बन मे जाइ लुकाने—३४७१।
प्र०—रहे लुकाने—छिप गये। उ.—यह बिपरीत जानि तुम जन की अंतर दै, बिच रहे लुकाने—१-२१७।

लुकानो—क्रि. स. [हि. लुकना] छिपाना।
क्रि. अ लुकना, छिपना।

लुकाय—क्रि. स. [हि. लुकाना] छिपाकर।
प्र०—चाहति लेन लुकाय - छिपा लेना चाहती है। उ.—मनो जलद को दामिनीगन चाहति लेन लुकाय—२२८४।

लुकार—संज्ञा स्त्री. [हि. लुक+आर] लपट, ज्वाला।

लुकारी—संज्ञा स्त्री [सं.] जलती लकड़ी या फूस।

लुकावत—क्रि. स. [हि. लुकाना] छिपाता है। उ.—(क) सूर स्याम यह सुनि मुसक्याने, अंचल मुखहि

लुकावत—१०-२२२। (ख) चाँपी पूछ लुकावत अपनी जुवतिनि कौ नहि सकत दिखाय—५५५।

लुकावै—क्रि. स. [हि. लुकाना] छिपाती है। उ.—सकुचि अग जल पैठि लुकावै—७९९।

लुकावैगी—क्रि. स. [हि लुकाना] छिपायेगी, प्रकट न करेगी। उ —मोहिं कहत नहिं, काहि कहैगी, कब लौ बातैं लुकावैगी—२१७७।

लुके—क्रि. अ. [हि लुकना] छिप गये। उ.—टूटत धनु नृप लुके जहाँ तहँ—९-२३।

लुकेठा—सज्ञा पु. [हिं लुक] जलती लकड़ी या फूस।

लुक्क—सज्ञा पु. [लुक] लपट, ज्वाला।

लुक्कायित—वि. [स.] लुका या छिपा हुआ।

लुगदी—सज्ञा स्त्री. [देश.] गीली वस्तु की पिंडी।

लुगरा—संज्ञा पु [हिं लूगा+डा] (१) कपड़ा। (२) फटा-पुराना कपड़ा, लत्ता। (३) छोटी चादर, ओढ़नी।

वि. [देश.] चुगली खानेवाला।

लुगरी—सज्ञा स्त्री. [हि. लुगरा] फटी धोती या ओढनी।

सज्ञा स्त्री. [देश.] चुगली।

लुगाई—सज्ञा स्त्री. [हि. लोग] (१) स्त्री। (२) पत्नी।

लुगी—सज्ञा स्त्री. [हिं. लूगा] (१) फटी पुरानी धोती या ओढ़नी। (२) लहँगे का चौड़ा किनारा।

लुग्गा—सज्ञा पु. [हि लूगा] (१) कपड़ा। (२) धोती।

लुचई—सज्ञा स्त्री. [हि. लुचुई] मैदे की पतली पूरी। उ.—लुचई ललित लापसी सोहै—२३२१।

लुचकना, लुचकनो—क्रि. स. [स. लुचन] छीनना।

लुचवाना, लुचवानो—क्रि. स. [स. लुचन] नोचवाना।

लुचुई—सज्ञा स्त्री. [स. रुचि, मा० लुचि] मैदे की पतली पूरी। उ.—(क) लुचुई लपसी सद्य जलेबी—१०-२२७। (ख) लुचुई लपसी घेवर खाजा—३९६।

लुच्चा—वि. [हि. लुचकना] (१) छीन-झपट कर ले जाने वाला। (२) दुराचारी, लफगा।

लुच्ची—संज्ञा स्त्री [हि. लुचुई] मैदे की पूरी।

वि. स्त्री. [हिं. लुच्चा] दुराचारिणी (स्त्री)।

लुटंत—सज्ञा स्त्री. [हिं. लूट] लूट।

लुटकना, लुटकनो—क्रि. अ. [हि. लटकना] इधर-उधर पड़ा होना।

लुटत—सज्ञा स्त्री. [हि. लूट] लूट।

लुटना, लुटनो—क्रि. अ. [स. लुट्] (१) लूट लिया जाना। (२) सर्वस्व खो जाना।

क्रि. अ. [हिं. लुठना] (१) लोटना। (२) लुढकना।

लुटयो, लुटयौ—क्रि. स. [हि. लुटाना] लुटा दिया। उ.—धर्म-सुधन लुटयौ—१-६४।

लुटाइ—क्रि स. [हिं. लुटाना] उदारतापूर्वक फेककर कि जो चाहे ले ले। उ.—कस को भँडार सब देत है लुटाइ कै—२६२८।

लुटाऊँ—क्रि. स [हिं लुटाना] उदारता पूर्वक (मुट्ठी भर-भरकर) बाँटूँ या वितरण करूँ। उ.—जो मोहन मेरे बस होवहि हीरा लाल लुटाऊँ—पृ. ३०६ (७६)।

लुटाए—क्रि स. [हि लुटाना] उदारतापूर्वक फेंके कि जो चाहे ले ले। उ.—रजक मारि हरि प्रथम ही नृप बसन लुटाए—२५७९।

लुटाना, लुटानो—क्रि. स. [हिं. लूटना] (१) लूट या छीन लेने देना। (२) बिना मूल्य के दे देना। (३) व्यर्थ फेंकना या व्यय करना। (४) मुट्ठी भर-भरकर फेंकना।

लुटायो, लुटायौ—क्रि. स. [हि. लुटाना] (१) दूसरे को लूटने या छीन लेने दिया, लुटा दिया। उ.—(क) कटक जात ही नगर ताको लुटायो—१० उ.-३५। (ख) काहू कौ दधि-दूध लुटायौ—१०-३४०।

लुटावत—क्रि. स. [हिं. लुटाना] (१) लुटाते या लूट लेने देते है। उ.—महर-महरि ब्रज-हाट लुटावत—१०-२२। (२) उदार होकर बांटते या वितरण करते है। उ.—अति रस-रासि लुटावत-लूटत—६८६।

लुटावन—सज्ञा पु [हि. लुटावना] लुटाने की क्रिया या भाव। उ —गोकुल हाट-बजार करत जु लुटावन रे—१०-२८।

लुटावना, लुटावनो—क्रि स. [हिं. लुटाना] (१) छीनने या लूटने देना। (२) बिना मूल्य देना। (३) व्यर्थ फेंकना या बरबाद करना। (४) उदारता से बाँटना।

लुटिया—सज्ञा स्त्री. [हि लोटा] छोटा लोटा।

लुटेरा—वि. [हि. लूटना] छीन या लूट लेनेवाला।

लुठना, लुठनो—क्रि. अ. [स लुठन] (१) (भूमि पर) लोटना। (२) लुढ़कना।

लुठाना, लुठानो—क्रि स. [हि. लुठना] (१) (भूमि पर) लोटाना। (२) लुढकाना।

लुठायो, लुठायौ—क्रि. स [हि लुठाना] लुढका दिया। उ—बालक अजौ अजान, न जानै केतिक दह्यौ लुठायौ - ३५६।

लुढ़कना, लुढ़कनो—क्रि. अ. [हि लुठना] (१) (समतल या ढालू सतह पर) गेंद की तरह ऊपर-नीचे होते हुए बढना। (२) गिर पड़ना।

लुढ़काना, लुढ़कानो-क्रि. स. [हि लुढकना] (१) (समतल या ढालू सतह से) इस तरह छोडना कि चक्कर खाते या ऊपर-नीचे होते आगे बढ़ जाय। (२) गिरा देना।

लुढ़त—क्रि. अ. [हि. लुढना] गिरता है। उ.—बरही मुकुट लुढ़त अवनी पर नाहिन निज भुज भरतु—२२५३।

लुढ़ना, लुढ़नो—क्रि. अ [हि लुढकना] (१) लुढकना। (२) गिरना।

लुढ़ाइ, लुढ़ाई—क्रि. स. [हि. लुढाना] ढरकाकर।
प्र०—दियौ लुढाई—लुढका दिया। उ —माखन खाइ खवायौ ग्वालनि जो उबरचौ सो दियौ लुढाई—१०-३०३।

लुढ़ाना, लुढ़ानो—क्रि. स. [हि लुढकाना] लुढ़काना।

लुढ़ाय—क्रि. स. [हि. लुढाना] लुढकाकर।
प्र० —देत लुढाय—लुढ़का देता है। उ.—बरजै न माखन खात कबहूँ दह्यौ देत लुढाय —२७५६।

लुतरा—वि. [देश.] (१) चुगलखोर। (२) दुष्ट।

लुत्थ—सज्ञा स्त्री. [हि. लोथ] लोथ।

लुत्फ़—सज्ञा पु [अ. लुत्फ] (१) मजा। (२) स्वाद।

लुनना, लुननो—क्रि. स. [स लवन] (१) फसल काटना। (२) दूर या नष्ट करना।

लुनाइ, लुनाई—सज्ञा स्त्री. [हि. लोना+आई] सुदरता। सज्ञा स्त्री. [हि. लुनना] फसल काटने की क्रिया, भाव या मजदूरी।

लुनिए, लुनिऐ—क्रि. स. [हि. लुनना] फसल काटिए। उ.—(क) जैसोइ बोइयै, तैसोइ लुनिऐ, कर्मन भोग अभागे—१-६१। (ख) जैसो बीज बोइए तैसो लुनिए—३३३१।

लुनेरा - वि [हि. लुनना] फसल काटनेवाला।

लुनैं—क्रि स. [हि. लुनना] (फसल) काटे। उ.—बालि छाँडि कै सूर हमारे अब नरवाई को लुनैं—३१५८।

लुन्यो, लुन्यौ—क्रि. स. [हि. लुनना] (फसल) काटी। उ.- सूर सुरपति सुन्यो बयो जैसो लुन्यो प्रभु कहा गुन्यो गिरि सहित बैहै—९४४।

लुपना, लुपनो—क्रि. अ. [स. लुप्त] छिप जाना।

लुप्त वि. [स] (१) गुप्त। (२) अदृश्य। (३) नष्ट।

लुबध, लुबुध—वि. [स. लुब्ध] मुग्ध, मोहित।

लुबधत, लुबुधत—क्रि. स. [हि. लुबुधना] मुग्ध होता है।

लुबधति, लुबुधति—क्रि. स. [हि लुबुधना] मुग्ध होती है। उ.—जैसे लुबधति कमलकोस मैं भ्रमरा की भ्रमरी—पृ. ३२८ (८२)।

लुबधना, लुबधनो, लुबुधना, लुबुधनो—क्रि. अ. [हि. लुबुध+ना] मुग्ध या मोहित होना।
क्रि स. मुग्ध या मोहित करना।

लुबधा, लुबुधा—वि. [स. लुब्ध] मुग्ध, आसक्त।
वि. [स. लोभ] लोभी।

लुबधीं, लुबुधीं—क्रि. अ. [हि. लुबुधना] मुग्ध या मोहित हुई। उ.—ब्रजललना देखति गिरिधर कौ। । लुबधीं स्याम सुंदर कौ—६४७।

लुबधी, लुबुधी—क्रि. अ [हि. लुबुधना] मुग्ध या मोहित हुई। उ.—हौ लुबधी मोहन-मुख-बैन—७४२।

लुबधियो, लुबधियौ, लुबुधियो, लुबुधियौ क्रि. अ. [हि. लुबुधना] मुग्ध या मोहित हुई। उ.—यहि ते जो नेकु लुबुधियो री—३३४५।

लुबध्यो, लुबध्यौ, लुबुध्यो, लुबुध्यौ क्रि अ. [हि. लुबुधना] मुग्ध या मोहित हुआ। उ. (क) लुबध्यौ स्वाद मीन आमिष ज्यौ—१-१०२। (ख) मनो मध्य खजन सुक बैठचो लुबध्यो बिंब बिचार—पृ. ३०७ (८४)।

लुब्ध—वि. [स.] (१) ललचाया या लुभाया हुआ। उ.—(क) अति रस-लुब्ध स्वान जूठनि ज्यौ—१-१११। (ख) इनहिं स्वाद जो लुब्ध सूर सोइ जानत चाखन

हारौ—१०-१३५। (ग) लालच-लुब्ध स्वान जूठनि ज्यौ—१-३२८। (२) मुग्ध, मोहित।

लुब्धक—संज्ञा पु. [स.] (१) लालच दिखाकर पशु-पक्षियों को पकड़नेवाला, बहेलिया, शिकारी। उ.—सूरदास प्रभु सो मेरी गति जनु लुब्धक कर मीन तरचो—८९१। (२) लोभ या लालच में फँसा हुआ। उ.—ते कहा जानैं पीर पराई लुब्धक अपने कामहिं—३०८५।

लुब्धना, लुब्धनो—क्रि अ. [हि. लुबुधना] मुग्ध होना।

लुब्धि—क्रि. अ. [हिं. लुब्धना] लुभाकर।

प्र०—लुब्धि परे—लुभा गये। उ—चपल नैन मृग मीन कुज जित अलि ज्यो लुब्धि परे—पृ. ३३४ (३१)।

लुब्धे—क्रि. अ [हि. लुब्धना] मुग्ध या मोहित हुए। उ.—नैन बिमुख जन देखे जात न लुब्धे अरुन अधर को—१५७१।

लुब्ध्यो, लुब्ध्यौ—क्रि. अ. [हि. लुब्धना] मुग्ध या मोहित हुआ। उ.—मन लुब्ध्यो हरि-रूप निहारि—१४१९।

लुभाइ—क्रि. अ. [हि लुभाना] रीझकर।

प्र०—रहे लुभाइ—रीझ गये, मुग्ध या मोहित हो गये। उ.—(क) अमृत अलि मनु पिवए आए, आइ रहे लुभाइ—३५२। (ख) कूबरी के कौन गुन पै रहे कान्ह लुभाइ।

लुभाईं—क्रि. अ. [हिं. लुभाना] रीझ गयीं, मुग्ध या मोहित हो गयी। उ—निरखि हरि रूप सो सब लुभाईं—१० उ०-३१।

लुभाई—क्रि. अ. [हि. लुभाना] रीझकर, रीझी।

प्र०-रहे लुभाई—रीझे, मुग्ध या मोहित हो गये। उ.—मोहिनी रूप धरि स्याम आए तहाँ देखि सुर-असुर रहे सब लुभाई—८-८।

लुभाए—क्रि. अ. [हिं. लुभाना] रीझे, मुग्ध या मोहित हुए। उ.—न ये देखि कै मोहिं लुभाए—८-८।

लुभाना—क्रि. अ. [हिं. लोभ + आना] (१) रीझना, मुग्ध या मोहित होना। (२) लालच या लोभ में पड़ना।

क्रि. स.—(१) रिझाना, मुग्ध या मोहित करना। (२) लोभ या लालच देना। (३) मोह या भ्रम में डालना।

लुभाने—वि. [हि. लुभाना] मुग्ध, मोहित। उ.—यह उपदेस देहु लै कुबिजहि जाके रूप लुभाने हो—३००५।

लुभानो—क्रि. अ. [हिं लोभ + आना] (१) रीझना, मुग्ध या मोहित होना (२) रीझा, मुग्ध हुआ। उ.—सूर स्याम यन तुमहिं लुभानो हरद चून रँग रोचन—१५१७। (३) लोभ या लालच में पड़ना।

क्रि. स. (१) रिझाना, मुग्ध या मोहित करना। (२) लोभ या लालच देना। (३) भ्रम या मोह में डालना।

लुभान्यो, लुभान्यौ—क्रि अ [हिं. लुभाना] लोभ या लालच में पड़ गया। उ—मन-मधुकर पद-कमल लुभान्यो—१४१७।

लुभाय—क्रि. स [हि. लुभाना] भ्रम में डालकर।

प्र०—देति लुभाय—सुध-बुध भुला देती है, मोह या भ्रम मे डाल देती है। उ.—सूर हरि की प्रबल माया देति मोहिं लुभाय।

लुभायो, लुभायौ—क्रि अ. [हि. लुभाना] मुग्ध या मोहित हो गया। उ.—इंद्रानी कौ देखि लुभायौ—६-७।

लुभौहों—वि. [हि. लुभाना + औहा] (१) लुभाने या मोहित करनेवाला। (२) लुब्ध या मोहित होनेवाला।

लुरकना, लुरकनो—क्रि अ. [स. लुलन] लटकना।

लुरका—संज्ञा पु [हि लुरकना] झुमका।

लुरकी—संज्ञा स्त्री [हि. लुरका] कान की बाली।

लुरना, लुरनो क्रि. अ [स लुलन] (१) लटकना, हिलना-डोलना। (२) झुक या टूट पड़ना। (३) एकाएक आ जाना। (४) रीझ या लुभा जाना।

लुरियाना, लुरियानो—क्रि अ. [हिं. लुरना] सप्रेम छूना या स्पर्श करना।

लुरी—संज्ञा स्त्री. [देश] हाल की ब्यायी गाय।

लुलना, लुलनो—क्रि. अ. [स. लुलन] हिलना-डोलना।

लुआर, लुवार—संज्ञा पु. [हि. लू] लू, लूक।

लुहना, लुहनो—क्रि. अ. [स. लुभन] लुभाना, रीझना।

लुहार—संज्ञा पुं. [प्रा० लोहार] लोहे की चीजे बनाने वाला।

लूँ—अव्य. [हि. लौ] (१) तक। (२) तुल्य।

लू—सज्ञा स्त्री. [स. लुक] गर्मी की तप्त वायु, लूक।

लूक—सज्ञा स्त्री. [स. लुक] (१) ज्वाला, लपट। (२) जलती हुई लकड़ी। (३) गर्मी की तप्त वायु, लू। (४) टूटा तारा, उल्का।

लूकट—सज्ञा पु. [हि. लुआठा] जलती हुई लकडी।

लूकना, लूकनो—क्रि. स. [हि. लूक + ना] आग लगाना।

क्रि. अ. [हि. लुकना] छिपना, लुकना।

लूका—सज्ञा पु. [हि. लूक] (१) ज्वाला, लपट। (२) जलती हुई लकड़ी।

मुहा० — लूका लगाना—(१) आग लगाना। (२) झगड़ा कराना। मुँह मे लूका लगाना मुँह में आग लगाना (गाली)।

लूकी—संज्ञा स्त्री. [हि. लूका] चिनगारी।

लूखा, लूखे—वि. [हि रूखा] (१) जिसमें चिकनाहट न हो, रूखा। (२) अप्रसन्न। उ.—कीधौ हमसो कहुँ तुम लूखे हो—२१४१।

लूगड़—सज्ञा पु. [हि. लूगा] (१) वस्त्र, अबर। (२) ओढ़नी।

लूगा—सज्ञा पु. [देश.] (१) वस्त्र। (२) धोती।

लूट—सज्ञा स्त्री [हि. लूटना] (१) बलपूर्वक छीनना। (२) बल से छीनी गयी संपत्ति या माल।

लूटक—सज्ञा पु. [हि. लूट] (१) लूट-मार करनेवाला, डाकू, लुटेरा। (२) कांति या शोभा में बढ जाने-वाला।

लूट-खसोट—सज्ञा स्त्री. [हि. लूट + खसोट] माल लूटना और छीनना।

लूटत—क्रि. स. [हि. लूटना] (१) अन्याय या अनुचित रीति से हरण करता है। उ.—ऐसे अध, जानि निधि लूटत, परतिय सँग लपटात—२-२४। (२) (सुख या आनंद का) भोग करता है। उ.—अति रस रासि लुटावत लूटत लालचि लाल सभागे—६८६।

लूटति—क्रि. स. [हि. लूटना] (सुख या आनंद) भोगती है। उ.—बल मोहन दोउ जेवत रुचि सौ सुख लूटति नँदरानी—४४२।

लूटन—सज्ञा पु [हि. लूटन] लूटने की क्रिया या भाव। उ.—तौ कत कलि-कलमष लूटन कौ, मेरी देह धरी —१-२११।

लूटना—क्रि. स. [स. लुट्] (१) भय दिखाकर या बल पूर्वक छीन-झपट लेना। (२) धोखे से या अन्याय पूर्वक धन या माल हरण करना। (३) उचित से बहुत अधिक मूल्य लेना। (४) नष्ट करना। (५) मुग्ध या मोहित करना। (६) (सुख या आनद) भोगना।

लूटनि - सज्ञा स्त्री. [हि. लूटना] लूटने की क्रिया या भाव। उ.—धनि यह अरस-परस छबि लूटनि महा चतुर मुख भोरे भोरी—पृ ३१० (४)।

लूटनो—क्रि स. [स लुट्] लूटना।

लूटहु—क्रि स. [हि लूटना] (सुख या आनंद का) भोग करो। उ.—जे दिन गए सु ते गए अब सुख लूटहु मात—१९२५।

लूटा—वि [हि लूट] लुटेरा। उ.—लोभी, लौद, मुकरवा, झगरू, बडौ पढ़ैलौ, लूटा—१-१८६।

लूटि—सज्ञा स्त्री. [हि. लूट] लूटने की क्रिया या भाव, लूट। उ.—(क) गए कचुकि बँद टूटि लूटि हिरदय सो पाई। (ख) परदा सूर बहुत दिन चलतो दुहुँनि फबती लूटि—२७०६।

क्रि. स. [हि. लूटना] लूटकर। उ.—लूटि लूटि दधि खात - सारा ८६४।

प्र०—लूटि लयौ—बलात अपहरण कर लिया। उ.— दगाबाज कुतवाल काम-रिपु सरबस लूटि लयौ —१-६४।

लूटीं—क्रि. स. [हि. लूटना] माल आदि का अपहरण किया। उ.—बृ दाबन गोबर्धन कुजनि लूटी नारि पराई—सारा. ७४०।

लूटैं—क्रि स. [हि. लूटना] (सुख या आनंद) भोगती हैं। उ.—कौतुक निरखि सखी सुख लूटैं—२-२५।

लूटौ—क्रि. स. [हि लूटना] धन-संपत्ति का अपहरण कर लिया। उ.—धर्म-जमानत मिल्यौ न चाहै, तातैं ठाकुर लूटौ—१-१८५।

लूट्यो, लूट्यौ—क्रि स. [हिं. लूटना] (१) भ्रम या मोह में डालकर नष्ट कर दिया। उ.—इहि माया सब लोगनि लूट्यौ—१-२८४। (२) (सुख या आनंद) भोगा। उ—सूर स्याम निसि को सुख लूट्यो—१९५७।

लूता—सज्ञा पु. [हिं लूका] लुआठा।
सज्ञा पु. [हिं. लूट] लुटेरा।

लूती—सज्ञा स्त्री. [हिं. लूका] जलती हुई लकड़ी।
सज्ञा स्त्री. [स.] मकड़ी।

लूते—सज्ञा पुं. सवि. [हि. लूता] लुआठे से। उ.—बिरह-समुद्र सुखाय कौन बिधि किरचक जोग अगिन के लूते—३२०५।

लून—सज्ञा पु [हिं. लोन] नमक, लवण।

लूनना, लूननो—क्रि. स. [हि लुनना] (१) फसल काटना। (२) दूर या नष्ट करना।

लूम सज्ञा पु. [स.] (१) (पशु की) पूँछ, दुम। (२) चक्कर, फेरा।

लूमड़—वि. [देश] जवान, सयाना (व्यंग्य)।

लूमना, लूमनो—क्रि अ. [स. लबन] लटक कर झूलना या हिलना-डोलना।

लूमर—वि [हि. लूमड] सयाना, लबा तड़ंगा।

लूमरी—वि [हि लूमर] लबी-तड़गी (युवती)।

लूरना, लूरनो—क्रि अ. [हि. लुरना] (१) लटककर हिलना-डोलना। (२) झुक या टूट पड़ना। (३) सहसा आ जाना या उपस्थित हो जाना।

लूला—वि. [स लून] (१) बिना हाथ का, लुजा। (२) बेकाम, असमर्थ।

लूलू—वि. [देश.] उजड्ड, मूर्ख।

लूसना, लूसनो—क्रि स. [देश.] नाश करना।

लूह, लूहर—सज्ञा स्त्री. [हिं. लू] लूक, लू।

लेंगा—सज्ञा पु. [हि. लहँगा] लहँगा।

लेंहड़ा—सज्ञा पु. [देश] दल, झुड, समूह।

ले—अव्य. [हि. लेना लेकर] आरभ होकर।
अव्य. [हिं. लग, लगि] तक, पर्यंत।
क्रि. स. [हि. लेना] (१) ग्रहण कर। (२) खरीदकर।
मुहा०—ले देना—खरीद या मांगकर देना।
(३) प्राप्त, एकत्र या सचय करके।
मुहा०—ले उडना—(१) प्राप्त या एकत्र करके भाग जाना। (२) किसी बात या प्रसंग का सकेत पाकर बहुत कुछ कह-सुन डालना या अदाज भिड़ाने लगना। ले चलना—थामकर, उठाकर या साथ करके चलना। ले डालना—(१) चौपट या नष्ट करना। (२) हराना। (३) समाप्त करना, निबटाना। ले-दे करना—(१) इज्जत या तकरार करना। (२) बहुत कोशिश करना। ले देकर—(१) पाने और देने का हिसाब करके। (२) सब मिलाकर, जोड-जाड करके। (३) बड़ी कठिनता से। ले निकलना—प्राप्त या एकत्र करके भाग जाना। ले पडना अपने साथ जमीन पर गिरा देना। ले पालना—गोद लेना। ले बैठना—(१) बोझ से डूब जाना। (२) खराब या नष्ट करना। (३) कार्य-व्यापार का नष्ट होकर पूँजी समाप्त कर देना। ले भागना—(१) प्राप्त या ग्रहण करके भाग जाना। (२) थोड़ा सकेत या ज्ञान पाकर ही विषय-विशेष में उन्नति कर लेना। ले मरना—अपने साथ ही नष्ट करना।
सम्बोधन—(१) जैसी तेरी इच्छा है, वैसा ही होगा। (२) जो तू नही मानता (मानती) तो मैं यहाँ तक करता (करती) हूँ। (३) देख, कैसा मजा चखा या (बुरा) फल मिला (व्यंग्य या आक्षेप)।

लेइ—अव्य. [हिं. लग, लगि] तक, पर्यंत।
क्रि. स. [हिं. लेना] लेकर।
प्र०—लेइ जिवाइ—जीवित कर लेगा। उ.—जौ यह सजीवनि पढ़ि जाय, तौ हम सत्रुनि लेइ जिवाइ—९-१७३।

लेई—सज्ञा स्त्री. [स. लेही] (१) लपसी। (२) आटे या मैदा का पका हुआ लसदार घोल।

लेउ—क्रि. स. [हिं लेना] लो, ग्रहण करो। उ.—जो भावै लेउ आनी—१०-२०८।

लेउगे—क्रि. स. [हिं. लेना] उच्चरित करोगे, कहोगे, बताओगे। उ.- अब तुम काकी नाउँ लेउगे, नाहिंन कोऊ साथ—१०-२७९।

लेऊ—वि. [हि. लेना] लेने वाला।
लेख—सज्ञा पु [स] (१) लिपि। (२) लिखी हुई बात। (३) लिखावट। (४) लेखा।
वि. [स. लेख्य] लिखने या लेखा करने योग्य।
सज्ञा स्त्री. [हि. लीक] पक्की बात।
लेखक—सज्ञा पु. [स] (१) लिपिकार। (२) रचयिता।
लेखत—क्रि. स. [हि लेखना] सोचता-विचारता है। उ—बडी बार भई कोऊ न आई सुर स्याम मन लेखत—८४१।
लेखन—संज्ञा पु. [स] (१) लिखने का कार्य, भाव या विद्या। (३) चित्र खींचने का कार्य, भाव या कला। जल बिनु तरँग भीति बिन लेखन बिन चेतहिं चतुराई —३३१७। (३) हिसाब या लेखा लगाना।
लेखनहार, लेखनहारा—वि. [हि. लिखना+हार] (१) लिखनेवाला। (२) चित्र खीचनेवाला।
लेखना—क्रि. स. [स. लेखन] (१) लिखना। (२) चित्र बनाना। (३) हिसाब या लेखा लगाना।
मुहा०—लेखना-जोखना—(१) ठीक ठीक अदाज लगाना। (२) जाँच-पड़ताल करना।
(४) सोचना, विचारना।
लेखनी—सज्ञा स्त्री. [स.] कलम, लिखनी।
लेखनो—क्रि. स. [स. लेखन] (१) लिखना। (२)सोचना।
लेखा—संज्ञा पु [हिं. लिखना] (१) हिसाब-किताब। उ.—(क) अधिकारी जम लेखा माँगै—१-१८५। (२) आय व्यय का विवरण। उ.—जमा खरच नीकै करि राखै, लेखा समुझि बतावै—१-१४२। (३) ठीक ठीक अंदाज। (४) अनुमान।
सज्ञा स्त्री. [स.] (१) लिखावट। (२) रेखा।
लेखिका—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) लिखनेवाली। (२) रचना करनेवाली।
लेखिनी—संज्ञा स्त्री. [स. लेखनी] कलम। उ.—सूर तरुवर की साख लेखिनी लिखत सारदा हारै—१-१८३।
लेखी—क्रि. स. [हि. लेखना] मानी, ठहरायी, समझी। उ.—जीवनि-आस प्रबल स्नुति लेखी—१-२८४।
लेखैं—सज्ञा पु. सवि. [हिं. लेखा] विचार, समझ।
मुहा०—उनही के लेखैं—उन्ही के अनुसार। उ.—कृपा सिंधु उन्ही के लेखै मम लज्जा निरबहिऐ—१-११२।
लेखो, लेखौ—सज्ञा पु. [हि लेखा] हिसाब, गणना। उ.—(क) लेखौ करत लाख ही निकसत को गनि सकत अपार—१-१९६। (ख) बाढ़ै गो सुत गाइ दूध दधि को कहा लेखौ—९०६।
लेख्य—वि [स.] लिखने योग्य।
लेख्यो, लेख्यौ—क्रि. स. [हि. लेखना] समझा, माना। उ.—पीतांबर अरु स्याम जलद बपु निरखि सुफल दिन लेख्यो—सारा. ३६६।
लेजर, लेजुरि, लेजुरी—सज्ञा स्त्री. [स. रज्जु, माग० प्रा० लेज्जु] (१) डोरी। (२) कुएँ से पानी खीचने की रस्सी या डोरी।
लेटना, लेटनो—क्रि. अ. [हि. लोटना] (१) पौढ़ना, लोटना। (२) झुककर गिरना। (३) मर जाना।
लेटाना, लेटानो—क्रि स. [हि. लेटना] (१) लेटने को प्रवृत्त करना। (२) मार डालना।
लेत—क्रि स. [हि. लेना] (१) लेता है। उ—सो रस है मोहूँ कौं दुरलभ तातैं लेत सवाद—१०-६४। (२) उच्चारण करता है। उ.—दनुज-देव-पसु पच्छी को तू नाम लेत रघुराइ—९-८३। (३) पान करता है। उ.—इच्छा सौ मकरद लेत मनु अति गोलक के बेष री—१०-१३६।
लेदी—सज्ञा स्त्री. [देश.] एक छोटी चिड़िया।
लेन—सज्ञा पु. [हिं. लेना] (१) लेने की क्रिया या भाव। उ.—देवकि उर अवतार लेन कह्यौ—१०-८५। (२) लहना, पावना, बाकी।
मुहा०—कछु लेन न देन मे—कोई सबध या प्रयोजन न होना। उ.—हम कछु लेन न देन मै, ये बीर तिहारे—१-२८३।
लेन-देन—सज्ञा पु. [हिं लेना+देना] आदान-प्रदान।
लेनहार, लेनहारा—वि. [हिं. लेना+हार] लेनेवाला।
लेना—क्रि. स [हिं. लहना] (१) प्राप्त या ग्रहण करना। (२) थामना, पकडना। (३) खरीदना। (४) जीतना। (५) उधार करना। (६) काम पूरा

करना। (७) गोद में थामना। (८) स्वागत या अगवानी करना। (९) पहुँचना। (१०) कार्य-भार या दायित्व ग्रहण करना। (११) पीना, पान करना। (१२) धारण या अंगीकार करना। (१३) काटकर अलग रखना। (१४) उपहास से लज्जित करना।

मुहा०—आड़े हाथ (हाथो) लेना—व्यंग्य या भर्त्सना द्वारा लज्जित करना।

(१५) एकत्र या संचय करना।

मुहा०—लेना-देना—रुपया उधार देने-लेने का व्यवसाय। लेना-देना होना—मतलब या सरोकार होना। लेना एक न देना दो—मतलब या सरोकार न होना।

लेनिहार, लेनिहारा—वि. [हिं. लेना+हार] लेनेवाला।

लेने—सज्ञा पु. [हि. लेना] पाने, ग्रहण या संचय करने की क्रिया या भाव।

मुहा०—लेने के देने पड़ना—(१) लाभ के बदले हानि होना। (२) कठिन समस्या या विपत्ति का पड़ना।

लेनो—क्रि. स. [हि. लेना] लेना।

लेप—सज्ञा पु. [स.] (१) गाढी गीली वस्तु। (२) उस वस्तु की किसी वस्तु या शरीर के अग-विशेष पर फैलायी गयी पतली तह। उ.—(क) कुमकुम कौ लेप मेटि, काजर मुख लाऊँ—१-१६६। (ख) मुख दधि लेप किए १०-९९। (ग) लिए चदन बहुरि आनि कुबिजा मिली स्याम-अँग लेप कीयो बनाई—२५८४।

लपत—क्रि. स [हि लेपना] पोतता, मलता या चुपड़ता है। उ.—लेपत देह दही—१०-२९१।

लेपन—सज्ञा पु. [स.] (१) लेप की तह चढ़ाने की क्रिया या भाव। उ.—खर कौ कहा अरगजा-लेपन—१-३३२। (२) कोई भी गीली वस्तु पोतने या लगाने की क्रिया या भाव।

लेपना, लेपनो—क्रि. स. [स. लेपन] (१) लेप की तह चढाना। (२) कोई गीली वस्तु पोतना या लगाना।

लेरुवा—सज्ञा पुं. [स. लेह] बछड़ा।

लेलिहान—सज्ञा पु. [स.] सांप, सर्प।

वि (१) बार-बार चाटने या चखने वाला। (२) ललचाया या लुभाया हुआ।

लेव—सज्ञा पु. [स. लेप्य] (१) लेप। (२) मिट्टी आदि का गाढा घोल। (३) दीवार पर पोतने का गिलावा।

मुहा०—लेव चढना—चरबी बढ़ना, मोटा होना।

क्रि. स. [हि लेना] (१) लो, ग्रहण करो। (२) खरीद लो।

लवा–सज्ञा पु. [स. लेप्य] (१) लेप। (२) मिट्टी आदि का गाढा घोल। (३) दीवार पर पोतने का गिलावा।

वि. [हि. लेना] लेनेवाला।

यौ०—लेवा-दई, लेवादेई—लेनदेन, आदान-प्रदान। उ.—लेवादई (लेवादेई) बराबर मे है, कौन रक को भूप—३१८२।

लेवाल—वि. [हि. लेना+वाला] लेने या खरीदनेवाला।

लश—सज्ञा पु. [स.] (१) अणु। (२) सूक्ष्मता। (३) चिह्न। (४) लगाव, सबध।

वि. थोडा, अल्प।

लेष—सज्ञा पु. [स. लेश] लेश।

सज्ञा पु. [स. लेख] लेख।

लेषना—क्रि. स. [हि लखना] देखना, ताड़ लेना।

क्रि. स. [हि. लिखना] लिखना।

लेषनी, लेषिनी—सज्ञा स्त्री. [स. लेखनी] कलम।

लेषे—सज्ञा पु. [हि. लेखे] अनुमान में, समझ में।

लेस—वि. [स लेश] (१) थोड़ा, अल्प। (२) तुच्छ, निकृष्ट उ.—हरि को भजन करौ सबही मिलि और जगत सब लेस।

सज्ञा पु. अल्पाश, चिह्न। उ. –मोह-निशा कौ लेस रह्यौ नहि—२-३३।

सज्ञा पु [हि लासा] चस, चेप।

लेसदार—वि. [हि. लेस+फा. दार] लसीला, लसदार, चिपचिपा।

लेसना, लेसनो—क्रि. स. [स. लेश्या] जलाना।

क्रि स. [हि. लेस, लस] (१) लगाना, पोतना। (२) चिपकाना, सटाना। (३) चुगली खाना। (४) उत्तेजित करना।

लह—सज्ञा पु [स.] गाढा घोल, अवलेह ।

क्रि. स. [हिं. लेना] लेता है ।

लेहन—सज्ञा पु [स. लेहक] चखने या चाटने की क्रिया या भाव । उ —अस्तुति कर मन हरष बढ़ायो लेहन जीभ कटाय—सारा १३० ।

लेहना, लेहनो—सज्ञा पु [हि. लहना] (१) धन जो वसूल करना हो । (२) धन जो मिलने वाला हो । (३) तकदीर, भाग्य ।

क्रि स पाना, प्राप्त करना ।

क्रि. स (१) फसल काटना । (२) छीलना, कतरना ।

लेहि—क्रि. स. [हि लेना] लेते हैं । उ.—अमृत प्याइ तिहि लेहि जिवाइ—७-७ ।

लेहिगी—क्रि. स. [हि. लेना] लेंगी, वसूल करेगी । उ. —मोहन गए आजु तुभ जाहु, दाँव हम लेहिगी हो—२४१६ ।

लेहि—क्रि. स. [हि. लेना] ले, ग्रहण या प्राप्त कर ।

प्र०—लेहि गाइ—गा ले, गुणगान कर ले । उ.—दिन दस लेहि गोबिंद गाइ—१-३१३ ।

लेहु—क्रि. स. [हि. लेना] (१) लो, प्राप्त या ग्रहण करो । उ.—(क) जज्ञ के हेतु अस्व यह लेहु—९-९ । (ख) लेहु मातु सहदानि मुद्रिका—९-८३ । (२) पकड़ो, रोको, थामो । उ.—लेहु लेहु सब करत बदिजन—१० उ-१८ ।

लेहुगे—क्रि. स. [हि. लेना] लोगे ।

प्र०—टेरि लेहुगे—बुला लोगे, पुकार लोगे । उ.—सोवत मोकौ टेरि लेहुगे—४१५ ।

लेहैं—क्रि स. [हि. लेना] लेंगे । उ.—सब लेहै बरिआई—१-३ ।

लेहौ—क्रि. स [हि. लेना] पाओगे, प्राप्त करोगे । उ. —चरन-रेनु सिर धरि गोपिनि की तुमहूँ अभय-पद लेहौ—सारा. ५४८ ।

लेह्य—वि. [स.] जो चाटा जा सके ।

लैंगिक—सज्ञा पु. [स.] दर्शन में अनुमान प्रमाण ।

वि.—लिंग-संबधी ।

लै—अव्य. [हिं. लग, लगि] तक, पर्यंत ।

क्रि. स. [हि. लेना] (१) लेकर, ग्रहण करके, अपना कर । उ —(क) लै लै ते हथियार आपने सानै धराए त्यो—१-१५१ । (ख) कचन लै ज्यौ माटी तजै —७-२ । (ग) बहुरि कर लै गदा असुर धायौ—७-६ । (घ) तृन दसननि लै मिलि दसकधर—९-११४ ।

प्र०—राखि लै—रक्षा कर ले, सहायता कर दे । उ —सूर हरि की सरन आयौ, राखि लै भगवान—१-२३५ । लै जाइ—साथ ले जाता । उ - जहँ लै जाइ तहाँ वह जाइ—७-७ । ल गयौ—ले गया । उ. —कामधेनु जमदग्नि की लै गयौ नृपति छिनाय—९-१४ । लै जातौ—साथ ले जाता । उ.—रावन मारि तुम्है लै जातौ—९-८८ ।

(२) पीकर, पान करके । उ.—लै चरनोदक निज ब्रत साध्यौ—९-५ । (३) उच्चारण करके । उ.—सजन प्रीतम नाम लै लै दै परस्पर गारि—१०-२६ ।

लैकै—क्रि. स. [हि लेना] लेकर । उ. गहि बहियाँ लैकै जैहौ—१०-२७४ ।

लैन—सज्ञा पु. [हि. लेना] (१) लेना, लेने के लिए । उ.—(क) कोऊ धाई जल लैन—७४९ । (ख) आए मधुकर मधु ही लैन—२०८७ । (२) अपनाने या हण करने को । उ. द्वादस बर्ष सेए निसिबासर, तब सकर भाषी है लैन—९-१२ ।

मुहा०—लैन न देन—न लेना न देना, कोई सरोकार, मतलब या सबंध नही । उ.—(क) चलत कहाँ मन और पुरी तन, जहाँ कछु लैन न दैन—४९१ । (ख) ए सीधे नहिं टरत वहाँ ते, मोसौ लैन न दैन—पृ. ३२३ (१८) ।

लैनु—सज्ञा पु [हि. लेना] लेने (को) ।

प्र०—सुख लैनु—सुख भोगने को । उ.—सूर स्याम निज धाम बिसारत आवत यह सुख लैनु—४४८ ।

लैया—सज्ञा पु. [देश.] अगहनी धान ।

सज्ञा स्त्री. भुने हुए धान का लावा ।

क्रि. स. [हि. लाना] (१) लगा लिया ।

प्र०—उर लैया —छाती से लगा लिया । उ.—पाछै नद सुनत हे ठाढ़े, हँसत हँसत उर लैयौ—१०-२१७ ।

(२) लेकर, लगाकर। उ —हौं पय पियत पतूखिनि लैया—१०-३३५।

लैरू—सज्ञा पु. [देश] (१) बछड़ा। (२) बच्चा।

लैस—सज्ञा पु. [देश] नुकीली नोक का बाण।

लैहीं—क्रि स. [हिं लेना] लेते हैं, हरण करते हैं। उ.—ऐसनि कौ बल वै सब लैही—५२१।

लैहै—क्रि. स. [हिं. लेना] ले लेंगे, अधिकार कर लेंगे। उ —लैहै लक बीस भुज मानी—९-११६।

लैहौ—क्रि स. [हि. लेना] (१) प्राप्त करूँगा। उ — जीते जगत माहि जस लैहौ – ६-५। (२) (गोद आदि में) लूँगा। उ —इहि आँगन गोपाल लाल को कबहुँक कनियाँ लैहौ।

लैहौ—क्रि स. [हिं. लेना] (१) (चित्त या ध्यान) लगाओगे। उ.– अजहूँ जौ हरि-पद चित लैहौ — ४-९। (२) पाओगे, प्राप्त करोगे। उ.—जगत मे कहा उपहास लैहौ—२६०५।

लौं—अव्य. [हि. लौ] (१) तक। (२) तुल्य।

लौंदा—सज्ञा पु. [स. लुठन] (१) गीले पदार्थ का डले की तरह बँधा कुछ अश। (२) सुस्त और आलसी व्यक्ति (व्यग्य)।

लो—अव्य [हि. लेना] ध्यान आकर्षित करने का सबोधक एक अव्यय।

लोइ—सज्ञा पु. [स. लोक, प्रा. लोओ या लोयो] लोग। उ.—(क) ताहि असाधु कहत सब लोइ—३-१३। (ख) अपजस करिहै लोइ—९-९९। (ग) ब्रजवासी मोहे सब लोइ—१०-२१०।

सज्ञा स्त्री. [स रोचि, प्रा लोई] (१) प्रभा, दीप्ति। (२) लौ, ज्वाला।

लोइन—सज्ञा पु [स लावण्य] सलोनापन।

सज्ञा पु. [स. लोचन] नेत्र, आँख।

लोई—सज्ञा स्त्री. [स. लोप्ती, प्रा० लोबी] गुँधे हुए आँटे की वह गोली जो रोटी बेलने के पहले तोड़ी जाती है।

सज्ञा स्त्री. [स. लोमीय] पतले बढ़िया ऊन का बना कम्बल जो प्राय. सफेद होता है।

संज्ञा पु. [स. लोक, प्रा० लोओ, या लोयौ] लोग। उ.—(क) मारग मैं अटके सब लोई—१०३६। (ख) मात-पिता को डर को मानै, मानै मजन कुटुंब सब लोई—१२३०।

लोकजन—सज्ञा पु [हिं. लुकना+अजन] वह (कल्पित) अजन जिसे लगाकर मनुष्य का अदृश्य हो जाना कहा जाता है।

लोकंदा – सज्ञा पु. [देश] विवाह में कन्या के साथ दासी भेजने की प्रथा या कार्य।

लोकंदी—सज्ञा स्त्री. [देश] दासी जो किसी कन्या के डोले के साथ भेजी जाय।

लोक –सज्ञा पु [स.] (१) मनुष्य द्वारा कल्पित स्थान जैसे दो लोक—इहलोक और प लोक; तीन लोक—पृथ्वी, अतरिक्ष और द्युलोक या भू, भुव, स्व ; चौदह लोक—भूलोक, भुवर्लोक, स्वर्लोक, महर्लोक, जनर्लोक, तपलोक और सत्य लोक के साथ-साथ सात पाताल–अतल, नितल, वितल, गभस्तिमान्, तल, सुतल और पाताल (अथवा अतल, वितल, सुतल, तलातल, महातल, रसातल और पाताल अथवा अतल, वितल, नितल, गभस्ति-मान्, महातल, सुतल और पाताल)। उ –(क) दुहुँ लोक सुखकरन—१-९०। (ख) सो मेरे इहिं लोक बसौ जनि—७-४। (ग) नृप जग करि तिहिं लोक सिधायौ—९-२। (घ) सुन्दरता तिहुँ लोक की जसुमति ब्रज आनी—४७५। (२) संसार, जगत। उ.– जीव न तजै स्वभाव जीव कौ लोक-बिदित दृढताई—१-२०७। (३) निवास, स्थान। उ.—सूरदास प्रभु दरस-परस करि ततछन हरि कै लोक सिधायौ—९-६६। (४) प्रदेश। (५) लोग, जन। (६) समाज। उ.—नँदनदन के नेह मेह जिन लोक लीक लोपी। (७) प्राणी।

लोक-ककट—वि [स.] दुखदायी, कष्टदायी।

लोकगाथा—सज्ञा स्त्री. [स.] जनसाधारण में प्रचलित कहानियाँ।

लोकगीत—सज्ञा पु. [स.] जनसाधारण मे प्रचलित गीत।

लोकधुनि, लोकध्वनि—सज्ञा स्त्री. [स. लोकध्वनि] अफवाह, जन-रव।

लोकटी—सज्ञा स्त्री. [देश.] लोमड़ी।

लोकना – क्रि स. [स लोपन] (१) गिरती हुई चीज को बीच में ही हाथो से पकड लेना। (२) बीच मे ही ले लेना।

लोकनाथ—सज्ञा पु [स] (१) ब्रह्मा। (२) लोकपाल। (३) परब्रह्म।

लोकनायक—सज्ञा पु [स] (१) सकल लोक के स्वामी, परब्रह्म। उ —सकल लोकनायक सुखदायक, अजन, जन्म धरि आयौ—१०-४। (२) ब्रह्मा। (३) लोकपाल।

लोकनो—क्रि स. [स लोपन] (१) गिरती हुई चीज को बीच मे ही हाथों से पकड लेना। (२) बीच मे ही ले लेना।

लोकप, लोकपति—सज्ञा पु [स] (१) लोक का पालन-कर्ता या स्वामी, परब्रह्म। उ.—तुम प्रभु अजित अनादि लोकपति, हौ अजान मतिहीन—१-१८१। (२) ब्रह्मा। (३) राजा। (४) लोकपाल।

लोकपाल—सज्ञा पु. [स.] दिक्पाल जो आठ है—पूर्व का इंद्र, दक्षिण-पूर्व का अग्नि, दक्षिण का यम, दक्षिण-पश्चिम का सूर्य या निर्ऋति, पश्चिम का वरुण, उत्तर-पश्चिम का वायु, उत्तर का कुबेर और उत्तर-पूर्व का सोम या ईशानी अथवा पृथ्वी।

लोकपितामह—सज्ञा पु [स.] ब्रह्मा।

लोकप्रवाद—सज्ञा पु. [स.] अफवाह।

लोक-रव—संज्ञा पु. [स.] अफवाह, प्रवाद।

लोकप्रिय—वि. [स] (१) जिससे सब प्रेम करे। (२) जो सबको रुचे या प्रिय लगे।

लोकप्रियता—सज्ञा स्त्री. [स.] लोकप्रिय होने का भाव या अवस्था।

लोकरा—सज्ञा पु. [देश.] चिथड़ा, लत्ता।

लोक-लाज—सज्ञा स्त्री. [हिं. लोक+लाज] लोक-मर्यादा। उ.—लोक-लाज कुल-कानि भुलानी, लुबधी स्याम सुदर कौ—६७४।

लोक-लीक—सज्ञा स्त्री [हि. लोक + लीक] लोक या संसार की मर्यादा।

लोक-लोकन—सज्ञा पु. बहु. [हिं. लोक+लोक] समस्त या अनेक लोको या भुवनो (मे)। उ.—लोक-लोकन विदित २६१८।

लोकवार्ता—सज्ञा स्त्री. [स] जन-साधारण में प्रचलित विश्वासो, धारणाओ, प्रथाओ आदि का कथन, विचार या विवेचन।

लोकविश्रुत—वि [स] ससार मे प्रसिद्ध।

लोकश्रुति—सज्ञा स्त्री [स] अफवाह, जनश्रुति।

लोकसग्रह—सज्ञा पु [स] (१) सबको प्रसन्न करना। (२) सबका कल्याण चाहना।

लोकातर—सज्ञा पु [स] वह लोक जहाँ जीव का मरने के उपरात जाना माना जाता है।

लोकांतरित—वि [स.] (१) जो दूसरे लोक को चला गया हो। (२) मृत, स्वर्गीय।

लोकाचार—सज्ञा पु [स.] ससार का व्यवहार।

लोकाट—सज्ञा पु [चीनी लु + क्यू] एक पौधा या उसका पीला फल।

लोकाधिप—सज्ञा पु. [स.] (१) परब्रह्म। (२) ब्रह्मा। (३) लोकपाल।

लोकाना, लोकानो—क्रि. स. [हिं. लोकना] उछालना।

लोकपवाद—सज्ञा पु. [स.] जनसाधारण मे फैलनेवाली बदनामी या निंदा।

लोकायत—सज्ञा पु [स] (१) वह जो परलोक को न मानता हो। (२) चार्वाक का दर्शन जिसमें परलोक का खडन है।

लोकेश, लोकेस—सज्ञा पु. [स. लोक+ईश] (१) परब्रह्म। (२) ब्रह्मा। उ.—शेष महेश लोकेश शुक-दिक नारदादि मुनि की है स्वामिनी—पृ. ३४५ (४०)। (३) लोकपाल।

लोकेश्वर, लोकेस्वर—सज्ञा पु. [स. लोक+ईश्वर] (१) परब्रह्म। (२) ब्रह्मा। उ —बालक बच्छ हरे लोकेस्वर बार बार टेरत लै नाउँ—४३८। (३) लोकपाल।

लोकैषणा—सज्ञा स्त्री [स.] (१) सासारिक सुख-वैभव की कामना। (२) स्वर्गीय सुख-वैभव की कामना।

लोकोक्ति—सज्ञा स्त्री. [सं.] कहावत।

लोकोत्तर—वि [सं.] जो इस लोक के पदार्थों से बढ़कर हो, अत्यत अद्भुत ।

लोग—सज्ञा पु. [स लोक] आदमी, मनुष्य, जन । उ.—(क) सूरदास आपुहिं समुझावै लोग बुरौ जिनि मानौ—१-६३ । (ख) झूठै लोग लगावत मोकौ—१०-२५३ । (ग) अब ये झूठहु बोलत लोग—१०-२९२ ।

लोगाइ, लोगाई—सज्ञा स्त्री. [हि. लोक] (१) स्त्री, नारी । उ.—पुनि जुरि दौ दीनी पुर लाइ, जरन लगे पुर लोग-लोगाइ (लुगाइ)—४-१२ । (२) पत्नी ।

लोच—सज्ञा स्त्री. पु. [हि लचक] (१) लचलचाहट, लचक । (२) कोमलता, सुकुमारता । (३) अच्छी रीति या ढग ।

सज्ञा पुं [स रुचि] अभिलाषा

सज्ञा पु. [स. लुचन] जैन-साधु का सिर के बाल नोचना ।

लोचन—सज्ञा पु. [स.] आँख, नयन, नेत्र । उ—मोह मगन लोचन जल-धारा बिपति न हृदय समाइ—९-५२ ।

मुहा०—लोचन भर आना—आँखो में आँसू आ जाना । लोचन भरि-भरि—आँखो में आँसू भरकर । उ.—(क) लोचत भरि भरि दोऊ माता कनछेदन देखत जिय मुरकी—१०-१७९ । (ख) कुँवर जल लोचन भरि-भरि लेत—३४९ ।

लोचना, लोचनो—क्रि. स. [हि. लोचन] (१) प्रकाशित करना । (२) रुचि उत्पन्न करना । (३) इच्छा या कामना करना ।

क्रि. अ. शोभित होना ।

क्रि. अ. (१) इच्छा, लालसा या कामना होना । (२) तरसना, ललचना ।

सज्ञा पु. [स. लुचन] नाई, नाऊ ।

लोचहिंगे—क्रि. अ. [हि. लोचना] तरसेंगे । उ.—दरस बिना पुनि हम लोचहिंगे—११६१ ।

लोट—सज्ञा स्त्री. [हि. लोटना] लोटने या लेट जाने बदलना । (४) लेटकर विश्राम करना । (५) चकित या मुग्ध होना ।

की क्रिया या भाव ।

मुहा०—लोट जाना—(१) बेहोश होना । (२) मर जाना । लोट पोट करना—लेटकर विश्राम करना । लोट-पोट हो जाना या होना । (१) बार-बार लोटने लगना । (२) बेसुध हो जाना । लोट मारना—(१) सोना, लोटना । (२) किसी के प्रेम में बेसुध होना । लोट-पोट होना या हो जाना—(१) रीझना, आसक्त होना । (२) व्याकुल होना ।

लोटक-पोटो—सज्ञा पु [हि लौटना + पलटना] उलट-पलट, अस्तव्यस्त, नष्टभ्रष्ट । उ.—बिरद आपनौ और तिहारो करिहौ लोटक पोटो—१-१७९ ।

लोटत—क्रि. अ [हि. लोटना] (१) भूमि पर लेटता फिरता है । उ.—दीन के दयाल हरि कृपा मोकौ करि यह कहि-कहि लोटत बार-बार—१०-२५२ । (२) भूमि पर गिरकर या लेटकर विरोध सूचित करता है । उ.—(क) लोटत सूर स्याम पुहुमी पर—१०-१५९ । (ख) जसुमति जबहिं कह्यौ अन्हवावन, रोइ गए हरि लोटत री—१०-१८६ । (३) विकल होकर भूमि पर गिरता पडता है । उ.—निरखत सून भवन जड ह्वै रहे, खिन लोटत धर बपु न सँभारत—९-६२ । (४) लुढ़कता है । उ.—रावन-सीस पुहुमि पर लोटत मदोदरि बिलखाइ—९-८६ ।

लोटन—सज्ञा पु. [हि. लोटना] (१) लोटने की क्रिया या भाव । (२) कबूतर जो चोच पकडकर भूमि पर लुढका दिये जाने पर, जब तक उठाया न जाय, लोटता ही रहता है । (३) छोटी ककडियाँ जो वायु के झोके से इधर-उधर लुढकती है ।

लोटना—क्रि. अ [स लुठन] (१) सीधे-उलटे लेटकर जाना । (२) लुढकना । (३) तडपना, कष्ट से करवट बदलना । (४) लेटकर विश्राम करना । (५) चकित या मुग्ध होना ।

लोटनि—सज्ञा स्त्री [हि. लोटना] लोटने की क्रिया, भाव या रीति । उ—देखौ माई, हरि जू की लोटनि—१०-१८७ ।

लोटनो—क्रि. अ. [स. लुठन] (१) सीधे-उलटे लेटकर जाना । (२) लुढकना । (३) तड़पना, कष्ट से करवट

लोटपटा—सज्ञा पु. [हि लौटना+पाटा] (१) **विवाह की एक रीति जिसमे वर के आसन पर बधू और वधू के आसन पर वर को बैठाया जाता है। (२) बाजी या दाँव का उलट-फेर।**

लोटा—सज्ञा पु. [हि लोटना] **बड़ी लुटिया।**

मुहा०—लोटा डुबोना या डोब देना—(१) **सारा काम चौपट कर देना।** (२) **कलक लगा देना।**

लोटि—क्रि. अ. [हि लोटना] (१) **भूमि पर उलटे-सीधे लेटकर।** उ.—कुज-कुज प्रति लोटि-लोटि ब्रज रज लागै रँग-रीतिनि - ४९०। (२) **विरोध सूचित करने के लिए भूमि पर लेटकर।**

प्र०—जैहौ लोटि—**विरोध सूचित करने के लिए (भूमि पर) लेट जाऊँगा** उ.—जैहौ लोटि धरन पर अबही तेरी गोद न ऐहौ—१०-१९३।

लोटी—क्रि. अ. [हि. लोटना] **भूमि पर लेटकर।**

प्र०—जात है लोटी—**भूमि पर लेट जाते है, लोट-पोट हो जाते है।** उ.—यह छवि देखि नद मन आनँद, अति सुख हँसत जात है लोटी—१०-१६५।

लोटै—क्रि अ. [हि. लोटना] (१) **विरोध सूचित करने के लिए भूमि पर लेटता है।** उ—कर धरत धरनि पर लोटै—१०-३८३। (२) **व्याकुल होकर (पृथ्वी पर) लेटता है।** उ.—पटकि पूँछ माथो धुनि लोटै—९-७५।

लोड़ना, लोड़नो—क्रि. स [प. लोड] **दरकार होना।**

लोढ़कनी, लोढ़कनो—क्रि. अ. [हि. लुढकना] **लुढकना।**

लोढ़ना, लोढ़नो—क्रि स. [स. लुचन] (१) **तोडना, चुनना।** (२) **ओटना।**

लोढ़ा—सज्ञा पु. [स लोष्ठ] **(सिल का) बट्टा।**

लोढ़िया—सज्ञा स्त्री [हि लोढा] **छोटा लोढ़ा।**

लोण—सज्ञा पु [स. लवण] **नमक।**

लोथ—सज्ञा स्त्री [स लोष्ठ] (१) **शव, लाश।**

मुहा०—लोथ गिरना-**मारा जाना।** लोथ डालना—**मार गिराना।** लोथपोथ—**थकान से चूर।** (२) **मांस का लोथड़ा, मांसपिंड।**

लोथड़ा—सज्ञा पु [हि लोथ+डा] **मांसपिंड।**

लोध, लोध्र—सज्ञा पु [स लोध्र] **एक जाति।**

लोन—सज्ञा पु [स. लवण] (१) **नमक।**

मुहा०—(किसी का) लोन खाना—**अन्न खाना, दास होना।** (किसी का) लोन निकलना—**उपकार न मानने का फल पाना।** लोन न मानना - **उपकार न मानना, अकृतज्ञ होना।** लोन मानना—**किया हुआ उपकार मानना।** लोन मान्यो —**उपकार माना।** उ.—जैसे लोन हमारो मान्यो कहा कहौ, कहि काहि सुनाऊँ—पृ० ३२३ (२६)। जरे दाधे या दाहे पर लोन लाना या लगाना—**दुखी को और दुख देना।** दाधे पर लोन लगावै—**दुखी को और दुखी करता है।** उ.—सूरदास प्रभु हमहि निदरि दाधे पर लोन लगावै—३०८८। लोन लगावत अनल के दाहि—**दुखी को और दुखी करता है।** उ.—अब काहे को लोन लगावत बिरह-अनल के दाहि - ३१४५। जरे ऊपर लोन लावहि—**दुखी को और दुखी करता है।** उ—जरे ऊपर लोन लावहि को है उनते बावरे—३२६०। जिनि अब लोन लावहु—**दुखी को और दुख न दो।** उ—जाहु जिनि अब लोन लावहु, देखि तुमही डरी—३३१८। जरत (छाती) लोन लायो—**दुखी को और दुख दिया।** उ—काम पावक जरत छाती, लोन लायो आनि—३३५५। राई-लोन उतारना—**नजर से बचाने के लिए सिर पर से सात बार राई-लोन उतार कर आग मे डालने का टोटका करना।** उ.—कबहुँक अँग भूषन बनावति राई-लोन उतारि—१०-११८। (किसी बात का) लोन-सा लगना—**बहुत अप्रिय या अरुचिकर होना।**

(२) **सौदर्य, लावण्य।**

लोनहरामी—वि. [हि लोन+अ. हरामी] **नमक-हराम, कृतघ्न।** उ.—(क) मन भयो ढीठ इनहिं के कीन्हें ऐसे लोन हरामी री—पृ० ३२३ (१९)। (ख) नैना लोन हरामी ए—पृ० ३२६ (५२)।

लोना - वि [हि. लोन] (१) **सलोना।** (२) **सुदर।**

सज्ञा पु. (१) **नमकीन मिट्टी।** (२) **क्षार जो**

चने की पत्तियों पर जमा हो जाता है। (३) वह क्षार जो दीवार पर लग कर उसे कमजोर बना देता है।

क्रि. स. [स लवण] फसल काटना।

लोनाइ, लोनाई—संज्ञा स्त्री [हि लोना + ई] लावण्य, सुदरता। उ —देखौ री देखौ अग-अग की लोनाई —२५९६।

लोनिका—संज्ञा स्त्री. [हि लोन] 'लोनी' साग।

वि. स्त्री नमकीन, सलोनी।—

लोनिया—संज्ञा स्त्री [हि. लोन] 'लोनी' साग।

संज्ञा पु 'नोनिया' नामक शूद्र जाति जो नमक बनाने का कार्य व्यवसाय करती है।

लोनिये—क्रि स. [हि. लोना] (फसल) काटिए। उ —(क) अपनो बोयो आप लोनिये तुम आपहि निरुवारो—३३९४। (ख) बीज बोइये जोइ अत लोनिये सोइ—३४११।

लोनी—संज्ञा स्त्री. [हि. लोन] (१) 'लोनी' साग। (२) क्षार जो चने के साग पर इकट्ठा हो जाता है। (३) क्षार से युक्त मिट्टी जिससे नमक, शोरा आदि बनता है।

वि स्त्री. [हि लोना] सुदर। उ —नासिका परम लोनी बिबाधर तरै री—२४२३।

संज्ञा पु [स. नवनीत] मक्खन, माखन। उ — उ —लै आई बृषभानु-सुता हँसि सद लोनी है मेरी —११७८।

लोप—संज्ञा पु [स.] (१) नाश। (२) विच्छेद। (३) अभाव। (४) छिपना, अतर्द्धान होना। (५) (वर्ण आदि का) लुप्त होना।

लोपन—संज्ञा पु [स] लुप्त या नाश करने की क्रिया या भाव।

लोपना, लोपनो—क्रि. स [स लोपन] (१) मिटाना, लुप्त करना। (२) छिपाना, अतर्द्धान करना।

क्रि अ (१) मिटना, लुप्त होना। (२) छिपना।

लोपांजन—संज्ञा पु [स] एक कल्पित अजन जिसके लगाने से व्यक्ति का अदृश्य हो जाना माना जाता है।

लोपामुद्रा—संज्ञा स्त्री [स.] अगस्त्य ऋषि की पत्नी।

लोपी—क्रि. स. [हि. लोपना] मिटायी, लुप्त की। उ.— नँदनदन के नेह-मेह जिनि लोक-लीक लोपी —४८८७।

लोबान—संज्ञा पु [अ.] एक वृक्ष का सुगधित गोंद।

लोबिया—संज्ञा पु [स. लोभ्य] एक पौधा जिसकी फली के बीज खाये जाते हैं।

लोभ—संज्ञा पु [स] (१) लालच। उ.—दर-दर लोभ लागि लिये डोलत नाना स्वाँग बनावै—१-४२। (२) कजूसी, कृपणता।

लोभना, लोभनो—क्रि अ. [स. लोभ] मुग्ध होना, ललचना, लुब्ध होना।

क्रि. स. ललचाना, लुभाना, मुग्ध करना।

लोभनीय—वि [स लोभ] (१) जिसे देखकर लोभ हो। (२) सुदर, मनोहर।

लोभा—संज्ञा पु. [स लोभ] लालच, लोभ। उ —योगयज्ञ जप तप तीरथ व्रत कीजत है जेहि लोभा—२५६६।

लोभाई—क्रि. अ. [हि. लोभना] मोहित या मुग्ध हुई। उ —कुँवर तन स्याम मानो काम है दूसरो, सपन मैं देखि ऊषा लोभाई—३४३४।

लोभातुर—वि. [स लोभ + हि. आतुर] अत्यत लोभ से विकल होकर। उ.—लोभातुर ह्वै काम मनोरथ, तहाँ सुनत उठि धाई—१-२९५।

लोभाना—क्रि स [हि लोभाना] मुग्ध करना।

क्रि. अ. (१) मुग्ध या मोहित होना। (२) लालच मे पडना।

लोभानी—क्रि. अ. [हि लोभाना] मुग्ध या मोहित हुईं। उ.—(क) यशोमति सुन सुन्दर तनु निरखि हो लोभानी—१४६५। (ख) अँखियाँ हरि के रूप लोभानी—३४४२।

लोभाने—क्रि अ [हि. लोभाना] मुग्ध या आसक्त हुए। उ.—(क) सूर स्याम हौ बहुत लोभाने बन देख्यौ धौ सूनौ—११२१। (ख) सूर स्याम मृदु हँसनि लोभाने—पृ० ३३४ (३१)। (ग) की काहू के अनत लोभाने—१९३२। (घ) सूर प्रभु दासी लोभाने, ब्रज बधू अनखात—२६८०। (२) लालच या लोभ मे पड गए। उ —मनहुँ कज ऊपर बैठे अलि उडि न सकत मकरद लोभाने—२०८६।

लोभानो—क्रि. स. [हिं. लोभना] मुग्ध करना।
क्रि. अ (१) मुग्ध या मोहित होना। (२) लोभ या लालच मे पडना।

लोभार—वि. [हि. लोभ+आर] लुभानेवाला।

लोभावै—क्रि. अ. [हि लोभाना] मुग्ध या आसक्त होता है। उ.—कहूँ त्रिया के रूप लुभावै—१० उ.-१०५।

लोभित—वि. [हि. लोभ] (१) मुग्ध, आसक्त। उ.—कदब मुनि मन मधुप सदा रस-लोभित सेवत अज सिव अब। (२) लालची।

लोभिनी—वि. स्त्री. [हि. लोभी] (१) बहुत लोभ करने वाली, लालचिनी। (२) लुभायी हुई। उ.—ए कैसी है लोभिनी छवि धरति चुराइ-पृ ३३७ (७०)। (३) जो (स्त्री) मुग्ध या आसक्त हो।

लोभी—वि. [हि. लोभ] (१) लालची। उ.—(क) लोभी, लौद मुकरवा झगरू—१-१८६। (ख) इन लोभी नैनन के काजे परवश भई जो रहौ—२७७४। (२) मुग्ध, आसक्त।

लोभ्यो, लोभ्यौ—क्रि. अ [हि. लोभाना] लुभाया, मुग्ध या आसक्त हुआ। उ.—नारि-रस-लोभ्यौ—१-२१६।

लोम—सज्ञा पु. [स] (१) रोवाँ, रोम। उ.—शत शत इद्र लोम प्रति लोमनि—१०१२। (२) बाल।
सज्ञा पु [स. लोमश] लोमडी।

लोमकूप—सज्ञा पु [स] रोएँ की जड़ का छिद्र।

लोमड़ी—सज्ञा स्त्री. [स. लोमश] एक प्रसिद्ध जतु।

लोमनि—सज्ञा पु. सवि [स. लोम+नि] शरीर के प्रत्येक रोम में। उ.—शत शत इद्र लोम प्रति लोमनि—१०-१२।

लोमश—सज्ञा पु. [स.] (१) एक ऋषि। (२) भेडा।
वि अधिक और बड़े बड़े रोएँवाला।

लोमहर्षण—वि. [स] बहुत भीषण या भयानक।

लोय—सज्ञा पु. [स. लोक] लोग।
सज्ञा स्त्री. [हि. लव] लौ, लपट।
संज्ञा पु [हि. लोयन] आँख, नेत्र।
अव्य. [हि लौ.] तक, पर्यंत।

लोयन—सज्ञा पु. [स. लोचन] आँख, नेत्र, नयन।

लोर—वि [सं. लोल] (१) चचल। उ.—(क) सूर स्याम मुख निरखि चली घर आनँद लोचन लोर—७७६। (ख) चारु आनन लोर धारा बरनि कापै जाइ—पृ ३४२ (१८)। (२) (दर्शन के) इच्छुक या उत्सुक। उ.—बोलि ढिग बैठारि ताको पोछि लोचन लोर—२१६१।
सज्ञा पु. (१) कुडल। (२) लटकन। (३) आँसू।

लोरना, लोरनो—क्रि. अ [हि. लोर+ना] (१) चचल होना। (२) ललकना, लपकना। (३) लिपटना। (४) झुकना। (५) लोटना।

लोरी—सज्ञा स्त्री. [स. लाल] (१) (बच्चो को सुलाने के लिए गाया जाने वाला) गीत।

लोरैं- क्रि. अ. [हि. लोरना] ललकते या झपटते हैं।
उ.—देखो री मल्ल इनहि मारन को लौरैं—२६०४।

लोरै—क्रि अ [हि लोरना] ललकता या लपकता है। उ—पुनि उठत जागि देखै मुकुर नारि कर ललचात अग भरि लैन लोरै—पृ. ३१७ (६४)।

लोल—वि. [स.] (१) हिलता-डोलता। उ—कुडल लोल कपोलनि की छवि—६१६। (२) चंचल। उ.—(क) ललित श्रीगोपाल-लोचन लोल—३५१। (ख) बेन बिसाल अति लोचन लोल—६३०। (३) परिवर्तन-शील। (४) क्षणभंगुर। (५) इच्छुक, उत्सुक।

लोलक—सज्ञा पु. [स.] (१) (नथ या बाली का) लट-कन। (२) कान की लव, लोलकी।

लोलकी—सज्ञा स्त्री. [हि. लोलक] कान की लव।

लोलत—क्रि. अ. [हि. लोलना] हिलता-डोलता या चंचल होता है। उ.—ग्रीवा डोलत लोचन लोलत हरि के चितहि चुरावै—८७६।

लोलदिनेश—सज्ञा पु. [स.] लोलार्क नामक सूर्य।

लोलन—सज्ञा पु. [स.] हिलने-डुलने या हिलने-डुलाने की क्रिया या भाव।

लोलना, लोलनो—क्रि. अ. [स. लोल] (१) हिलना-डोलना। (२) चचल होना।

लोला—सज्ञा स्त्री. [स.] जीभ, जिह्वा।
सज्ञा पु. [देश.] एक खिलौना जिसमें डडे के सिरो पर दो लट्टू होते है।

लीलार्क—संज्ञा पु [सं.] काशी का एक तीर्थ।

लोलुप—वि. [सं.] (१) लालची, लोभी। (२) चटोरा। (३) परम उत्सुक।

लोलै—क्रि अ [हि. लोलना] हिलती-डोलती है। उ —कुटिल अलक बदन की छवि अवनि परि लोलै—१०-१०१।

लोवा—संज्ञा स्त्री [सं. लोमश] लोमड़ी।

संज्ञा पु. लवा या गुरगा पक्षी।

लोष्ठ—संज्ञा पु [सं.] (१) पत्थर। (२) ढेला।

लोहँड़ा—संज्ञा पु. [सं. लौहभाड] (१) लोहे का एक पात्र। (२) तसला।

लोह—संज्ञा पु [सं.] (१) लोहा (धातु)। उ.—(क) सूरदास पारस के परसै मिटति लोह की खोट—१-२३२। (ख) लोह तरै, मथि रूपा लायौ—७-७। (ग) आगर इक लोहजटित लीन्ही बरिबड—९-९६। (२) हथियार, अस्त्र। उ.—लोह गहै लालच करि जिय कौ औरौ सुभट लजावै—९-१५२।

लोहकार—संज्ञा पु. [सं.] लोहार।

लोहपन, लोहपना, लोहपनो—संज्ञा पु. [हि. लोहा+पन] 'लोहा' होने का भाव या उसका बोध। उ.—पारस परसि होत ज्यौं कचन लोहपनो मिटि जाई—१० उ.-१३१।

लोहा—संज्ञा पु. [सं. लोह] (१) 'लोह' नामक प्रसिद्ध धातु। उ —जैसै लोहा कचन होय—१-२३०।

मुहा०—लोहे के चने—बहुत कठिन काम। लोहे के चने चबाना—बहुत कठिन काम करना।

(२) हथियार, अस्त्र।

मुहा० —लोहा गहना—(युद्ध करने को) हथियार उठाना। लोहा बजना—(युद्ध में परस्पर) अस्त्र चलना। लोहा बरसना—(युद्ध में)तलवार या अस्त्र चलना। (किसी का) लोहा मानना—(१) (किसी की) विद्वता, प्रभुता आदि की श्रेष्ठता स्वीकार करना। (२) हार या पराजय मानना। लोहा लेना—सामना या युद्ध करना।

(३) लोहे का बना कोई उपकरण।

वि. बहुत कड़ा या कठोर।

लोहाना, लोहानो—क्रि. अ [हि लोहा+आना] (किसी पदार्थ में लोहे के संसर्ग से) लोहे का रंग या स्वाद आ जाना।

लोहार - संज्ञा पु [सं लोहकार] एक जाति जो लोहे की चीजें बनाने का काम करती है।

लोहारी—संज्ञा स्त्री [हि लोहार+ई] लोहार का काम।

लोहित—वि. [सं.] लाल (रंग का)। उ —अति लोहित दृग रँगमगे—२४०२।

संज्ञा पु [सं लोहितक] मंगल ग्रह।

लोहित्य—संज्ञा पु. [सं.] ब्रह्मपुत्र नद।

लोहिया—वि [हिं लोहा] लोहे का।

लोही—संज्ञा स्त्री. [सं. लोहित] उषा की लाली।

लोहू—संज्ञा पु. [सं. लोहित] रक्त, रुधिर।

लौं—अव्य. [हि. लग] (१) तक, पर्यंत। उ —(क) करौ मन्वतर लौं तुम लाज—७-२। (ख) द्वितीय सिधु सिय-नैन नीर ह्वै जब लौं मिलै न आइ—९-११०। (ग) भीतर तैं बाहर लौं आवत—१०-१२५। (२) बराबर, समान, तुल्य। उ.—(क) हरि कौ नाम दाम खोटे लौं झकि झकि डारि दियौ—१-६४। (ख) उदर भरयौ कूकर सूकर लौं—१-६५। (ग) अब सबही कौ बदन स्वान लौं चितवत दूरि भयौ—१-२९८।

लौकना, लौकनो—क्रि अ. [सं. लोकना] (१) दिखायी देना, दृष्टि-गोचर होना। (२) चमकना। (३) आंखो में चकाचौंध होना।

लौंग—संज्ञा पु [सं लवंग] (१) एक झाड की कली जिसकी गिनती 'मसालों' में की जाती है। उ.—लौंग नारियर दाख सुपारी कहा लादे हम आवै—११०८। (२) नाक का एक आभूषण जो लौंग के आकार का ही होता है।

लौंडा—संज्ञा पु [देश] (१) सुदर लडका। (२) पुत्र।

वि (१) अबोध, नासमझ। (२) छिछोरा।

लौंडापन—संज्ञा पु [हि. लौंडा+पन] (१) लडकपन, नासमझी। (२) छिछोरापन।

लौंडी—संज्ञा स्त्री [हि लौंडा] दासी। उ.—लौंडी की डौंडी बाजी जब बढ्यो स्याम अनुराग—३०९५।

लौंद—संज्ञा पु [देश] मलमास, अधिमास ।
वि. [हि लोंदा] मूर्ख, नासमझ । उ.—लोभी लौंद मुकरवा झगरू—१-१८६ ।
लौंदरा—संज्ञा पु [देश.] पानी जो वर्षारंभ से पहले ही बरस जाता है, लवँद, दौंगरा, लवँदरा ।
लौंध, लौंन—संज्ञा पु [हि लौंद] मलमास ।
लौ—संज्ञा स्त्री. [हि लपट] (१) आग की लपट, ज्वाला । (२) दीपशिखा ।
संज्ञा स्त्री [हि लाग] (१) चाह, लगन, राग । (२) आशा, कामना । (३) चित्त-वृत्ति ।
लौआ—संज्ञा पु. [स लावुक] घीआ, कद्दू ।
लौकना, लौकनो—क्रि अ. [हि लौ] (१) दिखायी पड़ना । (२) चमकना ।
लौकिक—वि. [स] (१) सांसारिक । (२) व्यावहारिक ।
लौकी—संज्ञा स्त्री. [स. लावुक] घीआ (तरकारी) ।
लौटना—क्रि. अ. [हि उलटना] (१) पलटना, वापस आना । (२) पीछे की ओर मुँह करना ।
क्रि. स. उलटना, पलटना ।
लौटनि—संज्ञा स्त्री [हि लौटना] उलटने की क्रिया या भाव ।
लौटनो—क्रि अ. [हि उलटना] (१) वापस आना । (२) पीछे की ओर मुह करना ।
क्रि. स उलटना, पलटना ।
लौट-पौट—संज्ञा स्त्री. [हि लौटना + अनु. पौटना] (१) उलटने-पलटने की क्रिया या भाव । (२) तहस-नहस करने की क्रिया या भाव ।
लौट-फेर—संज्ञा पु [हि. लौटना + फेरना] उलट-फेर, भारी परिवर्तन ।
लौटान—संज्ञा स्त्री. [हि लौटना] लौटने की क्रिया या भाव ।
लौटाना, लौटानो—क्रि. स. [हि. लौटना] (१) वापस करना । (२) फेरना, पलटना । (३) ऊपर-नीचे या उलट-पुलट करना ।
लौन—संज्ञा पु. [स लवण] नमक । उ —खेलत मै कोउ दीठि लगाई लै लै राई-लौन उतारति—१०-२०० ।
मुहा०—पजरे पर लोन—जो स्वय दुखी है, उसे और दुखाने वाली बात से अधिक पीडा होना । उ बचन दुसह लागत अलि तेरे ज्यौ पजरे पर लौन—३१२२ ।
लौनहार, लौनहारा—वि [हि लौना + हार] खेत काटने वाला ।
लौना—संज्ञा पु. [स ज्वलन] ईंधन ।
संज्ञा पु [हिं. लुनना] फसल की कटाई ।
वि [हिं लौन, लोन] सुदर ।
लौनी—संज्ञा स्त्री [हि. लौना] फसल की कटाई ।
संज्ञा स्त्री [स. नवनीत] माखन, नैनू । उ — (क) लौनी कर आनन परसत है कछुक खाइ कछु लग्यौ कपोलनि । (ख) नैकु रहौ, माखन द्यौ तुमकौ । ठाढी मथति जननि दधि आतुर, लौनी नद-सुवन कौ—१०-१६७ ।
वि. स्त्री [हि लौन, लोन] सुदरी ।
लौरि, लौरी—संज्ञा स्त्री [देश] (गाय की) बछिया ।
लौलीन—वि. [हि लौ + लीन] (किसी के) ध्यान में लीन या मग्न ।
लौह—संज्ञा पु [स.] (१) लोहा । (२) अस्त्र-शस्त्र ।
लौहित—संज्ञा पु [स.] महादेव का त्रिशूल ।
लौहित्य—संज्ञा पु [स] ब्रह्मपुत्र नद ।
ल्याइ—क्रि स [हिं लाना] लाकर । उ —अतिहिं पुरुषारथ कियौ उन कमल दह के ल्याइ—५८६ ।
ल्याइयै—क्रि. स. [हि. लाना] लाने का प्रबध, आयोजन या कार्य कीजिए । उ —कह्यौ भगवान अब बासुकी ल्याइयै—८-८ ।
ल्याइहै—क्रि स [हि लाना] लाने का प्रबध, आयोजन या कार्य करेगा, लायेगा । उ —वहै ल्याइहै सिय-सुधि छिन मैं ९-७४ ।
ल्याई—क्रि स. स्त्री [हि. लाना] ले आयी हूँ । उ.—खाटे फल तजि मीठे ल्याई—९-६७ ।
ल्याउँगी—क्रि स [हि लाना] ले आऊँगी ।
प्र०—ल्याउँगी धरि—पकड़कर ले आऊँगी । उ —मोहि छाँडि जौ कहूँ जाहुगे, ल्याउँगी तुमकौ धरि—६८१ ।

ल्याउ—क्रि स [हि लाना] ले आओ । उ —हलधर कहत, ल्याउ री मैया—३९६ ।

ल्याऊ—क्रि स [हि लाना] ले आऊँगी, ले आऊँ। उ —हौंस होइ तौ ल्याऊँ पूआ—३९६ ।

ल्याए - क्रि. स [हि लाना] ले आए। उ —पारथ-सीस सोधि अष्टाकुल तब जदुनदन ल्याए—१-२९ ।

ल्याना, ल्यानो - क्रि स [हि लाना] लाना ।

ल्यायो, ल्यायौ—क्रि. स [हि लाना] ले आया । उ —ह्वै बराह पृथ्वी ज्यों ल्यायौ—३-१० ।

ल्यारि, ल्यारी—सज्ञा पु [देश] भेडिया ।

सज्ञा स्त्री [देश] लू, लूक ।

ल्यावना, ल्यावनो—क्रि स [हि लाना] लाना ।

ल्यावहु—क्रि स. [हि लाना] ले आओ । उ —ल्यावहु जाइ जनक तनया सुधि—९-७४ ।

ल्यावै—क्रि स [हि लाना] ले आये उ —कहौ तौ माखन ल्यावै घर तै—३५४ ।

ल्यावै—क्रि स [हि लाना] ले आये । उ —लाच्छागृह तै काढि कै पाडव गृह ल्यावै—१-८ ।

प्र०—मन मे ल्यावै—इच्छा करे । उ.—मुक्ति-मनोरथ मन मैं ल्यावै—३-१३ ।

ल्हेसना, ल्येसनो—क्रि अ. [हि लसना] (१) चिपकना, सटना । (२) ऊपर होना ।

क्रि. स. (१) चिपकाना, सटाना । (२) ऊपर रखना ।

ल्हेसित–वि [स लसित] सजन या शोभा देनेवाला,शोभित ।

व

व—देवनागरी वर्णमाला का उन्तीसवाँ वर्ण जो अतस्थ अर्द्धव्यजन माना जाता है और जिसका-उच्चारण स्थान दत्योष्ठ है ।

वक—वि [स.] कुछ झुका हुआ, टेढा ।

वंकट—वि [स वक] (१) झुका हुआ, टेढा । (२) जो सीधा न हो, कुटिल । (३) दुर्गम, विकट । उ —रही दै घूँघट-पट की ओट । मानौ कियौ फिरि मान मवासौ मन्मथ बकट कोट—२७६९ ।

वंकता—सज्ञा स्त्री [स.] टेढापन ।

वंकनाल, वंकनाली—सज्ञा स्त्री [हि वक+नाल] सुषुम्ना नाड़ी ।

वंकिम—वि [स] कुछ झुका हुआ, टेढा ।

वंग—सज्ञा पु [स] बगाल (प्रदेश) ।

वंगीय—वि [स.] वग देश का।

वंचक—वि [स] (१) ठग । (२) दुष्ट ।

वंचकता—सज्ञा स्त्री [स वचक] ठगी ।

वचन—सज्ञा पु [स] (१) ठगी । (२) दुष्टता ।

वंचना - सज्ञा स्त्री [स] धोखा, ठगी, छल ।

वंचना, वंचनो—क्रि स [स. वचन] धोखा देना ।

क्रि स. [स वाचन] पढना, बाँचना ।

वंचित—वि. [सं.] (१) जो ठगा गया हो । (२)अलग किया हुआ । (३) हीन, रहित ।

वदन—सज्ञा पु [स] (१) स्तुति और प्रणाम, जो षोड़शोपचार पूजन का एक अग है । (२) नवधा भक्ति का एक अंग । उ —स्रवन कीरतन, स्मरन, पादरत, अरचन, वदन, दास । सख्य और आतमा-निवेदन प्रेम-लच्छना जास—सारा ११६ । (३) शरीर पर बनाये गये तिलक आदि चिह्न । उ.—वदन चित्रविचित्र अग सिर कुसुम सुवास धरे नँदनदन—२५७३ ।

वि पूज्य, पूजित (जैसे जगवदन) ।

वंदनमाल, वंदनमाला—सज्ञा स्त्री [स वदनमाल] वदनवार ।

वदनवार—सज्ञा स्त्री [स वंदनमाल] फूल-पत्तियो की माला जो उत्सव के समय द्वार या मडप के चारो ओर बाँधी जाती है ।

वदना—सज्ञा स्त्री [स] (१) स्तुति और प्रणाम । (२) शरीर पर बनाये गये तिलक आदि चिह्न ।

वदनीय—वि [स] प्रणाम या सम्मान के योग्य ।

वदारु—वि [स.] वदनीय ।

वंदित—वि [स] (१) जिसकी वंदना की जाय । (२) पूज्य, माननीय ।

वंदिता—वि. स्त्री. [सं. वंदित] (१) जिसकी वंदना की जाय। (२) पूजनीया।

वंदी—संज्ञा पु. [सं. वंदिन्] कैदी, बंदी।

वंदीगृह—संज्ञा पु. [सं.] कैदखाना।

वंदीजन—संज्ञा पु. [सं.] एक यश गायक जाति।

वंद्य—वि. [सं.] वंदना-योग्य, वंदनीय।

वंश—संज्ञा पु. [सं.] (१) बाँस। (२) बाँसुरी। (३) कुल।

वंशज—संज्ञा पु. [सं.] कुल में उत्पन्न, संतान।

वंशजा—संज्ञा पु. [सं.] कन्या, पुत्री।

वंशतिलक—संज्ञा पु. [सं.] एक छंद।

वंशधर—संज्ञा पु. [सं.] वंशज।

वंशस्थ—संज्ञा पु. [सं.] एक वर्णवृत्त।

वंशहीन—वि. [सं.] जिसके वंश में कोई न हो।

वंशावली—संज्ञा स्त्री. [सं.] किसी वंश के पुरुषों की कालक्रमानुसार सूची।

वंशी—संज्ञा स्त्री. [सं.] बाँसुरी, मुरली। इसका जो छोर बजानेवाले के मुँह में रहता है, 'फूत्काररंध्र' कहलाता है और सुर निकालनेवाले सात छेदों को 'ताररंध्र' कहते है।

वंशीधर—संज्ञा पु. [सं.] श्रीकृष्ण।

वंशीय—वि. [सं.] कुल में उत्पन्न, वंशज।

वंशीवट—संज्ञा पु. [सं.] वृन्दावन का वह वट वृक्ष जिसके नीचे श्रीकृष्ण वंशी बजाया करते थे।

वंशीवादन—संज्ञा पु. [सं.] वंशी बजाना।

वंशोद्भव—वि. [सं.] कुल में उत्पन्न, वंशज।

व—अव्य. [फा.] और।

वक—संज्ञा पु. [सं.] (१) बगला पक्षी। (२) अगस्त का वृक्ष या फूल। (३) एक दैत्य जिसे श्रीकृष्ण ने मारा था। (४) एक राक्षस जिसे भीम ने मारा था।

वकवृत्ति—संज्ञा स्त्री. [सं.] छल-कपट से काम निकालने की वृत्ति।

वकव्रती—संज्ञा पु. [सं.] छली-कपटी व्यक्ति।

वकालत—संज्ञा स्त्री. [अ. वकालत] वकील का काम।

वकासुर—संज्ञा पु. [सं.] (१) एक असुर जिसे श्रीकृष्ण ने मारा था। (२) एक राक्षस जिसे भीमसेन ने मारा था।

वकी—संज्ञा स्त्री. [सं.] पूतना जो वकासुर की बहन थी।

वकील—संज्ञा पु. [अ. वकील] दूसरे के पक्ष का समर्थन करने वाला।

वकुल—संज्ञा पु. [सं.] अगस्त का पेड़ या फूल।

वकुली—संज्ञा स्त्री. [सं.] मौलसिरी।

वक्त—संज्ञा पु. [अ. वक्त] (१) समय, काल।

मुहा०—वक्त काटना—(१) कठिनता से समय बिताना। (२) जी बहलाना। वक्त की चीज—(१) समय या ऋतु विशेष में मिलनेवाली चीज। (२) अवसर-विशेष के उपयुक्त चीज या गीत।

(२) अवसर। (३) अवकाश। (४) मृत्युकाल।

वक्तव्य—संज्ञा पु. [सं.] (१) कथन, भाषण (२) किसी विषय में कही गयी बात।

वक्ता—वि. [सं. वक्ता] (१) बोलनेवाला। (२) भाषण-पटु।

संज्ञा पु. कथा कहनेवाला, व्यास। उ.—सूत तहँ कथा भागवत की कहत है रिपि अठासी सहस हुते स्रोता। राम को देखि सनमान सब ही कियौ सूत नहि उठयो निज जानि वक्ता—१० उ०-५८।

वक्तृता—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) वाक्पटुता, वाक्कौशल। (२) व्याख्यान, भाषण।

वक्तृत्व—संज्ञा पु. [सं.](१) व्याख्यान। (२) कथन।

वक्र—वि. [सं.] (१) झुका हुआ, टेढ़ा, तिरछा। (२) दाँव-पेंच खेलनेवाला।

वक्रगामी—वि. [सं. वक्रगामिन्] टेढी चाल चलनेवाला।

वक्रदृष्टि—संज्ञा स्त्री. [सं.] क्रोध की दृष्टि।

वक्रोक्ति—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) व्यंग्य भरी बात। (२) एक काव्यालंकार।

वक्ष—संज्ञा पु. [सं. वक्षस्] छाती, उरस्थल।

वक्षस्थल—संज्ञा पु. [सं. वक्षःस्थल] छाती, उर।

वक्षोज, वक्षोरुह—संज्ञा पु. [सं.] स्तन, कुच।

वगलामुखी—संज्ञा स्त्री. [सं.] दस महाविद्याओं में एक।

वगैरह—अव्य. [अ. वगैरह] आदि, इत्यादि।

वच—संज्ञा पु. [सं. वच्] वचन, वाक्य।

वचन—संज्ञा पुं. [स.] (१) वाणी, वाक्य । (२) कही हुई बात, कथन । उ. – तुम्हरो वचन न मैट्यो जाइ —१० उ०-१०१ । (३) शब्द का वह रूप-विधान जिससे एकत्व या बहुत्व सूचित होता है (व्याकरण) ।

वचनकारी—वि [स.] आज्ञाकारी ।

वचनलक्षिता सज्ञा स्त्री [स] वह नायिका जिसकी बात से उपपति के प्रति उसका प्रेम लक्षित हो ।

वचनविदग्धा– सज्ञा स्त्री [स] वह नायिका जो वचन की चतुरता से नायक की प्रीति का साधन करे ।

वचनीय—वि. [स.] कथनीय ।

वच्छ—सज्ञा पु. [हि. वक्ष] छाती, उर ।

वजन—सज्ञा पु. [अ. वजन] (१) बोझ । (२) तौल ।

वजनी—वि. [हि वजन+ई] (१) अधिक भार वाला, भारी । (२) प्रभावशाली ।

वजह्—सज्ञा स्त्री. [अ.] कारण, हेतु ।

व मा—सज्ञा स्त्री [अ. वजअ] (१) रचना, बनावट । (२) सजधज । (३) आकृति । (४) दशा, अवस्था । (५) रीति, प्रणाली ।

वजीफा—सज्ञा पु [अ. वजीफा] वृत्ति ।

वजीर—सज्ञा पु. [अ. वजीर] (१) मत्री । (२) शतरज की एक गोटी जो आगे, पीछे, दायें, बाये, सब ओर चलती है ।

वजू—सज्ञा पु. [अ. वुजू] नमाज के पूर्व हाथ-पैर धोना ।

वजूद—सज्ञा पु. [अ.] अस्तित्व ।

वज्र—सज्ञा पु. [स.] (१) भाले के फल के समान एक शस्त्र जो इद्र का प्रधान शस्त्र माना गया है । (२) बिजली, विद्युत । (३) हीरा । उ.—दसन एकन वज्र वारौ—१४१५ । (४) भाला, बरछा । उ.—हरन रुक्मिनी होत है दुहूँ ओर भइ भीर । अति अघात कछु नाहिन सूझत वज्र चलहि ज्यौ नीर—१० उ० -६१ । (५) श्रीकृष्ण का एक प्रपौत्र जो अनिरुद्ध का पुत्र था ।

वि. (१) बहुत कड़ा । (२) भीषण ।

वज्रधर—सज्ञा पु. [स.] इंद्र ।

वज्रपाणि—सज्ञा पु. [स.] इद्र ।

वज्रपात—सज्ञा पु. [सं.] (१) बिजली गिरना । (२) घोर अनर्थ या अनिष्ट होना ।

वज्रांगी—वि. [स.] वज्र के समान कठोर अंग या शरीरवाला । उ.—काल-रूप वज्रागी जोधा—२६०६ ।

वज्रायुध—सज्ञा पु. [स] इद्र । उ —वज्रायुध जल वर्षि सिराने—१०७० ।

वज्रावर्त—सज्ञा पु [स.] एक मेघ का नाम । उ.—सुनत मेघ वर्तक सजि सैन लै आये । जलवर्त, वारि-वर्त, पवनवर्त, वज्रावर्त, आगिवर्तक जलद सग लाये ।

वज्रासन—संज्ञा पु. [स] चौरासी आसनो मे एक ।

वज्री—सज्ञा पु [स. वज्रिन] इंद्र ।

वट—सज्ञा पु [स.] बरगद का पेड़ । उ —कहि धौ कुद कदम बकुल वट चपक लता तमाल—१८०८ ।

वाटिका, वटी—सज्ञा स्त्री [स.] गोली, टिकिया ।

वटु, वटुक—सज्ञा पु [स] (१) बालक । (२)ब्रह्मचारी ।

वणिक—सज्ञा पु [स. वणिक्] व्यापारी, बनिया ।

वत – अव्य. [स. वत्] समान, सदृश । उ —एक याम नृप को निशि युग वत भई भारी—२४७४ ।

वतन—सज्ञा पु [अ.] (१) जन्मभूमि । (२) वासस्थान ।

वत्स –सज्ञा पु [स] (१) गाय का बछड़ा । (२) शिशु । (३) वत्सासुर जो कस का सेवक था और जिसे श्रीकृष्ण ने मारा था ।

वत्सर—सज्ञा पु [स] साल, वर्ष ।

वत्सल—वि [स.] (१) सतान-प्रेम से युक्त । (२) छोटो के प्रति कृपालु ।

वत्सला—वि. [स. वत्सल] स्नेह-भाव रखनेवाले । उ.—गाइ-गाउँ के वत्सला मेरे आदि सहाई–१-२३८ ।

वि.स्त्री (१) जो (नारी) संतान-प्रेम सें युक्त हो । (२) जो (नारी) छोटो के प्रति कृपालु हो ।

वत्सासुर—सज्ञा पु. [स.] कस का अनुचर एक असुर जिसे श्रीकृष्ण ने मारा था । उ —वत्सासुर को इहाँ निपात्यो—३४०९० ।

वदंती—सज्ञा स्त्री. [स.] बात, कथा ।

वदक—सज्ञा पु. [सं.] कहनेवाला, वक्ता ।

वदत—क्रि अ. [हिं. वदना] बोलता है । उ —चातक मोर चकोर वदत पिक मनहु मदन चटसार पढ़ावत—१० उ०-५ ।

क्रि. स. बरजता या रोकता है, मना करता है। उ०—बारन नहिं छाँड़ि दै, दवत बलराम मोहिं बार बारी—३४९० ।

वदन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) मुँह, मुख। उ.—हौं बारी तव इंदु-वदन पर अति छवि अलस भरोइ—१०-५६ । (२) कथन।

वदना, वदनो—क्रि. अ. [सं. वदन] कहना, बोलना।

क्रि. स. रोकना, मना करना।

वदान्य—वि. [सं.] (१) उदार। (२) मधुरभाषी।

वदि—संज्ञा पुं. [सं. अवदिन्] कृष्ण पक्ष।

वदुसाते—क्रि. स. [हिं. वदुसाना] भला-बुरा कहते या दोष देते। उ.—सूर स्याम यहि भाँति सयाने हमहीं को वदुसाते—३३३८ ।

वदुसाना, वदुसानो—क्रि. स. [सं. विदूषण] भला-बुरा कहना, दोष या अपराध लगाना।

वध—संज्ञा पुं. [सं.] नाश, मारण।

वधक—संज्ञा पुं. [सं.] (१) हिंसक, घातक। (२) व्याध। (३) मृत्यु। (४) यमराज।

वधत्र—संज्ञा पुं. [सं.] हथियार, अस्त्र।

वधन—संज्ञा पुं. [सं. वध] नाश। उ.—कंस बधन ऐहौ करिहैं।

संज्ञा पुं. सवि. मारने के लिए। उ.—बदरिआ वधन बिरहिनी आई—२८२१ ।

वधिक—संज्ञा पुं. [सं.] वध करनेवाला।

वधुका—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) पुत्रवधू, पतोहू। (२) नववधू, दुलहिन।

वधू—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) दुलहिन। (२) पतोहू। (३) पत्नी। उ.—जौ यह वधू (बधू) होइ काहू की दारु-स्वरूप धरे—९-४१ ।

वधूटी—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) दुलहिन। (२) पतोहू। (३) पत्नी, भार्या।

वधूत—संज्ञा पुं. [सं. अवधूत] साधु, संन्यासी।

वध्य—वि. [सं.] (१) जहाँ वध किया जाय। (२) वध करने योग्य।

वन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) जंगल। (२) वाटिका। (३) जल। (४) घर, आलय।

वनचर, वनचारी—संज्ञा पुं. [सं.] (१) वन में रहने-बसनेवाला। (२) जंगली प्राणी।

वनज—संज्ञा पुं. [सं.] (१) जो वन (जंगल या पानी) से जन्मा हो। (२) कमल।

वनद—संज्ञा पुं. [सं.] मेघ, बादल।

वनदेव—संज्ञा पुं. [सं.] वन का अधिष्ठाता देवता।

वनदेवी—संज्ञा स्त्री. [सं.] वन की अधिष्ठात्री देवी।

वनमाला—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) वन के फूलों की बनी माला। (२) अनेक प्रकार के वन-पुष्पों की बनी, पैरों तक लंबी वह माला जो श्रीकृष्ण धारण करते थे। उ.—वनमाला (बनमाला) पीतांबर काछे—५०७।

वनमाली—संज्ञा पुं. [सं.] वनमाला धारण करने वाले श्रीकृष्ण।

वनराज—संज्ञा पुं. [सं.] सिंह।

वनराजि, वनराजी—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) वन या वृक्ष-समूह। (२) वन की पगडंडी।

वनरुह, वनरूह—संज्ञा पुं. [सं. वनरुह] कमल।

वनलक्ष्मी—संज्ञा स्त्री. [सं.] वन की शोभा या श्री।

वनवास—संज्ञा पुं. [सं.] (१) वन में निवास (करना)। (२) बस्ती छोड़कर वन में बसने की व्यवस्था।

मुहा०—वनवास देना—(सुख-साधनों और बंधु-बाँधवों का साथ छोड़कर) वन में रहने-बसने की आज्ञा देना। वनवास लेना—(१) (सुख-साधनों और बंधु-बांधवों को छोड़कर) वन में रहने-बसने का निश्चय करना। (२) संन्यास लेना।

वि. वन में रहने-बसनेवाला, वनवासी।

वनवासी—वि. [सं. वनवासिन्] वन में रहने-बसने वाला।

वनस्थली—संज्ञा स्त्री. [सं.] वन प्रदेश।

वनस्पति—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) वृक्ष जिसमें फूल न दिखायी दे, केवल फल ही हों। (२) पेड़-पौधे।

वनांत—संज्ञा पुं. [सं.] वन प्रदेश।

वनिता—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) प्रियतमा। (२) नारी।

वनी—संज्ञा स्त्री. [सं.] छोटा वन।

संज्ञा पुं. [सं. वनिन्] वानप्रस्थ।

वन्तिका—संज्ञा स्त्री. [सं. अवन्तिका] अंवतिका नगरी।

उ.—कहो बिप्र हम गये बलिका गुरु के सदन बिख्यात —सारा ८११।

वन्य—वि. [स] (१) वन में रहने-बसने या उत्पन्न होनेवाला। (२) वन-सबधी।

वन्या—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) सघन वन। (२) बन-समूह। (३) जल-प्लावन। (४) जल-राशि। (५) बेल, लता।

वपन—सज्ञा पु. [स.] (१) केशो का मुडन। (२) बीज बोना।

वपनी—सज्ञा स्त्री. [स.] वह स्थान जहाँ नाई क्षौर-कर्म करता हैं।

वपनीय—वि [स] बोने योग्य।

वपु—सज्ञा पु [स वपुस्] (१) शरीर, देह। (२) रूप।

वपुष्टमा—सज्ञा स्त्री. [स.] परीक्षित के पुत्र जन्मेजय की पत्नी जो काशीराज की पुत्री थी।

वफा—सज्ञा स्त्री [अ. वफा.] (१) वादा पूरा करना। (२) पूर्णता, निर्वाह। (३) मुरौव्वत, शालीनता।

वफादार—वि [अ वफा.+फा दार] (१) बात निबाहने वाला। (२) निबाहनेवाला। (३) सच्चा।

वफात—सज्ञा स्त्री. [अ वफात] मृत्यु।

वमन—सज्ञा पु. [स.] कै, उलटी।

वमि—सज्ञा स्त्री [स.] (१) जी मचलाने का रोग। (२) आग, अग्नि।

वय सर्व [स] हम।

वय:क्रम—सज्ञा पु [स.] अवस्था, आयु।

वय सधि—सज्ञा स्त्री [स.] बाल्य और यौवनावस्था के बीच की स्थिति, अवस्था या समय।

वय - सज्ञा स्त्री. [स. वयस्] आयु, अवस्था।

वयक्रम – सज्ञा पु. [स वय क्रम] आयु, अवस्था। उ —एक वयक्रम एकहि बानक रूप गुन की सीव—२०७२।

वयन—सज्ञा पु [स.] बुनने का काम।

वयस्—सज्ञा पु. [स] आयु, अवस्था।

वयस्क—वि. [स.] (१) जो बालक न हो, सयाना। (२) अवस्था का।

वयस्य—सज्ञा पु. [स.] (१) हमजोली, समवयस्क। (२) मित्र।

वयोवृद्ध—वि. [सं.] बड़ा-बूढ़ा।

वरंच—अव्य [स.] (१) ऐसा न होकर ऐसा, बल्कि, अपितु। (२) लेकिन, परतु।

वर—सज्ञा पु. [स.] (१) वह बात या मनोरथ जिसकी पूर्ति के लिए किसी बड़े या देवी-देवता से प्रार्थना की जाय। (२) किसी बड़े या देवी-देवता से प्राप्त फल या सिद्धि। (३) दूल्हा।

वि. श्रेष्ठ, उत्तम। उ.—मन के मनोज फूले हलधर वर के—१०-३४।

वरक—सज्ञा पु. [अ. वरक] (१) पत्र, पन्ना, सफा। (२) सोने, चाँदी आदि का बहुत महीन पत्तर जो मिठाइयो आदि पर लगाया जाता है।

वरण—सज्ञा पु. [स.] (१) कन्या के विवाह में वर को स्वीकारने की रीति। (२) पूजा, अर्चना।

वरणा—सज्ञा स्त्री. [स.] काशी के उत्तर में बहनेवाली एक छोटी नदी।

वरणीय—वि. [स] (१) पूज्य। (२) श्रेष्ठ।

वरद—वि. [स.] मनोरथ पूर्ण करनेवाला।

वरदा—सज्ञा स्त्री [स.] कन्या।

वरदान—सज्ञा पु. [स.] (१) किसी बड़े या देवी-देवता का प्रसन्न होकर (दूसरे का) अभीष्ट सिद्ध करना। (२) किसी की प्रसन्नता से होनेवाला लाभ।

वरदानी—वि. [स.] मनोरथ पूर्ण करनेवाला।

वरन्—अव्य. [स. वरम्] ऐसा नहीं, बल्कि।

वरना—सज्ञा पु. [स. वरण] ऊँट। उ.—वरना-भख कर मे अवलोकत केस पास कृत बद। अधर समुद्र सदल जो सहसा ध्वनि उपजत सुख कद।

अव्य. [फा. वर्न] नहीं तो, ऐसा न हुआ तो।

वरम—सज्ञा पु [फा] सूजन।

वरयात्रा—सज्ञा स्त्री. [स] विवाह के लिए वर का बंधु-बाधवो सहित वधू के यहाँ जाना।

वरही—सज्ञा पु. [हि वर] सोने की 'टीका' नामक पट्टी जो विवाह मे वधू को पहनायी जाती है।

सज्ञा पु. [हिं. बर्हो] मोर, मयूर।

वरांगना—सज्ञा स्त्री [स] सुदरी नारी ।
वराक—वि [स.] (१) दरिद्र । (२) दयनीय । (३) अभागा, दीनहीन । (४) नीच ।
वराट, वराटक—सज्ञा पु. [स] कौड़ी ।
वराटिका—सज्ञा स्त्री. [स.] कौड़ी ।
वरानना—सज्ञा स्त्री. [स.] सुदरी नारी ।
वरासन—सज्ञा पु [स] (१) श्रेष्ठ आसन । (२) विवाह में वर का आसन ।
वराह—सज्ञा पु [स] (१) शूकर । (२) विष्णु ।
वराही—सज्ञा स्त्री [स.] शूकरी, सूअरी ।
वरिष्ठ—वि. [स.] श्रेष्ठ, पूज्य ।
वरीयता—सज्ञा स्त्री [स.] किसी को औरो से श्रेष्ठ मानना, समझना या कहना ।
वरु—सज्ञा पु. [स वर] वर, दूलह । उ.- मोर मुकुट रचि मौर बनायो माथे पर धरि हरि वरु आयो—पृ० ३४८ (२) ।
वरुण—सज्ञा पु [सं.] (१) एक वैदिक देवता जो जल के अधिपति कहे गये हैं । पुराण इन्हे पश्चिम दिशा का दिक्पाल कहते हैं । साहित्य में इन्हे करुण रस का अधिष्ठाता माना गया है । इनका प्रसिद्ध अस्त्र पाश है । (२) जल ।
वरुणपाश—सज्ञा पु. [स] (१) वरुण का अस्त्र पाश । (२) 'नाक' या 'नक्र' नामक जल-जतु ।
वरुणालय—सज्ञा पु [स] समुद्र ।
वरुथ - सज्ञा पु [स.] (१) बख्तर, कवच । (२) ढाल । (३) फौज, दल, सेना ।
वरुथिनी—सज्ञा स्त्री. [स] सेना, सैन्य ।
वरेण्य—वि [स.] (१) मुख्य । (२) पूजनीय ।
वर्ग—सज्ञा पु [स] (१) एक ही प्रकार की अनेक वस्तुओ का समूह । (२) रीति-नीति या आचार-विचार में समान भाव रखनेवाले व्यक्तियों या पदार्थों का समूह । (३) विभाग, परिच्छेद । (४) बराबर लबाई-चौड़ाई वाला चौखूँटा क्षेत्र जिसके चारो कोण समकोण हों ।
वर्चस—सज्ञा पु. [स] (१) रूप । (२) कांति, प्रभा ।
वर्चस्व—सज्ञा पु [स] (१) तेज । (२) श्रेष्ठता ।
वर्जन—सज्ञा पु [स] (१) त्याग । (२) निषेध, मनाही ।
वर्जना - क्रि. स [स वर्जन] मना करना ।
वर्जित—वि [स] (१) त्यागा हुआ । (२) जो ग्रहण के अयोग्य हो, निषिद्ध ।
वर्ण—सज्ञा पु [स] (१) रग । (२) प्राचीन आर्यो द्वारा जन-समुदाय के किये गये चार विभाग—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र । (३) भेद, प्रकार । (४) अक्षर । (५) गुण ।
वर्णन—सज्ञा पु. [स.] (१) चित्रण । (२) सविस्तार कथन । उ.—सो चौबीस रूप निज कहियत वर्णन करत विचार । (३) गुण कथन, प्रशसा ।
वर्णनातीत—वि [स.] जिसका वर्णन न हो सके ।
वर्णमाला—सज्ञा स्त्री [सं] किसी लिपि के अक्षरो की क्रमानुसार सूची ।
वर्णविकार—सज्ञा पु. [स] शब्द के एक वर्ण का परिवर्तित होकर दूसरा हो जाना ।
वर्णविचार—सज्ञा पु. [स.] व्याकरण का वह अग जिसमें वर्णो के आकार, उच्चारण, संधि-नियम आदि का वर्णन हो ।
वर्णविपर्यय—सज्ञा पु [स वर्ण + विपर्यय] शब्द में वर्णो का उलटफेर ।
वर्णवृत्त—सज्ञा पु [स] वह छंद जिसके चरणो में वर्णो की सख्या और लघु-गुरु-क्रम में समानता हो ।
वर्णसकर—वि [स.] जो भिन्न जातियो के स्त्री-पुरुष के सयोग से जन्मा हो ।
वर्णिक—वि. [स] जिस (छद) के चरणो में अक्षरो की संख्या और लघु-गुरु-क्रम मे समानता हो ।
वर्णित—वि [स] (१) कहा हुआ । (२) वर्णन किया हुआ ।
वर्णना—क्रि. स. [स वर्णन] वर्णन करना ।
वर्णिये - क्रि स. [हि वर्णना] वर्णन कीजिए । उ.—और कहाँ लगि वर्णिये पर-पुरुष न उबरन पावै—पृ० ३४९ (५९) ।
वर्ण्य—वि. [स.] (१) जो वर्णन का विषय हो । (२) जो वर्णन करने के उपयुक्त हो ।
वर्तन—सज्ञा पु [स वर्त्तन] (१) व्यवहार बर्ताव ।

(२) व्यवसाय, जीवन-वृत्ति। (३) बटना, घुमाना। (४) फेरफार परिवर्तन। (५) सिल-बट्टे से पीसना।

वर्तमान—वि [स. वर्त्तमान] (१) जो चल रहा हो। (२) उपस्थित, विद्यमान। (३) हाल का।

सज्ञा पु (१) व्याकरण में क्रिया का वह काल जिससे उसका चलता रहना (समाप्त न होना) सूचित हो। (२) समाचार, वृत्तांत। (३) चलता व्यवहार।

वर्ति—सज्ञा स्त्री [स. वर्त्ति] बत्ती।

वर्तिका—सज्ञा स्त्री. [स. वर्त्तिका] सलाई, शलाका।

वर्तित—वि. [स] (१) चलाया या जारी किया हुआ। (२) किया हुआ, सपादित।

वर्ती—सज्ञा स्त्री [स वर्त्तिन्] (१) बत्ती। (२) सलाई।

वर्तुल—वि. [स वर्त्तुल] गोल, वृत्ताकार।

वर्त्म—सज्ञा पु. [स.] गाड़ी के पहिए का मार्ग, लीक।

वर्द्धक—वि [स] बढ़ानेवाला।

वर्द्धन—सज्ञा पु. [स.] (१) बढ़ाने की क्रिया या भाव। (२) वृद्धि, बढ़ती, उन्नति।

वर्द्धमान—वि. [स] (१) बढ़ता हुआ। (२) बढनेवाला।

सज्ञा पु. जैनियो के २४ वें जिन, महावीर।

वर्द्धित—वि. [स] बढा हुआ।

वर्म—सज्ञा पु. [स. वर्म्मन] कवच।

वर्य्य—वि. [स.] (१) श्रेष्ठ। (२) प्रधान।

वर्ष—सज्ञा पु [स.] साल, सवत्सर।

वर्षगाँठ—सज्ञा स्त्री [स. वर्ष + हि. गाँठ] पूरे वर्ष के बाद आनेवाला जन्म दिन, सालगिरह।

वर्षा—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) वह ऋतु जब खूब पानी बरसता है। (२) पानी बरसने की क्रिया या भाव।

मुहा०—(किसी चीज की) वर्षा होना - (मेघ की तरह ऊपर से) बहुत अधिक बरसना। (२) बहुत अधिक सख्या मे मिलना।

वर्षागम—सज्ञा पु [स] वर्षा ऋतु का प्रारंभ।

वर्ही—सज्ञा पु. [स वर्हिन्] मोर, मयूर।

वलभी—सज्ञा स्त्री. [स] (१) घर के ऊपरी शिखर पर बना मडप। (२) कठियावाड़ की एक प्राचीन नगरी।

वलय—सज्ञा पु. [स] (१) मडल। (२) चूड़ी।

वलाहक—सज्ञा पु. [स.] (१) मेघ, बादल। (२) पर्वत। (३) श्रीकृष्ण के रथ के एक घोडे का नाम।

वलि—सज्ञा पु [स.] (१) लकीर, रेखा। (२) झुर्री। (३) दैत्यराज प्रहलाद का पौत्र जिसे विष्णु ने वामन अवतार लेकर छला था।

वलित—वि [स.] (१) लचक या बल खाया हुआ। (२) मोडा या झुकाया हुआ। (३) घेरा हुआ। (४) जिसमें सिकुड़न या झुर्रियाँ पडी हो। (५) लगा या लिपटा हुआ। (६) ढका हुआ। (७) युक्त, सहित।

वली—सज्ञा स्त्री [स.] (१) झुर्री, सिकुडन। (२) लकीर, रेखा। (३) पेटी के सिकुड़ने से पेट के दोनो ओर पड़ जानेवाली रेखा।

सज्ञा पु [अ.] (१) स्वामी। (२) सा‍धु, फकीर।

वल्कल—सज्ञा पु. [स.] (१) पेड़ की छाल। (२) पेड की छाल का बना वस्त्र जिसे तपस्वी पहना करते थे।

वल्कली—वि. [स. वल्कलिन्] वल्कल का वस्त्रधारी।

वल्गा—सज्ञा स्त्री [स.] घोड़े की बाग, लगाम।

वल्द—सज्ञा पु [अ.] बेटा, पुत्र।

वल्दियत—सज्ञा स्त्री. [अ.] पिता के नाम का पता।

वल्मीक—सज्ञा पु. [स] (१) दीमको की बाँबी। (२) वाल्मीकि मुनि।

वल्लभ—वि. [स.] अत्यत प्रिय, प्रियतम।

सज्ञा पु (१) नायक। (२) पति। (३) स्वामी। (४) एक प्रसिद्ध आचार्य जिनका जीवनकाल सन् १४७९ से १५३१ तक माना जाता है। ये वैष्णव सम्प्रदाय के प्रवर्त्तक थे और इनका सम्प्रदाय 'वल्लभ-सम्प्रदाय' कहलाता है। सूरदास इन्ही के शिष्य थे।

वल्लभा, वल्लभी—सज्ञा स्त्री [स.] (१) प्रियतमा। (२) पत्नी।

वि. स्त्री. अत्यत प्रिय।

वल्लभिनि—सज्ञा स्त्री. बहु [स. वल्लभी] प्रियतमाओं (का)। उ—सुरति सँदेस सुनाइ मेटौ वल्लभिनि को दाहु—२९२०।

वल्लरि, वल्लरी—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) लता, बेल। (२) मंजरी।

वल्ली—सज्ञा स्त्री. [स] लता। उ द्रुमनि वर वल्ली वियोगिनि मिलति है पहिचानि—२८२८।

वल्वल—सज्ञा पु. [स.] एक दैत्य जिसे बलराम ने मारा था। उ —राम दिन कइक ता ठौर औरहू रहे, आइ वल्वल तहा दियौ दिखाई। रुधिर अरु मास की लग्यौ वर्षा करन ऋषि सकल देखि कै गय डराई।

वशंवद—वि [स.] आज्ञाकारी।

वश—सज्ञा पु [स] (१) इच्छा। (२) अधिकार।

मुहा०—(किसी के) वश मे होना—(१) अधीन होना। (२) कहे मे होना। (किसी पर) वश होना—(१) अधिकार होना। (२) कहे के अनुसार काम करा लेना। वश का—(१) जिस पर अधिकार हो। (२) जिससे इच्छानुसार काम कराया जा सके।

(३) शक्ति, सामर्थ्य।

मुहा०—वश का – जिसका पूरा करना शक्ति या सामर्थ्य में हो। वश चलना— कुछ कर सकने की शक्ति या सामर्थ्य होना।

(४) अधिकार या प्रभुत्व मे लाने का भाव। उ —हरि कछु ऐसो टोना जानत। सबके मन अपने वश आनत।

वशवर्त्ती—वि. [स. वशवर्त्तिन्] अधीन, आज्ञानुवर्त्ती।

वशित्व—सज्ञा पु. [स] आठ सिद्धियो मे एक जिससे सबको वश मे किया जा सकता है।

वशी—वि. [स. वशिन्] (१) वश में रखनेवाला। (२) अधीन किया हुआ।

वशीकरण—सज्ञा पु. [स] (१) वश में करने की क्रिया। (२) मन्त्रादि से किसी को वश में करने का प्रयोग।

वशीकृत—वि [स.] (१) वश मे किया हुआ। (२) मंत्रादि से वश में किया हुआ। (३) मोहित, मुग्ध।

वशीभूत—वि. [स.] (१) अधीन। (२) इच्छानुसार कार्य करने को विवश।

वश्य—वि. [स.] अधीन, वशीभूत। उ.—लूटत रूप अखूट दाम को स्याम वश्य यो मोर—पृ ३२४ (३३)।

वश्यता—सज्ञा स्त्री [स.] अधीनता।

वसंत—सज्ञा पु. [स.] (१) भारतीय वर्ष की सर्वप्रथम ऋतु जो चैत और बैसाख में होती है। उ.—ब्रज बनितनि के नैन प्रान बिच तुमही स्याम वसत—मारा. ५८१। (२) छह रागो मे दूसरा।

वसततिलका—सज्ञा स्त्री [स] एक वर्ण वृत्त।

वसंतपंचमी—सज्ञा स्त्री. [स] माघ के शुक्ल पक्ष की पचमी जिसे 'श्रीपचमी' भी कहते है। इस दिन वसत और रति सहित काम की पूजा का विधान है। उ. —प्रथम वसतपचमी लीला सूरदास यश गायौ—२३९१।

वसंत महोत्सव – सज्ञा पु [स] (१) वसत पचमी के दूसरे दिन वसत और काम की पूजा के उपलक्ष में मनाया जाने वाला उत्सव। (२) होलिकोत्सव।

वसंतसखा—सज्ञा पु [स] कामदेव।

वसती—सज्ञा पु. [स. वसत] हल्का पीला रग।

वि. सरसो के फूल जैसे हल्के पीले रग का।

वसतोत्सव—सज्ञा पु. [स.] (१) वसत पचमी के दूसरे दिन वसत और कामदेव की पूजा का उत्सव जिसे 'मदनोत्सव' भी कहते हैं। (२) होलिकोत्सव।

वसन—सज्ञा पु. [स.] (१) वस्त्र। उ.—रजक मारि हरि प्रथम ही नृप वसन लुटाए—२५७९। (२) ढकने की वस्तु, आवरण।

वसना—सज्ञा स्त्री. [स] (स्त्री की) कमर या कटि का एक भूषण।

वसवास—सज्ञा पु. [अ.] (१) भ्रम, सदेह। (२) भुलावा, बहकावा, प्रलोभन।

वसवासी—वि. [अ. वसवास] (१) सदेह में पड़ने वाला। (२) भुलावे मे डालने वाला।

वसह—सज्ञा पु. [स वृषभ, प्रा. वसह] बैल। उ.—अमरा सिव रवि ससि चतुरानन हय गय वसह हस मृग जावत—९७८।

वसा—सज्ञा स्त्री [स.] मेद, चरबी।

वसिष्ठ—सज्ञा पु [स.] (१) एक प्राचीन ऋषि जो ऋग्वेद के अनेक मंत्रो के द्रष्टा माने जाते हैं। कामधेनु के लिए वसिष्ठ और विश्वामित्र का बहुत समय तक झगड़ा होता रहा। अपनी अनेक पत्नियो में वसिष्ठ को अरुंधती विशेष प्रिय थी। (२) सप्तर्षि

मडल का एक तारा जिसके पास का छोटा तारा 'अरुधती' कहा जाता है।

वसीका—सज्ञा पु [अ वसीका] वह धन जो सरकारी खजाने में इसलिए जमा किया जाय कि उसका ब्याज जमा करनेवाले के सबधियो को मिलता रहे।

वसीयत—सज्ञा स्त्री [अ] मरणासन्न व्यक्ति द्वारा अपनी सपत्ति-सबधी लिखी गयी व्यवस्था।

वसीला—सज्ञा पु [अ] (१) सहारा। (२) सिद्धि का उपाय।

वसुंधरा—सज्ञा स्त्री [स] पृथ्वी।

वसु—सज्ञा पु [स.] (१) एक देव-गण जिसमे आठ देवता है। (२) आठ की सख्या।

वसुदेव—सज्ञा पु [स] शूर कुल के एक यदुवशी राजा जिनके पिता का नाम देवमीढ और माता का मारिषा था। इनकी बारह पत्नियों मे रोहिणी के गर्भ से बलराम और देवकी से श्रीकृष्ण जन्मे थे। इनकी बहन कुती पांडवो की माता थी।

वसुधा—सज्ञा स्त्री [स.] पृथ्वी।

वसुमति, वसुमती—सज्ञा स्त्री [स] पृथ्वी।

वसुहस—सज्ञा पु [स.] वसुदेव का पुत्र और श्रीकृष्ण का भाई एक यादव।

वसूल—वि [अ.] प्राप्त, लब्ध।

वसूली—सज्ञा स्त्री [अ वसूल] रुपया वसूलने या चुकता कराने की क्रिया।

वस्ति—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) नाभि के नीचे का भाग, पेडू। (२) पिचकारी।

वस्तिकर्म—सज्ञा पु. [स] गुदा मार्ग आदि मे पिचकारी देने की क्रिया।

वस्तु—सज्ञा स्त्री [स.] (१) वह जिसका अस्तित्व हो। (२) चीज, पदार्थ।

वस्तुज्ञान—सज्ञा पु [स] (१) किसी वस्तु की पहचान। (२) तथ्य-बोध, तत्वज्ञान।

वस्तुत.—अव्य [स] वास्तव में, यथार्थत।

वस्तुवाद —सज्ञा पु. [स.] एक दार्शनिक सिद्धात जिसमे जगत जैसा दृश्य है उसी रूप में उसकी सत्ता मानी जाती है।

वस्त्र—सज्ञा पु [स.] कपडा।

वस्फ—सज्ञा पु [अ वस्फ] (१) प्रशसा। (२) विशेषता।

वह—सर्व [स स] (१) वक्ता द्वारा श्रोता से तीसरे व्यक्ति या पदार्थ की ओर सकेत करनेवाला एक सर्वनाम। (२) दूर या परोक्ष की वस्तु की ओर सकेत करनेवाला एक सर्वनाम।

वहन—सज्ञा पु [स.] (१) खीच या लादकर ले जाना। (२) ऊपर लेना, उठाना।

वहना—क्रि स [स वहन] (१) ढोना। (२) अपने ऊपर लेना।

वहम—सज्ञा पु. [अ] (१) मिथ्या धारणा। (२) भ्रम। (३) व्यर्थ की शका या सदेह।

वहमी—वि [अ वहम] (१) मिथ्या धारणा जनित। (२) जो वहम करता हो।

वहशत—सज्ञा स्त्री [अ] (१) जगलीपन। (२) पागलपन। (३) उदासी, सन्नाटा।

वहशी—वि [अ] (१) जगली। (२) असभ्य।

वहाँ—अव्य. [हि. वह] उस स्थान पर।

वहि अव्य [स] जो अदर या भीतर न हो, बाहर।

वहिनी—सज्ञा स्त्री. [स] नाव, नौका।

वहिरग—सज्ञा पु [स] ऊपरी या बाहरी भाग।

वि (१) ऊपरी, बाहरी। (२) जो सार-रूप न हो। (३) अनावश्यक।

वहिर्गत—वि [स.] बाहर या ऊपर की ओर निकला या गया हुआ।

वहिर्लापिका—सज्ञा स्त्री [स] पहेली।

वहिष्कृत—वि [स.] निकाला या त्यागा हुआ।

वहीं—अव्य [हि वहाँ+हीं] उसी स्थान पर।

वही—सर्व. [हि वह+ही] (१) पूर्वोक्त ही। (२) निर्दिष्ट ही, अन्य नहीं।

वहै—सर्व. [हि वह+ही] (१) वैसा ही। उ —ज्यौ गयद अन्हाइ सरिता बहुरि वहै सुभाइ—१-४५। (२) वह ही। उ.—उलटि जाहु नृप-बरन-सरन मुनि वहै राखिहै भाई—९-७।

वह्नि—सज्ञा पु. [स.] (१) अग्नि। उ.—ज्यौ घृत होम

वह्नि की महिमा सूर प्रगट या माही—१६९२। (२) **श्रीकृष्ण का मित्रविंदा से उत्पन्न एक पुत्र।**

वह्निमित्र—सज्ञा पु. [स.] **हवा, वायु।**

वह्निमुख—संज्ञा पु [स] **देवता।**

वाँ—अव्य. [हिं. वहाँ] **उस स्थान पर।**

वांछना—सज्ञा स्त्री [हिं. वाछा] **इच्छा, चाह।** उ—यह वाछना होइ क्यो पूरन दासी ह्वै बरु ब्रज रहिए—पृ० ३४४ (३२)।

वांछनीय—वि. [स] (१) **चाह या इच्छा के योग्य।** (२) **जिसकी चाह या इच्छा हो।**

वांछा—सज्ञा स्त्री. [स. वाञ्छा] **चाह, इच्छा।**

वांछित—वि. [स.] **चाहा हुआ, इच्छित।** उ—(क) सो निज गोपी चरण-रज वाछित हो तुम देव—१८६१। (ख) घर-घर नगर अनद बधाई मनवाछित फल सबनि लह्यो—२६४४।

वांति—सज्ञा स्त्री. [स] **कै, उलटी, वमन।**

वा—अव्य. [स.] **या, अथवा।**

सर्व. [हि वह] (१) **व्रजभाषा में प्रथम पुरुष का कारक चिह्न लगने के पूर्व एकवचन रूप।** (२) **उस।** उ—(क) जाइ समाइ सूर वा निधि मै, बहुरि जगत नहि नाचै—१-८१। (ख) वा घट मैं काहू कै लरिका मेरो माखन खायौ—१०-१५६।

वाइ—सर्व. [हि· वाहि] **उसे ही।**

सज्ञा स्त्री [हिं. वायु] **हवा, वायु।** उ—आसन ध्यान वाइ आराधन अलि मन चित तुम ताए—२९९१।

वाउ—सज्ञा स्त्री. [हिं. वायु] **हवा, वायु।** उ.—उठत बिरह धूम पावक जरि बरि वाउ बह्यो—३११४।

वाकई—अव्य. [अ. वाकई] **सचमुच, वास्तव में।**

वाकया—सज्ञा पु [अ. वाकया] (१) **घटना।** (२) **समाचार।**

वाकि—सर्व [हिं. वा+की] **उसकी।** उ.—एते पर मन हरत है री कहा कहौ गति वाकि—२४१३।

वाकिफ—वि [अ. वाकिफ] (१) **जानकार।** (२) **अनुभवी।**

वाकी—सर्व· [हिं. वा+की] **उसकी।** उ.—(क) सपति दै वाकी पतिनी को—१-७। (ख) वाकी पैज सरै—१-८२।

वाके—सर्व. [हि. वा+के] **उसके।** उ.—कपट-लोभ वाके दोउ भैया—१-१७३।

वाको, वाकौ—सर्व. [हिं वा+को, कौ] **उसको।** उ.—मैया री, मै जानत वाकौ—६९४।

वाक्—सज्ञा पु. [स.] (१) **वाणी, वाक्य।** (२) **बोलने की इद्रिय।** (३) **सरस्वती।**

वाक्चपल वि. [स.] (१) **बहुत बाते करनेवाला।** (२) **कोरी बातें करनेवाला, भड़भड़िया।**

वाक्छल—सज्ञा पु. [स.] **धोखा देने के लिए श्लिष्ट या भ्रामक शब्दो का प्रयोग।**

वाक्पटु—वि. [स] **बात करने में चतुर।**

वाक्फियत—सज्ञा स्त्री. [अ. वाक्फियत] **जानकारी।**

वाक्य—सज्ञा पु. [स] **कर्त्ता-क्रिया से युक्त सार्थक पद-समूह जो वक्ता के अभिप्राय का बोधक हो।**

वाक्यविन्यास—सज्ञा पु. [स.] **वाक्य-रचना।**

वाक्संयम - सज्ञा पु [स] **वाणी पर नियत्रण रखकर व्यर्थ बाते न करना।**

वाक्सिद्धि—सज्ञा स्त्री. [सं.] **वह सिद्धि जिससे कही हुई बात ठीक उतरे।**

वाक्यांश—सज्ञा पु [स.] **वाक्य का कुछ अश।**

वागा—सज्ञा स्त्री. [स.] **लगाम, वल्गा।**

वागीश—वि. [स] **अच्छा बोलनेवाला, सुवक्ता।**

वागीशा - सज्ञा स्त्री [स.] **सरस्वती।**

वागीश्वर—वि [स.] **अच्छा बोलनेवाला, सुवक्ता।**

वागीश्वरी—सज्ञा स्त्री. [स.] **सरस्वती।**

वाग्जाल—सज्ञा पु. [स.] **बातों का आडबर।**

वाग्दंड—सज्ञा पु. [स.] **मौखिक दड, डाँट-डपट।**

वाग्दत्त—वि. [स.] **जिसको देने की बात कही जा चुकी हो।**

वाग्दत्ता—सज्ञा स्त्री. [स.] **वह कन्या जिसके विवाह की बात मौखिक रूप से पूर्णतया निश्चित हो चुकी हो।**

वाग्दान—सज्ञा पु. [स] **सुयोग्य पात्र के साथ अपनी पुत्री का विवाह करने का मौखिक निश्चय।**

वाग्देवी—सज्ञा स्त्री. [स.] **वाणी, सरस्वती।**

वाग्दोष—सज्ञा पु. [स.] बोलने की उच्चारण-जैसी या व्याकरण-संबंधी त्रुटि ।

वाग्मी—वि [स] अच्छा बोलनेवाला, सुवक्ता ।

वाग्विदग्ध—वि. [स] बातचीत में चतुर ।

वाग्विलास—सज्ञा पु. [स] आनंददायी सभाषण ।

वाग्वैदग्ध्य—सज्ञा पु [स.] (१) बात करने का कौशल । (२) अलकारो और चमत्कारपूर्ण उक्तियो के व्यवहार का कौशल ।

वाङ्मय—वि [स] जो पठन-पाठन का विषय हो । सज्ञा पु. साहित्य ।

वाङ्मयी—सज्ञा स्त्री. [स.] सरस्वती ।

वाच्—सज्ञा स्त्री [स.] वाणी, वाक्य ।

वाचक—वि [स.] सूचक, बोधक, द्योतक । सज्ञा पु. नाम, संज्ञा, स्रोत ।

वाचन—सज्ञा पु. [स.] पढ़ना, बांचना ।

वाचयिता—वि. [स वाचयितृ] बांचनेवाला, वाचक ।

वाचस्पति—सज्ञा पु. [स.] बृहस्पति ।

वाचा—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) वाणी । (२) वचन ।

वाचाबंध—वि. [स. वाचाबद्ध] प्रतिज्ञाबद्ध, वचनबद्ध । उ —वाचाबध कस करि छाँड्यो तब बसुदेव पतीजे हो । याके गर्भ अवतरे जे सुत सावधान ह्वै लीजे हो ।

वाचाबद्ध—वि. [स] वचन या प्रतिज्ञाबद्ध ।

वाचाल—वि [स.] (१) बकवादी । (२) वाकपटु ।

वाचालता—सज्ञा स्त्री. [स] (१) बकवादीपन । (२) वाक्पटुता ।

वाचिक—वि. [स.] (१) वाणी सबधी । (२) वाणी से किया हुआ । (३) संकेत द्वारा सूचित ।

वाची—वि. [स. वाचिन्] बोधक, सूचक ।

वाच्य—वि. [स] जिसका बोध शब्द-सकेत अथवा अभिधा द्वारा हो, अभिधेय ।

वाच्यार्थ—सज्ञा पु [स.] वह अभिप्राय जो शब्दो के सामान्य अर्थ द्वारा ही सूचित हो, मूल शब्दार्थ ।

वाजपेय—सज्ञा पु [स.] यज्ञ-विशेष ।

वाजपेयी—सज्ञा पु. [स.] (१) वाजपेय यज्ञ करनेवाला । (२) अत्यंत कुलीन व्यक्ति । (२) कान्यकुब्ज ब्राह्मणो की एक उपाधि ।

वाजिब—वि. [अ.] ठीक, उचित ।

वाजिबी - वि [अ] ठीक, उचित ।

वाजिमेध—सज्ञा पु [स.] अश्वमेध ।

वाजिराज—सज्ञा पु. [स] (१) उत्तम अश्व । (२) उच्चैश्रवा ।

वाजी—सज्ञा पु [स वाजिन्] घोड़ा, अश्व ।

वाजीकरण—सज्ञा पु [स.] अश्व के समान रति-शक्तिवाला प्रयोग ।

वाट—सज्ञा पु [स] (१) मार्ग । (२) मडप ।

वाटिका—सज्ञा स्त्री. [स.] बाग, बगीचा ।

वाड़व—सज्ञा पु. [स] समुद्री आग ।

वाड़वागि, वाड़वाग्नि—सज्ञा स्त्री [स वाडवाग्नि] समुद्री आग ।

वाण—सज्ञा पु. [स] तीर ।

वाणिज्य—सज्ञा पु. [स] व्यापार ।

वाणी—सज्ञा स्त्री [स] (१) सरस्वती । (२) वाक्-शक्ति । उ —इतनी कहत गरुण पर चढ़िकै तुरतहिं मधुबन आए । कञ्ज कपोल परसि बालक के वाणी प्रगट कराये । (३) मुँह से निकले शब्द, वचन । उ. —सबन सुनाइ कही यह वाणी इह नँदनद कह्यौ—२५७८ । (४) जीभ, रसना । उ.—नैन निरखि चकित ह्वै गये, मन वाणी दोऊ थकित रये । (५) स्वर ।

वात—सज्ञा पु. [स] (१) हवा, वायु । (२) शरीर के भीतर की वायु जो श्वास, प्रश्वास आदि कार्यो का मूल है और जिसके कुपित होने से अनेक रोग होते है ।

वातज—वि. [स] वायु द्वारा उत्पन्न ।

वातपट—सज्ञा पु. [स.] ध्वजा, पताका ।

वातपुत्र—सज्ञा पु. [स.] (१) हनुमान । (२) भीम ।

वातायन—सज्ञा पु. [स] झरोखा, गवाक्ष ।

वातावरण—सज्ञा पु [स] (१) वह हवा जो पृथ्वी को घेरे है । (२) आसपास की परिस्थिति ।

वातुल—वि. [स] बावला, उन्मत्त ।

वातै—सर्व. [हि वा+तै] उससे । उ.—वातै दूनी देह धरी, असुर न सक्यौ सम्हारि—४३१ ।

वात्या—सज्ञा स्त्री [स.] बवंडर ।

वात्सल्य—संज्ञा पुं. [सं.] वह स्नेह जो माता, पिता, गुरु आदि में पुत्र, पुत्री, शिष्य आदि छोटों के प्रति होता है।

वात्सल्य-भाजन—वि. [सं.] स्नेहपात्र।

वाद्—संज्ञा पुं. [सं.] दलील, तर्क, शास्त्रार्थ।

वादक—वि. [सं.] (१) तर्क करनेवाला। (२) बाजा बजानेवाला।

वादग्रस्त—वि. [सं.] जिसके संबंध में मतभेद हो।

वादत—क्रि. अ. [हिं. वादना] कहना, बोलना। उ. बादत बड़े सूर की नाईं अबहिं लेत हौं प्रान तुम्हारो—२५९०।

वादन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) बाजा। (२) बाजा बजाने की क्रिया।

वादना—क्रि. स. [सं. वादन] बाजा बजाना।

क्रि. अ. कहना, बोलना।

वादप्रतिवाद—संज्ञा पुं. [सं.] बहस, वादविवाद।

वादरायण—संज्ञा पुं. [सं.] वेदव्यास।

वादरायणि—संज्ञा पुं. [सं.] व्यास-पुत्र शुकदेव।

वादविवाद—संज्ञा पुं. [सं.] बहस, तर्क-वितर्क।

वादा—संज्ञा पुं. [अ. वाइदा] वचन, प्रतिज्ञा।

मुहा०—वादा करना—प्रतिज्ञा करना, वचन देना। वादा पूरा करना—वचन के अनुसार काम करना। वादा रखाना—प्रतिज्ञा करा लेना।

वादि—संज्ञा पुं. [सं.] विद्वान, पंडित।

अव्य. [हिं. बादि] व्यर्थ, निःप्रयोजन।

वादित—वि. [सं.] बजाया हुआ।

वादित्र—संज्ञा पुं. [सं.] बाजा, वाद्य।

वादिहि—अव्य. [हिं. बादि+हि] व्यर्थ ही, निष्प्रयोजन। उ.—वादिहि मरि जैहै पल भीतर कहे देत नहिं दोष हमारो—२५९०।

वादी—संज्ञा पुं. [सं. वादिन्] (१) बोलनेवाला। (२) अभियोग चलानेवाला।

वाद्य—संज्ञा पुं. [सं.] बाजा।

वाद्यक—संज्ञा पुं. [सं.] बाजा बजानेवाला।

वान—संज्ञा पुं. [सं. वाण] तीर, बाण।

वानप्रस्थ—संज्ञा पुं. [सं.] मनुष्य जीवन के चार आश्रमों में तीसरा आश्रम जो गार्हस्थ्य के पीछे और संन्यास के पहले पड़ता है। इसमें वैराग्य का अभ्यास किया जाता है। उ.—आपुहिं वानप्रस्थ ब्रह्मचारी—३४४२।

वानर—संज्ञा पुं. [सं.] बंदर।

वानरी—संज्ञा स्त्री. [सं.] बँदरिया।

वाप—संज्ञा पुं. [सं.] (१) बोना। (२) खेत।

वापक—संज्ञा पुं. [सं.] बीज बोनेवाला।

वापन—संज्ञा पुं. [सं.] बीज बोने का कार्य।

वापस—वि. [फ़ा.] लौटा हुआ।

वापसी—संज्ञा स्त्री. [फ़ा. वापस] लौटने या लौटाने की क्रिया या भाव।

वापिका—संज्ञा स्त्री. [सं.] बावली, जलाशय, वापी।

वापी—संज्ञा स्त्री. [सं.] छोटा जलाशय, बावली।

वाम—वि. [सं.] (१) बायाँ। उ.—वाम भाग की छवि टरत न मन तैं—२३५३। (२) प्रतिकूल। (३) टेढ़ा, कुटिल। (४) दुष्ट, नीच, बुरा।

संज्ञा पुं. (१) कामदेव (२) श्रीकृष्ण के एक पुत्र का नाम।

संज्ञा स्त्री. [सं. वामा] स्त्री। उ.—ताही मान्यो हेत करि इन, हँसति ब्रज की वाम—२५८२।

वामदेव—संज्ञा पुँ. [सं.] शिव, महादेव।

वामदेवी—संज्ञा स्त्री. [सं.] दुर्गा।

वामन—वि. [सं.] छोटे डील का, बौना।

संज्ञा पुं. विष्णु का पाँचवाँ अवतार जो राजा बलि को छलने के लिए अदिति के गर्भ से हुआ था।

वाममार्ग—संज्ञा पुं. [सं.] वेद-मार्ग के प्रतिकूल एक तांत्रिक मत जिसमें पंच मकार अर्थात् मद्य, मांस, मत्स्य, मुद्रा और मैथुन जैसी वर्जित बातों का ही विधान रहता है।

वामांगिनी—संज्ञा स्त्री. [सं.] पत्नी।

वामा—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) नारी। (२) दुर्गा।

वामाचार—संज्ञा पुं. [सं.] वेदमार्ग के प्रतिकूल एक तांत्रिक मत जिसमें पंच मकार अर्थात् मद्य, मांस, मत्स्य, मुद्रा और मैथुन जैसी वर्जित बातों का विधान रहता है।

वामावर्त—वि. [सं.] जो (परिक्रमा आदि) बायीं ओर

से आरंभ हो। (२) जिसमें बायीं और घुमाव या भँवरी हो।

वाय—संज्ञा स्त्री. [सं. वायु] हवा।

वायन—संज्ञा पुं. [सं.] पकवान आदि जो विशेषोत्सव के लिए बनाया जाय।

वायविक—वि. [सं.] वायुसंबंधी।

वायवी, वायव्य—वि. [सं.] (१) वायु-संबंधी (२) वायु से बना हुआ। (३) जिसका देवता वायु हो।

संज्ञा पुं. पश्चिमोत्तर दिशा जिसका अधिपति वायु है।

वायस—संज्ञा पुं. [सं. वायस्] कौआ। उ.—(क) बाँह थकी वायस हीं उड़ावत कब देखौं उनहार—२७६९। (ख) काज सरे दुख गए कहाँ धौं का बायस की पीर—३१००।

वायु—संज्ञा स्त्री. [सं.] हवा, वात।

वायुपुत्र—संज्ञा पुं. [सं.] (१) हनुमान। (२) भीम।

वायुभक्ष्य—संज्ञा पुं. [सं.] साँप, सर्प।

वायुमंडल—संज्ञा पुं. [सं.] आकाश।

वार—संज्ञा पुं. [सं.] (१) द्वार। (२) रोक। (३) अवसर। (४) सप्ताह का दिन। (५) दाँव, बारी। (६) आघात। उ.—जहाँ बरन-बरन बादर बानैत अरु दामिनि करि करि वार—१० उ-२१। (७) (नदी, समुद्र आदि का) किनारा।

वारक—वि. [सं.] निषेध करनेवाला।

वारण—संज्ञा पुं. [सं.] (१) मनाही, निषेध। (२) रुकावट, बाधा। (३) अंकुश। (४) हाथी।

वारत—क्रि. स. [हिं. वारना] निछावर करता है।

वारति—क्रि. स. [हिं. वारना] निछावर करती है। उ.—(क) छुद्रावली उतारति कटि तैं सैंति धरति मन ही मन वारति—५११। (ख) छबि निरखति तनु वारति अपनो—८७७। (ग) चितै रही मुख इंदु मनोहर या छबि पर वारति तन को।

वारतिय—संज्ञा स्त्री. [सं. वारस्त्री] वेश्या।

वारद—संज्ञा पुं. [सं. वारिद] बादल, मेघ।

वारदात—संज्ञा स्त्री. [अ.] (१) दुर्घटना। (२) दंगा-फसाद। (३) घटना-संबंधी समाचार।

वारन—संज्ञा स्त्री. [हिं. वारना] निछावर।

संज्ञा पुं. [सं. वंदन] बंदनवार। उ.—घर घर धुजा पताका बानी। तोरन वारन बासर ठानी।

संज्ञा पुं. [सं. वारण] हाथी। उ.—बारबार संकर्षण भाषत वारन बनि वारन करि न्यारो—२५९०।

वारना—क्रि. स. [हिं. उतारना] निछावर करना।

संज्ञा पुं. निछावर।

वारनारी—संज्ञा स्त्री. [सं.] वेश्या।

वारने—संज्ञा पुं. [हिं. वारना] निछावर। उ.—लटकन सीस कंठ मनि भ्राजत····कोटि वारने गै री।

प्र०—वारने करिया—निछावर कर दिये। उ.—उपमा काहि देउँ को लायक मन्मथ कोटि वारने करिया—६८८। वारने जाऊँ—निछावर हो जाऊँ बलि जाऊँ। उ.—कान्ह प्यारे वारने जाऊँ स्यामसुंदर मूरति पर—१५७६। जैए वारने—निछावर होइए, बलि जाइए। उ.—स्याम बरन घन सुंदर ऐसे नट-नागर के जैए री वारने—पृ. ३४५ (३७)।

वारनो—क्रि. स. [हिं. उतारना] निछावर करना।

संज्ञा पुं. निछावर।

वारपार—संज्ञा पुं. [सं. अवर+पार] (१) (नदी आदि का) इस किनारे से उस किनारे तक पूरा विस्तार। (२) यह छोर और वह छोर, अंत। उ.—(क) यह छबि नहिं वार-पार—६१९। (ख) सूर स्याम अँखियनि देखति जाको वार न पार—१३११।

अव्य. (१) इस किनारे से उस किनारे तक। (२) एक ओर से दूसरी ओर तक।

वारफेर—संज्ञा स्त्री. [हिं. वारना+फेरना] (१) वह धन जो विशेष अवसरों पर वर-वधू या अन्य प्रियजनों के सिर से उतार कर नाई, डोम आदि को दिया जाय। (२) निछावर।

वारमुखी—संज्ञा स्त्री. [सं.] वेश्या।

वारवधु, वारवधू—संज्ञा स्त्री. [सं. वारवधू] वेश्या।

वारस्त्री—संज्ञा स्त्री. [सं.] वेश्या।

वारांगणा, वारांगना—संज्ञा स्त्री. [सं. वारांगणा] वेश्या।

वारांनिधि—संज्ञा पुं. [सं.] समुद्र।

वारा—संज्ञा पुं. [सं. वारण] बचत, लाभ।

संज्ञा पुं. [हिं. बार] इधर का किनारा। उ.—सिंधु समान पार ना वारा—१०१८।

वि. [हिं. वारना] जो निछावर हुआ हो।

मुहा०—वारा जाना या होना—निछावर होना।

वाराणसी—संज्ञा स्त्री. [सं.] काशी का एक नाम जिसकी व्युत्पत्ति कुछ लोग वरुणा और असी नदियों के नाम पर, कुछ (वर+अनस्=जल) 'पवित्र जलवाली पुरी' और कुछ 'उत्तम रथोंवाली पुरी' बतलाते हैं।

वारान्यारा—संज्ञा पुं. [हिं. वार+न्यारा] (१) निर्णय, निश्चय। (२) निबटेरा, अंत।

वाराह—संज्ञा पुं. [सं.] (१) शूकर। (२) विष्णु का तीसरा अवतार।

वारि—संज्ञा पुं. [सं.] पानी, जल।

क्रि. स. [हिं. वारना] निछावर करके। उ.—देति अभूषन वारि वारि सब—१०-७८।

वारिए—क्रि. स. [हिं. वारना] निछावर कीजिए। उ.—सूर ऐसे बदन ऊपर वारिए तन प्रान—३५०।

वारिचर—संज्ञा पुं. [सं.] (१) जलजंतु। (२) मछली।

वारिज—संज्ञा पुं. [सं.] (१) कमल। (२) मछली। (३) शंख। (४) घोंघा। (५) कौड़ी। (६) खरा सोना।

वारिजात—संज्ञा पुं. [सं.] (१) कमल। (२) शंख।

वारित—वि. [सं.] जो रोका गया हो, निवारित।

वारिद—संज्ञा पुं. [सं.] मेघ, बादल।

वारिधर—संज्ञा पुं. [सं.] मेघ, बादल।

वारिधि—संज्ञा पुं. [सं.] समुद्र।

वारिनाथ—संज्ञा पुं. [सं.] (१) मेघ। (२) समुद्र। (३) वरुण।

वारिनिधि—संज्ञा पुं. [सं.] समुद्र।

वारियाँ—संज्ञा स्त्री. [हिं. वारी] निछावर।

वारिरुह—संज्ञा पुं. [सं.] कमल।

वारिवर्त—संज्ञा पुं. [सं. वारि+वर्त्त] एक मेघ का नाम। उ.—सुनत मेघवर्तक साजि सैन लाए। जलवर्त वारिवर्त पवनवर्त बज्रवर्त आगिवर्तक जलद संग ल्याए—९४४।

वारिवाह—संज्ञा पुं. [सं.] मेघ, बादल।

वारिस—संज्ञा पुं. [अ.] उत्तराधिकारी।

वारींद्र—संज्ञा पुं. [सं.] समुद्र।

वारी—वि. स्त्री. [हिं. वारा] निछावर। उ.—मोहन के मुख ऊपर वारी—१०-३०।

संज्ञा पुं. [सं. वारि] पानी, जल। उ.—अपनो दूध छाँड़ि को पीवै खार कूप को वारी—३३४०।

वारीफेरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. वारना+फेरना] (१) विशेष अवसरों पर दूल्हा-दुलहिन अथवा अन्य प्रियजनों के ऊपर से कुछ धन उतार कर नाई डोम आदि को देना। (२) निछावर।

वारीश—संज्ञा पुं. [सं.] समुद्र।

वारुणी—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) मदिरा। (२) वरुण की स्त्री, वरुणानी। (३) पश्चिम दिशा। (४) वृंदावन के एक कदंब का रस जो वरुण की कृपा से बलराम को मिला था। उ.—वारुणी बलराम पियारी—१० उ०-३९।

वारौं—क्रि. स. [हिं. वारना] निछावर कर दूँ।

वार्त्ता—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) जनश्रुति। (२) वृत्तांत। (३) विषय, प्रसंग। (४) बातचीत।

वार्तालाप—संज्ञा पुं. [सं.] बातचीत।

वार्तिक—संज्ञा पुं. [सं. वार्त्तिक] किसी ग्रंथ के क्लिष्ट अंश को स्पष्ट करने को लिखा गया भाष्य।

वार्द्धक्य—संज्ञा पुं. [सं.] (१) बुढ़ापा। (२) वृद्धि।

वार्षिक—वि. [सं.] (१) वर्ष संबंधी। (२) वर्ष भर का। (३) प्रति वर्ष होनेवाला। (४) वर्षाकाल में होनेवाला।

वार्ष्णेय—संज्ञा पुं. [सं.] श्रीकृष्ण।

वालिकुमार—संज्ञा पुं. [हिं. वाली+कुमार] अंगद।

वालदैन—संज्ञा पुं. [अ.] माता-पिता।

वाला—प्रत्य. [देश.] स्वामित्व, संबंध, अधिकार आदि का सूचक एक प्रत्यय।

वालिद—संज्ञा पुं. [अ.] पिता।

वालिदा—संज्ञा स्त्री. [अ.] माता।

वाली—संज्ञा पुं. [सं. वालिन्] वानरराज जो सुग्रीव का बड़ा भाई और अंगद का पिता था।

प्रत्य. स्त्री. [हिं. वाला] स्वामित्व, संबंध, अधिकार आदि सूचक एक स्त्रीलिंगवाची प्रत्यय।

वालुका—संज्ञा स्त्री. [सं.] रेत, बालू।

वाल्मीकि—संज्ञा पुं. [सं.] एक मुनि जो संस्कृत रामायण के रचयिता और आदि कवि कहे जाते हैं। इनका आश्रम तमसा नदी के किनारे था।

वावैला—संज्ञा पुं. [अ.] (१) रोना-पीटना। (२) शोरगुल, कोलाहल। (३) झगड़ा।

वाष्प—संज्ञा पुं. [सं.] (१) आँसू। (२) भाप।

वासंती—वि. [सं. वसंत] वसंत-संबंधी।

वास—संज्ञा पुं. [सं.] (१) निवास। (२) घर।

वासकसज्जा—संज्ञा स्त्री. [सं.] वह नायिका जो नायक से मिलने को घर आदि सजाकर और स्वयं भी सज-धज कर बैठी हो।

वासना—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) इच्छा। (२) भावना।

वासर—संज्ञा पुं. [सं.] (१) दिन, दिवस। उ.—आगम सुख उपचार विरह ज्वर वासर ताप नसावते—२७-३५। (२) वह घर जिसमें नवदंपति पहली रात को सोते हैं।

वासव—संज्ञा पुं. [सं.] इंद्र।

वासा—संज्ञा पुं. [सं. वास] निवास-स्थान।

वासित—वि. [सं.] (१) सुगंधित किया हुआ। (२) जो ताजा न हो, बासी।

वासिल—वि. [अ.] (१) पहुँचाया हुआ। (२) मिला हुआ।

यौ.—वासिल बाकी—वसूल और बाकी रकम। उ.—वासिल बाकी स्याहा मुजमिल सब अधरम की बाकी। चित्रगुप्त सु होत मुस्तौफी सरन गहूँ मैं काकी—१-१४३।

वासी—वि. [सं. वासिन्] रहने-बसनेवाला।

वासु—संज्ञा पुं. [सं. वास] रहना, निवास। उ.—विरहिनी वासु क्यों करै पावस काल प्रतीत—२८७६।

वासुकी—संज्ञा पुं. [सं.] आठ नागराजों में दूसरा जिसकी नेति बना कर सागर मथा गया था। उ.—वासुकी (बासुकी) नेति अरु मंदराचल रई कमठ में आपनी पीठि धारौं—८-८।

वासुदेव—संज्ञा पुं. [सं.] वसुदेव-पुत्र श्रीकृष्ण।

वासुदेवक—संज्ञा पुं. [सं.] श्रीकृष्ण का उपासक।

वासौं—सर्व. [हिं. वा + सौं] उससे। उ.—पै वासौं उत्तर नहिं लह्यौ—१-२९०।

वास्तव—वि. [सं.] प्रकृत, यथार्थ, सत्य।

यौ०—वास्तव में—सचमुच।

वास्तविक—वि. [सं.] (१) सत्य। (२) ठीक।

वास्तविकता—संज्ञा स्त्री. [सं.] यथार्थता।

वास्ता—संज्ञा पुं. [अ.] लगाव, संबंध।

वास्तु—संज्ञा पुं. [सं.] (१) घर। (२) इमारत।

वास्ते—अव्य. [अ.] (१) लिए निमित्त। (२) हेतु।

वाह—संज्ञा पुं. [सं.] वाहन, सवारी।

अव्य. [फ़ा.] (१) प्रशंसासूचक शब्द। (२) आश्चर्यसूचक शब्द। (३) आनंदसूचक शब्द। (४) घृणासूचक शब्द।

वाहक—संज्ञा पुं. [सं.] (१) बोझ ढोनेवाला। (२) सारथी।

वाहन—संज्ञा पुं. [सं.] सवारी।

वाहवाही—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] प्रशंसा, स्तुति।

वाहि—सर्व. [हिं. वा + हि] उसे। उ.—सोवै तब जब वाहि सुवावै—५-३।

वाहिनी—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) सेना जिसमें ८१ हाथी ८१ रथ, २४३ घोड़े और ४०५ पैदल हों। (२) सेना।

वाहिनीपति—संज्ञा पुं. [सं.] सेनापति।

वाहियात—वि. [अ. वाही + फ़ा. यात] (१) बेकार, व्यर्थ। (२) बुरा।

वाहीं—सर्व. [हिं. वा + हीं] उसही में, उसमें ही। उ.—लख चौरासी जोनि भरमिकै फिरि वाहीं मन दीनौ—१-६५।

वाही—वि. [हिं. वा + ही] उस ही। उ. (क) बरु वाही दिन काहैं न मारी—१०-११। (ख) वाही भाँति बरन-बपु वैसेंहि—४३८।

वि. [अ.] (१) सुस्त। (२) निकम्मा। (३) मूर्ख। (४) आवारा। (५) बे ठिकाने का।

वाहीतवाही—संज्ञा स्त्री. [अ. वाही + तबाही] अंडबंड बातें, गाली-गलौज ।
वाहु—संज्ञा स्त्री. [सं.] भुजदंड ।
वाहुमूल—संज्ञा पुं. [सं.] काँख, बगल ।
वाहुल्य - संज्ञा पुं. [सं.] अधिकता ।
वाह्य—क्रि. वि. [सं.] (१) बाहर । (२) अलग ।
वाह्यांतर—क्रि. वि. [सं.] भीतर और बाहर ।
वाह्लीक—संज्ञा पुं. [सं.] गांधार के निकट एक प्रदेश ।
विंद—संज्ञा पुं. [सं. वृंद] समूह ।
संज्ञा पुं. [सं. विंदु] बुंदा ।
विंदक - वि. [सं.] (१) पानेवाला । (२) जाननेवाला ।
विंदु - संज्ञा पुं. [सं. बिंदु] (१) बूँद । (२) बिंदी । (३) अनुस्वार । (४) शून्य । (५) कण ।
विंदुमाधव—संज्ञा पुं. [सं.] काशी की एक विष्णु मूर्ति जिसके नाम का पूर्वार्द्ध अग्निविंदु ऋषि के नाम का है ।
विंदुर—संज्ञा पुं. [सं. विंदु] बुँदकी ।
विंद्य, विंध्य—संज्ञा पुं. [सं. विंध्य] विंध्य पर्वत ।
विंध्यवासिनी—संज्ञा स्त्री. [सं.] एक प्रसिद्ध देवी मूर्ति जो मिर्जापुर में विंध्य के एक टीले पर अवस्थित है ।
विंध्याचल—संज्ञा पुं. [सं.] विंध्य पर्वत ।
विंश—वि. [सं.] बीसवाँ ।
विंशत—वि. [सं.] बीस ।
विंशति—संज्ञा स्त्री. [सं.] बीस की संख्या ।
वि—उप [सं.] (१) विशेष । (२) वैरूप्य । (३) निषेध, हीनता ।
विकच—वि. [सं.] (१) खिला हुआ, विकसित । (२) बिना बाल का, केशरहित ।
विकट—वि. [सं.] (१) विकराल, भयंकर । (२) टेढ़ा, बंक । उ.—भृकुटी विकट निकट नैननि के राजति अति वर नारि । (३) मुश्किल, कठिन । उ.—अनसमुझे अपराध लगावति विकट बनावति बात । (४) दुर्गम । (५) दुस्साध्य ।
विकरार—वि. [सं. विकराल] भयंकर, भीषण । उ.—कियौ युद्ध अति ही विकरार ।
वि. [फ़ा. बेक़रार] बेचैन व्याकुल ।
विकराल—वि. [सं.] भीषण, भयानक ।
विकर्ष—संज्ञा पुं. [सं.] तीर, बाण ।
विकर्षण—संज्ञा पुं. [सं.] (१) खींचना । (२) विभाग । (३) एक शास्त्र जिसमें आकर्षण करने की विद्या का वर्णन है ।
विकल - वि. [सं.] (१) बेचैन, व्याकुल । (२) कलाहीन । (३) खंडित । (४) असमर्थ । (५) अस्वाभाविक ।
विकलता—संज्ञा स्त्री. [सं.] बेचैनी, व्याकुलता ।
विकलांग—वि. [सं.] जिसका कोई अंग खंडित हो ।
विकलाना—क्रि. अ. [सं. विकल + हिं. आना] व्याकुल होना ।
विकलानी—क्रि. अ. स्त्री. [हिं. विकलाना] व्याकुल हुई । उ.— निठुर बचन सुनि स्याम के युवती विकलानी ।
विकलानो - क्रि. अ. [सं. विकल + हिं. आना] व्याकुल होना ।
विकलाहीं—क्रि. अ. [हिं. विकलाना] व्याकुल हुईं । उ.—एक एक ह्वै ढूँढ़हीं तरुनी विकलाहीं ।
विकलित—वि. [सं.] (१) व्याकुल । (२) दुखी ।
विकल्प—संज्ञा पुं. [सं.] (१) भ्रम, धोखा । (२) निश्चय के विरुद्ध सोच-विचार । (३) विपरीत या विरुद्ध कल्पना । (४) कई विधियों का मिलना । (५) चित्त वृत्ति-विशेष । (६) समाधि-विशेष ।
विकल्पित—वि. [सं.] (१) संदिग्ध । (२) अनियमित ।
विकल्मष - वि. [सं.] पापरहित, निष्पाप ।
विकसन—संज्ञा पुं. [सं.] खिलना, प्रस्फुटन ।
विकसना, विकसनो—क्रि. अ. [सं. विकास] विकसित होना ।
विकसाना, विकसानो - क्रि. स. [हिं. विकसना] विकसित करना, खिलाना ।
विकसित—वि. [सं.] खिला हुआ ।
विकार संज्ञा पुं. [सं.] (१) रूप, रंग आदि का बदलना । (२) एक वर्ण के स्थान में दूसरा हो जाना । (३) बिगड़ना । (४) दोष । उ.—(क) हौं पतित अपराधपूरन, भरयौ कर्म-विकार—१-१२६ । (ख) सब बिसरि गए मन-बुधि-विकार—९-१६६ । (५) वृत्ति-विशेष,

वासना। उ.—कह्यौ तुमको ब्रह्म ध्यावो छाँड़ि विषै विकार—२६७५। (६) परिणाम। (७) उपद्रव। (८) हानि।

वि. दोषयुक्त, अनुचित, असंगत। उ.—बोलहिं वचन विकार अहो हरि होरी है—२४२३।

विकारि, विकारी—वि. [सं. विकारिन्] (१) जिसमें विकार हो। (२) क्रोधादि दुष्ट वासनाओं से युक्त। उ.—रे रे अंध बीसहूँ लोचन पर-तिय-हरन विकारी (बिकारी)—९-१३२। (३) जिसमें विकार या परिवर्तन हुआ हो, परिवर्तित।

विकाश, विकास—संज्ञा पुं. [सं.] (१) विस्तार, वृद्धि। (२) खिलना, प्रस्फुटन।

विकासना, विकासनो—क्रि. स. [सं. विकास] (१) निकालना, प्रकट करना। (२) खिलाना, विकसित या प्रस्फुटित करना।

क्रि. अ. (१) प्रकट होना। (२) विकसित होना।

विकास्यो, विकास्यौ—क्रि स. [हिं. विकासना] खिलाया, विकसित या प्रस्फुटित किया। उ.—जंगम जड़ थावर चर कीन्हे पाहन कमल विकास्यो—पृ. ३४७ (५२)।

विकीर्ण—वि. [सं.] (१) चारों ओर बिखरा, फैला या छितराया हुआ। (२) प्रसिद्ध, विख्यात।

विकुंठ—संज्ञा पुं [सं. वैकुंठ] बैकुंठ लोक।

वि. [सं.] जो कुंठित न हो, तेज धारवाला।

विकुक्षि वि. [सं.] तोंदवाला, तोंदियल।

विकृत—वि. [सं.] (१) बिगड़ा हुआ। (२) भद्दा, कुरूप। (३) अस्वाभाविक। (४) अपूर्ण।

विकृति—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) बिगाड़, खराबी। (२) बिगड़ा हुआ रूप। (३) विकार (४) क्षोभ।

विक्रम—संज्ञा पुं. [सं.] (१) विष्णु का एक नाम। (२) बल, पराक्रम। (३) विक्रमादित्य।

वि. श्रेष्ठ, उत्तम।

विक्रमादित्य—संज्ञा पुं. [सं.] (१) उज्जयिनी का एक प्रतापी राजा। (२) शकों को पराजित करनेवाला वह राजा जिसकी विजय की स्मृति में ईसा पूर्व ५७ वर्ष से विक्रम संवत् चलना माना जाता है।

विक्रमाब्द—संज्ञा पुं. [सं.] विक्रम संवत्।

विक्रमी—वि. [सं.] (१) विक्रम-संबंधी। (२) पराक्रमी।

विक्रय—संज्ञा पुं. [सं] बेचना, बिक्री।

विक्रयी—वि. [सं.] बेचनेवाला।

विक्री—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) बेचने की क्रिया या भाव। (२) बेचने से मिलनेवाला धन।

विक्रेता—वि. [सं.] बेचनेवाला।

विक्षत—वि. [सं.] जिसके क्षत लगा हो, घायल।

विक्षिप्त—वि. [सं.] (१) फेंका या बिखराया हुआ। (२) त्यागा हुआ, त्यक्त। (३) पागल। (४) घबराया हुआ।

विक्षिप्तता—संज्ञा स्त्री. [सं.] पागलपन।

विक्षुब्ध—वि. [सं.] जो क्षुब्ध हो।

विक्षेप—संज्ञा पुं. [सं.] (१) फेंकने या बिखरने की क्रिया या भाव। (२) झटका देने की क्रिया या भाव। (३) चंचल करने की क्रिया या भाव। (४) धनुष चढ़ाने की क्रिया या भाव। (५) एक अस्त्र। (६) बाधा, विघ्न।

विक्षोभ—संज्ञा पुं. [सं.] चित्त की उद्विग्नता।

विक्षोभी—वि. [सं. विक्षोभिन्] जो क्षोभ उत्पन्न करे।

विख—संज्ञा पुं. [सं. विष] जहर, विष।

विखाण, विखान—संज्ञा पुं. [सं. विषाण] सींग।

विखायँध—संज्ञा स्त्री. [सं. विष+हिं. आयँध] जहर की सी कड़वी गंध।

विख्यात—वि. [सं.] प्रसिद्ध। उ.—यक्ष प्रबल बढ़े भुव मंडल तिन मारचो निज भ्रात। तिनके काज अंस हरि प्रगटे ध्रुव जगत विख्यात—सारा. ८१।

विख्याति—संज्ञा स्त्री. [सं.] प्रसिद्धि।

विख्यापन—संज्ञा पुं. [सं.] प्रसिद्ध करने की क्रिया या भाव।

विगंध—वि. [सं.] (१) जिसमें गंध न हो। (२) जिसमें बुरी गंध हो, दुर्गंधयुक्त।

विगत—वि. [सं.] (१) बीता हुआ। (२) बीते हुए से पहले का। (३) जो कहीं चला गया हो। (४) कांतिहीन। (५) रहित, विहीन। उ.—प्रमुदित जनक निरखि अंबुज मुख विगत नयन मन पीर।

विगति—संज्ञा स्त्री. [सं.] दुर्गति, दुर्दशा।

विगलित—वि. [सं.] (१) जो गिर गया हो। (२) जो टपक या चूकर बह गया हो। (३) जो ढीला, शिथिल या बिखरा हुआ हो। उ.—(क) चौरी डोरी बिगलित केस—१८२२। (ख) कच बिगलित माला गिरी—१८२८। (४) बिगड़ा हुआ।

विगुण—वि. [सं.] गुण रहित।

विग्रह—संज्ञा पुं. [सं.] (१) विभाग। (२) यौगिक अथवा समस्त पदों के शब्दों को अलग करना। (३) कलह, झगड़ा। (४) युद्ध, समर। उ.—निसि वासर कै विग्रह आयो—२८२६। (५) विपक्षियों में फूट डालना। (६) आकृति। (७) शरीर। (८) मूर्ति। (९) शृंगार।

विग्रहण—संज्ञा पुं. [सं.] रूप धारण करना।

विग्रही—वि. [सं. विग्रहिन्] (१) झगड़ा करनेवाला। (२) युद्ध या समर करनेवाला।

विघटन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) संयोजित भाग या अंग को अलग करना। (२) तोड़ना-फोड़ना। (३) नष्ट करना।

विघटित—वि. [सं.] (१) अलग किया हुआ। (२) तोड़ा-फोड़ा हुआ। (३) नष्ट-भ्रष्ट।

विघन—संज्ञा पुं. [सं. विघ्न] बाधा।

विघात—संज्ञा पुं. [सं.] (१) आघात, प्रहार। (२) नाश। (३) बाधा, विघ्न। (४) विफलता।

विघातक—वि. [सं.] विघ्न डालनेवाला, बाधक।

विघाती—वि. [सं.] (१) बाधक। (२) घातक।

विघ्न—संज्ञा पुं. [सं.] बाधा, रुकावट, अंतराय।

विघ्नकारी—वि. [सं.] बाधा डालनेवाला।

विघ्ननाशक—संज्ञा पुं. [सं.] गणेश।

विचक्षण—वि. [सं.] (१) प्रकाशमान। (२) निपुण, कुशल। (३) पंडित, विद्वान। (४) बुद्धिमान।

विचच्छन—संज्ञा पुं. [सं. विचक्षण] चतुर, बुद्धिमान।

विचरण—संज्ञा पुं. [सं.] (१) चलना। (२) पर्यटन।

विचरत—क्रि. अ. [हिं. विचरना] घूमता-फिरता है। उ.—रामचरन धरि हृदय मुदित मन विचरत फिरत निसंक।

विचरति—क्रि. अ. [हिं. विचरना] घूमती-फिरती है। उ.—विचरति है आन गृह-गृह तरे—२५३०।

विचरन—संज्ञा पुं. [सं. विचारना] (१) चलना। (२) घूमना-फिरना, पर्यटन।

प्र.—विचरन लागे—घूमने-फिरने लगे। उ.—भोग समग्री जुरी अपार। विचरन लागे सुख संसार।

विचरना—क्रि. अ. [सं. विचरण] (१) चलना। (२) घूमना-फिरना, पर्यटन करना।

विचरनि—संज्ञा स्त्री. [सं. विचरण] चलने या घूमने-फिरने की क्रिया या भाव।

विचरे—क्रि. अ. [हिं. विचरना] घूमे-फिरे जीवन बिताया, काल-यापन किया। उ.—पाछे करि संन्यास जगत में विचरे परम उदार—सारा. ८७।

विचल—वि. [सं.] (१) हिलता हुआ। (२) अस्थिर। (३) स्थान से डिगा हुआ। (४) प्रतिज्ञा या निश्चय या हटा हुआ।

मुहा०—मन का चल-विचल होना—चित्त का चंचल या अस्थिर होना।

विचलता—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) चंचलता, अस्थिरता। (२) व्याकुलता, घबराहट।

विचलना, विचलनो—क्रि अ. [सं. विचलन] (१) स्थान से हट जाना। (२) अधीर होना, घबराना। (३) बचन या संकल्प पर दृढ़ न रहना।

विचलाना, विचलानो—क्रि. स. [सं. विचलन] (१) विचलित या चंचल करना। (२) घबरा देना, स्थिर न रहने देना।

विचलित—वि. [सं.] (१) अस्थिर, चंचल। (२) वचन या निश्चय से डिगा हुआ।

विचार—संज्ञा पुं. [सं.] (१) निश्चय, सोची हुई बात। (२) ख्याल, भावना। (३) अभियोग की सुनवाई और निर्णय।

विचारक—वि. [सं.] (१) विचार करनेवाला। (२) निर्णायक, न्यायकर्ता।

विचारणा—संज्ञा स्त्री. [सं.] विचार करने की क्रिया।

विचारणीय—वि. [सं.] (१) जिस पर विचार करने की आवश्यकता हो। (२) जो सिद्ध या प्रमाणित न हो।

बिचारना—क्रि. अ. [सं. विचार] (१) सोचना-समझना। (२) पता लगाना।

बिचारी – वि. [सं. विचारिन्] (१) विचार करनेवाला। (२) विचरण करनेवाला।

विचि—संज्ञा स्त्री. [सं.] तरंग, लहर।

विचित्र – वि. [सं.] (१) कई रंगोंवाला। (२) विचक्षण, असाधारण। (३) चकित करनेवाला। (४) सुंदर। उ.—भूषन भवन विचित्र देखियत सोभित सुन्दर अंग—२५६१।

विचित्रता—संज्ञा स्त्री. [सं.] अद्भुत होने का भाव।

विचित्रवीर्य—संज्ञा पुं. [सं.] राजा शांतनु का एक पुत्र जिसका विवाह काशिराज की दो पुत्रियों अंबिका और अंबालिका के साथ हुआ था। विचित्रवीर्य की मृत्यु के पश्चात् उसकी विधवा पत्नियों से द्वैपायन ने नियोग करके धृतराष्ट्र, पांडु और विदुर नामक तीन पुत्र उत्पन्न किये थे।

विच्छिति—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) विच्छेद। (२) कमी। (३) एक हाव जिसमें नारी सहज शृंगार से ही पुरुष को मोहने की चेष्टा करती है।

विच्छिन्न—वि. [सं.] (१) विभक्त। (२) जुदा, अलग। (३) जिसका विच्छेद हुआ हो।

विच्छेद—संज्ञा पुं. [सं.] (१) अलग करने की क्रिया। (२) क्रम का टूट जाना। (३) नाश। (४) वियोग।

विछलना, विछलनो—क्रि. अ. [हिं. फिसलना] (१) फिसलना। (२) अस्थिर, चंचल या विचलित होना।

विछेद—संज्ञा पुं. [सं. विच्छेद] विछोह, वियोग, विरह। उ.—सूर स्याम के परम भावती पलक न होत विछेद —पृ. ३३७ (६६)।

विछोई—वि. [हिं. विछोह + ई] विरही, वियोगी।

विछोह—संज्ञा पुं. [सं. विच्छेद] वियोग, विरह।

विजन—वि. [सं.] जनरहित, निर्जन।

संज्ञा पुं. [सं. व्यजन] पंखा, बीजन।

विजनता—संज्ञा स्त्री. [सं.] निर्जनता।

विजना—संज्ञा पुं. [सं. विजन] पंखा।

विजय—संज्ञा स्त्री. [सं.] जय, जीत।

संज्ञा पुं. विष्णु का एक द्वारपाल जो सनकादि के शाप से हिरण्याक्ष, कुंभकर्ण आदि असुर योनियों में जन्मा था। उ.—जय अरु विजय असुर योनि को भए तीनि अवतार—सारा. ४४।

विजया—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) भाँग। (२) श्रीकृष्ण की माला का नाम। (३) विजयादशमी।

विजयादशमी—संज्ञा स्त्री. [सं.] आश्विन शुक्ला दशमी जो क्षत्रियों का प्रसिद्ध त्योहार है।

विजयी—वि. [सं. विजयिन्] जीतनेवाला।

विजाति, विजातीय—वि. [सं.] दूसरी जाति का।

विजित—वि. [सं.] जो जीत लिया गया हो।

विजेता – वि. [सं. विजेतृ] जीतनेवाला।

विजै—संज्ञा पुं. [सं. विजय] जीत, विजय।

विजोग—संज्ञा पुं. [सं. वियोग] विरह, वियोग।

विजोगी—वि. [हिं. वियोगी] विरही, वियोगी।

विजोर—वि. [सं. वि + हिं. जोर] निर्बल। उ.—जीव को सुख दुख तनु सँग होई। जोर बिजोर तन के सँग सोई।

विज्जु—संज्ञा स्त्री. [सं. विद्युत] बिजली, विद्युत।

विज्जुलता—संज्ञा स्त्री. [सं. विद्युल्लता] बिजली।

विज्ञ – वि. [सं.] (१) जानकार। (२) पंडित।

विज्ञता—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) जानकारी। (२) पांडित्य।

विज्ञप्त – वि. [सं.] सूचित किया हुआ।

विज्ञप्ति – संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) सूचित करने की क्रिया। (२) विज्ञापन।

विज्ञाता—वि. [सं. विज्ञातृ] जो जानता-बूझता हो।

विज्ञान—संज्ञा पुं. [सं.] (१) विशिष्ट ज्ञान। (२) विशिष्ट तत्वों का विशिष्ट ज्ञान।

विज्ञानी—वि. [सं. विज्ञानिन्] (१) विशिष्ट ज्ञान रखनेवाला। (२) वैज्ञानिक। (३) आत्मा, ईश्वर आदि के स्वरूपों का ज्ञाता।

विज्ञापक—वि. [सं.] (१) सूचित करनेवाला। (२) विज्ञापन करनेवाला।

विज्ञापन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) सूचना देना। (२) सूचनापत्र, विज्ञप्ति।

विज्ञापना—संज्ञा स्त्री. [सं.] ज्ञात करने की क्रिया।

विज्ञापित—वि. [सं.] (१) जिसकी सूचना दी गयी हो। (२) जिसका विज्ञापन निकाला गया हो।

विट—संज्ञा पुं. [सं.] (१) कामी, कामुक। (२) वह नायक जो विषय-भोग में सारी संपत्ति नष्ट कर दे और बात बनाने में कुशल हो।

विटप—संज्ञा पुं. [सं.] (१) पेड़, वृक्ष। (२) झाड़ी।

विटपी—संज्ञा पुं. [सं.] पेड़, वृक्ष।

विट्ठल—संज्ञा पुं. [?] विष्णु की एक मूर्ति का नाम।

विडंबना—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) किसी को चिढ़ाने के लिए उसकी नकल उतारना। (२) हँसी उड़ाना। (३) डाँटना-डपटना। (४) भाग्य का खिलवाड़।

विडरत—क्रि. अ. [हिं. विडरना] इधर-उधर हो जाता है, भागता है। उ.—(क) विडरत बिझुकि जानि रथ तें मृग जनु ससंकि ससि लंगर सारे। (ख) मन गह्यो वै विडरत नाहीं, थकित प्रगट पुकारि—२०२८।

विडरति—क्रि. अ. [हिं. विडरना] भागती फिरती हैं। उ.—द्रुम चढ़ि काहे न टेरो कान्हा गैयाँ दूरि गईं।....। विडरति फिरति सकल बन महियाँ एकै एक भईं—६१२।

बिडरना, विडरनो—क्रि. अ. [सं. वि.+हिं. डरना] (१) इधर-उधर या तितर-बितर हो जाना। (२) दौड़-भाग मचाना।

विडराना, विडरानो—क्रि. स. [हिं. विड़ारना] (१) इधर-उधर या तितर-बितर करना। (२) दौड़ाना, भगाना। (३) नष्ट करना।

विडरी—क्रि. अ. [हिं. विडरना] इधर-उधर हो गयी, (उचित मार्ग से) हट गयी। उ.—इतने मान व्याकुल भई सजनी आरज पंथहु तें विडरी—२५४४।

विडरे—क्रि. अ. [हिं. विडरना] इधर-उधर या तितर-बितर हो गये। उ.—जानत नहीं कौन गुन यहि तन जाते सब विडरे।

विडारना, विडारनो—क्रि. स. [हिं. विडरना] (१) इधर-उधर या तितर-बितर कर देना। (२) दौड़ाना, भगाना। (३) नष्ट करना।

विडारे—क्रि. स. [हिं. विडारना] नष्ट कर दिये। उ. असुर मारि सब तुरत विडारे दीन्हे रुद्र निकेत।

विड़ाल—संज्ञा पुं. [सं.] बिल्ली, मार्जार।

वितंड—संज्ञा पुं. [सं.] हाथी।

वितंडा—संज्ञा पुं. [सं.] व्यर्थ का झगड़ा।

वितंत—संज्ञा पुं. [सं.] बिना तार का बाजा।

वित—वि. [सं. विद्] (१) जाननेवाला। (२) चतुर।

बितताना—क्रि. अ. [सं. व्यथा] व्याकुल होना।

बिततानी—क्रि. अ. [हिं. बितताना] व्याकुल हुई। उ. (क) देखे आइ तहाँ हरि नाहीं, चितवति जहाँ तहाँ बिततानी—८४७। (ख) कहि धौं बात हृदय की मोसों ऐसी तू काहे बिततानी—१६५३।

बिततहीं—क्रि. अ. [हिं. बितताना] व्याकुल होती हैं। उ.—सूर स्याम रस भरी गोपिका बन में यों बित-ताहीं—११६४।

वितन, वितनु—वि. [सं. वितनु] जो बहुत सूक्ष्म हो। संज्ञा पुं. कामदेव।

वितपन्न—वि. [सं. व्युत्पन्न] (१) दक्ष, प्रवीण, कुशल। उ.—(क) सूरज प्रभु वितपन्न कोक गुन ताते हरि-हरि ध्यावति। (ख) कोक कला वितपन्न भई हौ कान्ह रूप तनु आधा—१४३७। (ग) कोक कला वितपन्न परस्पर देखत लज्जित काम—पृ. ३५१ (७१)। (२) बिकल, व्याकुल। उ.—उनहिं मिले वितपन्न भई तिनु वै बिन गये भुलाइ—१२३९।

वितरक—वि. [सं. वितरण] बाँटनेवाला।

वितरण—संज्ञा पुं. [सं.] बाँटने का कार्य।

बितरन—संज्ञा पुं. [सं. वितरण] (१) बाँटने का काम। (२) बाँटनेवाला व्यक्ति।

बितरना, वितरनो—क्रि. स. [सं. वितरण] बाँटना।

वितरिक्त—अव्य. [सं. व्यतिरिक्त] अतिरिक्त।

वितरित—वि. [सं.] बाँटा हुआ।

वितरेक—क्रि. वि. [सं. व्यतिरिक्त] अतिरिक्त।

वितर्क—संज्ञा पुं. [सं.] (१) तर्क से उत्पन्न तर्क। (२) संदेह। (३) अनुमान। उ.—सपनो अहि कि सत्य ईस इहि बुद्धि वितर्क बनावति—१६९४।

वितल—संज्ञा पुं. [सं.] सात पातालों में एक। उ.—अतल वितल अरु सुतल तलातल और महातल जान।

पाताल और रसातल मिलिकै सातो भुवन प्रमान—सारा. ३१।

वितलिन—सज्ञा पु. [सं वितलिन्] वितल लोक को धारण करनेवाले बलदेव।

वितस्ता—सज्ञा स्त्री. [स] पजाब की भेलम नदी।

वितान—सज्ञा पु. [स.] (१) विस्तार, फैलाव। (२) बडा चँदोबा या खेमा। (३) समूह।

वितानना, वितानना—क्रि. स. [स. वितान] (१) तबू तानना। (२) कोई चीज तानना।

वितिक्रम—सज्ञा पु. [स. व्यतिक्रम] क्रम-भग।

वितीत—वि. [स. व्यतीत] बीता हुआ।

वितुंड—सज्ञा पु. [स. वि+तुड] हाथी।

वितु—सज्ञा पु [स वित्त] धन-सपत्ति।

वितृष्णा—सज्ञा स्त्री. [स] तृष्णा का अभाव।

वित्त—सज्ञा पु. [स.] धन-सपत्ति।

वित्तपति—सज्ञा पु. [स] कुबेर।

वित्तहीन—वि. [स] निर्धन, दरिद्र।

वित्तप—वि. [स.] धन-सबधी।

विथकना, विथकनो—क्रि. अ. [हि. थकना] (१) शिथिल होना। (२) मुग्ध होकर स्तब्ध रह जाना।

विथकित—वि [हि विथकना] (१) थका हुआ, शिथिल। (२) जो चकित या मुग्ध होकर स्तब्ध रह जाय। उ.—(क) गोपीजन विथकित ह्वै चितवति सब ठाढी। (ख) पसु मोहे सुरभी विथकित तृन दतनि टेकि रहत—६२०।

विथके—वि. [हि. विथकना] मुग्ध या चकित होकर स्तब्ध रह गये। उ.—देखत सुर विथके अमरन जहाँ—१०२३।

विथराना, विथरानो—क्रि स. [स वितरण] (१) फैलाना, बिखेरना। (२) इधर-उधर करना।

विथा—सज्ञा स्त्री [स व्यथा] (१) पीडा। (२) रोग।

विथारना, विथारनो—क्रि. स. [स. वितरण] (१) फैलाना, बिखेरना। (२) इधर-उधर करना।

विथित—वि. [स. व्यथित] (१) पीड़ित। (२) रोगी।

विद्—वि. [स. विद्] (१) जानकार। (२) पडित।

विदग्ध—वि. [स.] (१) रसिक, रसज्ञ। (२) पंडित, विद्वान। (३) चालाक, चतुर। (४) जला हुआ।

विदग्धता—सज्ञा स्त्री. [स] (१) कुशलता। (२) विद्वता।

विदग्धा—सज्ञा स्त्री. [स] वह परकीया नायिका जो वचन अथवा क्रिया से पर-पुरुष के प्रति अपना प्रेम-भाव प्रकट कर दे।

विदमान—अव्य. [स विद्यमान] सामने, सम्मुख, प्रत्यक्ष। उ.—(क) फोरचो नयन काग नहि छाड्यो सुरपति के विदमान। (ख) ताको वध न कियो इहि रघुपति तो देखत विदमान। (ग) बिन पावस पावस रितु आई देखत है विदमान—३०४३।

विदरण—सज्ञा पु. [स.] फाडना, विदारण करना।

विदरत—क्रि अ [हि विदरना] फटता है। उ.—(क) विदरत नही वज्र को हृदय हरि-वियोग क्यो सहिए—२६९९। (ख) उर पाषाण विदरत न विदारे—३०७५।

विदरति—क्रि. अ. [हि. बिदरना] फटती है। उ.—विदरति नाहि वज्र की छाती—३४३५।

विदरन—सज्ञा पु [स.] फटने की क्रिया।

प्र—विदरन चाहत—फटना चाहता है। उ.—यहै कहत नँद गोप सखा सब विदरन चाहत हियो—२६५४।

विदरना, विदरनो—क्रि. अ. [स विदरण] फटना। क्रि. स. फाड़ना, विदीर्ण करना।

विदर्भ—सज्ञा पु [स.] (१) आधुनिक बरार प्रदेश का प्राचीन नाम। (२) एक राजा जिसके नाम पर 'विदर्भ' प्रदेश का नाम पडना कहा जाता है।

विदर्भजा—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) दमयती का एक नाम। (२) रुक्मिणी का एक नाम।

विदलन—सज्ञा पु. [स] (१) दलने-मलने की क्रिया। (२) फाडने की क्रिया।

विदलना, विदलनो—क्रि. स [स विदलन] दलित या नष्ट करना।

विदलित—वि. [स.] (१) दला-मला, कुचला हुआ। (२) फाड़ा हुआ। (३) नष्ट किया हुआ।

विदा—सज्ञा स्त्री. [अ. विदाअ] (१) प्रस्थान। (२) प्रस्थान की आज्ञा या अनुमति।

विदाई—सज्ञा स्त्री. [हिं. विदा + ई] (१) प्रस्थान। (२) प्रस्थान की आज्ञा या अनुमति। (२) वह धन जो विदा के समय किसी को दिया जाय।

विदार—क्रि. स. [हिं विदारना] फाडकर। उ.—घन घटा अटा मद छटको दै उदित चद्र बादर विदार—२४३३।

प्र.—दीन्हो विदार—फाड़ दिया। उ —सोरहकला चद्र ज्यो प्रगटे दीन्हो तिमिर विदार—सारा. ३६३।

विदारक—वि. [स.] फाड़नेवाला।

विदारण—सज्ञा पु [स.] (१) फाडने की क्रिया। (२) मार डालना। (३) युद्ध।

विदारन—वि. [स. विदारण] फाडनेवाले। उ.—अघ मर्दन वक वदन विदारन—९५४।

विदारना, विदारनो—क्रि. स. [हि. विदरना] फाड़ना।

विदारित—वि. [स.] फाड़ा हुआ, विदीर्ण किया हुआ।

विदारी—वि. [स. विदारिन्] फाड़नेवाला।

क्रि. स. [हि. विदारना] फाड़कर। उ.—मानो अरुन किरनि दिनकर की पसरी तिमिर विदारी—१६८४।

प्र —डारो विदारी—फाड़ डाला। उ —पकरि लियो छिन माँझ असुर बल डारो नखन विदारी—सारा. १२४।

विदारे—क्रि. स. [हिं. विदारना] फाड़ने (से)। उ —उर पाषाण विदरत न विदारे—३०७५।

विदाह—सज्ञा पु. [स.] जलन।

विदाही—वि. [स] जलन पैदा करनेवाला।

विदित—वि. [स.] जाना हुआ, ज्ञात।

विदिश—सज्ञा स्त्री. [स. विदिश्] (१) दो दिशाओ का कोना। (२) दिशा। उ.—उडत गुलाल अबीर जोर तहँ विदिश दीप उजियारी—२३९१।

विदिशा—सज्ञा स्त्री. [स] (१) वर्तमान भेलसा का प्राचीन नाम। (२) दिशा-कोण, दिशा।

विदीर्ण—वि. [स.] (१) फाड़ा हुआ। (२) टूटा हुआ। (३) मार डाला हुआ, निहत।

विदुर—वि [स.] (१) ज्ञाता। (२) ज्ञानी। (३) कौरवों-पांडवों के चाचा।

विदुष—वि [स.] पडित, विद्वान। उ —विदुष जननि विराट प्रभु दीखे अति मन मे सुख पायो—सारा. ५१७।

विदुषी—सज्ञा स्त्री. [स.] पडिता, विद्वान स्त्री।

विदूखी—वि. [स.] बहुत दुखी। उ —कहा करौ लै निर्गुण तुम्हरो विरहिनि विरह विदूखी—३११७।

विदूर—वि [स] जो बहुत दूर हो।

विदूषक—सज्ञा पु [स.] (१) कामुक, विषयी। (२) मसखरा। (३) निदक। (४) भांड। (५) प्राचीन नाटकों का एक विनोदी और हँसोड़ पात्र।

विदूषण—सज्ञा पु [स] दोष लगाने का कार्य।

विदूषना, विदूषनो—क्रि. स [स. विदूषण] (१) दुख देना। (२) दोष लगाना।

क्रि. अ. दुखी होना।

विदेश—सज्ञा पु. [स.] परदेश। उ.—कहा करौ मोपै रहो न जाई छिन सब सुखदायक बसत विदेश—३२२५।

विदेशी—वि. [स.] परदेशी।

विदेह—सज्ञा पु [स] (१) वह जो शरीर से रहित हो। (२) राजा जनक का एक नाम।

विदेहपुर—सज्ञा पु. [स.] राजा जनक की राजधानी, जनकपुर।

विदोष—वि. [स.] दोषरहित, निर्दोष।

विद्—वि. [स.] (१) ज्ञाता। (२) पडित।

विद्ध—वि. [स.] (१) छिदा हुआ। (२) जिसमे बाधा पड़ी हो। (३) मिला हुआ।

विद्यमान—वि. [स] उपस्थित, वर्तमान। उ.—यह परचो विद्यमान नैन अपने किन देखो—९०६।

विद्यमानता—सज्ञा स्त्री. [स.] उपस्थिति।

विद्या—सज्ञा स्त्री. [स.] शिक्षा द्वारा उपार्जित ज्ञान। उ.—(क) विद्या बेचि जीविका करिहौ—४-५। (ख) जेहि गोपाल मेरे वश होते सो विद्या न पढ़ी—२७९४।

विद्याधर—सज्ञा पु. [स.] एक प्रकार की देवयोनि।

उ.—(क) विद्याधर-किन्नर कलोल मन उपजावत मिलि कठ अमित गति—१०-६ । (ख) विद्याधर को रूप धरि कह्यो नाथ करै को तुम्हरी होड—२१९२।

विद्याधरी सज्ञा स्त्री [स.] विद्याधर की नारी ।

विद्यामणि—सज्ञा पु. [स.] (१) विद्या रूपी धन । (२) बहुत बड़ा विद्वान । उ.—ज्ञाननमणि, विद्यामणि गुनमणि चतुरनमणि चतुराई – २१७० ।

विद्यारंभ - सज्ञा पु [स] वह सस्कार जिसमें विद्या की पढाई प्रारभ होती है ।

विद्यार्थी—सज्ञा पु [स] छात्र, शिष्य ।

विद्यालय—सज्ञा पु [स] पाठशाला ।

विद्युत—सज्ञा स्त्री [स विद्युत्] बिजली ।

विद्रुम—सज्ञा पु [स] मूँगा, प्रवाल । उ.—विद्रुम फटिक पची परदा छवि लाल रध्र की रेख – २५६१ ।

विद्रोह—सज्ञा पु [स] (१) द्वेष । (२) उपद्रव ।

विद्रोही—वि. [स.] (१) द्वेष करनेवाला । (२) उपद्रवी ।

विद्वत्ता—सज्ञा स्त्री [स.] पांडित्य ।

विद्वान—सज्ञा पु. [स विद्वस्] (१) पडित । (२) सर्वज्ञ ।

विद्वेष—सज्ञा पु [स.] वैर, शत्रुता ।

विद्वेषी—वि [स. विद्वेषिन्] शत्रु, वैरी ।

विधंस—सज्ञा पु [स विध्वस] नाश ।

विधंसना, विधसनो—क्रि स [स. विध्वसन] बरबाद या नष्ट करना ।

विध –सज्ञा पु. [स. विधि] ब्रह्मा ।

विधए—क्रि स [हि विधना] साथ लगा लिये, फाँस लिये । उ.—(क) लए फंदाइ विहगम मानो मदन व्याध विधए—पृ ३२७ (६५) । (ख) थाके सूर पथिक मग मानो मदन व्याध विधए री । (ग) वचन पासि विधए मृग मानो उन रथ नाइ लए—३०५० ।

विधनहि—सज्ञा पु. सवि. [हिं. विधना + हि.] विधाता को । उ.—सूरदास यह कहति जसोदा, ना जानौ विधनहि का भायौ—१०-७७ ।

विधना—सज्ञा स्त्री [स विधि] होनी, होतव्यता । सज्ञा पु. विधि, ब्रह्मा । उ.—मरै वह कम निव स विधना करै—२६२४ ।

विधना, विधनो - क्रि. स. [स विधि] अपने साथ लगाना, अपने ऊपर लेना, फाँस लेना ।

विधर—क्रि वि. [हि. उधर] उस ओर, उधर ।

विधर्म—सज्ञा पु. [स. विधर्म्म] पराया धर्म ।

विधर्मी—वि. [स. विधर्म्मिन्] (१) जो धर्म के विपरीत आचरण करता हो, धर्म-भ्रष्ट । (२) दूसरे धर्म का अनुयायी ।

विधवा—सज्ञा स्त्री [स.] जिसका पति मर गया हो ।

विधवापन—सज्ञा पु [स विधवा + हि पन] विधवा होने की स्थिति, रँड़ापा, वैधव्य ।

विधांसना, विधांसनो—क्रि स [स. विध्वसन्] (१) इधर-उधर या अस्तव्यस्त करना । (२) नष्ट करना ।

विधाता—सज्ञा पु. [स. विधातृ] (१) रचने या बनाने वाला । (२) प्रबध या व्यवस्था करनेवाला । (३) उत्पन्न करनेवाला । (४) सृष्टि का रचयिता, ब्रह्मा । उ.—आजु विधाता मति मेरी गई, भौन काज विरमाई—२५३८ ।

विधात –सज्ञा पु. सवि. [हि. विधाता] विधाता ने । उ.—ए अहीर वह कस की दासी जोरी करी विधातै —२६८४ ।

विधात्री—सज्ञा स्त्री [स.] (१) रचने या बनानेवाली । (२) प्रबध या व्यवस्था करनेवाली ।

विधान—सज्ञा पु. [स.] (१) कार्य का सपादन-क्रम । (२) प्रबध, व्यवस्था । (३) विधि, प्रणाली । (४) रचना, निर्माण । (५) उपाय, युक्ति । (६) पूजा ।

विधायक—सज्ञा पु. [सं.] कार्य-सपादन करनेवाला । (२) रचने या बनानेवाला । (३) व्यवस्था या प्रबध करनेवाला ।

विधि—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) रीति, प्रणाली । (२) व्यवस्था, योजना ।

मुहा०—विधि बैठना—(१) मेल खाना या बैठना, व्यवहार निभना । (२) इच्छानुकूल व्यवस्था होना ।

(३) शास्त्रीय व्यवस्था या विधान । उ.—यज्ञोपवीत विधोक्त कियो विधि सब सुर भिक्षा दीनी—सारा. ३३२ । (४) कर्म या आचरण संबंधी शास्त्रीय आज्ञा ।

यौ०—विधि-निषेध—अमुक कार्य या आचरण करने और अमुक न करने की शास्त्रीय अनुमति।
(५) क्रिया का आदेशात्मक रूप। (६) चाल-ढाल, आचार-व्यवहार। (७) भाति, प्रकार।
सज्ञा पु. [स] ब्रह्मा, विधाता।
विधिना—सज्ञा पु. [स. विधि+हि. ना] ब्रह्मा, विधाता। उ —ए अहीर वह दासी पुर की विधिना जोरी भली मिलाई—२६७९।
विधिपुर—सज्ञा पु [स विधि+पुर] ब्रह्मलोक।
विधिरानी—सज्ञा स्त्री. [स. विधि+रानी] ब्रह्मा की पत्नी सरस्वती।
विधिवत्—क्रि. वि. [स.] (१) विधि या पद्धति के अनुसार। (२) उचित रूप से।
विधिवाहन—सज्ञा पु [स] ब्रह्मा का वाहन, हस।
विधु त, विधु तुद—सज्ञा पु. [स. विधि+तु, तुद] चद्रमा को दुख देनेवाला, राहु। उ.—मानो विधु जु विधुत ग्रहण डर आयो तेरे सरन सखी री—२११३।
विधु—सज्ञा पु [स] चद्रमा। उ.—अब विधु-बदन बिलोकि सुलोचन स्रवन सुनत ही आली—२५६७।
विधुदार, विधुदारा—सज्ञा स्त्री. [स. विधु+दारा] चद्रमा की पत्नी, रोहिणी।
विधुप्रिया—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) रोहिणी। (२) कुमुदिनी।
विधुबंधु—सज्ञा पु [स] कुमुद।
विधुबैनी—वि. [स. विधु+वदन, प्रा वयन] चद्रमुखी, सुदरी (नारी)।
विधुर—वि. [स.] (१) दुखी। (२) व्याकुल। (३) जिसकी स्त्री मर चुकी हो।
विधु-लेखा—सज्ञा स्त्री. [स.] चद्रमा की किरण।
विधुवदनी—वि [स] चद्रमुखी (नारी)।
विधूम—वि. [स.] बिना धुएँ का, निर्धूम।
विधेय—वि. [स.] (१) जिसका करना उचित हो। (२) जो किया जानेवाला हो। (३) जिसके करने का नियम हो। (४) जिस (शब्द या वाक्य) के द्वारा किसी के सबध में कुछ कहा जाय।
विधोक्त—वि. [स. विधि+उक्त] शास्त्रीय विधि या विधान के अनुसार। उ — यज्ञोपवीत विधोक्त कियो विधि सब सुर भिक्षा दीनी—सारा. ३३२।
विध्वस—सज्ञा पु [स] नाश, विनाश।
विध्वसक—वि. [स.] नाश करनेवाला।
विध्वंसज—सज्ञा पु [स विध्वस+ज] मारा जाने पर भी जीवित रहनेवाला रा। उ.—विध्वसज ग्रस्यो कलानिधि तजत नही बिनु दाने—२०५३।
विध्वंसित—वि [स.] नष्ट किया हुआ। उ.—जनु विध्वसित व्याल बालक अमी की झकाझोर—१७०३।
विध्वंसी—वि [स] नाशकारी।
विध्वस्त—वि [स] नष्ट किया हुआ।
विन—सर्व. [हि वा] प्रथम पुरुष बहुवचन सर्वनाम का कारक चिह्न लगने के पूर्व रूप, उन।
अव्य विना, रहित।
विनत—वि. [स] (१) झुका हुआ। (२) विनीत।
विनतई—सज्ञा स्त्री. [स. विनति] (१) नम्रता। (२) प्रार्थना।
विनता—सज्ञा स्त्री. [स] दक्ष प्रजापति की वह पुत्री जो कश्यप की पत्नी और गरुड़ की माता थी।
विनति—सज्ञा स्त्री. [स] (१) नम्रता। (२) प्रार्थना।
विनती—सज्ञा स्त्री [स विनति] प्रार्थना, अनुनय।
विनम्र—वि [स] (१) झुका हुआ। (२) विनीत।
विनय—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) नम्रता। (२) प्रार्थना, अनुनय। (३) शिक्षा। (४) नीति।
विनयपिटक—सज्ञा पु [स.] बौद्धशास्त्र-विशेष।
विनयी—वि. [स. विनयिन्] नम्र, विनीत।
विनशन—सज्ञा पु [स.] नाश।
विनशना—क्रि. अ [स. विनशन] नष्ट होना।
विनशाना—क्रि स. [स. विनशन] नष्ट करना।
विनश्वर—वि. [स] नाशवान, अनित्य।
विनश्वरता—सज्ञा स्त्री. [स.] अनित्यता।
विनष्ट—वि. [स] (१) जो नष्ट-ध्वस्त हो गया हो। (२) मरा हुआ। (३) बिगड़ा हुआ। (४) पतित।
विनसना, विनसनो—क्रि. अ. [स. विनशन] नष्ट होना।
विनसाना, विनसानो—क्रि. स. [हि. विनसना] (१) नष्ट करना। (२) बिगाड़ना।

क्रि. अ बरबाद या नष्ट होना।
विना—अव्य [स] (१) बगैर। (२) अतिरिक्त।
विनाथ—वि [स] अनाथ।
विनायक—सज्ञा पु [सं] (१) गणेश। (२) बाधा, विघ्न। (३) गरुड।
विनायक-केतु—सज्ञा पु [स] (१) गरुड़ध्वज। (२) विष्णु। (३) श्रीराम। (४) श्रीकृष्ण।
विनाश, विनास—सज्ञा पु [स. विनाश] (१) अस्तित्व न रह जाना, ध्वस। (२) लोप। (३) बिगड जाने का भाव। (४) बुरी दशा।
विनाशक, विनासक - वि. [स विनाशक] (१) नाश करनेवाला। (२) खराब करने या बिगाडनेवाला।
विनाशन, विनासन—वि [स विनाशन] (१) नाश करनेवाला। (२) मारने वाला। उ —अध मर्दन वक वदन विदारन वकी विनाशन सब सुखदायक—९५४।
सज्ञा पु. (१) नष्ट करना। (२) वध या सहार करना। (३) बिगाडना, खराब करना।
विनाशना, विनासना, विनासनो—क्रि. स [स विनाशन] (१) नष्ट करना। (२) वध या सहार करना। (३) बिगाडना।
क्रि अ बरबाद या नष्ट होना।
विनाशी, विनासी—वि [स विनाशिन्] (१) नष्ट करनेवाला। (२) मार डालनेवाला। (३) बिगाड़नेवाला।
विनिंदक—वि. [स.] बहुत निंदा करनेवाला।
विनिंदित—वि. [स.] जिसकी बहुत निंदा हुई हो।
विनिपात—सज्ञा पु. [स.] (१) ध्वस, नाश। (२) वध, हत्या। (३) अपमान।
विनिमय—सज्ञा पु. [स.] (१) वस्तु के बदले में वस्तु देने का व्यवहार। (२) आदान-प्रदान।
विनियोग - सज्ञा पु [स] (१) प्रयोग, उपयोग। (२) भेजना, प्रेषण।
विनियोजित—वि [स.] (१) प्रयुक्त। (२) प्रेरित।
विनीत—वि [स.] नम्र, विनययुक्त, शिष्ट।
विनीतता—सज्ञा स्त्री. [सं.] नम्रता, विनय।
विनु—अव्य [स. विना] (१) रहित। (२) अतिरिक्त।
विनूठा—वि [हि अनूठा] बढिया, सुदर।
विनोद—सज्ञा पु [स.] (१) तमाशा, कौतूहल। (२) क्रीडा। (३) प्रमोद, परिहास।
विनोदी—वि [स. विनोदिन्] (१) कौतूहल करनेवाला। (२)क्रीडा करनेवाला। (३) हँसी-ठट्ठे में रस लेनेवाला। उ —स्याम विनोदी (विनोदी) रे मधुबनियाँ—ना. ३९९५।
विन्यास—सज्ञा पु [स] (१) यथास्थान रखना या स्थापना। (२) सजाना। (३) जड़ना।
विपंची - सज्ञा स्त्री [स] (१) एक तरह की वीणा। (२) केलि, क्रीडा।
विपक्ष—सज्ञा पु [स] (१) विरुद्ध पक्ष। (२) शत्रु पक्ष। (३) विरोध, खडन।
वि (१) विरुद्ध, प्रतिकूल। (२) जिसके पक्ष मे कोई न हो। (३) पखहीन।
विपक्षी—वि [स विपक्षिन्] (१) विरुद्ध पक्ष का। (२) शत्रु। (३) बिना पख का।
विपति, विपत्ति—सज्ञा स्त्री. [स. विपत्ति] (१) दुख, कष्ट। उ.— सूरदास अक्रूर कृपा तें सही विपति तनु गाढी—२५३५। (२) दुर्दिन।
मुहा० — विपत्ति उठाना—कष्ट सहना। विपत्ति काटना—दुर्दिन बिताना। विपत्ति झेलना—कष्ट सहना। विपत्ति डालना—दुख या कष्ट पहुँचाना। विपत्ति ढहना—सहसा कष्ट आ पड़ना। विपत्ति ढहाना—सहसा कष्ट मे डाल देना।
(३) झझट, झगडा, कठिनाई।
मुहा०—विपत्ति मोल लेना -व्यर्थ झगड़े मे पडना। विपत्ति सिर पर लेना—व्यर्थ झझट में फँस जाना।
विपथ—सज्ञा पु [स] कुमार्ग।
विपद्—सज्ञा स्त्री. [स] सकट, विपत्ति।
विपदा – सज्ञा स्त्री [स.] सकट, विपत्ति।
विपन्न वि [स.] (१) जिस पर विपत्ति पड़ी हो। (२) दुखी। (३) कठिनाई या झझट मे पड़ा हुआ।
विपरीत—वि. [स] (१) उलटा, विरुद्ध। (२) इच्छा के प्रतिकूल। (३) दुष्ट, अनिष्टसाधक। उ.—सूना०

वर्त विपरीत महाखल सो नृपराय पठायो—सारा ४२८। (४) दुखद, कष्टदायी।

विपरीतता—सज्ञा स्त्री [स.] विपरीत होने का भाव।

विपरीति—सज्ञा स्त्री. [स] (१) विपरीत होने का भाव। (२) कष्टदायी आचरण या व्यवहार, विरुद्धाचार, विरोध। उ —(क) अब की बेर मिलो मनमोहन बहुत भई विपरीति—२७१६। (ख) मिल ही मे विपरीति करी विधि होत दरस की बाधा—६७५८।

विपर्यय—सज्ञा पु [स विपर्य्यय] (१) उलट-पलट, अव्यवस्था। (२) और का और, विरुद्ध स्थिति। (३) भ्रम, मिथ्या ज्ञान।

विपाक—सज्ञा पु [स.] (१) पकना। (२) कर्म-फल।

विपाशा, विपासा—सज्ञा स्त्री [स] व्यास नदी।

विपिन—सज्ञा पु [स.] (१) वन। (२) वाटिका।

विपिनपति—सज्ञा पु. [स] सिह।

विपिनविहारी—सज्ञा पु [स.] (१) वन में विहार करनेवाला। (२) श्रीकृष्ण का एक नाम।

विपुल—वि [स] (१) बहुत अधिक। उ —श्रीविट्ठल विपुल विनोद विहारन व्रज को बसिबो छाजै--२६३२। (२) बहुत गहरा।

सज्ञा पु रोहिणी से उत्पन्न वसुदेव का एक पुत्र।

विपुलता—सज्ञा स्त्री. [स.] अधिकता।

विपुला—सज्ञा स्त्री [स] (१) पृथ्वी। (२) एक देवी।

विपुलाई—सज्ञा स्त्री [स. विपुल + हि आई] अधिकता।

विपोहना, विपोहनो—क्रि स. [स वि+प्रोत] (१) लीपना, पोतना। (२) मिटाना, नाश करना। (३) अच्छी तरह पोहना।

विप्र—सज्ञा पु. [स.] (१) ब्राह्मण। उ --राजनीति अरु गुरु की सेवा, गाइ-विप्र प्रतिपारे—९-५४। (२) पुरोहित।

विप्रचरण, विप्रचरन—सज्ञा पु [स. विप्र+चरण] (१) ब्राह्मण के चरण। (२) भृगु मुनि का चरण-चिह्न जो विष्णु के हृदय पर माना जाता है।

विप्रचित्ति—सज्ञा पु [स] एक दानव जिसकी सिहिका नाम्नी पत्नी राहु की माता थी।

विप्रता—सज्ञा स्त्री [स.] ब्राह्मणत्व।

विप्रत्व—सज्ञा पु. [स.] ब्राह्मणत्व।

विप्रबंधु—सज्ञा पु [स] कर्म-च्युत ब्राह्मण।

विप्रराम—सज्ञा पु [स] परशुराम।

विप्रलंभ—सज्ञा पु [स] (१) वियोग, विरह, विच्छेद। (२) धोखा, छल। (३) दुष्कर्म।

विप्रलंभी - वि [स विप्रलभिन्] धूर्त, छली, धोखेबाज।

विप्रलब्धा—सज्ञा स्त्री [स] वह नायिका जो सकेत स्थान पर प्रियतम को न पाकर निराश हो।

विप्रौ सज्ञा पु. सवि [स विप्र+हि. औ] विप्र या विप्रो को भी। उ —ए कहा जानहि सभा राज को ए गुरुजन विप्रौ न जुहारे—२५०४।

विप्लव—सज्ञा पु [स] (१) अशाति और हलचल, उपद्रव। (२) राज्य के भीतर अशाति और उपद्रव। (२) उथल-पुथल, अव्यवस्था।

विप्लवी, विप्लावी—वि [स विप्लव] उपद्रव करनेवाला।

विफल—वि. [स.] (१) जिसमे फल न लगता हो, फलरहित। उ — मुरली सुनत अचल चले। थके चर, जल झरत पाहन, विफल बृच्छ फले—ना. १०६८। (२) निष्फल, व्यर्थ। (३) असफल। (४) निराश।

विफलता—सज्ञा स्त्री [स.] असफलता।

विबुध—सज्ञा पु [स वि+बुध] (१) पडित। (२) देवता। (३) चद्रमा।

विबुधतटिनी—सज्ञा स्त्री. [स.] आकाशगगा।

विबुधतरु—सज्ञा पु. [स] कल्पवृक्ष।

विबुधधेनु—सज्ञा स्त्री [स.] कामधेनु।

विबुधविलासिनी—सज्ञा स्त्री. [स] अप्सरा।

विबुधवेलि सज्ञा स्त्री. [स.] कल्पलता।

विबोध—सज्ञा पु [स] (१) जागरण। (२) ज्ञान।

विभंज—सज्ञा पु. [स वि+भज्] (१) टूटना-फूटना। (२) नाश, ध्वस।

विभंजन—वि [हि विभज] (१) तोड़नेवाले। उ — रधुपति प्रबल पिनाक-विभंजन - ९८२। (२) नाश करनेवाले।

विभक्त—वि. [स वि+भज्] (१) विभाजित। (२) अलग या पृथक् किया हुआ।

विभक्ति—सज्ञा स्त्री. [स.] अलग या विभक्त होने की क्रिया या भाव। (२) वह प्रत्यय या कारक चिह्न जो शब्द के आगे लगकर उसका क्रियापद से संबंध सूचित करता है। (सस्कृत में शब्द के अत्य अक्षर के अनुसार विभक्ति-रूप भिन्न-भिन्न होते है, खड़ीबोली के कारकों में शुद्ध विभक्तियो के स्थान पर कारक चिह्नों का व्यवहार होता हैं।)

विभव—सज्ञा पु. [स] धन-सपत्ति, ऐश्वर्य।

विभाँति—वि. [स. वि+हि भाँति] अनेक प्रकार का। अव्य अनेक प्रकार से।

विभा—सज्ञा स्त्री [स](१) प्रभा, शोभा। (२) किरण।

विभाकर—सज्ञा पु [म] (१) सूर्य। (२) मदार।

विभाग—सज्ञा पु. [स] (१) बाँटने की क्रिया या भाव। (२) अंश, भाग, हिस्सा। उ.—अरध विभाग आजु तै हम तुम भली बनी है जोरी—१०-२६७। (३) अध्याय, प्रकरण। (४) कार्यक्षेत्र।

विभागी—वि [स. विभागिन्] (१) विभाग करनेवाला। (२) विभाग या अश पानेवाला।

विभाजक—वि. [स] (१) विभाग करनेवाला। (२) वह (सख्या) जो भाग दे।

विभाजन—सज्ञा पु.[स] भाग करने की क्रिया या भाव।

विभाजित—वि [स.] जो बाँटा गया हो।

विभाज्य—वि. [स.] जिसका विभाजन करना हो।

विभात—सज्ञा पु. [स.] सबेरा, प्रभात।

विभाति, विभाती सज्ञा स्त्री. [स विभाति] सुदरता, शोभा।

विभाना, विभानो—क्रि. अ. [स. विभा+हि. ना, नो] (१) चमकना, झलकना। (२) शोभित होना।

विभारना, विभारनो—क्रि अ. [हि. विभाना] (१) चमकना, झलकना। (२) शोभा पाना।

विभाव—सज्ञा पु. [स.] (रस-विधान मे) भाव को उद्दीप्त करनेवाला व्यक्ति, पदार्थ या वातावरण।

विभावन—संज्ञा पु. [स] (रस-विधान में) वह मानसिक व्यापार जिससे (साधारणीकरण द्वारा] पात्र के भाव का भागी श्रोता या पाठक भी होता है।

विभावना—सज्ञा स्त्री [स] एक अर्थालंकार।

विभावरी—सज्ञा स्त्री [स] रात, तारो भरी रात।

विभावित—वि [स] (१) कल्पित। (२) स्वीकृत।

विभास—सज्ञा पु [स] चमक, प्रभा, तेज। उ—हँसनि प्रकास विभास देखिकै निकसत पुनि तहँ बैठन—पृ. ३२५ (४४)।

विभासना, विभासनो—क्रि. अ [स. विभास] चमकना।

विभासित—वि [स] (१) चमकता हुआ। (२) प्रकट।

विभिन्न—वि [म] (१) पृथक्। (२) अनेक प्रकार का।

विभिन्नता—सज्ञा स्त्री. [स] विभिन्न होने का भाव।

विभीति—सज्ञा स्त्री [स] (१) भय। (२) शका।

विभीषण—सज्ञा पु [स] रावण का भाई जो उसके मारे जाने के बाद लंका का राजा हुआ था।

विभीषिका—सज्ञा स्त्री [स.] भयानक काड या दृश्य।

विभु—वि [स] (१) जो सर्वत्र रम रहा हो। (२) जो सर्वत्र जा सकता हो। (३) सब काल में रहनेवाला। (४) चिरस्थायी। (५) ऐश्वर्य या शक्तिमान।
सज्ञा पु (१) ब्रह्म। (२) आत्मा। (३) प्रभु।

विभुता—सज्ञा स्त्री [स] (१) सर्वव्यापकता। (२) प्रभुता, ईश्वरता। (३) ऐश्वर्य, शक्ति।

विभूत, विभूति—सज्ञा स्त्री [स विभूति] (१) धन-सपत्ति, ऐश्वर्य। (२) दिव्य शक्ति जिसके अतर्गत आठो सिद्धियाँ है। (३) राख, भस्म। उ—चदन छाँडि विभूति बतावत, यह दुख क्यौ न जरौं—३०२७।

विभूषण—सज्ञा पु [स] (१) भूषित करने की क्रिया। (२) भूषण, अलकार।
वि भूषित या अलकृत करनेवाला।

विभूषना, विभूषनो—क्रि स [स विभूषण] (१) गहने या भूषण से सजाना। (२) सुशोभित करना। (३) शुभागमन या उपस्थिति से सुशोभित करना।

विभूषित—वि [स.] (१) सजा हुआ, अलंकृत। (२) युक्त,सहित। (३) शोभित।

विभेंटन—सज्ञा पु [स वि +हि भेंट] गले लगाने या आलिगन करने की क्रिया या भाव।

विभेद—सज्ञा पु [स] (१) अतर, भिन्नता । (२) अनेक प्रकार या भेद । (३) विभाग ।

विभेदना, विभेदनो—क्रि स [स विभेदन] (१) छेदना, काटना । (२) घुसना प्रवेश करना । (३) अतर या भेद डालना ।

विभो—सज्ञा पु [स विभु का सबोधन] हे प्रभु ।

विभोर—वि [स विह्वल] (१) विकल, व्याकुल । (२) मग्न, लीन । (३) मस्त, मत्त ।

विभौ—सज्ञा पु [स विभव] धन-सपत्ति, ऐश्वर्य ।

विभ्रंश—सज्ञा पु [स] (१)विनाश । (२) पतन ।

विभ्रम—सज्ञा पु [स] (१) चक्कर, भ्रमण । (२) धोखा । (३) सदेह । (४) घबराहट । (५) एक हाव जिसमे स्त्री उलटे-पुलटे वस्त्राभूषण पहनकर विचित्र भाव प्रकट करती है ।

विभ्राट—वि [स] दीप्ति या प्रकाशमान ।

सज्ञा पु (१) आपत्ति । (२) उपद्रव ।

विमंडन—सज्ञा पु [स] (१) सजाना । (२) भूषण ।

विमंडित—वि [स] (१) सजा हुआ, अलकृत । (२) युक्त, सहित । (३) सुशोभित ।

विमत—सज्ञा पु [स] विपरीत या प्रतिकूल मति ।

विमति—सज्ञा स्त्री [स] (१) कुमति । (२) असम्मति ।

विमत्सर—सज्ञा पु [स] बहुत अहकार ।

वि अहकार रहित ।

विमन—वि [स विमनस्] अनमना, उदास ।

विमर्श—सज्ञा पु. [स] विवेचन, विचार, तथ्यानुसधान । (२) आलोचना, समीक्षा, परीक्षा ।

विमर्ष—सज्ञा पु. [स.] (१) विवेचन, विचार । (२) आलोचना, समीक्षा । (३) नाटक का अग-विशेष जिसमें दोषकथन, क्रोधयुक्त वार्तालाप आदि का वर्णन होता है ।

विमल—वि. [स.] (१) स्वच्छ, निर्मल । (२) निर्दोष, शुद्ध । उ.—मिथ्यावाद-उपाधि रहित ह्वै विमल-विमल जस गावत—२-१७ । (३) सुदर, मनोहर ।

विमलता—सज्ञा स्त्री. [स] (१) स्वच्छता । (२) पवित्रता । (३) शुद्धता । (४) मनोहरता ।

विमला—वि. स्त्री [स.] (१) निर्मल, स्वच्छ । (२) दोषरहिता । (३) सुदर, मनोहर ।

सज्ञा स्त्री (१) सरस्वती । (२) राधा की एक सखी का नाम । उ —कहि राधा किनि हार चुरायौ । । कमला, तारा, विमला, चदा चद्रावलि सुकुमार —१५८० ।

विमाता—सज्ञा स्त्री. [स विमातृ] सौतेली माँ ।

विमान—सज्ञा पु [स] (१) वायुयान । (२) मृतक, वृद्ध या वृद्धा की सजी हुई अरथी ।

विमुक्त—वि. [स] (१) अच्छी तरह मुक्त । (२) फेंका हुआ । (३) पूर्णतया स्वतत्र ।

विमुख—वि. [स.] (१) जिसके मुख न हो । (२) जो किसी विषय मे ध्यान न दे । (३) जो अनुरक्त न हो, उदासीन । उ —व्रज ही बसत विमुख भई हरि सो शूल न उर ते जाई—२५३८ । (४) विरुद्ध, प्रतिकूल । (५) निराश, विफलमनोरथ ।

विमुखता—सज्ञा स्त्री [स] (१) विरति । (२) विरोध ।

विमुग्ध—वि [स] (१) मोहित । (२) बेसुध ।

विमुग्धकारी—वि [स.] मोहित करनेवाला ।

विमुद—वि [स] उदास, खिन्न ।

विमूढ़—वि [स] (१) अत्यत मुग्ध । (२) बेसुध । (३) भ्रम मे पडा हुआ । (४) कर्तव्य-ज्ञान या बुद्धि रहित । (५) बहुत मूर्ख ।

विमोचन—सज्ञा पु [स] (१) बधन आदि खोलना । (२) बधन से छुडाना, मुक्त कराना । (३) बाहर करना, बहाना, निकालना । (४) फेकना, छोड़ना । (५) गिराना ।

विमोचना, विमोचनो—क्रि स. [स. विमोचन] (१) बधन आदि खोलना । (२) मुक्त करना । (३) बाहर करना, निकालना, बहाना । (४) गिराना, टपकाना ।

विमोह—सज्ञा पु [स.] (१) अज्ञान, भ्रम । (२) बेसुध होना । (३) आसक्ति ।

विमोहक—वि. [स.] (१) मोहनेवाला । (२) बेसुध करनेवाला । (३) लालच उत्पन्न करनेवाला ।

विमोहन—सज्ञा पु. [स] (१) मुग्ध या मोहित करना।

(२) मन वश में करना। (३) कामदेव के पाँच बाणों में एक। (४) सुध-बुध भुलाना।

विमोहनशील—वि. [स. विमोहन+शील] (१) भ्रम में डालने या धोखा देनेवाला। (२) मुग्ध या मोहित करनेवाला।

विमोहना, विमोहनो—क्रि. अ. [स. विमोहन] (१) मोहित या मुग्ध होना। (२) अचेत या बेसुध होना। (३) भ्रम या धोखे में पड़ना।

क्रि. स. (१) मोहित या मुग्ध करना। (२) बेसुध करना। ( ) भ्रम या धोखे में डालना।

विमोहित—वि. [स] (१) मुग्ध, लुभाया हुआ। (२) भ्रांत। (३) मूर्छित।

विमोही—वि. [स. विमोहिन्] (१) मुग्ध या मोहित करनेवाला। (२) बेसुध या अचेत करनेवाला। (३) भ्रम में डालनेवाला। (४) जिसमें मोह-ममता न हो, निर्मम, निष्ठुर।

विमोहे—क्रि अ [हिं. विमोहना] मुग्ध हो गये। उ. —सुर ललना सुर सहित विमोहे रच्यो मधुर सुर गान—सू. ३५० (२९)।

विमोह्यो, विमोह्यो—क्रि. अ. [हिं. विमोहना] सुध बुध खो बैठा। उ.—सूर स्याम को मिलनि सुमिरि करि मनु निरधन धन पाइ विमोह्यो २४७८।

विमौट—सज्ञा पु [स. वल्मीक, हिं बाँबी+औट] दीमकों का बनाया मिट्टी का ढूह, बाँबी।

वियंग—सज्ञा पु [हिं बिय+अंग] दो अंगवाले शिव।

विय—वि [स. द्वि, द्वितीय, प्रा विय] (१) दो, जोड़ा। (२) दूसरा, अन्य।

वियत—सज्ञा पु [स. वियत्] आकाश।

वियुत—वि. [स.] (१) अलग। (२) हीन, रहित।

वियुक्त—वि. [स] (१) जो बिछुड़ा हुआ हो। (२) अलग, पृथक्। (३) हीन रहित।

वियो—वि. [प्रा. विय] (१) दो, जोड़ा। उ —ऊधो, जो मन होत वियो—३१४७। (२) दूसरा, अन्य। उ —उनतै प्रभु नहिं और वियो—१६२१।

वियोग सज्ञा पु [स.] (१) सयोग या मिलाप न होना, विच्छेद। (२) अलग होने का भाव, अलगाव। (३) जुदाई, विरह।

वियोगांत—वि. [स.] जिस (नाटक आदि) की कथा का अंत दुख-पूर्ण हो।

वियोगिन, वियोगिनि, वियोगिनी—वि. स्त्री. [स वियोगिनी] जो प्रिय या पति से बिछुड़ी हो।

वियोगी—वि. [स वियोगिन्] जो प्रिया या पत्नी से बिछुड़ा हो, विरही।

विरंग—वि. [स] (१) बुरे रग का, बदरंग। (२) अनेक रंगोवाला।

विरंच, विरंचि—सज्ञा पु [स. विरंचि] विधाता।

विरंचिसुत—सज्ञा पु [स विरंचि+सुत] नारद।

विरक्त—वि. [स.] (१) जिसे चाह या अनुराग न हो, विमुख। (२) खिन्न, उदासीन।

विरक्तता—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) चाह का अभाव, विमुखता। (२) खिन्नता, उदासीनता।

विरक्ति—सज्ञा स्त्री [स.] (१) चाह का अभाव, विराग। (२) खिन्नता, उदासीनता।

विरचन—सज्ञा पु [स] रचना, निर्माण।

विरचना, विरचनो—क्रि स [स विरचन] (१) रचना, बनाना। (२) सजाना, अलंकृत करना।

क्रि अ [स. वि+रंजन] विरक्त होना।

विरचि—क्रि अ [हिं विरचना] विरक्त या उचटा होकर। उ.—विरचि मन बहुरि राच्यो आइ—३३३४।

विरचित—वि. [स.] (१) बनाया हुआ। (२) लिखा हुआ।

विरज—वि [स विरजस्] (१) सुख-वासना से रहित। (२) निर्मल, स्वच्छ। (३) निर्दोष।

विरजा सज्ञा स्त्री. [स] श्रीकृष्ण की एक प्रिया जिसने राधा के भय से नदी का रूप धारण कर लिया था।

विरत—वि. [स.] (१) जिसे चाह न हो, विमुख। (२) जो लीन या तत्पर न हो, निवृत्त। (३) विरक्त, बैरागी। ( ) विशेष रूप से रत या लीन।

विरति—सज्ञा स्त्री [स] ( ) चाह न होना, विमुखता। (२) निवृत्ति, उदासीनता। (३) वैराग्य।

विरथ—वि. [सं.] (१) जिसके पास रथ न हो। (२) रथ से गिरा हुआ। (३) पैदल।

क्रि. वि. [स. व्यर्थ] निरर्थक, व्यर्थ। उ.—सूर विरथ बकवाद करत है, यहि व्रज नदकुमार—३२५३।

विरद—सज्ञा पु. [स. विरुद] (१) ख्याति, प्रसिद्धि। (२) यश, कीर्ति। उ.—यदुकुल विरद बोलावत—२८००।

वि. [स.] बिना दाँत का।

विरदावली—सज्ञा स्त्री [स. विरुदावली] यश-गाथा।

विरदैत—वि. [हिं. विरद + ऐत] बड़ी कीर्तिवाला।

विरध—वि [स. वृद्ध] वृद्ध। उ.—(क) उमँगि अग न मात कोऊ विरध, तरुन अरु बाल—२९५४। (ख) विरध समय की हरत लकुटिया पाप-पुन्य डर नाही—२४१८।

विरमना, विरमनो—क्रि. अ [स. विरमण] (१) मन लगाना, अनुरक्त हो जाना। (२) रुकना, ठहरना। (३) मोहित होकर रुकना। (४) वेग आदि का कम होना या थमना।

विरमाना, विरमानो—क्रि. स. [हिं. विरमना] (१) किसी का मन लगाना, अनुरक्त करना। (२) रोकना, ठहराना, फँसा रखना। (३) मुग्ध करके रोक लेना। (४) भ्रम या भुलावे में रखना।

क्रि. स. [हिं. विलबाना] (१) देर कराना। (२) लटकाना। (३) सहारा देना।

विरमि—क्रि. अ. [हिं. विरमना] मुग्ध या मोहित होने के कारण, रुककर।

प्र०—विरमि जात—रुक जाता है। उ.—नेकहूँ न रहत, विरमि जात तहाँ धाई री—पृ ३३२ (१७)। विरमि रहे—मुग्ध या मोहित होकर रुक गये। उ.—(क) सूरदास कित विरमि रहे प्रभु आवत नाहिं चले। (ख) बहुत दिनन विरमि रहे हौ सग ते बिछोहि हमहिं गए बरजी—३१६२।

विरल—वि. [स.] (१) जो घना न हो। (२) जो दूर-दूर हो। (३) दुर्लभ। (४) निर्जन। (५) थोड़ा, अल्प।

विरव—वि. [सं] शब्दरहित, नीरव।

विरस—वि. [स.] (१) रसहीन, नीरस, बिना स्वाद का। (२) अप्रिय, अरुचिकर। (३) रसहीन (काव्य)। (४) आनदरहित, विरक्त, क्षुब्ध। उ.—(क) छिन-छिन विरस करति है सुदरि क्यो बहरत मन मार—२२१४। (ख) गए सग बिसारि रिस मे, विरस कीन्हो बाल—पृ ३५३ (९१)।

सज्ञा पु. (१) रस या आनन्द का अभाव। (२) रस के विपरीत स्थिति। (३) अनुराग, आनद आदि के विपरीत दशा या स्थिति। उ.—रस मे अतर विरस जनायो—१८६०। (४) क्षोभ, अप्रसन्नता। (५) रस-भग।

विरसता—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) नीरसता, स्वादहीनता। (२) रस-भग, आनन्द न रह जाना।

विरह—सज्ञा पु. [स.] (१) किसी वस्तु का अभाव। (२) प्रिय जन का वियोग। (३) वियोग-दुख।

वि. हीन, बिना, रहित।

विरहा—सज्ञा पु. [स विरह] (१) विरह, वियोग। उ.—(क) तन-मन-धन-यौवन-सुख सपति विरहा अनल दढ़ी—२७१४। (ख) सखा री विरहा यह बिपरीत—२८७६। (२) एक प्रकार का विरहगीत।

विरहिणी—वि. स्त्री. [स.] प्रिय की वियोगिनी।

विरहित—वि. [स.] हीन, बिना, रहित।

विरहिनि, विरहिनी—वि. [स. विरहिणी] वियोगिनी। उ.—विरहिनि क्यौ धीरज मन धरै—ना ४२२०।

विरही—वि. [स. विरहिन्] प्रिया के विरह से दुखी। उ.—(क) विरही कहँ लौ आपु सँभारै—ना. ४३९६। (ख) विरही कैसै जिऐ बिचारे—ना. प. २०२।

विरहोत्कंठिता—सज्ञा स्त्री [स.] वह नायिका जिसे नायक के आन का विश्वास हो और कारणवश इसके न आने से जो दुखी हो।

विराग—सज्ञा पु [स.] (१) अनुराग या लगन का अभाव। (२) उदासीन भाव। (३) सांसारिक बातों से विरक्ति।

विरागी—वि. [स विरागिन्] (१) जिसमें अनुराग या

लगन न हो। (२) उदासीन, विमुख। (३) जो सांसारिक बातों या सुखों से विरक्त हो।

विराजत—क्रि. अ [हिं विराजना] उपस्थित या शोभित होता है। उ —सबके ऊपर सदा विराजत ध्रुव सदा निस्सोक—सारा. ८२।

विराजना, विराजनो—क्रि. अ. [स विराजन] (१) सोहना, शोभित होना। (२) विद्यमान या उपस्थित होना। (३) बैठना।

विराजमान वि. [स.] (१) शोभित। (२) विद्यमान, उपस्थित। (३) बैठा हुआ।

विराजित—वि. [स.] (१) शोभित। (२) उपस्थित।

विराट—सज्ञा पु [स विराट्] (१) ब्रह्म का वह स्थूल रूप जिसके अन्दर अखिल विश्व है। (२) मत्स्य देश (वर्तमान अलवर और जयपुर का प्रदेश)। (३) मत्स्य देश का वह राजा जिसके यहाँ अज्ञातवास-काल में पाडव रहे थे।

वि. बहुत बड़ा और भारी। उ.—सम बल वैस विराट मैन से प्रगट भए है आइ—२५८०।

विराध—सज्ञा पु. [स.] एक राक्षस जिसे दडकारण्य में लक्ष्मण ने मारा था। उ.—मारग मे बहु मुनिजन तारे अरु विराध रिपु मारे—सारा. २५५।

वि. सताने या पीड़ित करनेवाला।

विराम—सज्ञा पु. [स.] (१) ठहराव। (२) विश्राम। (३) छंद में यति। (४) वाक्य में वह स्थान जहाँ ठहरना पड़े।

विराव—सज्ञा पु. [स.] (१) बोली। (२) शोर।

वि. शब्दरहित, नीरव।

विरास—सज्ञा पु. [स. विलास] आनंद, भोग-विलास।

विरासी—वि [स. विलासी] सुख-भोग में लीन।

विरिंच, विरिंचन सज्ञा पु. [स. विरंचि] ब्रह्मा।

विरुज—वि [स.] रोगरहित, नीरोग।

विरुझना—क्रि. अ. [हिं. उलझना] (१) फँसना, अटकना। (२) लिपटना। (३) काम मे लीन होना। (४) झगड़ना। (५) कठिनाई में पड़ना।

क्रि. अ. [हिं. विरुझना] झगड़ना।

विरुझैं—क्रि. अ. [हिं बिरुझना] झगड़ने लगे। उ.—तब न कछू बनि आइहै जब विरुझैं सब नारि—११२५।

विरुत—वि. [सं.] रव-युक्त, गूँजता हुआ।

विरुद—सज्ञा पु. [स] (१) यश, कीर्ति। (२) यश-कीर्तन, प्रशस्ति। (३) यश-सूचक पदवी।

विरुदावली—सज्ञा स्त्री. [स.] यश-वर्णन, प्रशंसा।

विरुद्ध—वि. [स.] (१) प्रतिकूल। (२) अप्रसन्न। (३) विपरीत। (४) अनुचित, नीति के प्रतिकूल।

विरुद्धता—सज्ञा स्त्री [स.] (१) विरुद्ध होने का भाव। (२) प्रतिकूलता, विपरीतता।

विरूप—वि. [स] (१) कुरूप। (२) परिवर्तित।

विरूपा—वि. स्त्री. [स.] कुरूपा (नारी)।

विरूपाक्ष—सज्ञा पु. [स.] (१) शिव। (२) रावण का एक सेनानायक जिसे हनुमान ने मारा था।

विरोचन—सज्ञा पु [स.] प्रहलाद का पुत्र जो राजा बलि का पिता था।

विरोचन-सुत - सज्ञा पु [स.] राजा बलि जिसे वामन ने छला था।

विरोध—सज्ञा पु. [स.] (१) भिन्नता, विपरीतता। (२) अनबन, शत्रुता। (३) दो बातो का साथ-साथ न हो सकना। (४) उलटी स्थिति।

विरोधना—क्रि. स. [स. विरोधन] बैर करना।

विरोधाभास—सज्ञा पु. [स.] (१) दो बातों में दिखायी देन वाला विरोध। (२) एक अलकार।

विरोधी - वि [स विरोधिन्] बाधक, विपक्षी, शत्रु।

विलंब—वि. [स विलम्ब] देर, अतिकाल।

विलंबन—सज्ञा पु. [स.] देर करने का भाव।

विलबना, विलबनो - क्रि. अ [स. विलबन] (१) देर करना। (२) मन लगने के कारण रम जाना। (३) लटकना। (४) अवलब या सहारा देना।

विलंबाना, विलंबानो - क्रि. स. [हिं. विलबना] (१) देर कराना। (२) मन लगाने के कारण रमने को प्रवृत्त करना। (३) लटकाना। (४) अवलब या सहारा देना।

विलंबित - वि. [स.] (१) झूलता या लटकता हुआ। (२) जिसमें देर हुई हो।

विलक्षण—वि. [स.] असाधारण, अनोखा ।
विलक्षणता—सज्ञा स्त्री [स.] अनोखापन ।
विलखना, विलखनो—क्रि. अ [स विकल] दुखी होना ।
क्रि. अ. [स. वि + लक्ष] लक्ष्य करना, ताडना ।
विलखाना, विलखानो—क्रि. स. [स विकल] दुखी या पीड़ित करना ।
विलग—वि [सं. वि + हिं लगना] (१) अलग, पृथक । (२) अनुचित, बुरा । उ —(क) विलग जनि मानौ हमरी बात—ना. ४१५५ । (ख) विलग जनि मानौ ऊधौ कारे—ना ४३८० । (ग) विलग हम मानै ऊधौ काकौ—ना. ४४७४ । (घ) याकौ विलग बहुत हम मान्यो जब कहि पठयो धाइ—२९३१ ।
विलगाना, विलगानो—क्रि. अ. [हिं. विलग] अलग या पृथक् होना ।
क्रि. स. अलग या पृथक् करना ।
विलच्छन—वि. [स विलक्षण] अद्भुत, अनूठा ।
विलपत—क्रि. अ [हिं विलपना] विलाप करते (हुए) । उ.—सीता सं ता विलपत डोलत—सारा. २७३ ।
विलपति—क्रि. अ. [हिं. विलपना] विलाप करती है । उ.—सूरदास राधा विलपति है, हरि को रूप अगाधो—२७५८ ।
विलपना, विलपनो—क्रि. अ. [स. विलाप] रोना ।
विलपाना, विलपानो—क्रि. स. [हिं विलपना] रुलाना, विलाप करने को प्रवृत्त करना ।
विलम—सज्ञा पु [स. विलंब] देर, विलंब । उ.—(क) विलम करौ जिनि नेकहूँ अबही ब्रज जाइ—२४७६ । (ख) गए पास तब विलम न करी— १० उ.—२८ । (ग) राम-कृष्ण को लावौ मधुपुरि विलम करो जनि जात—सारा २३९४ ।
विलय—सज्ञा पुं. [स.] (१) लोप । (२) नाश ।
विलसत—क्रि. स. [हिं. विलसना] सुख भोगते या आनन्द उठाते है । उ.—(क) इंद्रासन बैठे सुख विलसत दूर किये भुव भार—सारा. ५० । (ख) पुहुप-बास रस-रसिक हमारे विलसत सघुर गोपाल—३३४९ ।
विलसन—सज्ञा पुं [स.] क्रीड़ा, प्रमोद ।
विलसना, विलसनो—क्रि. अ. [स. विलसन] (१) क्रीड़ा या विलास करना । (२) आनंद मनाना ।
विलसाना, विलसानो—क्रि. स [हिं. विलसना] (१) क्रीड़ा या विलास में प्रवृत्त करना । (२) आनद मनाने को प्रवृत्त करना ।
विलसियौ, विलसियौ—क्रि अ. [हिं. विलसना] सुख या आनद भोगना । उ.—सुख दै कह्यो, लिये आवति हौं, संग विलसियो बाम —१८७६ ।
विलसी—क्रि स. [हिं. विलसना] सुख उठाना । उ.—कौनै रक सपदा विलसी सोवत सपने पाई—३३४३ ।
विलाप—सज्ञा पु. [स.] क्रंदन, रुदन ।
विलापना, विलापनो—क्रि. अ. [स. विलाप] रुदन, क्रदन या शोक करना ।
विलायन—सज्ञा पु. [स.] एक प्राचीन अस्त्र ।
विलास—सज्ञा पु [स] (१) सुख-भोग । उ —(क) स्यामा सुधा-सरोवर मानो क्रीडत विविध विलास—पृ. ३५० (६४) । (ख) ब्रजवासिनि सो करत विलास—१० उ.-३७ । (२) हर्ष, आनद । उ —प्रभु मुकुद कै हेत नूतन होहिं घोष विलास—१०-२६ । (३) हाव-भाव, अगो की मनोहर चेष्टा । उ.—सूरदास अब क्यो बिसरत है नख-सिख अग-विलास—३२३२ । (४) हिलना-डोलना । (५) अत्यत विषय-भोग या काम-सुख ।
विलासिनि, विलासिनी—सज्ञा स्त्री. [स विलासिनी] (१) विलास करनेवाली, भोग-विलास में लिप्त रहने वाल , कामिनी । (२) वेश्या ।
विलासी—वि [स. विलासिन्] (१) विषय-भोग में लिप्त, कामी । (२) आमोदप्रिय ।
विलासै—क्रि. स. [हिं. विलासना] क्रीड़ा करता और आनन्द मनाता है । उ —वृंदावन मे रास विलासै मुरली मधुर बजावै—१० उ.-४३ ।
विलीक—वि. [सं. व्यलीक] अनुचित ।
विलीन—वि. [स.] (१) लुप्त, अदृश्य । (२) जो घुल-मिल गया हो । (३) छिपा हुआ । (४) नष्ट ।

विलोकना, विलोकनो—क्रि. स. [स. विलोकन] देखना, अवलोकन करना।

विलोकि—क्रि. स. [हिं. विलोकना] देखकर। उ.—अब विधु-वदन विलोकि सुलोचन—२५६७।

विलोचन—संज्ञा पु. [सं.] (१) नेत्र, नयन। (२) आँखें फोडने की क्रिया।

विलोपना, विलोपनो—क्रि. स. [स. विलोपन] लुप्त या अदृश्य करना, नाश करना।

विलोम—वि. [स.] (१) विपरीत, प्रतिकूल। (२) स्वर का उतार या अवरोह।

विलोल—वि. [स] (१) चचल। (२) सुदर।

विल्व—संज्ञा पु. [स] बेल का पेड।

विल्वमंगल—संज्ञा पु [स.] सूरदास का समकालीन एक प्रसिद्ध भक्त।

विव—वि. [स. द्वि] (१) दो। (२) दूसरा।

विवदना, विवदनो—क्रि अ [स. विवाद] वाद विवाद या तर्क वितर्क करना।

विवर—संज्ञा पु. [स.] (१) छेद। (२) दरार। (३) गुफा।

विवरण—संज्ञा पु. [स.] वृत्तांत, विस्तृत वर्णन।

विवरन—संज्ञा पु [स. विवरण] वृतांत।

वि. [स. विवर्ण] कातिहीन। उ.—विवरन भये जे दाधे वारिज ज्यो जलहीन—२७६७।

विवर्ण—संज्ञा पु. [स.] वह भाव जिसमे भय, लज्जा आदि से मुख का रग बदल जाता है।

वि. (१) जिसका रंग खराब हो गया हो, बदरग। (२) रग बदलनेवाला। (३) जिसके चेहरे का रग उतरा हुआ हो, कातिहीन।

विवर्तन—संज्ञा पु. [स] (१) घूमना-फिरना। (२) नाच नृत्य।

विवश, विवस—वि. [स विवश] (१) लाचार, मजबूर। (२) पराधीन, परवश। (३) शक्तिहीन।

विवसन, विवस्त्र—वि. [स.] वस्त्रहीन।

विवाद—संज्ञा पु. [स.] (१) वाक्युद्ध, वितर्क। (२) झगड़ा। (३) मतभेद।

विवाह—संज्ञा पु. [स.] शादी, दांपत्य-सूत्र-बंधन का संस्कार। विवाह आठ प्रकार के माने गये हैं—ब्राह्म, दैव, आर्ष, प्राजापत्य, आसुर, गांधर्व, राक्षस और पैशाच। उ.—करि विवाह ताही लै आयो—१०-उ.-२८।

विवाहना, विवाहनो—क्रि स [स. विवाह] शादी या विवाह करना।

विवाहित—वि. [स.] व्याहा हुआ।

विवाहिता—वि. स्त्री. [स.] व्याही हुई।

विवाही—वि. स्त्री [स. विवाह] व्याही हुई।

क्रि. स. [हिं. विवाहना] विवाह किया। उ.—तैसेही लछमना विवाही पूरन परमानद—सारा. ६५७।

विवि—वि. [स द्वि] (१) दो दोनो। उ.—नैन कटाक्ष बिलोकन मधुरी सुभग भृकुटी विवि मोरत—१३५०। (ख) मानो परनकुटी सिव कीन्ही विवि मूरति धरि न्यारे—२७६२। (२) दूसरा, अन्य।

विविध—वि. [स.] अनेक प्रकार का। उ.—कनक दड सारग विविध रव कीरति निगम सिद्ध सुर धाइ—२५५५।

विविर—संज्ञा पु. [स.] (१) गुफा। (२) बिल। (३) दरार।

विवुध—संज्ञा पु. [स] (१) देवता। (२) ज्ञानी।

विवृत्त—वि [स] (१) विस्तृत। (२) खुला हुआ।

संज्ञा पु ऊष्म स्वर-उच्चारण का एक प्रयत्न।

विवेक—संज्ञा पु. [स.] (१) सत्-असत्-ज्ञान। (२) समझ, बुद्धि। (३) सत्य ज्ञान। (४) अच्छे बुरे को पहचानने की शक्ति।

विवेकी—वि. [स.] (१) बुद्धिमान। (२) भले-बुरे का ज्ञान रखनेवाला। (३) ज्ञानी। (४) न्यायशील।

विवेचक—वि. [स.] विवेचना करनेवाला।

विवेचन—संज्ञा पु [स.] (१) जांचना, परीक्षा, मीमांसा। (२) व्याख्या, तर्क-वितर्क। (३) अनुसंधान। (४) सत्-असत्-विचार।

विवेचना—संज्ञा स्त्री. [स.] विवेचन।

विशद—वि. [स.] (१) स्पष्ट। (२) विस्तृत।

विशाखा—संज्ञा स्त्री. [स.] (१) सताईस नक्षत्रों में सोलहवां। (२) राधा की सखी एक गोपी। उ.—ललिता विशाखा ब्रजबधू बुलावें—२२८०।

विशारद—वि [स] (१) विद्वान, पंडित । (२) दक्ष, कुशल । (३) श्रेष्ठ उत्तम ।

विशाल—वि. [स.] (१) बड़ा, विस्तृत । उ. रथ बैठे दूर ते देखे अंबुज नैन विशाल—२५३६ । (२) सुंदर, भव्य । (३) प्रसिद्ध ।

विशालता—संज्ञा स्त्री [स.] विशाल होने का भाव ।

विशाली—वि. स्त्री. [स. विशाल] बड़ा । उ.- घन तन स्याम सुदेह पीत पट सुंदर नैन विशाली—२५६७ ।

विशिख—संज्ञा पु. [स.] तीर, बाण ।

विशिष्ट –वि. [स.] विशेषतायुक्त ।

विशिष्टता - संज्ञा स्त्री. [स.] विशेषता ।

विशिष्टाद्वैत—संज्ञा पु. [स] रामानुजाचार्य का वह दार्शनिक सिद्धांत जिसके अनुसार जगत और जीवात्मा को ब्रह्म कार्य-रूप में एक दूसरे से भिन्न मानने पर भी वस्तुत एक ही माना जाता है ।

विशुद्ध—वि. [स.] अत्यंत शुद्ध ।

विशुद्धता—संज्ञा स्त्री [स.] विशुद्ध होने का भाव ।

विशृंखल - वि. [स] कड़ी या शृंखलारहित ।

विशेष—संज्ञा पु. [स.] (१) जिसमें कुछ खास या नयी बात हो । (२) विशिष्ट व्यक्ति, वस्तु आदि से संबंध रखनेवाला । (३) सामान्य से अधिक गुणवाला । (४) खास कामों के लिए रखा या लगाया हुआ । संज्ञा पु एक अर्थालंकार ।

विशेषज्ञ—वि [स.] विशेष ज्ञान रखनेवाला ।

विशेषण—संज्ञा पु. [स.] (१) विशेषता उत्पन्न करने या बतानेवाला । (२) वह विकारी शब्द जो किसी संज्ञा की विशेषता सूचित करे ।

विशेषता—संज्ञा स्त्री. [स.] खासियत, विशेष गुण ।

विशेषी—वि. [सं. विशेषिन्] विशेषतायुक्त ।

विशेष्य—संज्ञा पु. [स] वह संज्ञा (शब्द) जिसकी विशेषता सूचित की जाय ।

विश्रांत—वि. [स] जिसने विश्राम कर लिया हो ।

विश्रांति - संज्ञा स्त्री. [सं.] आराम, विश्राम ।

विश्राम—संज्ञा पु. [सं.] (१) श्रम मिटाना, आराम करना । उ — सूर प्रभु कियो विश्राम सब निशि तहाँ —२५७० । (२) चैन, सुख । (३) ठहरने का स्थान ।

विश्रामिनि, विश्रामिनी—वि. स्त्री. [स. विश्राम] सुख देनेवाली । उ.—रूप-निधान स्यामसुंदर घन-आनंद मन विश्रामिनि—पृ ३४४ (३४) ।

विश्रुत—वि. [स.] (१) जाना या सुना हुआ । (२) प्रसिद्ध, विख्यात ।

विश्रुति—संज्ञा स्त्री [स.] प्रसिद्धि, ख्याति ।

विश्लेषण—संज्ञा पु. [स.] (१) संयोजक तत्वों को अलग करना । (२) विवेचन, मीमांसा ।

विश्वंभर—संज्ञा पु [स] (१) विश्व का भरण-पोषण करने वाला, ईश्वर । (२) विष्णु ।

विश्वंभरा—संज्ञा स्त्री. [स] पृथ्वी ।

विश्व—संज्ञा पु. [स.] (१) चौदहों भुवनों का समूह, संपूर्ण ब्रह्मांड । (२) संसार ।

विश्वकर्ता—संज्ञा पु. [स. विश्वकर्तृ] परमेश्वर ।

विश्वकर्मा - संज्ञा पु. [स. विश्वकर्म्मन्] (१) संसार का रचयिता, ईश्वर । उ.— ज्ञान तुही कर्म तुही विश्व कर्मा तुही अनंत शक्ति प्रभु असुर-शालक —१० उ. —३५ । (२) एक पौराणिक आचार्य जो शिल्पशास्त्र के आविष्कर्त्ता और सर्वश्रेष्ठ ज्ञाता माने जाते हैं । उ —विश्वकर्मा को आज्ञा दीनी रची द्वारका आय— सारा. ६०३ ।

विश्वकोश - संज्ञा पु. [स.] (१) वह भांडार जिसमें संसार के सब पदार्थ हों । (२) वह महाग्रंथ जिसमें संसार के सब विषयों का प्रामाणिक परिचय हो ।

विश्वजित—वि. [स.] संसार को जीतनेवाला ।

विश्वनाथ - संज्ञा पु. [स.] (१) शिव । (२) काशी का एक प्रसिद्ध ज्योतिर्लिंग ।

विश्वभरन वि. [स विश्वंभर] विश्व का भरण-पोषण करनेवाले । उ.—सूरदास प्रभु विश्वभरन ए चोर भए ब्रज तनक दही के—२३८५ ।

विश्वमोहन - संज्ञा पु. [स.] विष्णु ।

विश्वविद्यालय—संज्ञा पु [स.] वह संस्था जहाँ सभी विषयों की उच्चकोटि की शिक्षा दी जाती हो ।

विश्वव्यापी—वि. [सं.] जो सारे विश्व में व्याप्त हो ।

विश्वश्रवा—संज्ञा पुं. [सं. विश्वश्रवस्] एक मुनि जो रावण आदि के पिता थे।

विश्वसनीय—वि. [सं.] विश्वास करने योग्य।

विश्वस्त—वि. [सं.] जिसका विश्वास किया जाय।

विश्वात्मा—संज्ञा पु. [सं. विश्वात्मन्] (१) विष्णु। (२) शिव। (३) ब्रह्मा।

विश्वामित्र—संज्ञा पु. [सं.] महाराज गाधि के पुत्र जो क्षत्रिय होते हुए भी ब्रह्मर्षि कहलाए। मेनका अप्सरा से उत्पन्न शकुंतला इन्हीं की पुत्री थी।

विश्वास—संज्ञा पु. [सं.] (१) यकीन, एतबार। (२) आस्था। (३) अनुमान पर आधारित निश्चय।

विश्वासकारक—वि. [सं.] विश्वास उत्पन्न करनेवाला।

विश्वासघात—संज्ञा पु. [सं.] विश्वास के प्रतिकूल या विरुद्ध कार्य।

विश्वासघातक—वि. [सं.] विश्वास करनेवाले को, प्रतिकूल कार्य करके, धोखा देनेवाला।

विश्वासघाती—वि. [सं.] विश्वास करनेवाले का अपकार करने या उसको धोखा देनेवाला। उ.—पुनि वह बधिक विश्वासघाती हनत विषम सर तानि—३२३८।

विश्वासपात्र—वि. [सं.] विश्वास करने के योग्य।

विश्वासी—वि. [सं. विश्वासिन्] (१) विश्वास करने वाला। (२) जिसका विश्वास किया जाय।

विष—संज्ञा पु. [सं.] (१) जहर, गरल। (२) वह जो सुख-शांति में बाधक हो।

मुहा०—विष की गाँठ—झगड़ा, उपद्रव आदि करानेवाला।

विषकंठ—संज्ञा पु. [सं.] शिव, महादेव।

विषकन्या—संज्ञा स्त्री. [सं.] वह कन्या जिसको जन्म से ही इस उद्देश्य से विष पान कराया जाय कि उसके संपर्क में आनेवाला तुरंत मर जाय।

विषधर—संज्ञा पु. [सं.] साँप, सर्प।

विषम—वि. [सं.] (१) जो सम या समान न हो। (२) जिस (संख्या) को दो से भाग देने पर एक शेष बचे। (३) जटिल, क्लिष्ट। (४) तेज, तीव्र। उ.—विषधर बिषय बिषम विष बाँची—१-८३। (५) विकट, भीषण, भयंकर। उ.—(क) भीजत ग्वाल गाइ गोसुत सब विषम बूँद लागत जनु सायक—९५४। (ख) जे वै लता लगत तनु सीतल अब भईं विषम अनल की पुंजें—२ २१। (ग) पुनि वह बधिक विश्वासघाती हनत विषम सर तानि—३२३८।

संज्ञा पु. संकट, विपत्ति।

विषमता—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) विषम होने का भाव, असमानता। उ.—आपु विषमता तजि देऊ सम भैं बानक ललित त्रिभंग—३३२७। (२) बैर, द्रोह।

विषमायुध—संज्ञा पु. [सं.] कामदेव।

विषयक—वि. [सं.] विषय का, विषय-संबंधी।

विषयपति—संज्ञा पु. [सं.] जनपद का शासक।

विषयासक्त—वि. [सं.] विलासी, कामी।

विषयासक्ति—संज्ञा स्त्री. [सं.] विलासिता।

विषयी—वि. [सं. विषयिन्] भोग विलास में लिप्त रहनेवाला, विलासी, कामी। उ.—(क) अपत उतार अभागो कामी विषयी निपट कुकर्मी—१-१८६। (ख) महामूढ विषयी भयौ चित आकर्ष्यौ काम—१-३२५।

विषलाडू—संज्ञा पु. [सं. विष + हिं. लड्डू] लड्डू जिसमें विष मिला हो। उ.—फंदा फाँसि धनुष विष-लाडू सूर स्याम नहिं हमहिं बतायो—११६१।

विषहर—वि. [सं.] जो (औषध, मंत्र आदि) विष का प्रभाव दूर करे।

संज्ञा पु. [सं. विषधर] साँप, सर्प। उ.—लागे है विषारे बान स्याम बिनु यु ग याम घायल ज्यौं घूमैं मनो विषहर खाई है—२८२७।

विषांगना—संज्ञा स्त्री. [सं.] विषकन्या।

विषाक्त—वि. [सं.] जहरीला, विषयुक्त।

विषाण—संज्ञा पु. [सं.] (१) सींग। (२) दाँत।

विषाद—संज्ञा पु. [सं.] खेद, दुख। उ.—जा चरनार बिंद के रस कौ सुर-मुनि करत विषाद—१०-६४।

विषान—संज्ञा पु. [सं. विषाण] सींग या सिंगी बाजा। उ.—मुद्रा भस्म विषान त्वचा मृग ब्रज युवतिनि मन भाए—२९९१।

विषानन—संज्ञा पु. [सं.] साँप, सर्प।

विषारौ—वि. [सं. विष + हिं. आरौ] विषभरा,

विषैला। उ.—अग कारो मुख विषारो दृष्टि परै तांहि लागिहै—५७७।

विषुवरेखा—सज्ञा स्त्री. [स.] वह कल्पित रेखा जो पृथ्वीतल पर, दोनो मेरुओं के ठीक मध्य में मानी जाती है।

विषै—सज्ञा पु. [स. विषय] भोग-विलास। उ.—कह्यो तुमको ब्रह्म ध्यावा छांडि विषै विकार—२१७५।

विष्कभ, विषकंभक—सज्ञा पु [स.] नाटक का वह अक जिसमें मध्यम पात्रो द्वारा पूर्व की अथवा होनेवाली कथा की सूचना दी जाती है।

विष्ठा—संज्ञा स्त्री [स] मैला, मल।

विष्णु—सज्ञा पु. [स.] हिंदुओं के एक प्रधान देवता जो सृष्टि का भरण पोषण करनेवाले माने जाते हैं। इनके चौबीस अवतारो में दस प्रमुख माने जाते हैं। लक्ष्मी इनकी पत्नी हैं। इनके चार हाथों में शख, चक्र, गदा और पद्म रहते हैं। गरुड़ इनका वाहन है। गंगा इनके चरणो से निकली कही गयी है।

विष्णुपुरी—सज्ञा स्त्री. [स] वैकुंठ।

विष्वक्सेन—सज्ञा पु [स.] विष्णु का एक नाम।

विसम—वि. [स. विषम] (१) जो सम न हो। (२) क्लिष्ट। (३) तेज, तीव्र। (४) भीषण।

विसमता—सज्ञा स्त्री. [स. विषमता] असमानता।

विसर्ग—सज्ञा पु. [स.] (१) त्याग। (२) वह वर्ण जिसके आगे दो बिंदु ऊपर नीचे होते है और जिसका उच्चारण प्राय. अर्द्ध 'ह' जैसा होता है।

विसर्जन—सज्ञा पु [स.] (१) परित्याग। (२) समाप्ति।

विसर्पी—वि [स. विसर्पिन्] (१) फैलनेवाला, प्रसरणशील। (२) तेज चलनेवाला।

विसूरण—सज्ञा पु. [स.] (१) दुख। (२) चिंता।

विसूरति—क्रि अ. [हिं. विसूरना] शोक करती है। उ.—बार बार सिर धुनति विसूरति—२७६२।

विसूरना, विसूरनो—क्रि. अ. [स. विसूरण] बहुत दुख या शोक करना।

विस्तर—वि. [स.] अधिक, विशेष।

विस्तरता—सज्ञा स्त्री. [स.] अधिक होने का भाव।

विस्तरना, विस्तरनो—क्रि. स. [सं. विस्तर] विस्तार देना, फैलाना, बढ़ाना।

विस्तरो, विस्तरौ—क्रि. स. [हिं. विस्तरना] विस्तार करो। उ.—शुक्र कह्यो, तुम जग विस्तरौ—११-२।

विस्तार—सज्ञा पु. [स.] फैलाव।

विस्तारन—सज्ञा पु [स. विस्तार] फैलाने का कार्य। उ.—करुनाकर जलनिधि ते प्रगटे सुधा-कलस लै हाथ। आयुर्वेद विस्तारन कारण सब ब्रह्माण्ड के नाथ—सारा. १३८।

विस्तारना विस्तारनो—क्रि. स. [स. विस्तार] विस्तार देना, फैलाना, बढ़ाना।

विस्तारी—वि [स. विस्तारिन्] अधिक विस्तारवाला।

विस्तारे—क्रि. स [हिं. विस्तारना] फैलाया, प्रचलित किया। उ. उहाँ दासी रति की कीरति कै इहाँ याग विस्तारे—३०५५।

विस्तीर्ण—वि. [स.] (१) फैला हुआ, विस्तृत। (२) बहुत बड़ा, विशाल। (३) बहुत अधिक।

विस्तृत—वि. [स.] (१) खूब फैला हुआ। (२) पर्याप्त विवरण के साथ। (३) बहुत बड़ा, विशाल।

विस्फार—सज्ञा पु [स.] (१) फैलाव, विस्तार। (२) विकास। (३) कांपना।

विस्फारित—वि [स.] (१) अच्छी तरह खोला या फैलाया हुआ। (२) फाड़ा हुआ।

विस्फोट—सज्ञा पु [स.] फूट पड़ना।

विस्मय—सज्ञा पु [स.] (१) आश्चर्य। (२) अद्भुत रस का स्थायी भाव जो अलौकिक या अद्भुत कार्यों से मन में उत्पन्न होता है।

विस्मरण—सज्ञा पु [स.] स्मरण न रहना।

विस्मित—वि. [स.] चकित।

विस्मृत—वि. [स.] जो स्मरण न हो।

विस्मृति—सज्ञा स्त्री. [स.] भूल जाना, विस्मरण।

विस्राम—सज्ञा पु. [स. विश्राम] आराम, सुख।

विहग—सज्ञा पु. [स.] (१) पक्षी, विहग। (२) तीर बाण। (३) रवि सूर्य।

विहगम—सज्ञा पु [स.] (१) पक्षी। (२) सूर्य।

विहगराज—सज्ञा पु. [स.] गरुड़।

विहंगी—संज्ञा पुं. [सं. पक्षी] पक्षी।
विहग—संज्ञा पु. [सं] (१) पक्षी। (२) सूर्य।
विहरण—संज्ञा पु. [स.] (१) चलना-फिरना, घूमना। (२) वियोग।
विहरना, विहरनो—क्रि. अ [स. विहरण] घूमना, चलना-फिरना।
विहरै—क्रि. अ. [हिं विहरना] घूमता-फिरता या विचरण करता है। उ.—यमुना के तीर ग्वाल सगहि विहरै री—२४२३।
विहसित—संज्ञा पु [स.] मधुर हास।
विहान—संज्ञा पु [स वि + अह्नि] सबेरा, प्रभात।
विहार—संज्ञा पु [स.] (१) घूमना-फिरना। (२) रति-क्रीड़ा। (३) बौद्ध श्रमणो का मठ।
विहारी—वि. [स.] (१) विहार करनेवाला। (२) विहार करनेवाले (श्रीकृष्ण)। उ—बोले सुभट, हौस मन जिनि करौ वन विहारी—२५८४।
सज्ञा पु. श्रीकृष्ण।
विहित—वि. [स.] (१) जिसका विधान हो, जिसके लिए अनुमति हो। (२) किया हुआ।
विहीन—वि [स.] बिना, रहित।
विहून—वि. [स विहीन] बिना, रहित।
विह्वल—वि [स.] व्याकुल, विकल। उ—सूर स्याम रतिपति विह्वल करि नागरि रहि मुरझाइ—२०७७।
विह्वलता—संज्ञा स्त्री [स] व्याकुलता, घबराहट।
वीक्षण—संज्ञा पु [स.] देखने का कार्य।
वीचि—संज्ञा स्त्री. [स.] (१) लहर, तरंग। (२) चमक प्रभा, दीप्ति।
वीचिमाली—संज्ञा पु [स] सागर, समुद्र।
वीची—संज्ञा स्त्री. [स.] लहर, तरग।
वीज—संज्ञा पु [स] (१) मूल कारण। (२) वीर्य। (३) तेज। (४) बीज। (५) एक प्रकार का मत्र।
वीजमार्गी—संज्ञा पु [स वाजमार्गिन्] वह वैष्णव जो निर्गुणोपासक होता है।
वीणा—संज्ञा स्त्री [स] एक प्रसिद्ध बाजा।
वीणापाणि—संज्ञा स्त्री [स.] सरस्वती।
वीत—वि. [स.] (१) त्यागा हुआ। (२) मुक्त। (३) समाप्त। (४) निवृत्त, विरक्त।
वीतराग—वि. [स.] जिसमें आसक्ति न हो।
वीतशोक—वि. [स.] जिसने शोक त्याग दिया हो।
वीथिका, वीथी—संज्ञा स्त्री [स. वीथी] (१) रूपक के २७ भेदों में एक। (२) मार्ग। (३) सूर्य का मार्ग।
वीप्सा—संज्ञा स्त्री [स.] (१) व्याप्त होने की इच्छा। (२) व्याप्ति। (३) एक काव्यालकार।
वीर—वि [स.] (१) बहादुर, शूर, साहसी। उ.—परम निसक समर सरिता तट क्रीडत यादव वीर—१० उ.-२। (२) जो किसी काम में दूसरो से बहुत बढ़-चढ़ कर हो।
सज्ञा पु. (१) सैनिक। (२) भाई। (३) एक रस जिसमें उत्साह, वीरता आदि का वर्णन होता है। उत्साह इसका स्थायी भाव है।
वीरगति—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) वीरों को प्राप्त उत्तम गति। (२) स्वर्ग।
वीरता—संज्ञा स्त्री. [स] बहादुरी, शूरता।
वीरभद्र—संज्ञा पु [स] शिव का एक गण।
वीरललित—वि. [स] वीरो जैसा, परन्तु कोमल (स्वभाव)।
वीरव्रत—वि. [स] निश्चय पर दृढ़ रहनेवाला।
वीरशय्या—संज्ञा स्त्री. [स] रणभूमि।
वीरसू संज्ञा स्त्री [स.] वीर की जननी।
वीराचारी—संज्ञा पु [स. वीराचारिन्] वे वाममार्गी या शैव जो वीर भाव से उपासना करते है।
वीरान—वि [फा] (१) उजड़ा हुआ। (२) श्रीहीन।
वीराना—संज्ञा पु [फा.] उजड स्थान।
वीरासन—संज्ञा पु [स] एक आसन जिसमें बायें पैर और टखने पर दाहिना जाँघ रख कर बठते है।
वीरुध—संज्ञा पु [स.] वृक्ष, लता, वनस्पति।
वीरेश वीरेश्वर—संज्ञा पु [स.] शिव, महादेव।
वीर्य—संज्ञा पु [स वीर्य] (१) शरीर की सात धातुओं में अतिम जिससे शरीर में बल और तेज आता है। यही सतान-जन्म का मूल है। (२) सार, तत्व। (३) बल, शक्ति।
वृंत—संज्ञा पु. [स वृंत] (१) कच्चा फल। (२) बौंड़ी। (३) पतला डठल।

वृंद—संज्ञा पु. [सं.] (१) समूह। उ.—सखा वृंद लै तहाँ गए—२५७५। (२) सौ करोड़ की संख्या। (३) एक मुहूर्त।

वृंदा—संज्ञा स्त्री. [स.] (१) तुलसी। (२) राधा के सोलह नामों में एक। (३) राधा की एक सखी।

वृंदारक—संज्ञा पु. [स.] (१) देवता। (२) श्रेष्ठ व्यक्ति।

वृंदारण्य—संज्ञा पु. [स.] वृंदावन।

वृंदावन—संज्ञा पु. [स.] मथुरा जिले का एक प्रसिद्ध तीर्थ जहाँ श्रीकृष्ण ने अनेक बाल-लीलाएँ की थीं।

वृक—संज्ञा पु. [सं.] (१) भेड़िया। (२) गीदड़। (३) कौआ। (४) क्षत्रिय। (५) चोर।

वृकोदर—संज्ञा पु. [स.] भीमसेन जिनके पेट में 'वृक' नाम्मी अग्नि थी।

वृक्क, वृक्कक—संज्ञा पु. [स.] गुरदा।

वृक्का—संज्ञा पु. [स.] हृदय।

वृक्ष—संज्ञा पु. [स.] (१) पेड़, द्रुम, विटप। (२) वृक्ष से मिलती-जुलती वह आकृति जिसमें मूल, शाखा, प्रशाखाएँ आदि दिखायी गयी हों।

वृजि—संज्ञा स्त्री. [स.] व्रजभूमि।

वृजिन—संज्ञा पु. [स.] (१) पाप। (२) दुख।
वि. (१) टेढ़ा, कुटिल। (२) पापी।

वृत—वि. [स.] (१) नियुक्त। (२) स्वीकृत।
संज्ञा पु. [स. वृत्त] (१) चरित्र। (२) वृत्तांत।

वृत्त—संज्ञा पु. [स.] (१) चरित्र। (२) समाचार।

वृत्तांत—संज्ञा पु. [स.] (१) समाचार, घटना का विवरण। उ.—मुनि जरासंध वृत्तांत असमुना मे युद्ध हित कटक अपनो हँकारचो – ११ उ.-१। (२) आख्यान।

वृत्ति—संज्ञा स्त्री. [स.] (१) जीविका। (२) सहायतार्थ दिया जाने वाला धन, उपजीविका। (३) व्याख्या। (४) विवरण, वृत्तांत। (५) वर्णन की शैली। (६) चित्त की अवस्था-विशेष। (७) स्वभाव, प्रकृति। (८) एक शस्त्र।

वृत्र—संज्ञा पु. [स.] (१) त्वष्टासुर का पुत्र जिसे इंद्र ने वज्र से मारा था। (२) मेघ। (३) अंधकार।

वृत्रहा—संज्ञा पु. [सं.] वृत्रासुर को मारनेवाला इंद्र।

वृत्रासुर—संज्ञा पु. [सं.] त्वष्टा का पुत्र जिसे इंद्र ने वज्र से मारा था।

वृथा—वि. [स.] बिना मतलब का, व्यर्थ का।
क्रि. वि. बिना मतलब के, व्यर्थ।

वृद्ध—संज्ञा पु. [स.] (१) बूढ़ा प्राणी। (२) वृद्धावस्था।

वृद्धता—संज्ञा स्त्री. [स.] बुढ़ापा, वृद्धावस्था।

वृद्धा—वि. स्त्री. [स.] बूढ़ी।

वृद्धि—संज्ञा स्त्री. [स.] (१) बढ़ने की क्रिया, बढ़ती। (२) समृद्धि, आढ्यता।

वृश्चिक—संज्ञा पु. [स.] (१) बिच्छू। (२) बारह राशियों में आठवीं। (३) अगहन मास।

वृष—संज्ञा पु. [स.] (१) बैल, साँड़। उ.—तेली के वृष लौं नित भरमत—१-१०२। (२) बारह राशियों में दूसरी। (३) बारह लग्नों में दूसरी।

वृषक—संज्ञा पु. [स.] साँड़, बैल।

वृषकेतन, वृषकेतु—संज्ञा पु. [स.] शिव, महादेव।

वृषभ—संज्ञा पु. [स.] (१) बैल, साँड़। (२) श्रीकृष्ण के एक सखा का नाम।

वृषभान, वृषभानु—संज्ञा पु. [स.] राधिका के पिता का नाम।

वृषभानुनंदिनी—संज्ञा स्त्री. [स.] राधा। उ.—ता दिन तें वृषभानुनंदिनी अनत जान नहिं दीन्हें—२१८५।

वृषभानुपुरा—संज्ञा पु. [स.] वृषभानु के रहने का स्थान। उ.—प्यारी गयी वृषभानुपुरा तन स्याम जात नँदधाम – २०८१।

वृषभानुसुता—संज्ञा स्त्री. [स.] राधा।

वृषभासुर—संज्ञा पु. [स.] कंस का अनुचर एक असुर जिसे श्रीकृष्ण ने मारा था। उ. केसी तृनावर्त वृषभ सुर हती पूतना जब बारे री—२५६८।

वृषल—संज्ञा पु. [स.] (१) शूद्र। (२) चंद्रगुप्त मौर्य का एक नाम।

वृषली—संज्ञा स्त्री. [स.] (१) शूद्र जाति की स्त्री। (२) पर-पुरुष से प्रेम करनेवाली नारी।

वृषवासी—संज्ञा पु. [स. वृषवासिन्] केरल देश के वृष पर्वत पर बसनेवाले शिव जी।

वृष्टि—संज्ञा स्त्री. [स.] (१) जल बरसना, वर्षा। (२)

ऊपर से किसी चीज का बहुत बड़ी संख्या में एक साथ गिरना या गिराया जाना। उ —(क) अमृत की वृष्टि रन-खेत उपर करी—६-३६३। (ख) देव दुदुभी पुहुप वृष्टि जै ध्वनि करै—२६१८। (३) किसी क्रिया का कुछ समय तक बराबर होते रहना।

वृष्णि—सज्ञा पु. [सं] (१) मेघ, बादल। (२) यदुकुल, यादववंश। (३) श्रीकृष्ण।

वृहत्—वि. [स वृहत्] बड़ा, महान।

वृहन्नला—सज्ञा स्त्री. [स.] अर्जुन का उस समय का नाम जब वे अज्ञातवासकाल में राजा विराट की पुत्री उत्तरा को नृत्य-गान सिखाते थे।

वे—सर्व [हि. वह] 'वह' का बहु. रूप।

वेइ, वेई—सर्व. [हि. वे + ही] वे ही। उ.—(क) तुमकौ लैहैं वेइ बचाइ —९-५। (ख) कालिहिंहि तैं वेइ सबै ल्यावै गाइ चराइ—४३७।

वेक्षण—सज्ञा पु [सं.] भली भांति देखना-भालना।

वेग—सज्ञा पु. [स] (१) बहाव, प्रवाह। (२) तेजी। (३) शीघ्रता। (४) झुकाव, प्रवृत्ति।

वेणी—सज्ञा स्त्री. [स.] बालों की गूथी हुई चोटी।

वेणु—सज्ञा पु. [स.] (१) बाँस। (२) बाँसुरी, बशी।

वेतन—सज्ञा पु. [स.] तनखाह, पारिश्रमिक।

वेतनभोगी—वि. [स] वेतन पर काम करनेवाला।

वेत्ता—वि. [स.] जाननेवाला, ज्ञाता।

वेत्र—सज्ञा पु. [स.] बेंत।

वेत्रवती—सज्ञा स्त्री. [स.] बेतवा नदी।

वेत्रासुर—सज्ञा पु. [स.] एक असुर जिसे इंद्र ने मारा था।

वेद—सज्ञा पु. [स.] भारतीय आर्यों के सर्वप्रधान धार्मिक ग्रंथ जिनकी संख्या चार है—ऋग्वेद, यजु; साम और अथर्व। इनकी रचना ईसा से तीन हजार वर्ष पूर्व होना माना जाता है।

वेदज्ञ—वि. [स.] (१) वेदों का ज्ञाता। (२) ब्रह्मज्ञानी।

वेदन—सज्ञा पु. स्त्री [स. वेदना] पीड़ा, कष्ट। उ —(क) सूरदास वै आपु स्वार्थी पर-वेदन नहिं जान्यौ—१४१७। (ख) सूर नंद बिछुरे को वेदन मोपै कहिय न जाइ—२६५०। (ग) प्राणनाथ बिछुरे की वेदन और न जानै कोई—२८८१।

वेदना—संज्ञा स्त्री. [स.] पीड़ा, कष्ट।

वेदनिंदक—वि. [स.] (१) वेदों की बुराई या निंदा करनेवाला। (२) नास्तिक। (३) वाममार्गी।

वेदमाता—सज्ञा स्त्री. [स.] गायत्री, सावित्री।

वेदवाक्य—सज्ञा पु. [स.] (१) वेदों का कथन। (२) सर्वथा प्रामाणिक कथन।

वेदविद्—वि [स.] वेदों का ज्ञाता, वेदज्ञ।

वेदव्यास—सज्ञा पु. [स.] पराशर-पुत्र श्रीकृष्ण द्वैपायन जिन्होंने वेदों का सग्रह-सपादन किया था।

वेदांग—सज्ञा पु. [स] वेदों के छह अग—शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, ज्योतिष और छंद।

वेदांत—सज्ञा पु. [स] (१) ब्रह्मविद्या, अध्यात्म। (२) छह दर्शनों में वह प्रधान दर्शन जिसमें ब्रह्म को ही एकमात्र पारमार्थिक सत्ता स्वीकार किया गया है, अद्वैतवाद।

वेदांती—वि. [स.] वेदांत का ज्ञाता, ब्रह्मवादी।
वि. [स वि + हि दाँत] जिसके दाँत हों।

वेदी—सज्ञा स्त्री. [स. वेदिन्] (१) शुभ कार्य या अनुष्ठान के लिए तैयार की गयी भूमि। उ.—देत भाँवरि कुंज मडल पुलिन मे वेदी रची—पृ ३४८ (४)। (२) सरस्वती।

वेध—सज्ञा पु. [स.] (१) नोक से छेदना, बेधना। (२) ग्रहों, नक्षत्रों आदि को देखना।

वेधशाला—सज्ञा स्त्री. [स.] वह स्थान जहाँ ग्रहों, नक्षत्रों आदि का अध्ययन करने के यंत्र हों।

वेधा—सज्ञा पु. [स. वेधस्] (१) ब्रह्मा। (२) विष्णु।

वेधित—वि. [स.] जो बेधा या छेदा गया हो।

वेधी—वि [स.] (१) बेधने या छेदनेवाला। (२) जिससे वेध किया जाय।

वेला—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) समय, काल। (२) दिन-रात का चौबीसवाँ या दिन का आठवाँ भाग। (३) मर्यादा। (४) समुद्र का किनारा। (५) समुद्र की लहर।

वेल्लि, वेल्ली—सज्ञा स्त्री. [स. वेल्लि] लता, बेल।

वेश—सज्ञा पु. [सं.] (१) वस्त्राभूषण से अपने को सजाना। (२) वस्त्राभूषण पहनने की रीति।

मुहा०—किसी का वेश धारण करना—किसी के रूप, रग, पहनावे, चाल ढाल आदि की नकल करना।

(३) पहनने के वस्त्र, पोशाक।

यौ०—वेश-भूषा—पहनने के कपड़े, पोशाक।

वेशधारी—वि. [स.] जिसने किसी का वेश धारण किया हो, छद्मवेशी।

वेशी—वि [स.] वेश धारण करनेवाला।

वेश्या—सज्ञा स्त्री. [स.] गणिका, वारवनिता।

वेष्टन—सज्ञा पु [स.] (१) लपेटने की क्रिया या भाव। (२) लपेटने की वस्तु, बेठन।

वेष्ठित—वि. [स.] लिपटी या लपेटी हुई। उ.—अति हित बेनी उर परसाए वेष्टित भुजा अमोचन—पृ. ३१८ (७२)।

वै—सर्व. [हिं. वे] वे। उ.—(क) सुबल श्रीदामा सुदामा, वै भए इक ओर—१०-२४४। (ख, सूरदास वै आपु स्वारथी—१४१७।

प्रत्य. [स. व] (१) भी। (२) ही।

सज्ञा पु. [स. वय] अवस्था।

वैकल्पिक—वि. [स.] (१) एकागी। (२) सविग्ध। (३) जो इच्छानुसार ग्रहण किया जा सके।

वैकुंठ—सज्ञा पु. [सं.] विष्णु का धाम।

वैखरी—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) कठ से उत्पन्न स्वर का विशिष्ट रूप। (२) वाक्शक्ति। (३) वाग्देवी।

वैखानस—वि. [स.] (१) जो वानप्रस्थ आश्रम में हो। (२) वनवासी (ब्रह्मचारी या तपस्वी)।

वैचित्र्य—सज्ञा पु. [स] विलक्षणता।

वैजयंती—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) पताका। (२) श्रीकृष्ण की पँचरगिणी माला जो घुटनो तक रहती थी।

वैज्ञानिक—वि. [स.] विज्ञान-सबंधी।

सज्ञा पु. विज्ञान का अच्छा ज्ञाता।

वैतनिक—वि. [स.] (१) वेतन लेकर काम करनेवाला। (२) वेतन-सबधी।

वैतरणी—सज्ञा स्त्री [स.] यमलोक के बाहर बहनेवाली एक नदी जिसे पार करके ही प्राणी उस लोक पहुंच पाता है। इसका जल बहुत गरम है और इसमें लहू, हड्डियाँ आदि भरी हैं। पापियों को इसके पार करने में बड़ा कष्ट होता है। मृत्यु के पूर्व 'गो-दान' करनेवाले सहज ही इसके पार उतर जाते हैं।

वैताल, वैतालिक—सज्ञा पु. [स.] स्तुति-पाठक।

वैद—सज्ञा पु [स वैद्य] चिकित्सक। उ.—सूर वैद ब्रजनाथ मधुपुरी काहि पठाऊं लैन—२७६५।

वैदग्ध, वैदग्ध्य—सज्ञा पु [स.] (१) पांडित्य। (२) कौशल, पटुता। (३) चतुरता।

वैदर्भी—सज्ञा स्त्री. [स] (१) काव्य की वह रीति जिसमें मधुर वर्णों के द्वारा मधुर रचना की जाती है। (२) दमयती। (३) रुक्मिणी।

वैदिक—वि. [स.] (१) जो वदो में कहा गया है। (२) वेद सबधी, वेद का।

वैदूर्य सज्ञा पु [स.] लहसुनिया रत्न।

वैदेशिक—वि [स.] विदेश-सबधी।

वैदेही—सज्ञा स्त्री [स] विदेह-सुता, सीता।

वैद्य—सज्ञा पु [स.] चिकित्सक।

वैद्यक—सज्ञा पु. [स] चिकित्सा-शास्त्र।

वैद्यनाथ—सज्ञा पु. [स.] बगाल का एक शिव तीर्थ।

वैध—वि. [स.] जो विधि के अनुकूल हो, ठीक।

वैधव्य—सज्ञा पु. [स] विधवापन, रँड़ापा।

वैनतेय—सज्ञा पु [स] विनिता पुत्र, गरुड़। उ.—वैनतेय सपुट सनकादिक चतुरानन जय-विजय सखाइ—२५५५।

वैभव—सज्ञा पु. [स] धन-सपत्ति, ऐश्वर्य।

वैभवशाली—वि. [स.] ऐश्वर्य-सपन्न।

वैभाषिक—वि. [स.] विभाषा-सबधी।

वैमनस्य—सज्ञा पु. [स] वैर, द्वेष।

वैमात—वि. [स] विमाता से उत्पन्न, सौतेला।

वैया—अव्य [स. वान्] करनेवाला।

वैयाकरण—सज्ञा पु. [स.] व्याकरण का पडित।

वैर—सज्ञा पु. [स.] द्वेष, शत्रुता। उ.—(क) गरजि-गरजि घन बरसन लागे मनो सुरपति निज वैर सँभा-रयो—२८३२।(ख) हमारे माई मारवा वैर परे—२८४१।

वैराग—सज्ञा पु. [स. वैराग्य] विरक्ति।

वैरागी—सज्ञा पु. [स.] (१) विरक्त व्यक्ति। (२) रामानुज के अनुयायी उदासीन वैष्णव।

वैराग्य—संज्ञा पु. [स.] विरक्ति ।
वैराज्य—सज्ञा पु. [सं.] एक ही देश में, एक ही काल में दो राजाओं का शासन ।
वैरूप्य—सज्ञा पु [सं.] (१) विरूपता । (२) विकृति ।
वैरोचन, वैरोचनि—सज्ञा पु. [स.] राजा बलि ।
वैवस्वत—संज्ञा पु. [स.] (१) एक मनु जिनसे आज का मन्वंतर माना जाता है । (२) वर्तमान मन्वतर ।
वैवाहिक—वि. [स.] विवाह-सबधी ।
वैशंपायन—सज्ञा पु [स.] एक ऋषि जो वेदव्यास के शिष्य थे और जिन्होने जनमेजय को महाभारत की कथा सुनायी थी ।
वैशाख—सज्ञा पु. [स.] चैत के बाद का महीना । उ. —ऐसो सुनियत द्वै वैशाख—३३२१ ।
वैशाखी—सज्ञा स्त्री [स.] वैशाख की पूर्णिमा ।
वैशाली—सज्ञा स्त्री. [स.] बौद्ध काल की एक नगरी ।
वैशेषिक—सज्ञा पु. [स.] छह दर्शनों में एक जो महर्षि कणाद कृत है और जिसमे पदार्थ विचार तथा द्रव्य-निरूपण है, पदार्थ-विद्या ।
वैश्य—सज्ञा पु. [स.] चार वर्णो में तीसरा ।
वैश्वानर—सज्ञा पु. [स.] अग्नि ।
वैषम्य—सज्ञा पु. [स.] विषमता ।
वैषयिक—वि [स.] (१) विषय-सबधी । (२) विषयी ।
वैष्णव—सज्ञा पु. [स.] विष्णु का उपासक ।
वि विष्णु-सबधी, विष्णु का ।
वैष्णवत्व—सज्ञा पु. [स.] वैष्णव होने का भाव ।
वैष्णवी—सज्ञा पु. [स.] (१) विष्णु की उपासिका । (२) विष्णु की शक्ति ।
वैसंधि—सज्ञा स्त्री. [स. वय सधि] बाल्यावस्था और यौवनावस्था के बीच की स्थिति । उ.—कहत न बनै सुनतहुँ न आवै वैसँधि वर्णत कविन कठोर—२१३१ ।
वैस—सज्ञा पु. [हिं. वयस] अवस्था । उ —और वैस को कहै वरणि—३०३१ ।
वैसा—वि. [हिं. वह+सा] उस तरह का ।
वैसी—वि. स्त्री. [हि वैसा] उस तरह की । उ.—वैसी आपदा तै राख्यौ—१-७७ ।
वैसे—क्रि. वि. [हिं. वैसा] उस तरह ।
मुहा०—वैसे तो—किसी और अथवा दूसरी दशा में ।
वैसेहि—वि. [हिं. वैसा+ही] वैसे ही । उ.—वाही भाति बरन बपु वैसेहि सिसु सब रचे नद-सुत आन—४३८ ।
वोइ—सर्व [हिं. वह+ही] वह ही, वही । उ.—कितिक बार अवतार लियो ब्रज ऐहै ऐसे वोइ—१००४ ।
वोउ—सर्व. [हि. वह+ऊ] वह भी । उ.—दरसन नीके देत न वोउ—१४२८ ।
वोक—सज्ञा पु. [अनु. ओक या लोक] (१) दिशा ओर । उ.-सूरस्याम काली उर निरतति आए व्रज की वोक । (२) घर, स्थान । उ.—जरासध को जीति सूर प्रभु आये अपने वोक—१० उ.-२ ।
वोछी—वि. [हिं. ओछी] तुच्छ, साधारण । उ.—वोछी पूँजी हरै ज्यो तस्कर रक मरै पछिताइ—३२०३ ।
वोछे—वि [हिं ओछा] तुच्छ, साधारण, हीन । उ.—डारत खात देत नहिं काहू वोछे घर निधि आइ—पृ. ३२२ (९) ।
वोछो—वि. [हिं ओछा] तुच्छ, हीन । उ.—तुमहिं दोष नहि लाडिले वोछो गुन क्यौ जाइ—११३५ ।
वोट—सज्ञा स्त्री [हिं ओट] आड़ । उ —पलक वोट निमि पर अनखाती यह दुख कहाँ समाइ—३४४४ ।
वोढ़नहार—वि. [हिं ओढनहार] ओढ़नेवाला । उ.—ढीठ गुवाल दही के माते वोढनहार कमरि को—१०५३ ।
वोढ़नी—सज्ञा स्त्री. [हिं ओढनी] ओढ़नी । उ.—पीताबर वोढनी शीश पै राधा को मनरजत है—पृ. ३११ (८) ।
वोढ़ाय—क्रि. स. [हिं ओढाना] ओढ़ाकर । उ.—लिये वोढाय कामरी मोहन—३३८२ ।
वोढ़ैं—क्रि स. [हि. ओढना] ओढ़ ले ।
मुहा०—वोढैं कि बिछावैं-न ओढ़ने के काम आ सकती है और न बिछाने के, अतएव सर्वथा व्यर्थ और अनुपयोगी है (खीझकर कहा गया वाक्य) उ.—इह योग कथा वोढ़ै कि बिछावैं—३४१२ ।

वोढ़ैया—वि. [हिं. ओढैया] ओढ़नेवाला । उ.—कंस पास ह्वै आइए कामरी वोढैया—२५७५ ।

वोद्र—सज्ञा पु. [स. उदर] पेट ।

वोर—सज्ञा स्त्री [हि ओर] दिशा, तरफ । उ —(क) अनजानत कल बैन स्रवन सुनि चितै रहत उत उनकी वोर—पृ. ३३५ (४०) । (ख) कोउ आवत ओहिं वोर जहाँ नँद सुवन पधारे—३४४३ ।

वोस—सज्ञा स्त्री [हिं. ओस] ओस । उ.—तौ इह तृषा जाइ क्यों सूरज आनि वोस के नीर—२७७१ ।

वोहित—सज्ञा पु. [स. वोहित्थ] बड़ी नाव, जहाज । उ.—भटक परयो वोहित के खग ज्यो फिरि हरि ही पै आयो—३३८५ ।

व्यंग, व्यंग्य—सज्ञा पु [स. व्यग्य] (१) गूढ़ अर्थ । (२) लगती हुई बात, ताना ।

व्यंजन—सज्ञा पु [स.] (१) प्रकट या व्यक्त करने की क्रिया । (२) पका हुआ भोजन । (३) वह वर्ण जो बिना स्वर की सहायता के न बोला जा सके, जैसे देवनागरी वर्णमाला के 'क से 'ह' तक वर्ण ।

व्यंजना—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) प्रकट या व्यक्त करने की क्रिया । (२) शब्द की वह शक्ति जिसके द्वारा साधारण अर्थ को छोड़कर विशेष अर्थ सूचित हो ।

व्यक्त—वि. [स] (१) प्रकट । (२) स्पष्ट ।

व्यक्ति—सज्ञा स्त्री. [स.] प्रकट होने की क्रिया या भाव । सज्ञा पु (१) समूह या समाज का अंग, व्यष्टि । (२) आदमी, मनुष्य ।

व्यक्तिगत—वि. [स.] व्यक्ति-विशेष से संबध रखने-वाला, वैयक्तिक ।

व्यक्तित्व—सज्ञा पु. [स.] वह विशेष गुण जिससे व्यक्ति की स्वतत्र सत्ता सूचित हो ।

व्यग्र—वि. [स.] (१) व्याकुल । (२) भयभीत ।

व्यग्रता—सज्ञा स्त्री. [स.] व्याकुलता ।

व्यजन—सज्ञा पु. [स.] (हवा करने का) पंखा ।

व्यतिक्रम—सज्ञा पु. [स.] (१) क्रम का उलट-फेर या विपर्यय । (२) बाधा, विघ्न ।

व्यतिपात—संज्ञा पु. [सं.] उत्पात, उपद्रव ।

व्यतिरेक—संज्ञा पु. [स.] (१) अभाव । (२) भिन्नता । (३) अतिक्रम । (४) एक अर्थालकार ।

व्यतीत—वि. [स] बीता हुआ, गत ।

व्यथा—सज्ञा स्त्री [स.] (१) पीड़ा । (२) क्लेश ।

व्यथित—सज्ञा स्त्री. [स.] पीड़ित, दुखी ।

व्यभिचार—सज्ञा पु. [स.] (१) बुरा या दूषित आचार । (२) पर-स्त्री या पर-पुरुष का सबंध ।

व्यभिचारि, व्यभिचारिणी, व्यभिचारिणी, व्यभिचारिनि, व्यभिचारिनी—वि. स्त्री [स. व्यभिचार] व्यभिचार करनेवाली । उ —ज्यो व्यभिचारि भवन नहि आवति औरहि पुरुष रई—पृ. ३३४ (३९) ।

व्यभिचारी—वि. [स व्यभिचारिन्] (१) जिसका चाल-चलन अच्छा न हो । (२) पर-स्त्री से संबध रखनेवाला ।

व्यय—सज्ञा पु. [स.] खर्च ।

व्ययी—वि. [स.] बहुत खर्चीला ।

व्यर्थ—वि. [स.] (१) निरर्थक, बेमतलब । (२) जिसमें कोई अर्थ न हो । (३) जिसमें लाभ न हो । क्रि वि. बिना किसी मतलब के ।

व्यर्थता—सज्ञा स्त्री. [स.] व्यर्थ होने का भाव ।

व्यलीक—वि [सं.] (१) अप्रिय । (२) कष्टदायक ।

व्यवधान—सज्ञा पु. [स.] (१) परदा । (२) अतर । (३) विभाग । (४) अलग होना । (५) समाप्ति ।

व्यवसाय—सज्ञा पु. [स.] (१) कार्य जिससे जीविका-निर्वाह हो । (२) व्यापार । (३) उद्यम ।

व्यवसायी—वि [स. व्यवसायिन्] (१) व्यवसाय या रोजगार करनेवाला । (२) उद्यमी ।

व्यवस्था—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) शास्त्रीय विधान । (२) क्रमानुसार सजाना । (३) प्रबध ।

व्यवस्थापक—वि. [स.] (१) शास्त्रीय व्यवस्था बताने-वाला । (२) प्रबंध करनेवाला ।

व्यवस्थित—वि. [स.] नियमानुसार ।

व्यवहार—सज्ञा पु. [स.] (१) काम, कार्य । (२) बरताव । उ.—सूरदास जाके जिय जैसी हरि कीने तैसो व्यवहार—१० उ.-७ । (३) व्यापार । (४) लेन-देन का काम । उ.—सूरदास-सिर देत सूरमा सोइ जानै व्यवहार—२७१३ । (५) स्थिति ।

व्यवहारतः—क्रि. वि. [सं.] (१) व्यवहार की दृष्टि से। (२) व्यवहार के रूप में।

व्याज—संज्ञा पु. [स.] कपट जिसमें कहा कुछ और किया कुछ जाय। (२) बाधा, विघ्न। (३) विलंब।

व्याजनिंदा—संज्ञा स्त्री. [स] (१) ऐसी निंदा जो स्पष्ट निंदा न जान पड़े। (२) एक शब्दालंकार।

व्याजस्तुति—संज्ञा स्त्री. [स.] (१) ऐसी स्तुति जो स्पष्ट प्रशंसा न जान पड़े। (२) एक शब्दालंकार।

व्याजोक्ति—संज्ञा स्त्री. [स.] (१) छल-कपट की बात। (२) एक अर्थालंकार।

व्याध—संज्ञा पु. [स.] शिकारी।

व्याधि—संज्ञा स्त्री [स] (१) रोग। (२) आपत्ति।

व्यापक—वि. [स.] (१) चारो ओर फैलनेवाला या व्याप्त। (२) चारो ओर से घेरनेवाला।

व्यापकता—संज्ञा स्त्री. [स.] व्यापक होने का भाव। उ.—जोवै गुन अतीत व्यापकता, तौ हम काहे व्यारी —३२७०।

व्यापना—क्रि अ. [स व्यापन] व्याप्त होना।

व्यापार—संज्ञा पु. [स.] (१) काम, कार्य। (२) रोजगार, व्यवसाय। उ.—यह व्यापार वहाँ जो समातो हुती बड़ी नगरी—३१०४।

व्यापारी—वि. [स.] (१) रोजगारी, व्यवसायी। (२) व्यापार-संबंधी।

व्यापि—क्रि अ. [हिं. व्यापना] व्याप्त होकर।
प्र०—व्यापि गई—(मन में) व्याप्त हो गयी। उ.—जबहिं मन ग्यारो हठि कीन्हो गोपनि मन इह व्यापि गई—२६४६।

व्याप्ति—संज्ञा स्त्री. [स.] (१) व्याप्त होने की क्रिया या भाव। (२) आठ सिद्धियों में एक।

व्यामोह—संज्ञा पु. [स.] अज्ञान, मोह।
वि. मोह या अज्ञान के वशीभूत। उ.—असुरनि को व्यामोह कियो हरि धरो मोहिनी रूप—सारा. ३२२।

व्यायाम—संज्ञा पु [स.] (१) श्रम। (२) कसरत।

व्यायोग—संज्ञा पु. [स.] रूपक के दस प्रकारों में एक प्रकार।

व्याल—संज्ञा पुं. [सं] (१) साँप। (२) हाथी।

व्यालू—संज्ञा स्त्री. [स. वेला] रात का भोजन।

व्यावहारिक—वि. [स.] व्यवहार संबंधी।

व्यास—संज्ञा पु. [स.] (१) पराशर के पुत्र श्रीकृष्ण द्वैपायन जिन्होंने वेदों का संग्रह-संपादन किया था। (२) कथावाचक। (३) गोल वृत्त के एक स्थान से सीधी दूसरे स्थान तक पहुंचनेवाली रेखा।

व्याहत—वि. [स.] (१) वर्जित। (२) व्यर्थ।

व्याहृत—वि. [स.] कहा हुआ, कथित।

व्याहृति—संज्ञा स्त्री. [स.] कथन, उक्ति।

व्युत्पत्ति—संज्ञा स्त्री [स.] (१) उत्पत्ति-स्थान। (२) शब्द का मूल रूप। (३) विशिष्ट ज्ञान।

व्युत्पन्न—वि. [स] (१) जिसका संस्कार हो चुका हो। (२) विशिष्ट ज्ञानवाला।

व्यूह—संज्ञा पु [सं.] (१) समूह। (२) निर्माण। (३) युद्ध-काल में सेना खड़ी करने की योजना। (४) शक्ति, स्वरूप। उ.—तीनो व्यूह संग लै प्रगटे पुरुषोत्तम श्रीराम—सारा. १५८।

व्योम—संज्ञा पु. [स] (१) आकाश। (२) मेघ।

व्योमासुर—संज्ञा पु [स.] एकअसुर जिसेश्रीकृष्णने मारा था। उ.—व्योमासुर केसी सब मारे—सारा. ४८४।

व्योसाइ—संज्ञा पु [स. व्यवसाय] काम, काज, संबंध। उ.—सूरदास दिगंबरपुर तें रजक कहा व्योसाइ—३३३४।

व्रज—संज्ञा पु. [स.] (१) जाना, गमन। (२) समूह। (३) मथुरा और वृंदावन का निकटवर्ती प्रदेश जो श्रीकृष्ण की लीला-भूमि रही थी। पुराणों मे मथुरा के चारो ओर चौरासी कोस की भूमि 'व्रजभूमि' कही गयी है जिसकी प्रदक्षिणा का बहुत माहात्म्य है।

व्रजन—संज्ञा पु [स.] जाना, गमन।

व्रजनाथ—संज्ञा पु [स.] श्रीकृष्ण।

व्रजपति—संज्ञा पु. [स.] श्रीकृष्ण।

व्रजभाषा—संज्ञा पु. [स.] शौरसेनी प्राकृत से उत्पन्न वह भाषा जो मथुरा, आगरा, इटावा आदि के निकटवर्ती प्रदेशों में बोली जाती है और जिसका प्राचीन साहित्य अत्यंत समृद्ध है।

व्रजमंडल—सज्ञा पु [सं.] मथुरा के चारों ओर चौरासी कोस की भूमि।

व्रजमोहन—सज्ञा पु. [स.] श्रीकृष्ण।

व्रजराइ, व्रजराई, व्रजराज, व्रजराजा, व्रजराय, व्रजराया—सज्ञा पु. [स. व्रजराज] श्रीकृष्ण।

व्रजलाल, व्रजलाला—संज्ञा पु. [स व्रजलाल] श्रीकृष्ण।

व्रजवल्लभ—संज्ञा पु [स.] श्रीकृष्ण।

व्रजेंद्र—सज्ञा पु [स.] श्रीकृष्ण।

व्रजेश, व्रजेश्वर—सज्ञा पु. [स.] श्रीकृष्ण।

व्रज्या—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) घूमना-फिरना। (२) जाना, गमन। (३) चढ़ाई, आक्रमण।

व्रण—सज्ञा पु. [स] (१) फोड़ा। (२) घाव।

व्रत—सज्ञा पु. [स.] (१) उपवास। उ.—सत सजम तीरथ व्रत कीन्है तब यह संपति पाई—१०-१६। (२) दृढ़ निश्चय या संकल्प।

व्रतचर्या—सज्ञा स्त्री [स, व्रतचर्य्या] व्रत रखना।

व्रतचारी—वि. [स.] व्रत रखनेवाला।

व्रती—वि. [स.] व्रत रखनेवाला।

व्राचड़—सज्ञा स्त्री. [अप.] (१) सिंध में प्रचलित एक प्रचीन अपभ्रंश भाषा। (२) पैशाची भाषा का एक भेद।

व्रात्य – वि [स] व्रत-सबधी।

सज्ञा पु (१) वह व्यक्ति जिसके दस सस्कार न हुए हो। (२) वह व्यक्ति जिसका यज्ञोपवीत न हुआ हो।

व्रीड़ा—सज्ञा स्त्री. [स.] शरम, लज्जा।

व्रीहि—सज्ञा पु [स.] धान, चावल।

श

श—देवनागरी वर्णमाला का तीसवाँ व्यजन जिसे, प्रधानतया तालू की सहायता से उच्चरित होने के कारण, 'तालव्य' कहते है। उच्चारण मे घर्षण-विशेष होने से यह 'ऊष्म' भी कहलाता है।

शंक—सज्ञा स्त्री. [स] भय, आशका। उ.—(क) हौ सकुचनि बोलो नही, लोक-लाज की शक करी—(ख) करत ओघ प्रजा लोगै सब नृपति की शक न मानी—२५४५।

शंकना—क्रि. अ. [स. शका] भय या शंका करना।

शंकर—वि [स.] (१) शुभ। (२) मगलकारी।

सज्ञा पु. (१) शिव। (२) शकराचार्य।

शंकरशैल—सज्ञा पु. [स.] कैलास।

शंकराचार्य—सज्ञा पु. [स. शकराचार्य्य] प्रसिद्ध शैवाचार्य (सन् ७८८-८२०) जिनके पिता का नाम शिवगुरु और माता का सुभद्रा था। आठ वर्ष की अवस्था में इन्होने सन्यास लिया था। इन्होंने शास्त्रार्थ में मडन मिश्र को सपत्नीक परास्त किया था। तदनतर सारे भारत में भ्रमण करके वैदिक धर्म का पुनरुत्थान किया था। उपनिषद और वेदात सूत्र पर इन्होने अत्यत विद्वत्तापूर्ण टीकाएँ लिखी थीं। इनके स्थापित चार मठो—बद्रिकाश्रम, करवीरपीठ, द्वारकापीठ और शारदापीठ—की गद्दी के अधिकारी आज भी शकराचार्य कहे जाते है।

शंकरी—सज्ञा स्त्री [स] पार्वती, शिवा।

वि. मगल या कल्याण करनेवाली।

शंका—सज्ञा स्त्री. [स] (१) डर, भय। उ.—शशि शका निसि जालनि के मग वसन बनाइ किए—३४५९। (२) सदेह, सशय। (३) एक सचारी भाव।

शंकाना—क्रि. अ. [स. शका] भय या आशका करना।

शंकानो—क्रि. अ. [हि. शकाना] भयभीत या शकित हुआ। उ.—वहि क्रम बिनु द्वै सुत अहीर के रे कातर कत मन शकानो—३३७८।

शकि—वि. [स. शका] भयभीत, शकित। उ.—देखत ही शकि गए काल गुण बिहाल भए कस डरन घेरि लिए दोउ मन मुमकाए—२६००।

शंकित—वि. [स.] (१) डरा हुआ। उ.—(क) सूरदास सुरपति शकित ह्वै सुरन लिए सँग आयो—१०००। (ख) शकित नद निरस बानी सुनि विलम करत कहा क्यौ न चले—२६४७। (२) जिसे सदेह हुआ हो। (२) अनिश्चित।

शंकु—सज्ञा पु. [स.] (१) नुकीली चीज जैसे मेख, खूँटी। (२) भाला। (३) एक बाजा। (४) उग्रसेन के एक पुत्र का नाम।

शंके—क्रि अ. [स. शका] भयभीत या शकित हुए। उ – (क) महाराज इनके कहा सपने कह शंके—२४७०। (ख) मारयो कस सुनत सब शके—२६४३।

शंख—सज्ञा पु [स.] (१) एक तरह का बडा घोंघा जो देव-पूजा और युद्ध के समय बजाया जाता है। उ.—पचानन ज शख तहँ लीन्हो मारि असुर अति नीच—सारा. ५४०।

मुहा०—शख बजना—विजय प्राप्त होना। शख बजाना –किसी की हानि या अपमान देखकर आनद मनाना।

(२) एक लाख करोड (सख्या)। (३) एक दैत्य जो वेदों को चुरा ले गया था और जिसे मारकर वेदों का उद्धार करने के लिए भगवान ने मत्स्यावतार धारण किया था। (४) नौ निधियों में एक। (५) राजा विराट् का एक पुत्र।

शंखचूड़—सज्ञा पु. [स.] कस का अनुचर एक दैत्य जिसे श्रीकृष्ण ने मारा था। उ—(क) शखचूड चाणूर सँहारन—९८२। (ख) धेनुक अरु प्रलब सँहारे शखचूड बध कीन्हो—सारा. ४७९।

शंखधर—सज्ञा पु. [स.] (१) श्रीकृष्ण। उ —गिरिधर वज्रधर धरनीधर पीताबरधर मुकुटधर गापधर शख-धर सारँगधर चक्रधर रस धरे अधर सुधाधर। (२) विष्णु।

शंखपाणि—सज्ञा पु [स.] विष्णु।

शंखासुर—सज्ञा पु. [स] (१) एक दैत्य जो वेद चुराकर समुद्र में जा छिपा था और जिसको मारने के लिए विष्णु ने मत्स्यावतार लिया था। उ.– चार वेद लै गयो सखासुर जल मे रह्यो छुपाय। धरि हयग्रीव रूप हरि मारयो लीन्हे बेद छुडाय– सारा. ९०। (२) मुर दैत्य का पिता।

शंखिनी—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) चार प्रकार की स्त्रियो में एक जो सलोम शरीरवाली, लज्जा और शका रहित, सुदर, अत्यत रतिप्रिय आदि होती है। (२) मुँह की नाड़ी-विशष।

शंठ—वि. [स] (१) अविवाहित। (२) मूर्ख।

शंड—वि. [स.] (१) नपुसक। (२) उन्मत्त। (३) साँड।

शंडामर्क—सज्ञा पु [स.] (१) शड और मर्क नाम के दो दैत्य। (२) प्रह्लाद के शिक्षागुरु। उ —शडामर्क (सडामर्क) रहे पचि हारि। राजनीति कहि बारबार —७-२।

शंतनु—सज्ञा पु. [स. शातनु] राजा शांतनु।

शंतनु-सुत—सज्ञा पु. [स शातनु+सुत] भीष्म।

शंपा—सज्ञा स्त्री [स.] (१) बिजली। (२) कमर।

शंबर—सज्ञा पु. [स.] एक दैत्य जिसे इद्र ने मारा था। (२) एक दैत्य जो कामदेव का शत्रु था और जिसे श्रीकृष्ण-पुत्र प्रद्युम्न ने मारा था। उ —पहिलो पुत्र रुक्मिनी जायो प्रदुमन नाम धरायो। कामदेव प्रगटे हरि के गृह पहिले रुद्र जरायो। नारद जाय कही शबर सो तव रिपु बपु धरि •आयो महाबली बलराम कृष्ण-सुत कीन्हो असुर सँहार—सारा. ६८९-१०-९६।

वि. (१) श्रेष्ठ। (२) भाग्यशाली। (३) सुखी।

शंबरसूदन—सज्ञा पु [स.] कामदेव।

शंबरारि—सज्ञा पु. [स] (१) कामदेव। (२) प्रद्युम्न।

शंबुक—सज्ञा पु. [स] घोघा।

शंभु—सज्ञा पु [स] (१) शिव। (२) स्वायभुव (मनु)।

शं—सज्ञा पु [स] (१) शिव। (२) कल्याण।

शऊर—सज्ञा पु [अ.] (१) ढग। (२) बुद्धि।

शक—सज्ञा पु [स.] (१) एक प्राचीन जाति जिसने ईसा से दो सौ वर्ष पूर्व भारत के कुछ भागो पर अधिकार करके लगभग दो सौ वर्ष तक राज्य किया। कनिष्क शक जातीय राजा था। (२) राजा शालि-वाहन का चलाया हुआ सवत् जो ईसा के ७८ वर्ष पश्चात् आरभ हुआ था।

सज्ञा पु [अ] (१) शका। (२) कमी, अपूर्णता। उ —कहिबे मे न कछू शक राखी – ३४६९।

शकट—सज्ञा पु. [स] (१) छकड़ा, बैलगाडी। (२) शकटासुर नामक दैत्य जो कस का अनुचर था और जिसे श्रीकृष्ण ने शैशवावस्था में ही मारा था। उ.—

जिन हति शकट प्रलंब तृणावृत इद्र प्रतिज्ञा टाली —२५६७।

शकटव्यूह—सज्ञा पु. [स.] सेना की शकटाकार रचना।

शकटारि—सज्ञा पु. [स.] श्रीकृष्ण।

शकटासुर—सज्ञा पु. [स.] एक असुर जो कस का अनुचर था और जिसे श्रीकृष्ण ने मारा था।

शकठ—सज्ञा पु. [स.] मचान।

शकर—सज्ञा स्त्री. [फा.] शक्कर, चीनी, शर्करा।

शकरकंद—सज्ञा पु. [हिं शकर+स. कद] एक कद।

शकरपारा—सज्ञा पु. [फा] (१) एक पक्वान। (२) शकरपारे के आकार की सिलाई।

शकल—सज्ञा पु. [स.] (१) चमड़ा, छाल। (२) खड।

सज्ञा स्त्री [अ. शक्ल] (१) (मुख की) आकृति। (२) मुख का भाव या चेष्टा। (३) बनावट, ढाँचा, गढ़न। (४) स्वरूप, आकार। (५) तरकीब, उपाय। (६) मूर्ति।

शकाब्द—सज्ञा पु [स.] शक सवत् जो राजा शालिवाहन द्वारा ईसा के ७८ वर्ष पश्चात् चलाया गया था।

शकारि—सज्ञा पु [स.] शक-विजेता विक्रमादित्य।

शकील—वि. [फा शक्ल] सुदर।

शकुंत—सज्ञा पु. [स.] चिड़िया, पक्षी।

शकुंतला—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) अप्सरा मेनका के गर्भ मे उत्पन्न विश्वामित्र की पुत्री जिसका, शकुतो द्वारा रक्षा की जाने के कारण 'शकुतला' नाम पड़ा। इसका लालन-पालन कण्व ऋषि ने किया था। यह दुष्यत को ब्याही थी और इसके पुत्र भरत के नाम पर इस देश का नाम 'भारत' पड़ा। (२) कालिदास का एक नाटक जिसमें शकुतला की कथा है।

शकुन—सज्ञा पु [स.] (१) किसी कार्यारभ के समय दिखायी देनेवाले शुभ या अशुभ लक्षण। सामान्यतया 'शकुन' से तात्पर्य शुभ लक्षणो से ही लिया जाता है। (२) शुभ मुहूर्त में किया जानेवाला कार्य। (३) मगल अवसर पर गाये जानेवाले गीत।

शकुनि—सज्ञा पु. [स] (१) गांधारी का भाई जो कौरवों का मामा था और जिसे दुर्योधन ने मत्री बना लिया था। इसके कपट से ही पांडवों की जुए में हार हुई थी। इसे सहदेव ने मारा था। (२) पाजी या दुष्ट आदमी।

शकुनी—वि. [स. शकुन+ई] शकुन फल बतानेवाला।

शक्कर—सज्ञा स्त्री. [स. शर्करा] चीनी, शकर।

शक्की—वि [अ. शक+ई] हमेशा शक करनेवाला।

शक्त—वि. [स.] शक्तिवाला, समर्थ।

शक्ति—सज्ञा स्त्री [स.] (१) बल, पराक्रम। (२) किसी प्रकार का बल। (३) प्रभाव डालनेवाला बल। (४) वश, अधिकार। (५) ईश्वर की माया, प्रकृति। (६) देव बल। (७) किसी पीठ की अधिष्ठात्री देवी। (८) दुर्गा, भगवती। (९) गौरी। (१०) लक्ष्मी। (११) 'साँग' नामक शस्त्र। (१२) तलवार।

शक्तिधर—सज्ञा पु [सं.] स्कद, कार्तिकेय।

शक्तिपूजक—वि [स] शक्ति का उपासक, शाक्त।

शक्तिमत्ता—सज्ञा स्त्री. [स.] शक्तिमानता।

शक्तिमान—वि. [स. शक्तिमान्] बली।

शक्तिशाली—वि [स. शक्तिशालिन्] बलवान।

शक्ति-संपन्न—वि. [स.] शक्ति से युक्त, बली।

शक्तिहीन—वि [स.] (१) बलहीन। (२) नपुसक।

शक्य—वि. [स] (१) जो सभव या किया जाने योग्य हो। (२) जिसमे शक्ति हो।

शक्र—सज्ञा पु. [स.] (दैत्य-नाशक) इद्र।

शक्रचाप—सज्ञा पु. [स.] इद्रधनुष।

शक्रजित—सज्ञा पु. [स. शक्रजित] मेघनाद।

शक्रदिश, शक्रदिशा—सज्ञा स्त्री. [स. शक्रदिश] पूर्व दिशा जिसका स्वामी इद्र है।

शक्रधनु, शक्रधनुष—सज्ञा पु. [स.] इद्रधनुष।

शक्रनन्दन—सज्ञा पु. [स.] (१) बालि। (२) अर्जुन।

शक्राणी—सज्ञा स्त्री. [स.] इद्र-पत्नी, इद्राणी।

शक्ल—सज्ञा स्त्री. [अ. शक्ल] (१) चेहरा, मुखाकृति। (२) मुख का भाव, चेष्टा। (३) बनावट, ढाँचा। (४) स्वरूप। (५) उपाय। (६) मूर्ति।

शखस, शख्श—सज्ञा पु. [अ. शख्स] मनुष्य।

शगल—सज्ञा पु. [अ. शगल] (१) कामधधा। (२) मनोविनोद का साधन या कार्य।

शगुन, शगून—सज्ञा पु. [स. शकुन, हिं. शगुन] (१)

शुभाशुभ लक्षण या विचार। (२) शुभ लक्षण या विचार। (३) विवाह के पूर्व वर के तिलक या टीके की रीति जिसमें संबंध पक्का किया जाता है। (४) नजराना, भेंट।

शगुनियाँ, शगूनियाँ—वि. [हि. शगुन, शगुनियाँ] शगुन बतानेवाला।

शगूफा—संज्ञा पु [फा सगूफा] (१) कली। (२) फूल। (३) नयी और विलक्षण घटना।

मुहा०—शगूफा खिलना—(१) नयी बात होना। (२) झगडा होना। शगूफा खिलाना या छोडना—(१) नयी बात कर बैठना। (२) कोई बात कहकर झगड़ा करा देना।

शचि, शची—संज्ञा स्त्री. [स.] (१) इंद्र की पत्नी इंद्राणी जो दानवराज पुलोमा की पुत्री थी।। उ.—उमा रमा अरु शची अरुंधती दिनप्रति देखन आवै—पृ० ३४५ (४१)। (२) बुद्धि, प्रज्ञा।

शचीपति—संज्ञा पु. [स.] इंद्र।

शजरा—संज्ञा पु. [अ. शजरा] वंशावली। (२) वृक्ष।

शठ—वि. [स.] (१) धूर्त, चालाक। (२) दुष्ट।

संज्ञा पु. पाँच प्रकार के नायकों मे एक जो छल-पूर्वक अपना अपराध छिपाने मे चतुर हो और दूसरी स्त्री से प्रेम करते हुए भी अपनी पत्नी से प्रेम प्रदर्शित करने मे कुशल हो।

शठगी—संज्ञा स्त्री. [स शठ] दुष्टता, धूर्तता।

उ—बहुत प्रकार निमेष लगाए छूटि नही शठगी—२७९०।

शठता—संज्ञा स्त्री. [स.] धूर्तता, दुष्टता।

शत—वि. [स.] सौ (संख्या)।

संज्ञा पु सौ की संख्या।

शतक—संज्ञा पु. [स.] (१) सौ का समूह। (२) सौ चीजों का संग्रह। (३) सौ वर्ष, शताब्दी।

शतकोटि, शतकोटी—संज्ञा पु. [स शतकोटि] सौ करोड़ की संख्या। उ—शतकोटी रामायण कीनो तऊ न लीन्हो पार—सारा. १५५।

शतदल—संज्ञा पु [स.] कमल, पद्म।

शतद्रु—संज्ञा स्त्री [स.] सतलज नदी।

शतधन्वा—संज्ञा पु. [स. शतधन्वन्] एक योद्धा जिसने सत्राजित को मारा था और इस अपराध के कारण जिसे श्रीकृष्ण ने मार डाला था—१० उ.-२७।

शतधा—अव्य. [स.] (१) सैकड़ो बार। (२) सैकड़ो प्रकार से। (३) सैकडो टुकडो या धाराओ में।

शतपत्र—संज्ञा पु. [स] कमल, पद्म।

शतपथ—वि. [स] अनेक शाखाओवाला।

शतभिषा—संज्ञा स्त्री [स.] सत्ताइस नक्षत्रो में चौबीसवाँ नक्षत्र।

शतरंज—संज्ञा पु. [फा] एक प्रसिद्ध खेल।

शतरुद्र—संज्ञा स्त्री [स. शतद्रु] सतलज नदी।

उ.—पुनि शतरुद्र और चंद्रभागा गंगा व्यास न्हवाये—सारा ८२८।

संज्ञा पु. सौ मुखवाला रुद्र।

शतरूपा—संज्ञा स्त्री. [स.] ब्रह्मा की मानसी कन्या जो स्वयंभुवमनु की पत्नी थी। उ.—स्वयंभुवमनु अरु शतरूपा तुरत भूमि पर आए—सारा ३८।

शतशः—वि. [सं.] (१) सैकड़ो। (२) सौ गुना। (३) बहुत अधिक।

शतांश—संज्ञा पु [स.] सौवाँ भाग।

शतानन्द—संज्ञा पु. [स.] जनक के पुरोहित।

शताब्दी—संज्ञा स्त्री. [स.] सौ वर्ष का समय।

शतायु—वि. [सं. शतायुस्] सौ वर्ष की आयुवाला।

शती—संज्ञा स्त्री. [स.] सौ का समूह, सैकड़ा।

शत्रुंजय—वि. [स.] शत्रुओ को जीतनेवाला।

शत्रु—संज्ञा पु [स.] दुश्मन, रिपु, अरि।

शत्रुघ्न—वि. [स.] शत्रु का नाश करनेवाला।

संज्ञा पु लक्ष्मण का छोटा भाई।

शत्रुता, शत्रुताई—संज्ञा स्त्री [स शत्रुता] दुश्मनी।

शत्रुहा—संज्ञा पु. [स] शत्रुघ्न।

शनि—संज्ञा पु [स.] (१) नौ ग्रहो मे सातवाँ ग्रह। (२) अभाग्य, दुर्भाग्य।

शनिवार—संज्ञा पु. [स] शुक्रवार और रविवार के बीच का दिन या वार।

शनिश्चर—संज्ञा पु [स] शनि ग्रह।

शनैः—अव्य. [स.] धीरे।

शपथ—संज्ञा स्त्री [सं.] (१) कसम, सौगंध । (२) प्रतिज्ञा, संकल्प, दृढ़ निश्चय । उ.—मन-वच क्रम शपथ सुनि ऊधो सगहि चली लिवाई—३१३४ ।

शफरी—संज्ञा स्त्री. [सं.] एक छोटी मछली ।

शफा—संज्ञा स्त्री. [अ. शफा] नीरोगता ।

शफाखाना—संज्ञा पु [अ. शफा+फा. खाना] चिकित्सालय ।

शब—संज्ञा स्त्री. [फा] रात, रात्रि ।

शबनम—संज्ञा स्त्री. [फा.] ओस, तुषार ।

शबर—संज्ञा पु [सं] (१) एक प्राचीन अनार्य जाति । (२) शूद्र । (३) भील ।

शबरी—संज्ञा स्त्री. [सं] 'शबर' नामक अनार्य जाति की एक स्त्री जिसने वन में श्रीराम को जूठे बेर खिलाये थे ।

शबल—वि [सं] (१) रंग-बिरंगा । (२) चितकबरा ।

शबाब—संज्ञा पु. [अ.] (१) जवानी । (२) सुंदरता ।

शबीह—संज्ञा स्त्री [अ.] तसवीर, चित्र ।

शब्द—संज्ञा पु [सं.] (१) आवाज, ध्वनि । उ.—(क) किंकिणि शब्द चलत ध्वनि रुनुझुन—२५४१ । (ख) घर-घर इहै शब्द परचो—२९५४ । (२) वह स्वतंत्र सार्थक ध्वनि जो एक या अधिक वर्णों के संयोग से उत्पन्न हो और किसी कार्य, भाव या वस्तु की बोधक हो । (३) 'ओ३म्' जो परमात्मा का मुख्य नाम है । (४) साधु-महात्मा के पद या गीत ।

शब्दकोश—संज्ञा पु. [सं.] वह (कोश) ग्रंथ जिसमें बहुत से शब्द अर्थसहित दिये गये हों ।

शब्दचित्र—संज्ञा पु. [सं] शब्दों द्वारा किसी वस्तु, व्यक्ति या दृश्य आदि का ऐसा स्पष्ट वर्णन कि उसका पूरा चित्र सामने आ जाय ।

शब्दजाल—संज्ञा पु [सं. शब्द+हिं. जाल] बड़े-बड़े शब्दों का ऐसा आडंबरपूर्ण प्रयोग जिसमें अर्थ या भाव विशेष न हो ।

शब्द-प्रमाण—संज्ञा पु [सं.] ऐसा प्रमाण जो किसी के कथन पर आधारित हो ।

शब्दबेधी—संज्ञा पुं. [सं. शब्दवेधिन्] वह मनुष्य जो केवल शब्द सुनकर, बिना देखे ही, लक्ष्य को बाण से बेध सकता हो ।

शब्दशक्ति—संज्ञा स्त्री. [सं.] शब्द की वह शक्ति जिसके द्वारा विशेष भाव सूचित हो । यह शक्ति तीन प्रकार की होती है—अभिधा, लक्षणा और व्यंजना । इनसे प्रकट अर्थ क्रमश वाच्य, लक्ष्य और व्यंग्य तथा इन्हें प्रकट करनेवाले शब्द क्रमश वाचक, लक्षक और व्यंजक कहलाते हैं ।

शब्दाडंबर—संज्ञा पु. [सं.] बड़े-बड़े शब्दों का ऐसा प्रयोग जिसमें अर्थ या भाव विशेष न हो ।

शब्दानुशासन—संज्ञा पु [सं.] व्याकरण ।

शब्दालंकार—संज्ञा पु. [सं.] वह अलंकार जिससे भाषा में लालित्य या सौंदर्य लाया जाय ।

शब्दावली—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) शब्द-समूह । (२) विषय या कार्य-विशेष की शब्द-सूची । (३) किसी वाक्य या प्रसंग के शब्दों का क्रम या प्रकार ।

शम—संज्ञा पु [सं] (१) अंतःकरण एवं अंतरेंद्रिय-निग्रह । (२) शांत रस का स्थायी भाव । (३) क्षमा ।

शमन—संज्ञा पु. [सं] (१) हिंसा । (२) शांति । (३) दमन । (४) यम । (५) रात, रात्रि ।

शमशेर—संज्ञा स्त्री. [फा.] तलवार ।

शमा—संज्ञा स्त्री. [अ. शमअ] (१) मोम । (२) मोमबत्ती ।

शमादान—संज्ञा पु. [फा.] वह आधार जिसमें मोमबत्ती जलायी जाती है ।

शमित—वि. [सं.] (१) जिसका शमन या दमन किया गया हो । (२) ठहरा हुआ, शांत ।

शमी—संज्ञा स्त्री. [सं.] सफेद कीकर का वृक्ष जिसकी पूजा विजयादशमी को की जाती है ।

शमीक—संज्ञा पु. [सं] एक क्षमाशील ऋषि जिनके गले में परीक्षित ने मरा हुआ साँप डाल दिया था और जिनके पुत्र ने उनको सातवें दिन तक्षक नाग द्वारा डसे जाने का शाप दिया था ।

शयन—संज्ञा पु. [सं.] (१) सोने या निद्रित होने की क्रिया । (२) बिछौना, शैया ।

शयनकक्ष—संज्ञा पुं [सं.] सोने का कमरा, शयनागार ।

शयनआरती—संज्ञा स्त्री. [स. शयन+हिं. आरती] वह आरती जो रात्रि में देवता के शयन के पूर्व की जाती है।
शयनबोधिनी—संज्ञा स्त्री. [स.] अगहन कृष्णा एकादशी।
शयनमंदिर—संज्ञा पु. [स.] सोने का स्थान या कमरा।
शयनागार—संज्ञा पु. [स] सोने का स्थान या कमरा।
शयनैकादशी—संज्ञा स्त्री. [स.] आषाढ शुक्ला एकादशी जबसे विष्णु का शयनारंभ माना जाता है।
शय्या—संज्ञा स्त्री. [स.] (१) बिछौना। (२) पलँग।
शर—संज्ञा पु. [स.] (१) तीर, बाण। (२) भाले का फल। (३) चिता। (४) पाँच की संख्या।
शरण—संज्ञा स्त्री [स.] (१) रक्षा, आश्रय। (२) रक्षा या आश्रय का स्थान।
शरणागत—वि. [स.] शरण में आया हुआ।
शरणार्थी—वि. [स. शरणार्थिन्] शरण माँगनेवाला।
शरणी—संज्ञा स्त्री. [स.] मार्ग, पथ।
वि. शरण या आश्रय देनेवाली।
शरण्य—वि. [स] शरणागत का रक्षक।
शरत्, शरद्—संज्ञा स्त्री. [स. शरत्] (१) वह ऋतु जो आश्विन और कार्तिक मास में होती है। (२) साल, वर्ष।
शरता—संज्ञा स्त्री. [स.] तीर चलाने की कला या विद्या।
शरदपूर्णिमा—संज्ञा स्त्री [स.] कुआँर की पूर्णिमा।
शरदेंदु—संज्ञा पु. [स.] शरत ऋतु का चन्द्र।
शरनाई—संज्ञा स्त्री [स. शरण+हिं आई] शरण।। उ.—हमतौ है तुम्हारी शरनाई—८०८।
शरनी—वि. [सं. शरणी] शरण देनेवाली। उ.—असरन शरनी भव भय हरनी वेद पुरान बखानी—पृ. ३४६ (४०)।
शरपट्टा—संज्ञा पु. [स शर+हिं. पट्टा] एक शस्त्र।
शरबत—संज्ञा पु. [अ.] (१) गुड़ या शकर का घोल। (२) चीनी के घोल मे पका हुआ अर्क। (३) सगाई की एक रीति।
शरबती—वि. [हिं शरबत] (१) ललाई लिये हुए हलके पीले रंग का। (२) रस से भरा हुआ।
शरभंग—संज्ञा पु. [स.] एक महर्षि जिनके दर्शन श्रीराम ने किये थे। उ.—बदन करि शरभग महामुनि अपने दोष निवारे—सारा. २५५।
शरभ—संज्ञा पु. [स] राम का एक बानर-सेनानायक।
शरम—संज्ञा स्त्री. [फा. शर्म] (१) लज्जा। उ—रिसन उठी झहराइ झटकि भुज छुवत कहा पिय शरम नही —२१८२। (२) लिहाज, सकोच। (३) इज्जत, मर्यादा, प्रतिष्ठा।
शरमाऊँ—क्रि. अ. [हि. शरमाना] लज्जित होता हूँ। उ.—यह बाणी भजन स्रवन बिन सुनत बहुत शरमाऊँ—१८५८।
शरमाऊ—वि [हि. शरम+आऊ] लज्जित होनेवाला।
शरमाति—क्रि. अ. [हि. शरमाना] लज्जित होती हैं। उ.—सूर श्याम लोचन अपार छबि उपमा सुनि शरमाति—१३४९।
शरमाना—क्रि. अ. [हिं. शरम+आना] लजाना, लाज करना, लज्जित होना।
क्रि स (दूसरे को) लज्जित करना।
शरमाने—क्रि. अ. [हिं. शरमाना] लजाये, लज्जित हुए। उ.—काहे को इतनो शरमाने, रैनि रहे फिरि जाहु तहाँ—१९९३।
शरमानो—क्रि. अ. [हि. शरम+आनो] लजाना।
क्रि स. (दूसरे को) लज्जित करना।
शरमाशरमी—क्रि. वि. [हि. शरम] लाज के कारण, सकोच से।
शरमिंदा—वि. [फा] लज्जित।
शरमीला—वि [हि. शरम+ईला] शरमानेवाला।
शरवाणि—संज्ञा स्त्री [स.] तीर का फल।
शराध—संज्ञा पु. [स श्राद्ध] मृतक का श्राद्ध।
शराप—संज्ञा पु. [स. शाप] शाप। उ.—ता शराप ते भए श्याम तन तउ न गहत डर जी को—३०४०।
शरापना—क्रि अ. [स. शाप] (१) शाप देना। (२) कोसना। संज्ञा स्त्री. पीड़ित की हाय।
शराफत—संज्ञा स्त्री. [अ. शराफत] भलमनसी, सज्जनता।
शराब—संज्ञा स्त्री. [अ.] सुरा, मदिरा।

शराबी—वि. [हि. शराब] जिसे शराब पीने की लत या उसका व्यसन हो ।

शराबोर—वि [फा.] पानी से बहुत भीगा हुआ ।

शरारत—सज्ञा स्त्री. [अ] पाजीपन, दुष्टता ।

शराव—सज्ञा पु. [स.] मिट्टी का पुरवा, कुल्हड़ ।

शरासन—सज्ञा पु. [स] कमान, चाप, धनुष ।

शरीक—वि. [अ. शरीक] मिला हुआ, सम्मिलित ।
सज्ञा पु. (१) साथी, सहायक । (२) साझीदार ।

शरीफ - वि. [अ. शरीफ] (१) कुलीन । (२) सभ्य । (३) पवित्र । (४) सकुशल ।

शरीफा—सज्ञा पु. [स. श्रीफल] एक वृक्ष या उसका मीठा फल जिसके बीज काले होते हैं ।

शरीर—सज्ञा पु. [स.] तन, बदन, देह ।
वि. [अ.] नटखट, पाजी, दुष्ट ।

शरीरांत—सज्ञा पु. [स.] मौत, देहांत ।

शरीरी—सज्ञा पु. [स. शरीरिन्] (१) शरीरधारी । (२) आत्मा, जीव । (३) प्राणी ।

शरेष्ठ—वि. [स श्रेष्ठ] उत्तम ।

शर्करा—सज्ञा स्त्री. [स.] चीनी, खाँड़, शक्कर ।

शर्त—सज्ञा स्त्री [अ.] (१) बाजी, बदान, दाँव । (२) बदी हुई बात, प्रतिबध ।

शर्तिया—क्रि. वि. [अ.] निश्चय ही ।
वि. निश्चित, अचूक ।

शर्बत—सज्ञा पु. [हि. शरबत] शरबत ।

शर्बती—वि. [हि शरबत] शरबत के रग का ।

शर्म—सज्ञा स्त्री. [फा.] लाज, सकोच ।

शर्मद—वि. [स शर्म्मद] सुखदायी ।

शर्मा—सज्ञा पु. [स. शर्म्मन्] ब्राह्मणो की उपाधि ।

शर्मिष्ठा—सज्ञा स्त्री. [स.] दैत्यराज वृषपर्वा की पुत्री जो देवयानी की दासी बनकर राजा ययाति के यहाँ गयी थी और रानी के अनजाने में उनसे सभोग करके जिसने तीन पुत्र जने थे ।

शर्मीला—वि. [फा. शर्म] लजानेवाला ।

शर्याति—सज्ञा पु. [स.] एक राजा जिनकी पुत्री सुकन्या च्यवन ऋषि को ब्याही थी ।

शर्व—सज्ञा पु. [स.] (१) शिव । (२) विष्णु ।

शर्वरी—सज्ञा स्त्री. [स] (१) रात । (२) साँझ ।

शर्वरीश—सज्ञा पु. [स.] चद्रमा ।

शर्वाणी—सज्ञा स्त्री. [स. शर्व्वाणी] (१) पार्वती । (२) दुर्गा ।

शल—सज्ञा पु. [सं.] (१) कस का एक मल्ल । उ.—और मल्ल मारे शल तोशल बहुत गए सब भाग—सारा. ५२३ । (२) कस का एक अमात्य । (३) धृतराष्ट्र का एक पुत्र ।

शलगम, शलजम—सज्ञा पु. [फा. शलजम] एक कद ।

शलभ—सज्ञा पु. [स.] पतगा ।

शलाका—सज्ञा स्त्री. [स.] (१) लोहे की सलाई या सलाख । उ.– अलि आली गुरु ज्ञान शलाका क्यो सहि सकति तुम्हारी—३०३९ । (२) सुरमा लगाने की सलाई ।

शल्य—सज्ञा पु. [स.] (१) मद्र देश का एक राजा जिसकी बहन माद्री पाडु को ब्याही थी । महाभारत के युद्ध में शल्य दुर्योधन की ओर से लड़ा था और युद्ध के अतिम दिन सेनापति बनाये जाने पर अर्जुन के हाथ से मारा गया था । (२) अस्त्र-चिकित्सा । (३) एक प्रकार का वाण ।

शल्यकी—सज्ञा स्त्री. [स. शल्लकी] साही नामक जतु ।

शल्यक्रिया—सज्ञा स्त्री. [स.] चीर-फाड़ का इलाज ।

शल्ल—वि. [स.] सुस्त, शिथिल ।

शव—सज्ञा पु [स.] (मानव का) मृत शरीर ।

शवता—सज्ञा स्त्री. [स.] निर्जीवता ।

शवदाह—सज्ञा पु. [स.] मृत शरीर को जलाना ।

शवभस्म - सज्ञा स्त्री. [स.] चिता की भस्म ।

शवमंदिर—सज्ञा पु. [स.] मरघट, श्मशान ।

शवयान—सज्ञा पु. [स] मुर्दे की अरथी, टिकठी ।

शवर—सज्ञा पु. [स.] एक जगली पहाड़ी जाति ।

शवरी—सज्ञा स्त्री [स] (१) शवर जाति की स्त्री । (२) शवर जाति की श्रमणा नाम्नी तपस्विनी जिसने, सीता को ढूँढते हुए राम के अपने आश्रम में पहुँचने पर उनको जूठे बेर समर्पित करके उनकी अभ्यर्थना की थी और उन्ही के सामने अपने को चिता में भस्म कर दिया था । उ.—शवरी परम भक्त रघुपति की

बहुत दिननि की दासी। ताके फल आरोगे रघुपति पूरन भक्ति प्रकासी—सारा. २७२।

शश—संज्ञा पु. [स.] (१) खरहा, खरगोश। (२) चंद्रमा का कलंक। (३) मनुष्य के चार (प्रकारों) में एक; सुशील, कोमलांग और गुण-निधान व्यक्ति।

शशक—संज्ञा पु [स.] खरहा, खरगोश।

शशधर—संज्ञा पु. [स] चंद्रमा।

शशलांछन—संज्ञा पु. [स.] चद्रमा।

शशश्रृंग—संज्ञा पु. [स.] (खरगोश के सींग जैसी) असंभव और अनहोनी बात।

शशांक—संज्ञा पु. [स.] चद्रमा।

शशा—संज्ञा पु [स. शश] खरहा, खरगोश।

शशि—संज्ञा पु [स. शशिन्] (१) चंद्रमा। उ. श्वेत छत्र मनो शशि प्राची दिशि उदय कियो निशि राका —८५६६।

शशिकर—संज्ञा पु. [स.] चद्रमा की किरण।

शशिकला—संज्ञा स्त्री. [स.] चद्रमा की कला।

शशिकुल—संज्ञा पु. [स] चद्रवश।

शशिज—संज्ञा पु. [स] चद्रमा का पुत्र बुध।

शशितिथि—संज्ञा स्त्री. [स] पूर्णिमा।

शशिधर—संज्ञा पु. [स] (१) शिव। (२) एक प्राचीन नगर।

शशिप्रभा—संज्ञा स्त्री. [स.] चाँदनी, ज्योत्सना।

शशिप्रिय—संज्ञा पु. [स.] (१) कुमुद। (२) मोती।

शशिभूषण—संज्ञा प. [स.] शिव, महादेव।

शशिमडल—संज्ञा पु [स.] चद्रमा का घेरा। उ — सब नक्षत्र को राजा दीन्हो शशिमडल मे छाप।

शशिमुख—वि. [स.] चद्र-सा सुदर मुखवाला।

शशिरेखा, शशिलेखा—संज्ञा स्त्री. [स] चद्र-कला।

शशिशाला—संज्ञा स्त्री. [फा. शीशा+स शाला] शीशो का महल, शीशमहल।

शशिशेखर—संज्ञा पु. [स.] शिव, महादेव।

शशिसुत—संज्ञा पु [स.] चद्रमा का पुत्र बुध ग्रह।

शशिहीरा—संज्ञा पु. [स शशि+हि. हीरा] चद्रकात मणि।

शशी—संज्ञा पु. [स शशि] चंद्रमा।

शशीकर—संज्ञा पु. [स. शशिकर] चंद्र-किरण।

शस्त—संज्ञा पु [स.] (१) शरीर। (२) कल्याण। वि (१) श्रेष्ठ। (२) प्रशस्त। (३) जो मार डाला गया हो। (४) कल्याणयुक्त।

शस्ति—संज्ञा स्त्री. [स.] स्तुति, प्रशसा।

शस्त्र—संज्ञा पु. [स.] हथियार जिसे हाथ में पकड़े रहकर वार किया जाय।

शस्त्रजीवी—संज्ञा पु. [स शस्त्रजीविन्] योद्धा।

शस्त्रधर—संज्ञा पु. [स.] योद्धा, सैनिक।

शस्त्रधारी—वि. [स शस्त्रधारिन्] शस्त्र बाँधनेवाला।

शस्त्रागार—संज्ञा पु [स.] शस्त्र रखने का स्थान।

शस्य—संज्ञा पु. [स] (१) नयी घास या तृण। (२) फसल, खेती। (३) अन्न, धान्य।

शहंशाह—संज्ञा पु. [फा. शाहशाह] महाराजाधिराज।

शह—संज्ञा पु [फा.] (१) महाराज। (२) दूल्हा। संज्ञा स्त्री. (१) शतरज की किश्त। (२) भड़काने या उत्तेजित करने की क्रिया या भाव।

शहजादा—संज्ञा पु. [फा. शाहजादा] राजकुमार।

शहजोर—वि. [फा. शहजोर] बली, बलवान।

शहजोरी—वि. [फा. शहजोरी] ताकत, बल।

शहतीर—संज्ञा पु. [फा.] बडा लट्ठा।

शहतूत—संज्ञा पु [फा.] तूत का पेड़ या फल।

शहद संज्ञा पु. [अ.] मधु।

मुहा०—शहद लगाकर चाटना—किसी उपयोगी पदार्थ का सदुपयोग न करने पर किया जानेवाला व्यग्य। शहद लगाकर अलग हो जाना या होना—झगड़ा कराकर अलग हो जाना।

शहनाई—संज्ञा स्त्री. [फा.] नफीरी बाजा।

शहबाला—संज्ञा पु. [फा.] वह बालक जो दूल्हे के साथ घोड़े पर या पालकी में बैठता है।

शहर—संज्ञा पु. [फा.] बड़ीबस्ती, नगर। उ.—चले जात सब घोष शहर को—१०३६।

शहरपनाह—संज्ञा स्त्री. [फा.] शहर की चारदीवारी, नगरकोटा, प्राचीर।

शहरी—वि. [फा.] (१) शहर से सबंधित। (२) शहर में रहने बसनवाला।

शहसवार—वि. [फा.] घुड़सवारी में कुशल ।
शहादत—संज्ञा स्त्री. [अ.] (१) गवाही, साक्ष । (२) सबूत, प्रमाण ।
शहिजदा—संज्ञा पु [हि. शाहजादा] राजकुमार ।
शहीद—वि. [अ.] धर्म या देश की रक्षा अथवा ऐसे ही शुभ कार्य के लिए प्राण देनेवाला ।
शांडिल्य—संज्ञा पु. [सं.] (१) एक मुनि । (२) एक गोत्र ।
शांत—वि. [सं.](१) जिसमें वेग, क्षोभ या क्रिया न हो । (२) (रोग आदि) मिटा हुआ । (३) क्रोधरहित, प्रकृतिस्थ । (४) मरा हुआ, मृत । (५) गंभीर, सौम्य । (६) चुप, मौन । (७) मनोविकाररहित । (८) उत्साहहीन । (९) हारा-थका, श्रांत । (१०) बुझा हुआ । (११) विघ्न-बाधारहित । (१२) स्वस्थ चित्त । (१३) अप्रभावित ।
संज्ञा पु. नौ रसों में एक जिसका स्थायी भाव निर्वेद (काम-क्रोध आदि का शमन) है ।
शांतनु—संज्ञा पु. [सं.] प्रतीप के पुत्र एक चंद्रवंशी राजा जिनके, गंगादेवी से देवव्रत भीष्म का जन्म हुआ था और धीवर कन्या सत्यवती से विचित्रवीर्य और चित्रांगद का ।
शांता—संज्ञा स्त्री. [सं.] राजा दशरथ की पुत्री जो महर्षि ऋष्यश्रृंग की पत्नी थी ।
शांति—संज्ञा स्त्री [सं] (१) वेग, क्षोभ या क्रिया का अभाव, स्थिरता । (२) सन्नाटा, नीरवता । (३) चित्त की स्वस्थता । (४) रोग, पीड़ा आदि का न रह जाना । (५) मरण, मृत्यु । (६) गंभीरता, धीरता, सौम्यता । (७) वासना से मुक्ति, विरक्ति । (८) अमंगल दूर करने का उपचार । (९) राधा की सखी एक गोपी का नाम ।
शांतिकर—वि [सं.] शांति देनेवाला ।
शांतिदायी—वि. [सं. शांतिदायिन्] शांति देनेवाला ।
शांतिप्रद—वि. [सं.] शांति देनेवाला ।
शांतिमय—वि. [सं.] शांति से पूर्ण ।
शांबरी—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) जादू । (२) जादूगरनी ।
शांभर—संज्ञा स्त्री. [सं.] राजपूताने की एक झील जिसमें 'सांभर' नमक होता है ।
शाइस्तगी—संज्ञा स्त्री. [फा.] भलमनसाहत, शिष्टता ।
शाइस्ता - वि. [फा. शाइस्त] शिष्ट, विनम्र ।
शाकंभरी—संज्ञा स्त्री. [सं.] दुर्गा ।
शाक—संज्ञा पु [सं.] (१) साग-भाजी, तरकारी । (२) सात द्वीपों में एक । उ.—सातों द्वीप कहे शुक मुनि ने सोइ कहत अब सूर । जंबू प्लक्ष क्रौंच, शाक, साल्मलि कुश पुष्कर भरपूर—सारा. ३४ ।
शाकल—संज्ञा पु. [सं] (१) खंड । (२) हवन-सामग्री ।
शाकाहार —संज्ञा पु [सं.] निरामिष भोजन ।
शाकाहारी—वि [सं शाकाहारिन्] केवल अनाज और साग-भाजी खानेवाला ।
शाकुनि—संज्ञा पु. [सं.] बहेलिया ।
शाक्त—वि. [सं.] शक्ति-संबंधी ।
संज्ञा पु. शक्ति का उपासक ।
शाक्य—संज्ञा पु. [सं.] नैपाल की तराई की एक क्षत्रिय जाति जिसमें गौतमबुद्ध उत्पन्न हुए थे ।
शाक्यमुनि—संज्ञा पु [सं.] गौतमबुद्ध ।
शाख—संज्ञा स्त्री. [फा. शाख] (१) टहनी, डाली । (२) नदी की बड़ी धारा से निकली छोटी धारा ।
शाखा—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) टहनी, डाल । (२) मूल वस्तु के भेद-उपभेद । (३) विभाग । (४) अवयव, अंग ।
शाखामृग—संज्ञा पु [सं.] बंदर, बानर ।
शाखोच्चार—संज्ञा पु [सं] विवाह में वंशावली का कथन ।
शागिर्द—संज्ञा पु. [फा.] चेला, शिष्य ।
शागिर्दी—संज्ञा स्त्री. [फा] (१) शिष्टता । (२) सेवा ।
शाटक—संज्ञा पु [सं.] वस्त्र, पट ।
शाटिका, शाटी—संज्ञा स्त्री. [सं.] धोती, साड़ी ।
शाठ्य—संज्ञा पु. [सं.] (१) छल-कपट । (२) दुष्टता ।
शाण—संज्ञा पु. [सं.] धार तेज करने का पत्थर ।
शाणित—वि. [सं.] (१) तेज धारवाला । (२) कसौटी पर कसा हुआ ।
शातिर—वि [अ.] काइयाँ, घुटा हुआ, पक्का ।
शाद—वि. [फा.] (१) प्रसन्न । (२) भरा-पूरा ।